T.T.D. Religious Publications Series No. 1069
Price :

Published by **Sri M.G. Gopal,** I.A.S., Executive Officer,
T.T.Devasthanams, Tirupati and Printed at T.T.D. Press, Tirupati.

श्री तिरुमलेश की सन्निधि

तेलुगु मूलः

जूलकंटि बाल सुब्रह्मण्यम

हिन्दी अनुवादः

डा. पुट्टपर्ति नागपद्मिनी

तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्

तिरुपति

श्री तिरुमलेश की सन्निधि

तेलुगु मूल:

जूलकंटि बाल सुब्रह्मण्यम

हिन्दी अनुवाद:

डा. पुट्टपर्ति नागपद्मिनी

तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्

तिरुपति

2014

SRI TIRUMALESH KI SANNIDHI

Telugu Original
Julakanti Bala Subrahmanyam

Hindi Translation
Dr. Puttaparthi Nagapadmini

Editor-in-Chief
Prof. Ravva Sri Hari

T.T.D. Religious Publications Series No. 1069
©All Rights Reserved

First Edition - 2014

Copies : 3000
Price :

Published by
M.G. Gopal, I.A.S.,
Executive Officer,
Tirumala Tirupati Devasthanams,
Tirupati.

D.T.P:
Office of the Editor-in-Chief
T.T.D, Tirupati.

Printed at :
Tirumala Tirupati Devasthanams Press,
Tirupati.

आमुख

वेंकटाद्रिसमं स्थानं ब्रह्माण्डे नास्ति किंचन
वेंकटेशसमो देवो न भूतो न भविष्यति

"इस पूरे ब्रह्माण्ड में वेंकटाद्रि से समानता रखनेवाला पुण्य क्षेत्र दूसरा कोई नहीं है। वेंकटेश से समता रखनेवाला देवता, न भूतकाल मे था और भविष्य में रहेगा" इस प्रशस्ति के अनेक कारण स्पष्ट हैं।

अन्नमाचार्य ने अपने अनेकानेक संकीर्तनों में इस क्षेत्र के आध्यात्मिक वैभव का आविष्कार किया। इस स्वामी का नाम भी अनुपमेय है। अपने इस स्थान एवं अपने वक्षःस्थल पर श्री महालक्ष्मी के विराजमान होने से ही श्री वेंकटेश स्वामी 'परब्रह्म' नाम से संबोधित हैं। मात्र इतना ही नहीं, इस स्वामी की खडे रहने की भंगिमा भी आश्चर्य जनक है। संसारसागर - समुत्तरणैकसेतो - कटि वरद हस्तों के साथ एक सुंदर रीति में खडे होकर, अपने सभी भक्तों पर दया बरसा रहे हैं - यह आनंद निलय स्वामी! अनेकानेक अमूल्य दिव्याभरणों, नवरत्न मणिहारों से आभूषित होते हुए - दर्शकों को आश्चर्य चकित कर देनेवाले इस वेंकट रमण स्वामी के अनंतवैभव का वर्णन कर पाना असंभव है।

नित्य कल्याण चक्रवर्ती उपाधि से अलंकृत इस स्वामी की पूजा - अर्चना विधा की भी एक विशिष्टता है। अत्यंत प्राचीन वैखानसागम के अनुसार दिन के षट्कालों में अर्चनाएँ होती हैं। अनेकानेक स्वादिष्ठ भोग भी चढाये जाते हैं। विविध उत्सव भी संपन्न होते हैं। इन सभीयों के कारण 'वेंकटेश' जी की महत्ता 'न भूतो न भविष्यति' की ख्याति को प्राप्त कर इस सारे ब्रह्मांण्ड मे परिव्याप्त हो गई है।

तिरुमलेश की सेवा मे मोक्ष को प्राप्त तोंडमान चक्रवर्ती, तिरुमलनंबी, अनंताळ्वान, अन्नमाचार्य, हथीराम बावाजी, तरिगोंड वेंगमांबा जैसे अनेकानेक भक्तों की पवित्र जीवन गाथायें, वेंकटेश्वर की भक्त प्रियता के साक्षी हैं। इनके कारण भी, इस क्षेत्र के वैभव एवं यश बढ़ गये हैं।

सप्त गिरीश से संबंधित अनेकानेक विषयों एवं विशेषताओं का अत्यंत श्रद्धा से संशोधन एव निरीक्षण कर इस क्षेत्र एवं स्वामी की दयालुता के साथ मंदिर की निर्माण - चातुरी को भी सभियों की समझ में आने की रीति में विरचित ग्रंथ है यह - 'तिरुमलेश की सन्निधि'।

श्री जूलकंटि बालसुब्रह्मण्यम् की इस तेलुगु रचना की हिन्दी अनुवादिका हैं - डा. पुट्टपर्ति नागपद्मिनी।

श्री वेंकटेश बालाजी के उत्तर भारत वासी भक्तों की सुविधा एवं कल्याण के लिए ति. ति. देवस्थानम् के द्वारा प्रकाशित यह ग्रंथ - आशा है - भक्तों को भी आनंद पहुँचायेगा।

सदा श्रीहरि की सेवा में

(एम.जी.गोपाल, ऐ.ए.एस)
कार्यनिर्वहणाधिकारी,
तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्,
तिरुपति

परिचय

स्मरणात् सर्वपापघ्नम् स्तवनादिष्टवर्षिणम्
दर्शनान्मुक्तिदम् चेशम् श्रीनिवासम् भजेऽनिशम्

इस स्वामी का स्मरण करने से बस - सभी पाप मिट जायेंगे। इस देवता का कीर्तन करेंगें तो बस - सभी इच्छाएँ पूरी हो जायेंगी। इस देवदेव के एक मात्र दर्शन से मुक्ति मिल जाती है। ऐसे श्रीनिवास जी का हर दिन स्मरण करूँगा।

भक्त, प्रिय, मुँह माँगे वरदान देनेवाले भगवान श्री वेंकटेश्वर स्वामी अर्चामूर्ती के रूप में स्वयंभू होते हुए विद्यमान, पवित्र क्षेत्र ही तिरुमल है! इस आनंद निलयवासी के मंदिर के प्रांगण में अनेक दिव्य स्थल, मंडप, अद्भुत शिल्प चातुरी से विराजित हैं। इतना ही नहीं बहुत सारे भक्तों की जीवन गाथाएँ इनसें जुडी हुई हैं एवं तिरुमलेश की भक्त वत्सलता के साक्षी भी हैं।

'नित्य कल्याण - मंगल तोरण' नाम से सुविख्यात इस वेंकटाचल में श्री वेंकटेश्वर स्वामी का नित्य कल्याणोत्सव संपन्न होता है। सिर्फ इतना ही नहीं, सुप्रभात सेवा, 'तोमाल सेवा', सहस्र नामार्चना सेवा, एकांत सेवा आदि नित्योत्सव, विशेष पूजा, अष्ट दळ पाद पद्माराधना, सहस्रकलशाभिषेक, तिरुप्पावडा सेवा, पूलंगि सेवा, शुक्रवाराभिषेक जैसे वारोत्सव, रोहिणी, आरुद्रा, पुनर्वस, श्रवण जैसे नक्षत्र उत्सव, कोइल आळ्वार तिरुमंजनम्, उगादि आस्थानम्, पद्मावती परिणयोत्सव, ज्योष्टाभिषेक, आणिवार आस्थानम्, पवित्रोत्सव, बह्मोत्सव आदि संवत्सरोत्सव भी श्री वेंकटेश्वर जी के ही उत्सव हैं। इन सारे संदर्भों में

तिरुमल पर, हर दिन एक उत्सव सा ही वातावरण हमेशा रहता है। हर पहर, खीरों, परमान्नों के नैवेद्य समर्पित होते रहते हैं। साल भर करीब 450 से बढकर उत्सवों का निर्वाह होता रहता है।

कितने ही धनवान हो, कितना ही समय उनके पास हो, लेकिन इस यंत्रवत जीवन की घडियों में, आनंद निलय की सभी विशेषताओं को प्रत्यक्षतया देखते हुए समझ पाना, असंभव है। तिरुमल पर संपन्न होनेवाले सभी उत्सवों में भाग -ले पाना तो कष्ट साध्य है। लेकिन भगवान श्री वेंकटेश के मंदिर के सारे उत्सवों, शोभायात्राओं तथा मंदिर से संबंधित सारी विशेषताओं को जान लेने की उत्सुकता तो हर एक भक्त में रहती ही है। उस उत्सुकता को, कम से कम कुछ हद तक ही सही, तृप्त करने के प्रयास का अक्षर रूप ही, यह रचना है।

इस रचना के द्वारा, तिरुमलेश के मंदिर का महाद्वार गोपुर, कृष्ण राय मंडप, आईना महल, रंगनायक मंडप, सुवर्ण ध्वज स्तंभ, बलि वेदी, क्षेत्र पालक शिला, विमान परिक्रमा में विलसित छोटे मंदिर, घंटा मंडप, सुवर्ण द्वार, स्नपन मंडप, रामजी का महल, शयन मंडप, गर्भालय में भगवान की मूल विराट मूर्ति, अन्य उत्सव मूर्तियाँ आदि मुख्य प्रदेशों, मूर्तियों एवं अनेकानेक अद्धुत विषयों को प्रत्यक्षतया देखते हुए आनंदित होने का अनुभव पाठक गण अवश्य पाते हैं।

सन् 1992 में ति.ति.दे के तत्कालीन कार्यनिर्वहणाधिकारी श्री एम. वी. एस प्रसाद जी आई. ए. एस. ने मुझे प्रेरणा दी कि तिरुमल मंदिर की सभी विशेषताओं, पूजा, अर्चना उत्सवों एवं शोभायात्राओं के बारे में एक ग्रंथ लिखें। इतना ही नहीं, तिरुमल के मंदिर में दो साल तक, इसी

काम पर लगे रहने की अनुमति भी दी। सभी सेवाओं को निः शुलक देखने एवं विषय संचयन करने के आदेश भी उन्होंने दिये। इन सब के कारण तिरुमलेश की सारी भक्त कोटि को महोन्नत सेवा करने का अवसर मुझे मिला। एतदर्थ श्री. एम. वी. एस. प्रसाद जी को मेरी यह कृतज्ञतांजलि समर्पित है।

1995 सं में तत्कालीन कार्यनिर्वहणाधिकारी श्री निम्मगड्डा रमेश कुमार आई.ए.एस जी ने. मेरे इस ग्रंथ का निरीक्षण किया तथा निर्णय किया कि इसे भक्तों तक अवश्य पहुँचाना चाहिए। इतना ही नही सप्तगिरि (तेलुगु) मास पत्रिका में तुरंत प्रकाशित करने के आदेश दिये। एतदर्थ, श्री रमेश कुमार जी को मेरी विनयांजलि समर्पित है।

1995 सितंबर से 2000 फरवरी तक सप्तगिरि (तेलुगु) मास पत्रिका में धारावाहिक प्रकाशन के द्वारा, अशेष भक्त, जनो के आदर - सम्मान प्राप्र इस हरिकोलुवु (तेलुगु) को 'ति.ति. देवस्थानम का धार्मिक प्रकाशन के रूप में प्रकाशित कर, भक्त जनों को भेंट करने का श्रेय तत्कालीन ति.ति.दे.के कार्यनिर्वहणाधिकारी, संगीत साहित्यों के विद्वान डा.आई.वी. सुब्बाराव, आई. ए.एस को जाता है। उन्हें मेरा भक्ति पूर्वक प्रणाम समर्पित है।

यह मेरा सौभाग्य है कि तेलुगु का यह ग्रंथ अब तक कई बार पुनः पुनः प्रकाशित हुआ और जैसे ही प्रकाशित होता रहा, वैसे ही सारी प्रतियाँ बिक जाती रहीं। इसका अर्थ मेरी समझ में यही है कि भगवान वेंकटेश से संबंधित अनेकानेक विषयों को जानने की, उनके अनन्य भक्तों की प्यास को कुछ हद तक ही सही, बुझाने की क्षमता, तिरुमलेश

की कृपा के कारण, मेरी रचना में है। अब इसका हिन्दी अनुवाद भी, भगवान बालाजी के -उन्तर भारत के भक्तों को उपलब्ध कराने का ति.ति. देवस्थानम् का यह निर्णय, आनंद दायक है।

ति.ति. के मंदिर, उनकी विशेषताओं, एवं तिरुमलेश के भक्तों के बारे में सर्वश्री वेटूरि प्रभाकर शास्त्री, साधु सुब्रह्मण्य शास्त्री, टी.के.टी. वीर राघवाचार्य, एम.एस. रमेशन. वेदांतम् जगन्नाथाचार्य, एस.के. रामचन्द्र राव, एन.सी.वी. नरसिंहाचार्युलु, गोपी कृष्ण, प्रोफेसर के. सर्वोत्तम राव, जैसे पंडितों ने जो अनेकानेक ग्रंथ लिखे जो मेरी इस रचना के सहायक रहे। उन सभी महानुभावों को मेरा कृतज्ञतापूर्वक नमस्कार समर्पित है।

तिरुमल श्री वेंकटेश्वर स्वामी के प्रधान अर्चक, ति.ति.देवस्थानम् के वैखानस आगम के आस्थान पंडित श्रीमान् माडम्बाकम् श्रीनिवास भट्टाचार्य और ति.ति.दे. के विश्रांत इंजनीयर श्री विखनसाचार्य की सूचनाएँ और बतायी गई विशेषताएँ - इस ग्रंथ की रचना में बहुत ही सहायकारी रहीं। इनको मेरे भक्ति पूर्वक नमस्कार समर्पित है।

सुप्रभात सेवा, एकांत सेवा, नित्य कल्याणोत्सव, आदि उत्सवों में भाग लेते रहे ताळ्ळपाका वंशज, श्री ताळ्ळ्पाका सत्यनारायणाचार्य एवं देवस्थानम् के वेद -पारायणंदार श्री राजगोपालन जी को मेरा साधुवाद प्रकट करना चाहूँगा जिन्होंने सब्र से मंदिर की कई विशेषताओं को मुझे समझाया।

इनके अलावा, कई मंदिर के अधिकारियों एवं अनधिकारियों ने इस मंदिर के विषयों के संचयन में मुझे सहायती की। उन सभीयों को मेरा धन्यवाद समर्पित है।

इस ग्रंथ की रचना के समय तथा सप्तगिरि (तेलुगु) में धारावाहिक प्रकाशन के समय मुझे प्रोत्साहित करते हेतु ति.ति.दे.के जन संपर्क अधिकारी श्री ए.सुभष गौड जी तथा सप्तगिरि के संपादक डा.एन.एस. राममूर्ति जी को कृतज्ञतापूर्वक वंदन समर्पित है।

अब मेरी आशा यह है कि आस्तिक महाशय इस ग्रंथ को आनंद निलयवासी का प्रसाद ही मानकर स्वीकारें और आस्वादन करें।

'आ परितोषाद् विदुषाम्' वाली आर्योक्ति ही इस समय मेरा आधार हैं।

सहस्रों नामों वाले हे वेंकटकृष्ण! मेरी कुशलता किस काम की?
खैर देखेंगे, सोचकर तू ने मुझे यह पुण्य दे दिया, बस इतना ही!''

तिरुपति **जूलकंटि बाल सुब्रह्मण्यम**

सूचना

अगले पृष्ठ पर तिरुमलेश के मंदिर निर्माण के रेखा चित्र में अंकित संख्याओं और अनुक्रमणिका में सूचित संख्याओं को कृपया जोडकर देखने का कष्ट करें।

अनुक्रमणिका

प्राक्कथन - - - - - - - - - - - -

परिचय - - - - - - - - - - - - - -

तिरुमलेश की सन्निधि - - - - - - - 1

श्री वराह स्वामी का मंदिर - - - - - 2

ब्रह्माण्ड नायक का महल - - - - - -

1. महाद्वार गोपुर	08
2. शंखनिधि - पद्मनिधि	11
3. कृष्णराय मंडप	12
4. आईना महल	15
5. रंगनायक मंडप	16
6. तिरुमलराय मंडप	19
7. तुलामान	21
8. राजा तोडरमल	21
9. ध्वजस्तंभ मंडप	22
10. ध्वजस्तंभ	23
11. बलिवेदी	24
12. क्षेत्रपालक शिला	25
13. संपंगि परिक्रमा	27
14. चार खंभोंवाले मंडप	30
15. श्री वेंकटरमण जी का कल्याणमंडप	31

16. भंडार - घर 32

17. विरजा नदी 32

18. रसोई घर 33

19. फूलों का घर 34

20. फूलों का कुआँ 40

21. वगपडि अर 42

22. रजतद्वार 43

23. विमान - परिक्रमा 44

24. श्री रंगनाथ 45

25. श्री वरदराजस्वामी का मंदिर 47

26. घंटामंडप 48

27. गरुडमंदिर 51

28. जय और विजय 52

29. स्वर्णद्वार 53

30. अभिषेकमंडप 57

31. राम जी का महल 60

32. शयनमंडप 63

33. कुलशेखर पडी 67

34. भगवान वेंकटेश का गर्भालय 68

35. श्री वेंकटेश्वर स्वामी
(मूल स्वयंभूमूर्ति) 70

36. भोग श्रीनिवास मूर्ती 248
37. कोलुवु श्रीनिवास मूर्ती 252
38. उग्र श्रीनिवास मूर्ती 254
39. श्री मलयप्पा स्वामी 256
40. श्री सुदर्शन चक्रत्ताळ्वार 268
41. श्री सीता राम लक्ष्मण 274
42. रुक्मिणी श्री कृष्ण 278
43. सालग्राम 282
44. प्रधान पाकशाला 289
45. वकुळा देवी 299
46. सुवर्ण कुआँ 303
47. अंकुरार्पण मंडप 307
48. यागशाला 309
49. सिक्कों का गिनती केन्द्र 310
50. नोटों का गिनती केन्द्र 313
51. चंदन घर 318
52. आनंदनिलय विमान 320
53. विमान वेंकटेश्वर स्वामी 338
54. अभिलेखागार 341
55. वेद पारायण 341
56. सभा घर 342
57. संकीर्तनागार 343

58. सन्निधि भाष्यकार	356
59. तिरुमलेश के डालर	368
60. श्री योग नरसिंहस्वामी	369
61. शंकु स्थापना मंडप	371
62. परिमल घर	371
63. तिरुमलेश की हुंडी	372
64. सुवर्ण वर लक्ष्मी	374
65. कटाहतीर्थ	375
66. श्री विष्वक्सेन	376
67. मुक्कोटि परिक्रमा	377
68. साष्टांग प्रणाम	378
69. तिरुमलेश के प्रसाद	379
70. श्री बेडी हनुमान	380
71. कल्याण घाट - केशपाशों का समर्पण	382
72. श्री स्वामि पुष्करिणी	385

T.T.D. Religious Publications Series No. 1069
Price :

Published by **Sri M.G. Gopal,** I.A.S., Executive Officer,
T.T.Devasthanams, Tirupati and Printed at T.T.D. Press, Tirupati.

श्री तिरुमलेश की सन्निधि

तेलुगु मूलः
जूलकंटि बाल सुब्रह्मण्यम

हिन्दी अनुवादः
डा. पुट्टपर्ति नागपद्मिनी

तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्
तिरुपति

श्री तिरुमलेश की सन्निधि

तेलुगु मूलः

जूलकंटि बाल सुब्रह्मण्यम

हिन्दी अनुवादः

डा. पुट्टपर्ति नागपद्मिनी

तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्
तिरुपति
2014

SRI TIRUMALESH KI SANNIDHI

Telugu Original
Julakanti Bala Subrahmanyam

Hindi Translation
Dr. Puttaparthi Nagapadmini

Editor-in-Chief
Prof. Ravva Sri Hari

T.T.D. Religious Publications Series No. 1069
©All Rights Reserved

First Edition - 2014

Copies : 3000
Price :

Published by
M.G. Gopal, I.A.S.,
Executive Officer,
Tirumala Tirupati Devasthanams,
Tirupati.

D.T.P:
Office of the Editor-in-Chief
T.T.D, Tirupati.

Printed at :
Tirumala Tirupati Devasthanams Press,
Tirupati.

आमुख

वेंकटाद्रिसमं स्थानं ब्रह्माण्डे नास्ति किंचन
वेंकटेशसमो देवो न भूतो न भविष्यति

''इस पूरे ब्रह्माण्ड में वेंकटाद्रि से समानता रखनेवाला पुण्य क्षेत्र दूसरा कोई नहीं है। वेंकटेश से समता रखनेवाला देवता, न भूतकाल मे था और भविष्य में रहेगा'' इस प्रशस्ति के अनेक कारण स्पष्ट हैं।

अन्नमाचार्य ने अपने अनेकानेक संकीर्तनों में इस क्षेत्र के आध्यात्मिक वैभव का आविष्कार किया। इस स्वामी का नाम भी अनुपमेय है। अपने इस स्थान एवं अपने वक्षःस्थल पर श्री महालक्ष्मी के विराजमान होने से ही श्री वेंकटेश स्वामी 'परब्रह्म' नाम से संबोधित हैं। मात्र इतना ही नहीं, इस स्वामी की खडे रहने की भंगिमा भी आश्चर्य जनक है। संसारसागर - समुत्तरणैकसेतो - कटि वरद हस्तों के साथ एक सुंदर रीति में खडे होकर, अपने सभी भक्तों पर दया बरसा रहे हैं - यह आनंद निलय स्वामी! अनेकानेक अमूल्य दिव्याभरणों, नवरत्न मणिहारों से आभूषित होते हुए - दर्शकों को आश्चर्य चकित कर देनेवाले इस वेंकट रमण स्वामी के अनंतवैभव का वर्णन कर पाना असंभव है।

नित्य कल्याण चक्रवर्ती उपाधि से अलंकृत इस स्वामी की पूजा - अर्चना विधा की भी एक विशिष्टता है। अत्यंत प्राचीन वैखानसागम के अनुसार दिन के षट्कालों में अर्चनाएँ होती हैं। अनेकानेक स्वादिष्ठ भोग भी चढाये जाते हैं। विविध उत्सव भी संपन्न होते हैं। इन सभीयों के कारण 'वेंकटेश' जी की महत्ता 'न भूतो न भविष्यति' की ख्याति को प्राप्त कर इस सारे ब्रह्मांण्ड मे परिव्याप्त हो गई है।

तिरुमलेश की सेवा मे मोक्ष को प्राप्त तोंडमान चक्रवर्ती, तिरुमलनंबी, अनंताळ्वान, अन्नमाचार्य, हथीराम बावाजी, तरिगोंड वेंगमांबा जैसे अनेकानेक भक्तों की पवित्र जीवन गाथायें, वेंकटेश्वर की भक्त प्रियता के साक्षी हैं। इनके कारण भी, इस क्षेत्र के वैभव एवं यश बढ़ गये हैं।

सप्त गिरीश से संबंधित अनेकानेक विषयों एवं विशेषताओं का अत्यंत श्रद्धा से संशोधन एव निरीक्षण कर इस क्षेत्र एवं स्वामी की दयालुता के साथ मंदिर की निर्माण - चातुरी को भी सभियों की समझ में आने की रीति में विरचित ग्रंथ है यह - 'तिरुमलेश की सन्निधि'।

श्री जूलकंटि बालसुब्रह्मण्यम् की इस तेलुगु रचना की हिन्दी अनुवादिका हैं - डा. पुट्टपर्ति नागपद्मिनी।

श्री वेंकटेश बालाजी के उत्तर भारत वासी भक्तों की सुविधा एवं कल्याण के लिए ति. ति. देवस्थानम् के द्वारा प्रकाशित यह ग्रंथ - आशा है - भक्तों को भी आनंद पहुँचायेगा।

सदा श्रीहरि की सेवा में

एम. जी. गोपाल

(एम.जी.गोपाल, ऐ.ए.एस)
कार्यनिर्वहणाधिकारी,
तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्,
तिरुपति

परिचय

स्मरणात् सर्वपापघ्नम् स्तवनादिष्टवर्षिणम्
दर्शनान्मुक्तिदम् चेशम् श्रीनिवासम् भजेऽनिशम्

इस स्वामी का स्मरण करने से बस - सभी पाप मिट जायेंगे। इस देवता का कीर्तन करेंगें तो बस - सभी इच्छाएँ पूरी हो जायेंगी। इस देवदेव के एक मात्र दर्शन से मुक्ति मिल जाती है। ऐसे श्रीनिवास जी का हर दिन स्मरण करूँगा।

भक्त, प्रिय, मुँह माँगे वरदान देनेवाले भगवान श्री वेंकटेश्वर स्वामी अर्चामूर्ती के रूप में स्वयंभू होते हुए विद्यमान, पवित्र क्षेत्र ही तिरुमल है! इस आनंद निलयवासी के मंदिर के प्रांगण में अनेक दिव्य स्थल, मंडप, अद्भुत शिल्प चातुरी से विराजित हैं। इतना ही नहीं बहुत सारे भक्तों की जीवन गाथाएँ इनसें जुडी हुई हैं एवं तिरुमलेश की भक्त वत्सलता के साक्षी भी हैं।

'नित्य कल्याण - मंगल तोरण' नाम से सुविख्यात इस वेंकटाचल में श्री वेंकटेश्वर स्वामी का नित्य कल्याणोत्सव संपन्न होता है। सिर्फ इतना ही नहीं, सुप्रभात सेवा, 'तोमाल सेवा', सहस्र नामार्चना सेवा, एकांत सेवा आदि नित्योत्सव, विशेष पूजा, अष्ट दळ पाद पद्माराधना, सहस्रकलशाभिषेक, तिरुप्पावडा सेवा, पूलंगि सेवा, शुक्रवाराभिषेक जैसे वारोत्सव, रोहिणी, आरुद्रा, पुनर्वस, श्रवण जैसे नक्षत्र उत्सव, कोइल आळ्वार तिरुमंजनम्, उगादि आस्थानम्, पद्मावती परिणयोत्सव, ज्योष्टाभिषेक, आणिवार आस्थानम्, पवित्रोत्सव, बह्मोत्सव आदि संवत्सरोत्सव भी श्री वेंकटेश्वर जी के ही उत्सव हैं। इन सारे संदर्भों में

तिरुमल पर, हर दिन एक उत्सव सा ही वातावरण हमेशा रहता है। हर पहर, खीरों, परमान्नों के नैवेद्य समर्पित होते रहते हैं। साल भर करीब 450 से बढकर उत्सवों का निर्वाह होता रहता है।

कितने ही धनवान हो, कितना ही समय उनके पास हो, लेकिन इस यंत्रवत जीवन की घडियों में, आनंद निलय की सभी विशेषताओं को प्रत्यक्षतया देखते हुए समझ पाना, असंभव है। तिरुमल पर संपन्न होनेवाले सभी उत्सवों में भाग -ले पाना तो कष्ट साध्य है। लेकिन भगवान श्री वेंकटेश के मंदिर के सारे उत्सवों, शोभायात्राओं तथा मंदिर से संबंधित सारी विशेषताओं को जान लेने की उत्सुकता तो हर एक भक्त में रहती ही है। उस उत्सुकता को, कम से कम कुछ हद तक ही सही, तृप्त करने के प्रयास का अक्षर रूप ही, यह रचना है।

इस रचना के द्वारा, तिरुमलेश के मंदिर का महाद्वार गोपुर, कृष्ण राय मंडप, आईना महल, रंगनायक मंडप, सुवर्ण ध्वज स्तंभ, बलि वेदी, क्षेत्र पालक शिला, विमान परिक्रमा में विलसित छोटे मंदिर, घंटा मंडप, सुवर्ण द्वार, स्नपन मंडप, रामजी का महल, शयन मंडप, गर्भालय में भगवान की मूल विराट मूर्ति, अन्य उत्सव मूर्तियाँ आदि मुख्य प्रदेशों, मूर्तियों एवं अनेकानेक अद्भुत विषयों को प्रत्यक्षतया देखते हुए आनंदित होने का अनुभव पाठक गण अवश्य पाते हैं।

सन् 1992 में ति.ति.दे के तत्कालीन कार्यनिर्वहणाधिकारी श्री एम. वी. एस प्रसाद जी आई. ए. एस. ने मुझे प्रेरणा दी कि तिरुमल मंदिर की सभी विशेषताओं, पूजा, अर्चना उत्सवों एवं शोभायात्राओं के बारे में एक ग्रंथ लिखें। इतना ही नहीं, तिरुमल के मंदिर में दो साल तक, इसी

काम पर लगे रहने की अनुमति भी दी। सभी सेवाओं को निः शुलक देखने एवं विषय संचयन करने के आदेश भी उन्होंने दिये। इन सब के कारण तिरुमलेश की सारी भक्त कोटि को महोन्नत सेवा करने का अवसर मुझे मिला। एतदर्थ श्री. एम. वी. एस. प्रसाद जी को मेरी यह कृतज्ञतांजलि समर्पित है।

1995 सं में तत्कालीन कार्यनिर्वहणाधिकारी श्री निम्मगड्डा रमेश कुमार आई.ए.एस जी ने. मेरे इस ग्रंथ का निरीक्षण किया तथा निर्णय किया कि इसे भक्तों तक अवश्य पहुँचाना चाहिए। इतना ही नही सप्तगिरि (तेलुगु) मास पत्रिका में तुरंत प्रकाशित करने के आदेश दिये। एतदर्थ, श्री रमेश कुमार जी को मेरी विनयांजलि समर्पित है।

1995 सितंबर से 2000 फरवरी तक सप्तगिरि (तेलुगु) मास पत्रिका में धारावाहिक प्रकाशन के द्वारा, अशेष भक्त, जनो के आदर - सम्मान प्राप्र इस हरिकोलुवु (तेलुगु) को 'ति.ति. देवस्थानम का धार्मिक प्रकाशन के रूप में प्रकाशित कर, भक्त जनों को भेंट करने का श्रेय तत्कालीन ति.ति.दे.के कार्यनिर्वहणाधिकारी, संगीत साहित्यों के विद्वान डा.आई.वी. सुब्बाराव, आई. ए.एस को जाता है। उन्हें मेरा भक्ति पूर्वक प्रणाम समर्पित है।

यह मेरा सौभाग्य है कि तेलुगु का यह ग्रंथ अब तक कई बार पुनः पुनः प्रकाशित हुआ और जैसे ही प्रकाशित होता रहा, वैसे ही सारी प्रतियाँ बिक जाती रहीं। इसका अर्थ मेरी समझ में यही है कि भगवान वेंकटेश से संबंधित अनेकानेक विषयों को जानने की, उनके अनन्य भक्तों की प्यास को कुछ हद तक ही सही, बुझाने की क्षमता, तिरुमलेश

की कृपा के कारण, मेरी रचना में है। अब इसका हिन्दी अनुवाद भी, भगवान बालाजी के -उन्तर भारत के भक्तों को उपलब्ध कराने का ति.ति. देवस्थानम् का यह निर्णय, आनंद दायक है।

ति.ति. के मंदिर, उनकी विशेषताओं, एवं तिरुमलेश के भक्तों के बारे में सर्वश्री वेटूरि प्रभाकर शास्त्री, साधु सुब्रह्मण्य शास्त्री, टी.के.टी. वीर राघवाचार्य, एम.एस. रमेशन. वेदांतम् जगन्नाथाचार्य, एस.के. रामचन्द्र राव, एन.सी.वी. नरसिंहाचार्युलु, गोपी कृष्ण, प्रोफेसर के. सर्वो-त्तम राव, जैसे पंडितों ने जो अनेकानेक ग्रंथ लिखे जो मेरी इस रचना के सहायक रहे। उन सभी महानुभावों को मेरा कृतज्ञतापूर्वक नमस्कार समर्पित है।

तिरुमल श्री वेंकटेश्वर स्वामी के प्रधान अर्चक, ति.ति.देवस्थानम् के वैखानस आगम के आस्थान पंडित श्रीमान् माडम्बाकम् श्रीनिवास भट्टाचार्य और ति.ति.दे. के विश्रांत इंजनीयर श्री विखनसाचार्य की सूचनाएँ और बतायी गई विशेषताएँ - इस ग्रंथ की रचना में बहुत ही सहायकारी रहीं। इनको मेरे भक्ति पूर्वक नमस्कार समर्पित है।

सुप्रभात सेवा, एकांत सेवा, नित्य कल्याणोत्सव, आदि उत्सवों में भाग लेते रहे ताळ्ळपाका वंशज, श्री ताळ्ळ्पाका सत्यनारायणाचार्य एवं देवस्थानम् के वेद -पारायणंदार श्री राजगोपालन जी को मेरा साधुवाद प्रकट करना चाहूँगा जिन्होंने सब्र से मंदिर की कई विशेषताओं को मुझे समझाया।

इनके अलावा, कई मंदिर के अधिकारियों एवं अनधिकारियों ने इस मंदिर के विषयों के संचयन में मुझे सहायती की। उन सभीयों को मेरा धन्यवाद समर्पित है।

इस ग्रंथ की रचना के समय तथा सप्तगिरि (तेलुगु) में धारावाहिक प्रकाशन के समय मुझे प्रोत्साहित करते हेतु ति.ति.दे.के जन संपर्क अधिकारी श्री ए.सुभष गौड जी तथा सप्तगिरि के संपादक डा.एन.एस. राममूर्ति जी को कृतज्ञतापूर्वक वंदन समर्पित है।

अब मेरी आशा यह है कि आस्तिक महाशय इस ग्रंथ को आनंद निलयवासी का प्रसाद ही मानकर स्वीकारें और आस्वादन करें।

'आ परितोषाद् विदुषाम्' वाली आर्योक्ति ही इस समय मेरा आधार हैं।

सहस्रों नामों वाले हे वेंकटकृष्ण! मेरी कुशलता किस काम की?
खैर देखेंगे, सोचकर तू ने मुझे यह पुण्य दे दिया, बस इतना ही!''

तिरुपति **जूलकंटि बाल सुब्रह्मण्यम**

सूचना

अगले पृष्ठ पर तिरुमलेश के मंदिर निर्माण के रेखा चित्र में अंकित संख्याओं और अनुक्रमणिका में सूचित संख्याओं को कृपया जोडकर देखने का कष्ट करें।

-✳-✳-✳-

अनुक्रमणिका

प्राक्कथन - - - - - - - - - - - -

परिचय - - - - - - - - - - - - - -

तिरुमलेश की सन्निधि - - - - - - - 1

श्री वराह स्वामी का मंदिर - - - - - 2

ब्रह्माण्ड नायक का महल - - - - - -

1. महाद्वार गोपुर	08
2. शंखनिधि - पद्मनिधि	11
3. कृष्णराय मंडप	12
4. आईना महल	15
5. रंगनायक मंडप	16
6. तिरुमलराय मंडप	19
7. तुलामान	21
8. राजा तोडरमल	21
9. ध्वजस्तंभ मंडप	22
10. ध्वजस्तंभ	23
11. बलिवेदी	24
12. क्षेत्रपालक शिला	25
13. संपंगि परिक्रमा	27
14. चार खंभोंवाले मंडप	30
15. श्री वेंकटरमण जी का कल्याणमंडप	31

16. भंडार - घर	32
17. विरजा नदी	32
18. रसोई घर	33
19. फूलों का घर	34
20. फूलों का कुआँ	40
21. वगपडि अर	42
22. रजतद्वार	43
23. विमान - परिक्रमा	44
24. श्री रंगनाथ	45
25. श्री वरदराजस्वामी का मंदिर	47
26. घंटामंडप	48
27. गरुडमंदिर	51
28. जय और विजय	52
29. स्वर्णद्वार	53
30. अभिषेकमंडप	57
31. राम जी का महल	60
32. शयनमंडप	63
33. कुलशेखर पडी	67
34. भगवान वेंकटेश का गर्भालय	68
35. श्री वेंकटेश्वर स्वामी (मूल स्वयंभूमूर्ति)	70

36. भोग श्रीनिवास मूर्ती	248
37. कोलुवु श्रीनिवास मूर्ती	252
38. उग्र श्रीनिवास मूर्ती	254
39. श्री मलयप्पा स्वामी	256
40. श्री सुदर्शन चक्रत्ताळ्वार	268
41. श्री सीता राम लक्ष्मण	274
42. रुक्मिणी श्री कृष्ण	278
43. सालग्राम	282
44. प्रधान पाकशाला	289
45. वकुळा देवी	299
46. सुवर्ण कुआँ	303
47. अंकुरार्पण मंडप	307
48. यागशाला	309
49. सिक्कों का गिनती केन्द्र	310
50. नोटों का गिनती केन्द्र	313
51. चंदन घर	318
52. आनंदनिलय विमान	320
53. विमान वेंकटेश्वर स्वामी	338
54. अभिलेखागार	341
55. वेद पारायण	341
56. सभा घर	342
57. संकीर्तनागार	343

58. सन्निधि भाष्यकार 356
59. तिरुमलेश के डालर 368
60. श्री योग नरसिंहस्वामी 369
61. शंकु स्थापना मंडप 371
62. परिमल घर 371
63. तिरुमलेश की हुंडी 372
64. सुवर्ण वर लक्ष्मी 374
65. कटाहतीर्थ 375
66. श्री विष्वक्सेन 376
67. मुक्कोटि परिक्रमा 377
68. साष्टांग प्रणाम 378
69. तिरुमलेश के प्रसाद 379
70. श्री बेडी हनुमान 380
71. कल्याण घाट - केशपाशों का समर्पण 382
72. श्री स्वामि पुष्करिणी 385

--*

तिरुमलेश की सन्निधि

तिरुमल पुण्य क्षेत्र, कलियुग वैकुंठ के नाम से सुविख्यात है। इस ख्याति के कारक हैं - स्वयंव्यक्त रूप में यहाँ पधारे हुए वेंकटेश्वर स्वामी जी! एक सालिग्राम शिला के द्‌वारा स्वयंभू के रूप में विलसित श्री वेंकटेश्वर स्वामी जी को कुछ लोग 'सप्तगिरीश' कहते हैं। कुछ लोग बालाजी के नाम से संबोधित करते हैं। और कुछ लोग भक्ति से 'तिरुमलप्पा' 'तिम्मप्पा', 'सात पहाडों के स्वामी' कहते हैं। इस तरह अलग अलग नाम हैं स्वामी के! यह स्वामी तो स्वयं ''आनंद का निलय'' है। इसीलिए इस स्वामी का यह निवास भी ''आनंद निलय'' के नाम से सदियों से व्यवहृत है।

कलियुग के प्रारंभ मे अर्थात पाँच हजार सालों के पहले वक्षःस्थल लक्ष्मी' के साथ अकेले ही इस स्वामी का आविर्भाव हुआ था। तभी से कई भक्तों ने उनके लिए मंदिर गोपुर प्राचीरों तथा महाद्‌वारों को निर्मित करते रहे। इस वेंकटपति के नित्योत्सव, वारोत्सव, पक्षोत्सव, मासोत्सव तथा वत्सरोत्सव आदि विविध उत्सवों का आयोजन भी अत्यंत भक्ति, और श्रद्धा के साथ करते रहे।

'नारायण वन' के अधीश आकाश राजा, तोंडमान चक्रवर्ती, पललव राणी सामवै (पेरून्देवी) विजयनगर के राजा साळुव नरसिंह रायलु, श्रीकृष्ण देव रायलु, तिरुमल रायलु, अच्चुत रायलु आदि कई राजाओं द्‌वारा निर्मित इस मंदिर की शिल्प चातुरी को तथा कई सारे महानुभावों के अनुपमान सेवा कैंकर्यों के निधान तिरुमल श्रीवारू के मंदिर का दर्शन करेंगे। उसकी विशेषताओं के बारे में जान लेंगे।

इस क्षेत्र के नियमानुमार पहले हम, श्री वराहस्वामी के मंदिर का दर्शन करेंगे। उसके बाद तिरुमल आनंद निलय स्वामी के स्वर्ण मंदिर में प्रवेश करेंगे।

श्री वराहस्वामी का मंदिर

तिरुमल में श्री वेंकटेश जी के मंदिर की वायव्य दिशा में पूरब दिशा की तरफ, श्री वराह स्वामी का मंदिर है जिन्होंने आदि वराहस्वामी के रूप में अवतरित होकर भूदेवी की रक्षा की थी। बाद में वे इसी स्थान पर बस गये। तदनंतर कुछ समय बाद, श्री वेंकटेश्वर जी वैकुंठ से यहाँ आ गये। यहीं, पर बस जाने, के लिए भी वराहस्वामी जी से सौ गज के जमीन को दान में उन्होंने पाया था।

स्थलम् देह्यवनीकांत यावत् कलियुगम् भवेत्
इति तेन सविज्ञप्तो वराहवदनो हरिः
उवाच वचनम् देव स्थलम् मौल्येन गृह्यताम्
इति वाक्यम् ततः श्रुत्वा प्रोवाच मधुरम् वचः
प्रथमम् दर्शनम् च स्यान्नैवेद्यम् क्षीरसेचनम्
इदमेव परम् द्रव्यम् ददामि करुणानिधे
इत्युक्तो हरिणापोत्री हरये स्थानकांक्षिणे
तदा ददौ स्थलम् पादशतमात्रम् रमापते

प्रथम दर्शन, प्रथम पूजा तथा प्रथम नैवेद्य इन तीनों शर्तों युक्त ''दान - प्रपत्र'' के साथ सौ गज की भूमि को श्री वेंकटेश्वर जी ने उनसे पाया। तदनंतर काल में, अपनी लोकप्रियता को भी बहुत बढ़ाया। लेकिन सर्वप्रथम नियमानुसार आज भी श्री वराहस्वामी जी को ही प्रथम - पूजा

का गौरव यहाँ दिया जा रहा है। तिस पर श्री वराहस्वामी जी के लिये आवश्यक पूजा सामग्री, निवेदन आदि सब कुछ भगवान बालाजी के मंदिर से ही भेजे जाते हैं। यह हो ध्यान देने की बात है।

वराहदर्शनात् पूर्वम् श्रीनिवासम् नमेन्न च
दर्शनात् प्राग्वराहस्य श्रीनिवासो न तृप्यति

तिरुमल आकर, बिना वराह स्वामी के दर्शन के ही तिरुमलेश के पास जाना - यहाँ का संप्रदाय नहीं है। पहले वराह स्वामी के दर्शन के बाद ही वेंकटेश के पास, जाना ही विशेष फलप्रद भी है।

श्री वराहस्वामी से संबंधित शासनों की उपलब्धि भी नकारात्मक ही है। सन् 1380 में प्राप्त एक सर्वप्रथम शासन में श्री वराहस्वामी, वराह नायनार के नाम से उलिलखित हैं। उसके बाद सन् 1476 के शासन में वे, 'ज्ञानप्पिरान्' के नाम से व्यवहृत हैं। इसका अर्थ है ज्ञान प्रदाता। पहले इनका दर्शन करनेवाला भक्त ''ज्ञानमय कोश'' में प्रवेश करता है। ज्ञानमय कोश में प्रवेश करने के बाद आनंद मय कोश की सिद्धि अनायास ही होती है। इसी कारण आनंद प्रदाता बालाजी के भव्य दर्शन, आखिर में ही करना चाहिए, आनंद निलय स्वामी के दर्शन करनेवालों के लिए शाश्वत मुक्ति अति सुलभ है।

सन् 1481 के बाद 'आदि वराहप्पेरुमाळ' नाम से मशहूर इस वराहस्वामी को उत्तर भारत वासी, श्री वेंकटेश्वर के आदि गुरु मानते हैं। ज्ञानदाता गुरू के जरिये ही भगवान के दर्शन तद्वारा भगवान की सन्निधि की सत्वर प्राप्ति होगी। इसीलिए वराहस्वामी का सर्वप्रथम दर्शन यहाँ का संप्रदाय है।

श्री वराहस्वामी की, हर दिन वैखानस आगमानुसार अर्चना होती है। निवेदन होते हैं। श्री वेंकटेश्वर स्वामी के मंदिर की रसोई में बने अन्न प्रसाद सभी, पहले वराह स्वामी को ही समर्पित होते हैं। इसी तरह हर शुक्रवार बडे सवेरे ही अभिषेक भी होते हैं। लेकिन प्रत्येकतया कोई उत्सव मनाये नहीं जा रहे हैं।

बालाजी की पुष्करिणी की वायव्य दिशा में पूरब की दिशा की तरफ उभरकर आये हुए इस मंदिर में, मुखमंडप, अर्ध मंडप, अंतराळ, गर्भालय नामक चार विभाग हैं। सुंदर शिल्पों से सुसज्जित मुखमंडप में, हर ब्रह्मोत्सव के आखिरी दिन पर, श्रवण नक्षत्र की शुभवेला में, चक्रस्नान संपन्न होता है। उस दिन श्री देवी, भूदेवी साहित भगवान बालाजी, चक्रत्ताळ्वार के साथ यहाँ पधारते हैं। इस मंडप में इन सबको ''पंचामृत स्नपन तिरुमंजन'' की सेवा के बाद, वराह पुष्करिणी में चक्रस्नान संपन्न होता है। इसी तरह रथ सप्तमी, तथा वैकुंठ एकादशी के पर्व दिनों पर, मात्र श्री चक्रत्ताळ्वार ही यहाँ पधारते हैं तथा अभिषेक के बाद पुष्करिणी में चक्रस्नान भी संपन्न होता है।

इस मुखमंडप के सामने ही श्री वराहस्वामी के मंदिर की परिक्रमा का मार्ग भी है।

मुखमंडप में से अंदर प्रवेश करते हैं तो हमें दिखाई देगा अर्ध मंडप। श्री वराहस्वामी के गर्भालय की परिक्रमा का मार्ग भी यही है।

इसे पार कर जाने के बाद छोटा सा अंतराळ है जिसके द्वार के दोनों तरफ शंख चक्र गदा धारी जय - विजय, फहरा देते हुए खडे हैं।

करीब छः फुट की इन पंच लोह मूर्तियों के चारों तरफ लोह रक्षा की जालियाँ निर्मित हैं। इन मूर्तियों को पार कर अंदर जायेंगे तो पाँच छः फुट के चतुरस्राकार का अंतराळ दिखेगा जहाँ खडे होने से गर्भालय में विद्यमान भूवराह स्वामी के भव्य दर्शन का भाग्य, भक्त जनों को मिलेगा।

इस अंतराळ के बाद ही गर्भालय है। करीब 7×7 फुट के इस निर्माण के बीच, करीब एक फुट की उँचाई की शिला वेदी पर, श्रीभूवराह स्वामी की शिला मूर्ति प्रतिष्ठित है जो दो फुट की ऊँचाई की होगी। देखिए शंख चक्र धारी वराहस्वामी अपनी दायीं जंघा पर भूदेवी को बिठाकर, ऊर्ध्व पुण्ड्रों के साथ प्रभा भासमान हैं।

इस मूल मूर्ति के साथ एक फुट की ऊँचाई की पंच लोह वराह मूर्ति, उतनी ही ऊँचाई की श्री वेंकटेश्वर की पंच लोह मूर्ति एवं कुछ सालिग्राम भी यहाँ पर हैं।

श्री वराहस्वामी के ही सामने एक फुट के चतुरस्राकार का, एक ताम्र फलक का यंत्र भी हमें दिखाई दे रहा है। कहते हैं कि वही, वराहस्वामी को श्री वेंकटेश्वर स्वामी जी के द्वारा दिया गया दान पत्र है जिसपर ब्राह्मी त्विपि जैसी लिखावट है।

श्री वेंकटेश्वर स्वामी के मंदिर की महा परिक्रमा के मार्ग में ही स्थित वराह स्वामी के मंदिर में प्रत्येकतया कोई ध्वज स्तंभ ही नहीं है। इस कारण, यहाँ किसी तरह के उत्सव मनाये नही जाते हैं। तिसपर श्री वेंकटेश्वर स्वामी और वराह स्वामी - दोनों के नक्षत्र श्रवण ही है। दोनों भी अभिन्न माने जाने के कारण, माना जाता है कि श्री वेंकटेश्वर स्वामी ने नाम पर संपन्न सभी उत्सव, श्री वराह स्वामी को भी समर्पित हैं।

सन् 1800 में, वराह स्वामी के मंदिर की बहुत कम आमदनी होने के कारण ईष्ट इंडिया कंपनी ने इस मंदिर का निर्वाह करने से इनकारा, इसीलिए यह मंदिर जीर्ण - शीर्ण हो जाने लगा। बाद में सन् 1900 में देवस्थान के निर्वाहक महंत प्रयाग दास ने इस शिथिल मंदिर से वराह स्वामी की मूर्तियों को लाकर श्री वेंकटेश्वर स्वामी के आईना मंदिर में सुरक्षित रखा था। दस साल के बाद, शिथिल वराह स्वामी मंदिर का अत्यंत श्रद्धासक्तियों से पुनरूद्धार कर महंत प्रयाग दास ने वराहस्वामी की पुनः प्रतिष्ठा की। तब से आज तक, इस मंदिर का निर्वाह श्री वेंकटेश्वर स्वामी ही कर रहे हैं।

सन् 1982, अप्रैल 21 से 26 तक, श्री वराहस्वामी के मंदिर का महा संप्रोक्षण भव्य रीति में संपन्न हुआ था। श्री वराहस्वामी की मूलमूर्ति की वेदी की ऊँचाई बढ़ाई गई है। स्वामी जी के लिए ''सुवर्ण मकर तोरण'' भी बनाया गया, मंदिर पर बडे विमान का निर्माण हुआ। स्वर्ण कलश की स्थापना भी हुई है।

तिरुमल क्षेत्र में सर्वप्रथम पधारे हुए स्वामी वराहस्वामी हैं। इसीलिए यह क्षेत्र आदि वराह क्षेत्र के नाम से सुविख्यात हुआ है। इसी कारण यहाँ पर आये हुए भक्त भी पहले, पुस्करिणी तीर पर स्थित, भूदेवी सहित श्री आदि वराह स्वामी के दर्शन के लिए ही आते हैं। वराह स्वामी तथा वेंकटेश्वर स्वामी भी वे ही हैं। दोनों रूपों में अपने भक्तों की मनो वांछाओं की पूर्ति करनेवाले स्वामी की प्रार्थना हम करेंगे।

''वरम् श्वेतवराहाख्यम् संहारम् धरणीधरम्
स्वदंष्ट्राभ्याम् धरोद्धारम् श्रीनिवासम् भजेऽनिशम्''

श्रेष्ट अंगों से विराजित स्वामी, भूदेवी के हरण कर्ता हिरण्याक्ष का संहार कर, अपने खाँगों से भूमि का उद्धार करनेवाले श्वेत वराह स्वामी - श्रीनिवास की सर्वदा स्तुति करेंगे।

पुष्करिणी तट पर विराजमान हनुमान्

श्री वराहस्वामी मंदिर के सामने की पुष्करिणी के उस पार ईशान्य दिशा में नमस्कार भंगिमा में हनुमान का एक मंदिर है जो व्यासरायलु जी (15 वी सदी) में स्थापित कहा जाता है। इस हनुमानजी को हर रविवार के दिन पंचामृताभिषेक तथा निवेदन भव्य रूप से चढ़ाये जाते हैं।

श्रीमदांजनेय वरद गोविन्द गोविन्द!

ब्रह्माण्ड नायक का स्वर्णिम भवन

तिरुमल वह पुण्य क्षेत्र है जहाँ सीधे वैकुंठ से साक्षात् श्रीहरि स्वयं आकर आवास करते हुए अपने दिव्य दर्शन हमें दे रहे हैं। कोटि कोटि मन्मथाकार स्वामी अपने मोहन रूप में मात्र आवास करना ही नहीं, किंतु स्वयं को ''समस्त मानव जाति के वेम् पापों को, कटः मिटाने वाले वेंकटपति'' तथा श्री महाविष्णु प्रकटित कर रहे हैं। सबों के लिए आसरा तथा आधार बन, ''कलौ वेंकटनायकः'' उपाधि से कीर्तित सार्थक नामधेय स्वामी हैं - ये श्रीनिवास! शेषाचल, गरूडाचल, वेंकटाचल, नारायणाचल, वृषभाचल, वृषाचल, अंजनाचल नामक सात गिरियों के बीच बिराजमान इस स्वामी को सप्तगिरीश कहा जाता है। वक्षः स्थल पर लक्ष्मी को बिठाकर रहने के कारण, इन्हें श्रीनिवास भी कहते हैं। तिरुमल में रहने के कारण तिरुमलेश, तिरुमलप्पा के नाम भी इन्हें दिये गये हैं। नाम कितने भी हों लेकिन ये स्वामी हैं - भक्तों के कलपतरु! सेवा करनेवालों की मनोकामनाओं की तत्क्षण पूर्ति करनेवाले हैं! मन में ही

इन्हें बसा लेनेवालों के परब्रह्म हैं। तन्मयीभूत मनों से अपनी स्तुति करनेवालों का आनंद रूप ही है यह स्वामी!

देखिए! दर्शन कर लीजिये। तिरुमलेश के इस स्वर्णिम भवन को मन की आँखों से देखिए! इसका एक एक मंडप - एकेक भक्त के त्याग का प्रतीक है! इस भवन का हर पग भक्तों की विचित्र गाथाओं का आगार है। हर अणु गोविन्द के वरदानों तथा भक्तों के प्रति अनगिनत अनुराग का उदाहरण है। युग युगों से असंख्याक भक्तों ने अपने तनों और मनों को इसी स्वामी को समर्पित कर, उनकी जगन्मोहन मूर्ति को हृदय मंदिरों में बसाकर रखा है। उसी स्वामी का यह स्वर्णिम भवन है। चलिए, इसमें प्रवेश करेंगे! इसकी विशेषताओं को परखेंगे! प्रवेश करने के पहले एक बार, क्यों न हम सब उस गोविंद का नाम मन की तह से जोर से लें?

1. महाद्वार गोपुर

देखिए! हमें दिखाई दे रहा है - उस ब्रह्माण्ड नायक के स्वर्णिम भवन (तिरुमल मंदिर) का प्रधान प्रवेश द्वार जो पूर्वाभिमुख होते हुए समस्त लोकों के अधिनायक तिरुवेंकट गिरीश के वैभव का सहस्त्र मुखों से कीर्तिगान करते हुए प्रकाश मान है! उस महाद्वार गोपुर को हाथ ऊपर कर अंजलि समर्पित कर लें।

गोविन्द! गोविन्द! गोविन्द!

इसी प्रधान द्वार के कई नाम हैं जैसे -''पडि कावलि'', 'मुख द्वार', 'सिंहद्वार' आदि! तमिळ में इसे 'पेरिय तिरुवाशल' कहते है जिसका अर्थ है - बडा द्वार!

इसी महाद्वार पर ऊँचे गोपुर के निर्माण के अनुकूल मजबूत शिलाओंसे द्वार के अंदर एवं बाहर की तरफ आधार वेदी बनाई गयी है। 38×32 के नाप की इस मजबूत वेदी पर ही अत्यंत सुंदर शिल्प कला युक्त पांच मंजिलों का गोपुर निर्मित है। 13वी सदी में इस गोपुर का निर्माण होने लगा तथा शनैः शनैः संपूर्ण रूप दिया गया। पचास फुट के इस गोपुर पर कांतियों को बिखेर रहे सप्त स्वर्णिम कलशों को देखिए!

इस महाद्वार को पार कर अंदर प्रवेश करेंगे तो जो प्राचीर हमें दिखाई देगा - वही 'महाप्राचीर' है! स्वामी के मंदिर के चारों तरफ, बडी बडी शिलाओं से चार फुट की चौडाई और तीस फुट की ऊँचाई से बनाया गया है यह!

हम अब इस प्राचीर का अनुसरण करते हुए स्वामी के मंदिर की महा परिक्रमा करेंगे।

इस 'महा प्राचीर' की लंबाई उत्तर तथा दक्षिण दिशा में 263 फुट तथा पूरब पश्चिम की दिशा में 414 फुट - कुल, मिलाकर 1354 फुट है।

इस मंदिर के चारों तरफ चार वीथियाँ हैं। पूरब की दिशा की सडक को 'तूर्पु माड वीथी', दक्षिण की वीथी को 'दक्षिण माड वीथी', उत्तर की वीथी को 'उत्तर माड वीथी' तथा 'पश्चिम वीथी' को 'पश्चिम माड वीथी' कहते हैं। इसी तरह स्वामी के महाद्वार के आगे श्री बेडी हनुमान जी के मंदिर तक की सडक को 'सान्निधि वीथी' कहा जाता है। तूर्पु माड वीथी की लंबाई 750 फुट है। दक्षिण तथा उत्तर मांड वीथियों की लंबाई एक एक की 800 फुट तथा 'पडमर माड वीथी' की लंबाई 900 फुट है। इन चारों माड वीथियों के मार्ग से मंदिर की परिक्रमा - करने की विधा को 'महापरिक्रमा का मार्ग' कहते हैं। श्री वेंकटेश्वर स्वामी के सभी

उत्सव इसी मार्ग पर ही संपन्न होते हैं। इस महापरिक्रमा की पूरी विस्तृति है - 16 एकड। इसी मार्ग में, श्री वेंकटेश्वर का मंदिर, श्री वराह स्वामी का मंदिर, स्वामी की पुष्करिणी, पुरानी पुष्करिणी के छप्पर, श्रीनिवास स्वामी के अर्चकों के घर आदि हैं। लेकिन, दिन ब दिन बढती हुई भक्तों की संख्या को दृष्टि में रखकर, इस परिक्रमा के मार्ग में स्थित मठों और यात्री निवासों को निकालकर इसे चौडा बना रहे हैं।

भगवान बालाजी का मंदिर 2.20 एकडों में है। पुष्करिणी तो 1.50 एकडों में है। पुरानी पुष्करिणी के छप्परों का विस्तार 2.50 एकड है। वराहस्वामी का मंदिर तथा अन्यस्थल, दस एकडों में हैं। कुल मिलाकर 16.2 एकड।

इस महाद्वार प्रवेश मार्ग को देखिए जिसकी 32’×99’ लंबाई तथा चौडाई है।

इस प्रवेश मार्ग में पूरब और पश्चिम दोनों तरफ समान दूरी पर दो शिला निर्मित द्वारबंध जडे हुए हैं। बाहर की तरफ जो पहला द्वार बंध है उसमें दो बडे बडे दारू निर्मित तथा छोटी छोटी घंटो से सुसज्जित दरवाजे लगे हुए हैं।

इन दोनों दरवाजों में उत्तर की दिशा में लगे दरवाजे में एक छोटा सा दरवाजा भी है। महाद्वार जब बंद होता है उस समय आवश्यकता के अनुसार इस दरवाजे के द्वारा मंदिर के कर्मचारी आते जाते रहते हैं।

हाल ही में (1996 जनवरी) इन बडे द्वारों को पीतल का आच्छादन दिया गया है। अब इन्हें पीतल के द्वार कह सकते हैं। अंदर चाँदी के द्वार और सोने के द्वार भी है। उनके बारे में आगे मालुम कर लेंगे।

'हर दिन कल्याण - हर दिन मंगल तोरण' नारे से प्रसिद्ध इस क्षेत्र पर यह महाद्‌वार, हर दिन आम और केले के पत्तों से हरा भरा रहता है।

श्री वेंकटेश्वर स्वामी के दिव्य दर्शन के लिए आये हुए भक्त जन पुरानी पुष्करिणी के छप्परों के नीचे से आकर ही, इस महाद्‌वार में प्रवेश कर सकते हैं।

अब इस महाद्वार से होते हुए, मंदिर में हम प्रवेश करते करते एक बार उस गोविंद का भी नाम जोर से लेंगे।

गोविन्द! गोविन्द! गोविन्द!

2. शंखनिधि - पद्मनिधि

तनिक ठहरकर यहाँ देखिए। इस महाद्‌वार के दोनों तरफ द्‌वार पाल की तरह दो फुट की दो पंच लोह मुर्तियों दिखाई दे रही हैं न? ये दोनों महानुभाव ही, श्री वेंकटेश्वर स्वामी जी की संपदा तथा नवनिधियों की रक्षा करनेवाले देवता हैं। बायीं तरफ के देवता के हाथों में दो शंख हैं देखिए। इनका नाम हैं - शंखनिधि! दायीं तरफ की मूति के हाथों में कमल माने पद्‌म हैं - इसीलिए इनका नाम पद्‌मनिधि है। इन दोनों देवताओं के चरणों के पास छ : इंच की मूर्ति जो है, वह विजयनगर के चक्रवर्ति - अच्युत देव रायलु की है। शायद इन्होंने ही इन देवतामूर्तियों की स्थापना यहाँ पर की होगी।

आगम शास्त्र के अनुसार साधारणतया, इन देवताओं की स्थापना, तीसरे प्राचीर के प्रवेश द्‌वार पर की जाने का संप्रदाय है। यहाँ इन निधि - देवताओं की स्थापना से स्पष्ट है कि यह मंदिर भी तीन प्राचीरों का

है जिनमे पहला मुक्कोटि परिक्रमा है, दूसरा विमान परिक्रमा और तीसरा संपंगि परिक्रमा।

इन परिक्रमाओं के बारे में आगे विस्तारपूर्वक जान लेंगे। पहले इन महाद्वार देवताओं (शंख निधि, पद्मनिधि) का नमन करेंगे तथा मंदिर में प्रवेश करेंगे।

गोविन्द! गोविन्द! गोविन्द!

3. कृष्णराय मंडप

महाद्वार मंडप के सामने अंदर की तरफ 16 खंभों का एक मंडप है। 27×25 के विस्तार के इस मंडप को कृष्णराय मंडप और प्रतिमा मंडप भी कहते हैं। विजयनगर शिल्प संप्रदाय के अनुसार बनाया गया है यह!

साहिती समरांगण सार्वभौम! कृष्ण देव रायलु की मूर्ति! विजय नगर साम्राज्य का चक्रवर्ती, रायलु उनकी दोनों पत्नियों के साथ अंजलि घटते हुए खडे हैं भक्ति में तललीन मुद्रा में! सन् 1517 सं जनवरी। के दिन, कहा जाता है कि कृष्ण देव रायलु ने स्वयं अपनी इन मूर्तियों की स्थापना यहाँ की थी! इन मूर्तियों के कंधों पर इनके नाम आदि का विवरण है देखिये! उस दिन से यह मंडप कृष्ण देवराय मंडप के नाम से सुविख्यात है!

सन् 1513 से सन् 1521 तक, सात बार रायलु ने तिरुमल की यात्रा की थी। 1513 में फरवरी 10 के दिन, पहली बार अपनी पत्नियों के साथ जब यहाँ आया था उस समय एक नवरत्न मुकुट, 25 चाँदी की थालियों

को उन्होंने समर्पित किया था। उनकी पत्नियों ने ''दुग्ध निवेदन'' के लिए दो सोने के बरतनों को दिये थे। फिर से उसी साल मई 2, जून 13 के दिन अकेले रायलु ने यहाँ पर आकर स्वामी के लिए अमूलय आभूषण, उत्सव मूर्तियों के लिए तीन मणिमय मुकुटों को समर्पित किया। तिरुमलेश के नित्य कैंकर्य के लिए पाँच गाँवों को भी ईनाम के रूप में दिया था। हर साल, तमिळ महीना 'तै' में अपने माता - पिता के आत्मोद्धार के लिए उत्सवों का आयोजन करता था। सन् 1514 जुलाई 6 के दिन चौथी बार रायलु, श्रीनिवास का भव्य दर्शन कर, तीन हजार सोने के सिक्कों से 'कनकाभिषेक' किया था। तिरुमलेश, की नित्याराधना के लिए ताळ्ळपाका गाँव को दान के रूप में दिया। सन् 1515 में विजयनगर से ही रायलु ने भगवान बालाजी को, रत्नों से जडित मकरतोरणम् को समर्पित किया था। तदनंतर सन् 1517 में जनवरी 2 की दिन, अपनी पत्नियों सहित पाँचवी बार तिरुमलप्पा का पावन दर्शन कर, अपनी प्रतिमाओं की स्थापना करवाई। सन् 1518 सितंबर 9 के दिन आनंद निलय विमान की, तीन हजार सोने के सिक्कों से, लीपा - पोती करवाई। सन् 1518 में, अक्तूबर महीने में छटवी बार तथा सन् 521, फरवरी 17 में सातवी बार तिरूमल की यात्रा कर श्रीनिवास स्वामी को नवरत्नों से जडित लंबी कमीज तथा पीतांबर को समर्पित किया।

भक्ति के साथ त्याग गुण से भी संपन्न रायलु इस तरह विनीत मुद्रा में भगवान बालाजी के भवन में खडा है देखिये। साधारण व्यक्ति सा खडा, यह असाधारण व्यक्ति स्तवनीय है!

द्वार की बाँयी तरफ दूसरी ताम्र प्रतिमा है न? नमस्कार भंगिमा की यह प्रतिमा चंद्रगिरि का राजा वेंकटपति रायुलु की है। सन् 1570 में

चंद्रगिरि प्रांत इनके अधीन में था। मंदिर का संरक्षण करने के साथ, कई उपहारों को इन्होंने स्वामी को दिया था।

वेंकटपति रायलु की मूर्ति के सामने दक्षिण दिशा में अच्युत रायलु तथा उनकी पत्नी वरदाजी अम्मण्णि की दो और शिला मूर्तियाँ, भगवान को नमस्कार कर रही हैं। कहा जाता है कि अच्युत देव रायलु का राजतिलक महोत्सव, तिरुमल के इसी मंदिर में, भगवान बालाजी के स्वर्णिम शंख के जल से ही संपन्न हुआ था। सन् 1530 में उन्होंने ''अच्युत राय ब्रह्मोत्सव'' नामक एक ब्रह्मोत्सव का भी आयोजन अपने ही नाम पर किया था। तिस पर, तिरुमल मंदिर के लिए अनेकानेक गाँवों को उपहारों के रूप में इस भक्त शिखामणि ने समर्पित किया था।

भगवान बालाजी के इस मंदिर में विनीत मुद्रा में खडी इन मूर्तियों को देखते हुए हमें क्या लगता है? यही कि ''चाहे कितने ही बडे राजा, महाराजा क्यों न हो, अखिल लोक ब्रह्माण्ड नायक, सकल लोक रक्षक, श्री वेंकटेश स्वामी के सामने, साधारण व्यक्ति ही हैं।'' और यह भी लगता है मानो ये सारी मूर्तियाँ कह रही हैं कि इसी स्वामी की दया से हम राजा बने हैं। इन्हीं की कृपा से हमारी सुख, सुविधाये हैं।

सन् 16 सदी के पूर्वार्ध में निर्मित इस मंडप के खंभों पर शिव धनुर्भंग, श्रीराम का राज तिलक, अशोक वाटिका में सीता - हनुमान का संवाद, श्रीकृष्ण की लीलाएँ, शंख, चक्र तथा ऊर्ध्व पुंण्ड्रादि मनोहारी शिल्प हैं।

इस मंडप की एक और विशैषता यह है कि तिरुमल की वीथियों में शोभा यात्रा, होने के बाद भगवान बालाजी, वापसी में, इस मंडप में

थोडी देर के लिए रुकते हैं। उस समय, जिय्यंगारादि श्री वैष्णव आचार्य, द्रविड दिव्य प्रबंधों को गाते हुए स्वामी की प्रशंसा करते हैं। तदुपरांत स्वामी की मंगल आरती भी होने के बाद ध्वजस्तंभ की परिक्रमा कर स्वामी के मंदिर में पुनः प्रवेश करते हैं।

प्रजा की सेवा तथा प्रजा रक्षक जनार्दन की भी सेवा के लिए समर्पित इन तेलुगु महाराजाओं की कीर्ति को प्रकाशित कर रहे इस प्रतिमा मंडप में खडे होकर स्वामी का दिल से जय जयकार करेंगे।

जय हो जय हो हे गोविन्द!
सकल जगति के सम्राट!
जय हो जय हो! हे गोविन्द!

4. आईना महल

तनिक दायीं तरफ आइये। प्रतिमा मंडप की उत्तर दिशा में बारह फुट की दूरी पर विशाल वेदी पर बनाये गये इस महल को 'दर्पण मंडप' या 'आईना महल' कहते हैं। इस महल में 'मुख मंडप' तथा 'अंतराळ' नामक दो विभाग हैं। 43×43 के मापन के इस मंडप की पूर्वी दिशा में उत्तरी कोने पर, स्वामी के अन्न प्रसाद की बिक्री के केन्द्र थे। यहाँ पर अर्चक स्वामी अपने भाग में मिले हुए स्वामी के प्रसादों को, भक्तों को बेचते थे। इस प्रांत को ''प्रसादम् पट्टेडा'' कहते थे। लेकिन आजकल ये बंद हैं क्यों कि उन प्रसादों को भी देवस्थान वाले ही स्वीकार कर, भक्तों को मुफत में बाँट रहे हैं।

इस मंडप की पश्चिम दिशा पर, पूरब की ओर देखता हुआ यह 42'×42' के विस्तार का अंतराळ ही आइना महल है जिसमें डोलोत्सव

में काम आनेवाली लडियों की व्यवस्था भी की गई है। इस चतुरस्राकार मंडप के चारों तरफ परिक्रमा का मार्ग भी है। इस मंडप की दीवारों और ऊपरी छत को भी चारों तरफ आईनें लगे हुए हैं। यहाँ के झूले, में झूलनेवाले बालाजी का रूप, इन सारे आईनों में प्रतिफलित होता है मानो कह रहा हो कि मैं सर्व व्यापक हूँ। यह दिव्य दर्शन वर्णनातीत है। यहाँ पर दोपहर दो बजे, भगवान श्रीनिवास का डोलोत्सव मनाया जाता है जिसमें निर्धारित रकम चुकानेवाले दंपति मात्र भाग ले सकते हैं। यह डोलोत्सव उत्तर भारत की सेवा - विधा है जो देवस्थान के महंतों द्‌वारा तिरुमल में प्रवेश कर गई है। ऐतिहासिक आधार कह रहे हैं कि सन् 1831 के समय से ही ये मनाये जा रहे थे। भगवान वेंकटेश की सर्व व्यापकता को प्रतिबिंबित करनेवाले इस आईना - महल के सामने आइये एक बार तिरुमलेश का गुणगान करें।

अणु के अंदर है तू आदि महत्ता है तू
कीर्तित श्री वेंकट आनंद निलय भी है तू
अणिमादि विभव है तेरे! आदि अंतरहित है तू
मेरी भक्ति को स्वीकारो! अपना लो मुझे तू!

चलिए अब रंगनायक मंडप की तरफ!

5. रंगनायक मंडप

आईना महल के सामने, कृष्णराय मंडप की दक्षिणी दिशा पर एक ऊँची शिला वेदी पर निर्मित विशाल मंडप ही ''रंगनायक मंडप'' या रंगमंडप है।

108 फुट की लंबाई तथा 60 फुट की चौडाई से, ऊंचे खंभों पर सुंदर शिल्पों की शोभा के साथ विद्यमान इस रंगमंडप के अंदर, दक्षिण की तरफ, 12 फुट का चतुरस्राकार मंदिर है। कहा जाता है कि श्रीरंगम के श्री रंगनाथ स्वामी यहाँ पर, कुछ दिनों के लिए ठहरे थे तथा उनके पूजादिक भी यहीं पर संपन्न हुए थे। सन् 1320 - 1360 के बीच मुस्लिम राजाओं की चढाइयों के कारण, श्रीरंगम् क्षेत्र की उत्सवमूर्तियों को तिरुमल पर पहुँचाया गया था तथा इसी मंडप में रखकर पूजादिकों को भी मनाया जाता था। तदुपरांत मुस्लिम राजाओं की महत्ता की क्षीण - दशा में उन मुर्तियों को फिर से श्रीरंगम् ले जाया गया। इसी कारण इस मंडप को आज भी रंगमंडप या रंगनायक मंडप ही कहा जाता है। मालिकाफर के हमलों से स्वामी रंगनाथ को बचाकर, तिरुमल क्षेत्र में आश्रय देने का श्रेय - कहा जाता है कि रंगनाथ यादव रायलु नामक तिरुपति प्रांत के नायक को जाता है। उसी समय, श्रीरंगनाथ की पूजा विधियाँ धनुर्मास में तिरुप्पावै का पाठ, उत्सवादि में द्राविड दिव्य प्रबंधों के पारायणादियों का शायद तिरुमल मंदिर में भी प्रवेश हुआ। श्रीरंगनाथ का स्मरण हो आया न आप सबको - इस मंडप के कारण? इसी वजह से क्यों न हम रंगनाथ स्वामी का स्मरण करें?

श्रीरंग रंगा रंगा।
कावेरि रंग रंगा। श्रीरंगा।

आजकल इस मंडप का वाहन मंडप के रूप में उपयोग किया जा रहा है। आर्जित वसंतोत्सव, आर्जित ब्रह्मोत्सव, वाहन सेवाएँ आदि यहाँ पर संपन्न होते भी हैं। इस रंगनायक मंडप के बीच विद्यमान सात सिरों वाला, सोने के शेष - वाहन का दर्शन कीजिए! पुलकित हो जाइये। हाँ! इसी वाहन को ''बृहत शेष वाहन'' भी कहते हैं।

यही है शेष वाहन! श्री वेंकटाद्रि का शेष वाहन!
गरूड का मित्र है यह शेष वाहन!

इस रंग मंडप की एक और विशेषता यह भी है कि मलयप्प स्वामी (वेंकटेश्वर स्वामी की उत्सव मूर्ति) अपनी दोनों पत्नियों के साथ आनंद निलय से बाहर निकलकर, साल में दो बार, कई दिनों के लिए, इसी मंडप में निवास करते हैं।

1) नवरात्रि के दिनों में ध्वजारोहण से लेकर दीवाली तक करीब एक महीने तक, इसी मंडप में रहकर पूजा तथा निवेदन की सेवाये स्वीकारते हैं।

2) वैकुंठ एकादशी के पहले, ग्यारह दिन से शुरु होकर पच्चीस दिनों तक मनाये जाने वाले अध्ययनोत्सवों में भी श्रीदेवी भूदेवी समेत श्री मलयप्प स्वामी, इसी मंडप में रहते हुए अर्चनादि स्वीकारते हैं।

पुराने जमाने में इसी रंगनायक मंडप में ही भगवान बालाजी के नित्य कल्याणोत्सव संपन्न होते थे। दिन ब दिन बढती हुई भक्तों की संख्या के कारण, चंपक - परिक्रमा की दक्षिण दिशा में प्रत्येकतया ये कलयाणोत्सव संपन्न हो रहे हैं। भगवान बालाजी के दर्शन के लिए आये हुए देश विदेशों के अधिपति, अधिकारी गण आदियों को दर्शनोपरान्त मंदिर के अधिकारी यहीं पर उन्हें स्वामी के प्रसादों का वितरण करते हैं। सदियों से पवित्रता तथा बालाजी के वैभव का प्रतीक, इस रंग मंडप के पास खडे होकर गोविन्द का नाम लेंगे।

गोविन्द गोविन्द गोविन्दा - - - -

6. तिरुमलराय मंडप

अब हम रंगराय मंडप के सामने ही के तिरुमल राय मंडप के बारे मे जान लेंगे जो तिरुमलेश की अपने भक्तों पर बरसायी जाने वाली अपार उदारता का प्रतीक है।

ध्वज स्तंभ मंडप के दक्षिण में 10 फुट की दूरी पर बडे बडे पत्थर के खंभो से बना यह मंडप 77×38 के विस्तार का है। दो भागों में विभाजित इस मंडप का पहला भाग, दक्षिण की दिशा में 42×38 फुट की एक बडी वेदी है तो दूसरा भाग ध्वज स्तंभ की तरफ, पहले भाग से कम ऊँचाई में, जमीन की तह से समान, 38×35 फुट की गैलरी है।

पता नहीं, तिरुमलेश ने साळुव नरसिंह रायलु की किन किन मनोकामनाओं की पूर्ति की थी, और कितने कितने विजयों को उनके वश कर दिया था, रायलु ने उन मन्नतों की पूर्ति कर स्वामी को अपना आभार प्रकट करना चाहा था। ''अन्ना ऊयल तिरुनाळळ'' नामक उत्सव मनाने के लिए, सन् 1473 में इस ऊँची वेदी का निर्माण उसने कराया। तमिळ में 'अन्ना' का अर्थ है - हँस! हँस के रूप में बने पालने में अपनी दोनों पत्नियों के साथ इसी मंडप में सानंद झूमते हुए श्रीनिवास भगवान के भव्य दर्शन का सौभाग्य, उन दिनों के भक्त जनों को मिला होगा! कितने भाग्य शाली थे वे! मिथुन मास (आणि - माने इन दिनों के जून जुलाई महीनों बीच) पाँच दिनों के लिए यह उत्सव मनाया जाता था!

अळिय रामरायलु के भाई और आरवीडु वंश के महाराज तिरुमल रायलु ने सन् 16 वी सदी के उत्तरार्ध में इस मंडप को बडा बनाया।

इसीलिए यह 'तिरुमल राय मंडप' के नाम से अभिहित किया जाता है। अपनी तरफ से हर साल इस मंडप में वार्षिक वसंतोत्सव का आयोजन करने की व्यवस्था भी उसने की। इतना ही नहीं, 'तिरुमलराय पोंगलि'(तिरुमलराय की खिचडी) के नाम से प्रसाद बनाकर स्वामी को समर्पित कर भक्तों में बाँटने का दात्रृत्व भी उसी का था। हालाँकि बाद में यह उत्सव, कारण वश, स्थगित हो गया। आज कल ब्रह्मोत्सवों के अवसर पर ध्वजारोहण उत्सव में मात्र, स्वामी इस तिरुमल राय मंडप में अद्भुत शिल्प शोभित यहाँ की 6 फुट वाली वेदी पर पधारते हैं तथा पूजादिक, आरती आदि स्वीकारते हैं।

'कोलुवु मेळम्' नामक मंगळ वाद्य (जो दक्षिण भारत की शहनाई है) सूर्योदय वेला में (6 से 6.30 के बीच) इसी मंडप से सुनाई जाती है जिसे 'हरिकोलुवु' (हरि का दरबार) भी कहते हैं। सायं संध्या के समय जो मंगल वाद्य सुनाया जाता है उसे 'संदे कोलुवु' (सायं वेला का वाद्य) कहते हैं। दोनों संध्याओं में नादस्वर (शहनाई) डोल (ढ़ोल) तथा नगाडे भी बजाये जाते हैं।

'नित्य कलयाण चक्रवर्ती' कहलाये जानेवाले तिरुमलेश की कृपा - वर्षा के प्रति आभार प्रकट करने के लिए दो महाराजाओं द्वारा बनाये गये ये निर्माण, आश्चर्य तथा आनंददायी निरूपित हैं। उन दोनों की भक्ति का गुणगान करने वाला है यह जगह! यहाँ पर खडे होकर हम भी भगवान का कीर्तिगान करेंगे।

सप्तगिरीश हे वेंकट रमण!
गोविन्द गोविन्द हे गोविन्द!

7. तुलामान

इसी तिरुमल राय मंडप में ही से तनिक उत्तर की दिशा की ओर देखेंगे तो हमें एक बडा सा तुलामान दिखाई देता है।

तिरुमलेश की कृपा से संतति प्राप्त दंपति, अपने बच्चों के वजन के समान सिक्के, मिस्री, गुड या कपूरादि, भगवान को भक्ति से समर्पित करते हैं। बीमारियों से छुटकारा पानेवाले भी इसी तरह करते हैं। यह तुलामान पहले अंदर हुंडी के पास था। सन् 2001 में इसे प्रतिमा मंडप की दक्षिण दिशा में 'रंगनायक मंडप' के सामने लाया गया। भक्तों की विनम्रता को कुछ हद तक ही सही, भगवान तक पहुँचानेवाला यह तुलामान धन्य है।

8. राजा तोडरमल

इस तिरुमल मंडप की वायव्य दिशा में चार खंभों के बीच तीन बडी ताम्र मूर्तियाँ नमन करती जो दिखाई दे रही हैं वे हैं तिरुमलेश के तीन भक्तों की जो ध्वज 'स्तंभ' से करीब दस फुट की दूरी पर हैं। इन मूर्तियों की भुजाओं पर इनके नाम भी हैं - लाला खेमराम, उनकी माता मोहन देवी तथा उनकी पत्नी सिता बीबी।

पगडी धरकर खडी यह मूर्ति ही - क्षत्रिय राजा लाला खेमराम की है जिसे राजा तोडरमल भी कहते हैं जो आर्काट के नवाब सादतुल्लाखान के दरबार में उनका प्रतिनिधि बनकर, कर्णाटक प्रान्तों का निरीक्षण करता था। सन् 17 वी सदी में, मुस्लिम तथा अंग्रेजों के हमलों से तिरुमल क्षेत्र को बचाने का श्रेय, इसी पराक्रम शाली का है।

तिरुमलेश की सेवां में समर्पित इस परिवार को देखते हुए आपको क्या लगता है? ''भला! इस सारे परिवार को अपनी ओर आकृष्ट करके, उनकी सेवाओं से तृप्त होकर, यहीं, अपने ही पास उन्हें सदा के लिए रख लेने में तिरुमलेश का भक्तयावेश तथा पक्षपात कितने अपूर्व हैं न!'' उनकी इन मूर्तियों को देखते देखते, इस परिवार को नमस्कार करते हुए, चलिए भगवान की तरह कदम बढ़ायेंगे।

गोविन्द! गोविन्द! गोविन्द!

9. ध्वजस्तंभ मंडप

तनिक देखिये! हम अब कहाँ खडे हैं? प्रतिमा मंडप, आईना महल तथा रंगनायक मंडप के बीच के चौकाकार खाली जगह में हैं न। यहाँ खडे होकर, सीधा देखिये। सोने का, यहाँ का ध्वज स्तंभ, कई सदियों से तिरुमलेश के वैभव व महिमा का गुणगान करता हुआ प्रकाशमान है। सुनहरी कांतियों को बिखेर रहा है। इस ध्वज स्तंभ, की छोटी छोटी घंटियों के नाद में भी भगवान बालाजी का कीर्तिगान ही सुनाई दे रहा है न, इस ध्वज स्तंभ के सामने सात स्वर्णिम कलशों का तिमंजिला गोपुर जो है, उसकी कांति को भी नमस्कार समर्पित कर आगे चलेंगे!

गोविन्द! गोविन्द! गोविन्द!

अब हम आगे बढ़कर इस ध्वज स्तंभ मंडप में प्रवेश करेंगे। यह मंडप रजत द्‌वार (नडिमि पडि कावलि) गोपुर के आगे के पूरब की दिशा से जुडा हुआ है।

चार पंक्तियों के बीस खंभों से बना है यह 10 फुट का मंडप! इसके मध्य भाग में सोने का ध्वज स्तभ, उसके सामने पूर्वी दिशा पर बलि

वेदी, इनके ईशान्य में क्षेत्र पालक की शिला विद्यमान हैं। कहा जाता है कि सन् 15 वी सदी में इस ध्वज स्तंभ मंडप का निर्माण हुआ जिस पर योग नरसिंह, हनुमान, बकासुर वध, श्रीनिवास कल्याणादि मनोहरी शिलप हैं।

इस ध्वज स्तंभ मंडप, बलिवेदी तथा क्षेत्र पालक शिला के बारे में कुछ अधिक जानकारी अब प्राप्त करेंगे।

10. ध्वजस्तंभ

रजत द्वार (नडिमि पडि कावलि) के आगे करीब 15 फुट दूरी पर एक वेदी पर ध्वज स्तंभ रूपी एक दारू स्तंभ है। यही ध्वज स्तंभ है। शिला वेदी तथा स्तंभ - दोनों के नीचे से ऊपरी भाग तक सोने से लिपी - तापी ताम्र परत जो है, उसे क्या आपने देखा? इसी खंभे पर भगवान श्रीनिवास के सामने गरूड, चोरों तरफ हनुमान, शंख, चक्र, कालीय मर्दनादि शिलप भी हैं देखिए!

क्या आपने 'ध्वजारोहण' शब्द को कभी सुना है क्या! हाँ हाँ! वही.. श्री वेंकटेश्वर स्वामी बालाजी के लिए हर साल संपन्न होनेवाले बह्मोत्सवों में, पहला दिन ही 'ध्वजारोहण' उत्सव होता है। ध्वज का अर्थ है पताका। आरोहण माने फहराना। ध्वजारोहण का अर्थ है - भगवान तिरुमलेश के ब्रह्मोत्सवों के शुभांरंभ को सूचित करने के लिए विजय केतन को फहराना।

हर ब्रह्मोत्सव में इस सोने के ध्वज स्तंभ पर गरुड के चित्र से अलंकृत पताका फहराया जाता है माने समस्त लोकों के देवी - देवताओं को, यक्ष, किन्नर, गंधर्वादियों को, भगवान वेंकटेश का वाहन गरुड के

द्वारा इन ब्रह्मोत्सवों में आमंत्रित करना। तमिळ में ध्वजस्तंभ को 'कोडिक्कबम्' कहते हैं। कोडि का अर्थ है ध्वजा।

बाहर से कोई भी वस्तु या पूजा का उपकरण अंदर जाना हो, या अंदर से बाहर आना हो, तो इसी ध्वजा की परिक्रमा करके ही जाना पडता है। अगर भगवान स्वयं बाहर जाना चाहें या अंदर पधारना चाहें तो भी यही नियम है।

कहा जाता है कि पुराने जमाने में, यह ध्वज स्तंभ और बलिवेदी चाँदी के द्‍वार के अंदर, विमान - परिक्रमा के मार्ग में, गरुड मंडप के पीछे थे। सन् 1417 में स्वर्ण द्‍वार के आगे मुखमंडप का निर्माण होने से वह मार्ग कुछ संकरा हो गया। ऐतिहासिक शोधकर्ता कहते हैं कि इसी कारण ध्वज स्तंभ तथा बलि वेदी को यहाँ, शायद लाया गया।

ध्वज स्तंभ लकडी से बने होते हैं। कई वार यह बदला भी गया। हाल ही में सन् 1982 में नये ध्वज स्तंभ की व्यवस्था हुई है। यही है ध्वज - स्तंभ की कहानी। अब बलि वेदी की विशेषताएँ जान लेंगे।

11. बलिवेदी

ध्वज स्तंभ के सामने पूर्वी दिशा की ओर ही यह बलि वेदी है जो अद्भुत हस्त कला से विराजित है। इस पर भी सोने से, लीपा - पीता ताम्र परत है। ध्वज - स्तंभ मंडप में पहले हमें यही दिखाई देती है। इसकी विशेषता आखिर क्या है?

श्री वेंकटेश्वर स्वामी एवं अन्य प्रधान परिवार देवताओं को भोग चढ़ाने के बाद मंदिर की विमान परिक्रमा की आठ दिशाओं में स्थित

बलि वेदियों पर उन उन दिशाओं के देवताओं को भोग चढ़ाते हैं। इसका अर्थ है भोग (अन्न) को मंत्रपूर्वक उन उन देवताओं को आहार के रूप में समर्पित करना। इस 'विमान परिक्रमा' में उन उन दिशाओं में भोग चढ़ाने के बाद, अर्चक स्वामी, रजत - द्वार के बाहर आकर, बचे हुए भोग को इस वेदी पर रखकर, पुनः मंदिर में चले जाते हैं। माना जाता -- कि दिन रात घूमते रहे भूत - प्रेत - पिशाचादि गण, इसे आहार के रूप में लेते हैं। भोग का कार्यक्रम - यहीं समाप्त होता है।

इस ध्वज स्तंभ तथा बलि वेदी को साष्टांग प्रणाम कर गोविंद का नाम स्मरण कर लेंगे।

गोविन्द! गोविन्द! गोविन्द!

12. क्षेत्रपालक शिला

ध्वज स्तंभ के सामने ही बलिवेदी के ईशान्य कोने में 1-1/2 फुट की ऊँचाई पर एक छोटी सी शिला वेदी है जिसे 'क्षेत्र पालक शिला' कहते हैं।

तिरुमल क्षेत्र के पालक हैं - 'रुद्र' माने शिवजी! उनका ही प्रतीक, यह शिला है। सदियों पहले यह शिला, शिवजी की संपूर्णकला से प्रकाशित होते हुए, इस मंदिर की चारों तरफ पहरेदार की तरह घूमती हुई, इसकी रक्षा करती थी। हर दिन अर्चक स्वामी, रात, अपने घर लौटेते समय, मंदिर की चाबियों को इस शिला के अधीन में छोडके जाते थे। फिर, सुबह मंदिर आकर शिला को प्रणाम कर चाबियों को लेकर मंदिर को खोलते थे। एक दिन रात में, शिला जब मंदिर की पहरेदारी कर रही थी एक बालक उसके नीचे आकर आखिरी साँस ले लिया। उसी

समय, इस शिला को तिरुमल क्षेत्र के समीप में स्थित गोगर्भ तीर्थ में रखा गया ताकि ऐसी और एक घटना दुबारा न हो। उस शिला का एक छोटा सा भाग, जो यहाँ रखा गया था, वह यही है जिसे आप आज यहाँ देख रहे हैं। इसका अर्थ, है इस शिला का पूर्ण - रूप वहाँ गोगर्भ तीर्थ (पांडव तीर्थ) में है तथा अंश रूप यहाँ इस मंदिर में है।

हर साल, महाशिव रात्री के पर्व पर मंदिर के अर्चक स्वामी, अधिकारी गण एवं यात्री सभी मिलकर, पांडव तीर्थ जाते हैं तथा 'एकादश रुद्रस्तोत्र' से तिरुमल के क्षेत्र पालक रुद्रजी का अभिषेक करते हैं। तदनंतर उस शिला को रजत नेत्रों से अलंकृत कर पुष्पों से पूजा करते हैं तथा धूप, दीप, नैवेद्यादि शास्त्रोक्त रीति में समर्पित करते हैं। रुद्रजी के प्रीतिकर मूँग का गीला दाल, गुड का खीर, फल, पान आदि के भोग के बाद, यात्रियों को प्रसाद के रूप में बाँटा जाता है और अर्चक वापस बालाजी के पास चले जाते हैं।

हम जब गोगर्भ क्षेत्र (पांडव तीर्थ) को जायेंगे तब इस क्षेत्र पालक शिला का पावन दर्शन अवश्य कर लेंगे।

आज कल तिरुमलेश की सेवा में भोर के समय आनेवाले अर्चक, मंदिर की चावियों की गुत्थी को 'छोटी क्षेत्र पालक शिला' से स्पर्श कराकर ही, ध्वज स्तंभ की परिक्रमा कर, अंदर प्रवेश करते हैं।

कलियुग वैकुंठ माना जानेवाला क्षेत्र है तिरुमल! यहाँ पर श्रीनिवास की सन्निधि में क्षेत्र पालक के रूप में शिवजी का होना अचरज की बात है न? लेकिन ध्यान दिया जाय तो यह सूझने में देर नहीं होगी कि शिव और विष्णु दोनों एक ही हैं। इसी तत्व का बोध हमें हो रहा है न?

भगवान विष्णु की सन्निधि में स्थित रुद्रदेव का गुणगान एक बार जोर से, क्यों न करें हम?

ओम् नमश्शिवाय! ओम् नमश्शिवाय!

13. संपंगि परिक्रमा

रजत द्वार (नडिमि पडि कावलि) गोपुर के प्राचीर के बाहर तथा, महाद्वार गोपुर प्राचीर के बीच का 30 फुट की परिक्रमा के स्थल को 'संपंगि परिक्रमा' कहते हैं। मंदिर में प्रवेश होते ही, जो प्रथम परिक्रमा का मार्ग है, उसे ही संपंगि परिक्रमा कहते हैं। लेकिन मंदिर के बाहर की महा परिक्रमा के मार्ग को मंदिर का आगम शास्त्र स्वीकृत न करने के कारण हम जिस परिक्रमा के मार्ग को अब देख रहे हैं यही संपंगि परिक्रमा मार्ग ही प्रथम गण्य है।

पूर्वतया, इसी परिक्रमा के मार्ग में, कहते हैं भगवान की पूजा में नियुक्त होनेवाले चंपा फूलों के पेड रहा करते थे इसी लिए इस मार्ग को 'संपंगि (चंपा) परिक्रमा' कहते हैं।

छाँव न हिलनेवाला इमली का पेड

यह भी सुनने में आया है कि इसी संपंगि परिक्रमा के मार्ग में, महाद्वार (पडि कावलि) मंदिर के पास एक बडा इमली का पेड रहता था! उसकी डालियाँ इतनी बडी और विशाल थीं, कि पेड की छाँव तो बाहर पडती ही नहीं थी। इसी लिए उसे छाँव न हिलनेवाला इमली का पेड कहा करते थे। इतना ही नही ''निर्निद्र तिंत्रीणी वृक्ष'' (न सोनेवाला इमली का पेड) भी कहते थे। उसकी कुछ डालियों में फूल फल होते थे। सभी ऋतुओं में वह पेड हमेशा, बिना कुछ आराम के, फलते फूलते रहने से

उसे यह नाम आया था। उसी पेड ही के नीचे श्रीनिवास भगवान, एक बाँबी में छिपकर रहा करते थे। बाद में स्वामी, विग्रह बन, स्वयंभू के रूप में बाँबी में ही रहे। पुराण कहते हैं कि छाँव न हिलने वाला तथा कभी न सोनेवाला वह पेड साक्षात् वासुदेव थे और उस पेड के नीचे जो बाँबी थी वही देवकी देवी (कृष्ण की मात्रुमूर्ति) थी।

उन दिनों, सबसे पहले गोपी नाथ नामक वैखानस ब्राह्मण इस क्षेत्र में आ पहुँचा और पुष्करिणी के दक्षिण में स्थित इमली के पेड में निवास कर रहे श्रीनिवास भगवान को देखा तथा बाँबी में से भगवान की मूर्ति को निकालकर पश्चिम के किनारे (अब भगवान बालाजी जहाँ हैं) प्रतिष्ठित कर, स्वयं वहीं रहते हुए स्वामी की पूजा - अर्चना किया करता था।

कुछ दिनों बाद 'रंगदास' नामक भक्त भी उसी जगह पर पहुँच गया और एक कुआँ खोदा। वहाँ पर चंपक, सेवती आदि झाड लगाकर, स्वामी की पूजा के लिए आवश्यक फूल और फलों को लाकर समर्पित करते हुए, गोपीनाथ की सहायता करता था। कहते हैं कि वही रंगदास अगले जनम में तोंडमान् राजा बना और श्रीनिवास स्वामी के मंदिर में प्राकारादियों का निर्माण भी किया। 'वेंकटाचल माहात्यम्'' के अनुसार भगवान बालाजी ने स्वयं राजा तोडरमल को आदेश दिया कि सिवा मेरे अत्यंत प्रिय इमली का पेड और चंपक के पेडों के, बाकी सभी पेडों को निकालकर यहाँ मंदिर का निर्माण करो।

श्री वेंकटेश्वर से भी पुराने ये पेड अब यहाँ नहीं हैं। लेकिन परमयोगिविलास में उधृत है कि भगवद्रामानुज (सन् 11 वी सदी) ने भी

इस पेड का पावन दर्शन किया था। (चिन्नन्ना विरचित ग्रंथ)। इतना ही नहीं, 'श्री वेंकटाचल इतिहास माला' नामक ग्रंथ में भी कहा गया है कि, इन पेडों को देखने के बाद ही, रामानुजाचार्य ने तिरुमलेश के पूजादिकों का प्रबंध भी किया। अन्नमाचार्य जी (15 वी सदी) का पोता चिन्नन्ना ने भी दादाजी की जीवनी में लिखा कि पहली तिरुमल यात्रा में, अन्नमय्या ने भी इस इमली के पेड की परिक्रमा कर आशीर्वाद पाया था।

उन दिनों (15 वी सदी) इस संपंगि परिक्रमा में ही से सीधे पुष्करिणी तक पहुँचने का मार्ग था। माने मंदिर का महाप्राचीर नहीं था। तदुपरांत महाप्राचीर, उसके सामने अंदर की तरफ, चारों तरफ चंपक परिक्रमा के मार्ग में करीब 18 फुट चौडाई के मंडप तथा अन्य निर्माण भी आ गये। इस मार्ग में सिवा कल्याण मंडप के, बाकी जगहों पर यात्रियों के लिए प्रवेश नहीं है। फिर भी उनके बारे में भी जानकारी दी जायेगी।

इस संपंगि परिक्रमा के मार्ग में, दक्षिण की तरफ, कल्याण मंडप है। पश्चिम दिशा की ओर जो मंडप हैं, उनका उपयोग, चीनी, मूँग दाल, बेसन, गुड आदि, को संरक्षित रखने के भंडारों के रूप में किया जातां रहा। इसी मार्ग में, वायव्य दिशा के कोने में प्रसाद की तैय्यारी में एवं भगवान तिरुमलेश की सेवाओं में उपयोग किये जाने वाले कपूर, चंदन, काजू, किसमिस, घी आदि द्रव्यों को रखनेवाला भंडार घर है। इस भंडार घर के आगे ही 'विरजा नदी' नामक तीर्थ है।

संपंगि परिक्रमा के ही मार्ग में उत्तर की दिशा पर पडिपोटु (रसोई) है जिसके पास के कुएँ को 'पोटुभावि' (रसोई का कुवाँ) कहते हैं। इसी कुवें के पानी का, रसोई में उपयोग करते हैं।

रसोई की पूर्वी दिशा पर 'यामुनात्तुरैं' नामक फूलों का घर है। और हाँ, इसी कोने पर, वगपडि घर और फूलों का कुआँ भी है। इसी संपंगि परिक्रमा के मार्ग के चारों कोनों में चार खंभोंवाले मंडप भी हैं।

आप सबको एक बार याद दिला दें कि इसी परिक्रमा के मार्ग में पूर्वी दिशा पर ध्वज स्तंभ मंडप, आईना महल, श्री कृष्णराय मंडप, रंगनायक मंडप, तिरुमलराय मंडप भी हैं। इनमें से कृष्णराय मंडप आईना महल, रंगनायक मंडप, तिरुमल राय मंडप इन सबके बारे में हम ने जान ही लिया है न? अब बाकी जगहों के बारे में जानने चलें?

14. चार खंभोंवाले मंडप

तिरुमलराय मंडप की पश्चिमी दिशा में चंपक परिक्रमा के आग्नेय कोने में स्थित इस चार खंभोंवाले मंडप में होनेवाले पूजादिकों को भक्त जन चारों दिशाओं से देख सकते हैं। ऐसे ही मंडप इस चंपक परिक्रमा में दूसरे कोनों में भी हैं।

आजकल भक्त जनों की संख्या बहुत ज्यादा है। उनकी संख्या कम होनेवाले दिनों में, इस चंपक परिक्रमा के मार्ग में ही भगवान के सभी उत्सव और शोभा यात्रायें संपन्न होते थे। यह भी कहा जाता है कि उक्त चारों मंडपों में भगवान थोडी देर के लिए ठहरते भी थे।

आजकल, ईशान्य कोने के मंडप में मात्र, श्रीकृष्ण जन्माष्ठमी के अवसर पर होनेवाले सिक्योत्सव (छींका पर्व) में श्रीकृष्ण भगवान यहाँ पधारते हैं तथा पूजादिक स्वीकारते हैं।

सन् 1470 में विजयनगर साम्राज्य के राजा साळुव नरसिंह रायलु ने अपनी अर्धांगी तथा दोनों बेटों के नाम पर इन्हें बनाया था। नैऋति तथा

वायव्य कोनों मे जो मंडप हैं वे 8’ और 6’’ विस्तार के हैं। आग्नेय कोने में स्थित मंडप 11 फुट का तथा ईशान्य कोने का मंडप 12.3’’×11.6’’ का है।

इस परिक्रमा के मार्ग में वैभव के साथ शोभा यात्रा में निकलते थे श्रीनिवास स्वामी उन दिनों में! इन चारों मंडपो में थोडी देर के लिए विश्राम भी लेते थे। साळुव नरसिंह रायलु ने स्वामी के प्रति अपनी अपार भक्ति को प्रकट करने के लिए ही इन मंडपों का निर्माण करवाया था। उसकी भक्ति की प्रशंसा करते हुए हम आगे बढ़ेंगे।

गोविन्द! गोविन्द! गोविन्द!

15. श्री वेंकटरमण जी का कल्याणमंडप

चंपक परिक्रमा की दक्षिण दिशा के मार्ग में एक विशाल चौकोना मंडप है जो लोहे के पत्तरों से ढका हुआ है। इसे ही ‘‘श्री वेंकटेश्वर स्वामी का कल्याण मंडप’’ कहते हैं। यहीं पर हर दिन तिरुमलेश स्वामी के कल्याण संपन्न होते हैं। इसी लिए तिरुमल क्षेत्र को ‘‘नित्य कल्याण - नित्य बन्दनवार’’ नाम आया है।

हर दिन यहीं पर पश्चिमी कोने में पूरब दिशा की ओर बनायी गयी कल्याण वेदी पर श्री मलयप्प स्वामी तथा श्रीदेवी भूदेवीयों को हर दिन 11-12 बजे के समय में, ये कल्याणोत्सव संपन्न होते हैं।

ये कल्याणोत्सव बहुत दिन पहले विमान परिक्रमा के कल्याण मंडप में मनाये जाते थे। भक्त जनों की अनगिनत संख्या के कारण, कल्याणोत्सव रंगनायक मंडप में कुछ दिन संपन्न हुए। आजकल ‘‘चंपक परिक्रमा’’में स्थित इस मंडप में संपन्न हो रहे हैं।

कल्याणोत्सवों के अलावा, पवित्रोत्सव, पुष्प याग, ज्योष्ठाभिषेक आदि वत्सरोत्सव भी यहीं हो रहे हैं जिनके बारे में आगे हम जान लेंगे।

देखिए, कल्याण - वेदी पर अपनी दोनों पत्नियों के साथ नित्य कल्याण चक्रवर्ती - श्रीनिवास प्रभु बिराजमान हैं। उनके पावन दर्शन से आप सब पवित्र हो जाइये।

गोविन्द! गोविन्द! गोविन्द!

16. भण्डार-घर

भण्डार घर को तेलुगु में 'कोट्टिडि' या 'गिड्डंगि' कहते हैं। चंपक परिक्रमा की पश्चिमी ओर जो मंडप हैं, उन सब का भण्डार - घर के रूप में उपयोग किया जा रहा है। बेसन, गुड, चीनी, उडद दाल सभी यहाँ सुरक्षित रूप में रखे जाते हैं। दाल को पीसने के लिए बडे बडे पिसनहारे (grinders) मिश्रक (mixees) यहाँ हैं। चंदन, कपूर, घी आदि पूजादिकों में काम आनेवाले सभी वस्तुओं को यहाँ संरक्षित रखकर, मंदिर में आवश्यकतानुसार दिया जाता है।

17. विरजा नदी

चंपक परिक्रमा में, भण्डार - घर के आगे जो छोटा सा कूआँ है, वही विरजा नदी या विरजा तीर्थ के नाम से अभिहित है। कहते हैं कि वैकुंठ की पवित्र नदी विरजा, भगवान वेंकटेश के चरणतल से बह रही है और उसी पावन नदी की एक धारा - यह कूआँ है। इस विरजा तीर्थ के चारों तरफ कूप की तरह चौकाकार के रूप में बडे पत्थरों से एक निर्माण है, जिसके कोनों में भी सुंदर शिल्पों की श्रेणियाँ हैं।

वानरों के बीच राम लक्ष्मण, पूरब की तरफ हैं। लक्ष्मण सहित सीता राम, हनुमान सुग्रीवादि पश्चिमी शिला पर, दक्षिण में काळीय मर्दन के समय कृष्ण गोपी आदि तथा, उत्तर की दिशा पर, हाथी को आदेश दे रहे वेंकटेश स्वामी, गरुड जी, गरुड वाहनारुढ़ वेंकटेश्वर जी - ये सब मनोहारी शिल्प भक्तों को आकर्षित करते हैं।

इस विरजा नदी के कूवें में शिल्प होने के कारण इसे यहाँ के लोग शिल्पों का कूआँ कहते हैं। इन शिलपों वाले पत्थरों पर ईंटों से चार फुट का दीवार है।

मन ही मन, इस विरजा नदी में डुबकियाँ लगाने का आनंद उठाकर गोविन्द जी का नाम लेंगे।

गोविन्द! गोविन्द! गोविन्द!

18. रसोई-घर (पडिपोटु)

इस चंपक परिक्रमा के ही मार्ग में भण्डार - घर के सामने, उत्तर दिशा की तरफ, पश्चिम दिशा से पूरब की ओर तक एक लंबा सा मंडप है जो मंदिर का रसोई घर है। यहाँ पर स्वामी वेंकटेश के निवेदन के लिए लड्डू, जलेबी, सुखिया, मुरुकू, दोसा आदि दक्षिण भारत के विशेष पकवानों की तैयारी होती रहती है।

इस रसोई घर (तेलुगु में पडिपोटु) के अग्नेय कोने में ''पोटु तायार'' (रसोई लक्ष्मी) की एक छोटी सी प्रतिमा, पूरब की दिशा को देखती हुई विद्यमान है। रसोई में पानी के लिए उपयुक्त कूआँ भी यहाँ पर है जिसे ''पोटु बावि'' (रसोई का कुआँ) कहते हैं। इसी मंडप के सामने पूरब की दिशा में है ''पूल-अर''।

19. फूलों का घर (पूल अर)

हाँ.. यहाँ देखिये। इसी चंपक परिक्रमा में रसोई घर के सामने ही पूरब की तरफ जो कमरा है उसे ''फूलोंवाला घर'' या 'पुष्प मंडप' भी कहते हैं।

श्री वेंकटेश्वर बालाजी की 'मूल मूर्ति', उत्सव मूर्तियाँ, और अन्य देवी देवताओं की मूर्तियों के अलंकार में, हर दिन आवश्यक विविध परिमल वाले फूलों की छोटी - बडी रंग बिरंगी मालाओं को यहाँ पर ही गूधतें हैं।

तिरुमल में हर दिन सुबह 3.30 के समय तथा शाम 7.00 बजे जो तोमाल सेवा (पुष्पालंकार सेवा) होती है, उसके लिए आवश्यक मालायें यहीं पर तैयार होती हैं। इसके अलावा, नित्य कल्याणोत्सव, शोभा यात्रायें, अन्य उत्सवों के लिए आवश्यक मालाओं को भी यहीं पर गूँथते हैं। इस स्थान को ''यमुनात्तुरै'' ''यमुनोत्तरै'' भी कहते हैं।

''यमुनोत्तरा'' का अर्थ है - जमुना तीर! स्वामी की पुष्करिणी ही जमुना है। उसके तीर पर ही भगवान बालाजी का मंदिर है जो साक्षत् द्वापर युग के श्री कृष्ण माने जाते हैं। इसी कारण इस ''यमुनोत्तरै में शंख चक्र गदाधारी, वेणुगान प्रेमी श्री कृष्ण की एक फुट की प्रतिमा, रुक्मिणी, सत्यभामा के साथ, दक्षिण की ओर देखती हुई विद्यमान है। इस मूर्ति के सौदंर्य को देख, भक्ति की परवशता में डूब जाइये आप सभी!

इससे संबंधित एक कहानी सुनने में आया है कि भगवद्रामानुज जी ने (सन् 1037-1137) श्रीरंगम् क्षेत्र में एक बार अपने भक्तों को तिरुमल

क्षेत्र की पवित्रता के बारे में बताते हुए कहा कि वेंकटाचल का स्वामी, श्री वेंकटेश, पुष्पालंकार प्रेमी है। इसीलिए अनादि काल से वहाँ की पर्वत मालाएँ, विविध फूलों के पेडों से भरे हैं। इसी कारण तिरुमल क्षेत्र का दूसरा नाम ''पुष्प मंडप'' भी है।'' मात्र भगवद्रामानुज ही नहीं। बारह आळ्वारों में से एक, 'नम्माळ्वार' ने भी, अपनी रचना ''तिरुवायमोळि' में कहा कि तिरुमल के स्वामी श्रीनिवास जी फूलों से बहुत प्यार करते हैं। इसीलिए उस स्वामी की पूजा फूलों से करना सर्वोत्तम तथा पवित्र सेवा है। 'परांकुश दिव्य सूर' नाम से भी सुविख्यात स्वामी, नम्माळ्वार के इन वाक्यों को भी उधृत करते हुए भगवद्रामानुज जी ने अपने शिष्यों को इस कार्य को करने प्रोत्साहित भी किया। कारणवश स्थगित इस सेवा को फिर से प्रारंभ करने के लिए 'अनंताळ्वान्' नामक शिष्य, तिरुमल पहुँच गया। अनंताळ्वान् से कई साल पहले, भगवद्रामानुजाचार्य के परमगुरु यामुनाचार्य जी, तिरुमलै पर इस पुष्प कैंकर्य का काम संभाल रहे थे। इसके बारे में मालुम होने के बाद, अपने इस कैंकर्य को यामुनाचार्य जी का ही नाम देकर, अनंताळ्वान् ने अपने परम गुरु को आभार प्रकट किया। 'श्री वेंकटाचल इतिहास माला' नामक अपनी रचना में यामुनात्तुरै नामक अपने पुष्प - कैंकर्य के बारे में, अनंताळ्वान् ने स्पष्ट किया। आज भी यह सेवा ''यामुनात्तुरै'' के नाम से ही अभिहित किया जा रहा है।

श्री वेंकटेश्वर स्वामी फूलों के प्रेमी हैं। तिरुमल का दूसरा नाम भी ''पुष्पमंडप'' ही है। इन दोनों विधाओं का आधार यह फूलों का आगार -

यमुनात्तुरै ही है। तिरुमल क्षेत्र में भगवान के सिवा अन्य लोगों के लिए फूलों का धारण मना है। धरना भी नहीं चाहिए। यहाँ पर जो फूल खिलते हैं - सभी के सभी भगवान की सेवा में उपयोग करने के लिए ही हैं। यही इस क्षेत्र का संप्रदाय है। इसीलिए, कुछ साल पहले तक, यहाँ के विविध उद्यान जैसे पेरिंदेवी उद्यान, अनंताळ्वान उद्यान, ताळ्ळपाकम् का उपवन, तरिगोंडा वेंगमांबा बगीचा, सुरपुरम का उपवन, राम बगीचा आदि सभीयों के यहाँ से हर दिन बहुत सारे फूल, भगवान तिरुमलेश के अलंकार के लिए लाये जाते हैं। इसीलिए तरिगोंडा वेंगमांबा, भगवान वेंकटेश की स्तुति करती हुई इन तिरुमल पहाडों को 'विविध फूलों से भगवान की पूजा करनेवाले' कहती है। यद्यपि उपरोक्त सभी उपवनों के आज सिर्फ नाम मात्र बचे हैं, लेकिन भगवान वेंकटेश की पुष्पलंकार सेवा तो यमुनात्तुरै के नाम से ही आज भी अभिहित है।

अब यह प्रदेश लड्डू, वडा जैसे तिरुमलेश के प्रसादों को संरक्षित रखने के लिए उपयोग में लाया जा रहा है। आज कल, विमान परिक्रमा के मार्ग में श्री योग नरसिंह स्वामी के मंदिर के मार्ग में पूरब की दिशा पर, फूलों को रखा जा रहा है।

श्री तिरुमलेश जी की सेवा के लिए एक निर्णीत समयानुसार फूलों की मालाओं को गूँथकर मंदिर में भेजते हैं। ऋतुओं के अनुसार फूल बदलते हैं लेकिन सेवायें नहीं बदलती हैं। हर दिन सुबह तथा शाम होनेवाली सेवाओं और उनके लिए तैयार होनेवाली मालाओं का विवरण इस प्रकार है।

श्रीवारु की मूलमूर्ति की नित्य सेवायें और मालायें

1. शिखामणि :

मुकुट पर से दोनों भुजाओं के नीचे तक अलंकृत होनेवाली माला को 'शिखामणि' कहते हें जो आठ फूट की होती है।

2. सालग्राम माला :

भगवान बालाजी की भुजाओं से दोनों चरणों तक, सालिग्राम माला को छूते हुए अलंकृत होने वाली, चार फुट की दो मालायें हैं।

3. कंटसरि :

गले में दो श्रेणियों में दोनों भुजाओं को छूने वाली 3-1/2 फूट वाली दो मालाएँ कंठ सरि हैं।

4. वक्षःस्थल लक्ष्मी :

बालाजी के वक्षः स्थल पर स्थित श्री देवी, भूदेवी दोनों पत्नियों को अलंकृत करने के लिए 1-1/2 फूट की ये दो मालाएँ हैं।

5. शंख तथा चक्र :

शंख तथा चक्रों को अलंकृत करनेवाली एक फुट की दो मालाएँ।

6. कटारिसरमु :

भगवान की कमर में होनेवाला नंदक - खड्ग को अलंकृत करनेवाली दो फुट की माला।

7. तावळम् :

दोनों कोहनियों के नीचे से, कमर से होती हुई घुटनों तक, एवं घुटनों से चरणों तक अलंकृत होनेवाली तीन मालाएँ जो तीन फुट, साढ़े तीन फूट तथा चार फुट की होती हैं।

8. तिरुवडि मालाएँ :

तिरुमलेश के दोनों चरणों को अलंकृत करनेवाली एक फुट की दो मालाएँ।

हर बृहस्पतिवार के दिन, पूलंगि सेवा में भगवान वेंकटेश के सभी स्वर्णाभरणों को निकालकर, सिर्फ उपरोक्त मालाओं से विशेषतया उन्हें अलंकृत करते हैं।

इन मालाओं के अलावा, मंदिर में स्थित विविध उत्सव मूर्तियों के लिए भी फूलों की मालायें तैयार की जाती हैं।

भोग श्रिनिवास मूर्ति	-	एक माला
कोलुवु श्रीनिवास मूर्ति	-	एक माला
श्रीदेवी भूदेवी सहित मलयप्प स्वामी	-	तीन मालाएँ
श्रीदेवी भूदेवी सहित उग्र श्रीनिवास मूर्ति	-	तीन मालाएँ
श्री सीता राम लक्ष्मण	-	तीन मालाएँ
श्री रुक्मिणीसहित कृष्ण जी	-	दो मालाएँ
चक्रत्ताळ्वार (सुदर्शन चक्र)	-	एक मालाएँ
अनंत, गरुड, विष्वक सेन जी	-	तीन मालाएँ
सुग्रीव, अंगद, हनुमान जी	-	तीन मालाएँ

अन्य मूर्तियों के लिए मालाएँ

स्वर्ण द्वार के द्वार पालक	- दो मालाएँ
गरुडाळ्वार	- एक माला
वरदराजस्वामी	- एक माला
वकुळमालिका	- एक माला
भगवद्रामानुज (मूलमूर्ति/विग्रहमूर्ति)	- दो मालायें
योगनरसिंहस्वामी	- एक माला
विष्वक्सेन	- एक माला
पोटु (रसोई घर) तायारु	- एक माला
बेडी आंजनेय स्वामी	- एक माला
श्री वराहस्वामी मंदिर	- तीन मालायें
पुष्करिणी तीर के हनुमानजी	- एक माला (रविवार के दिन मात्र)

इनके अलावा, श्री तिरुमलेश के नित्य कल्याणेत्सव, वसंतोत्सव, शोभा यात्रायें, अन्य उत्सवों के लिए भी फूल मालायें तैयार की जाती हैं।

भगवान बालाजी को अलंकृत करने के लिए तिरुमल क्षेत्र पर, तुलसी, सेवती, कनेरी, चमेली, कमल, गुलाब, चंपक, नील कमल, केवडा, पान का बेल, हल्दी के पौधे, बिल्व वृक्ष, सुगंधित पत्ते इस तरह अनेकानेक फूलों व पत्तों का उपयोग किया जाता है।

हर दिन सुबह और शाम भगवान की तोमाल सेवा के लिए इस यमुनात्तुरै में गूँथी गई मालाओं को जिय्यंगार जी (स्वामी के अर्चक) सर पर रखकर, मंगल वाद्यों, छत्र, चामरादि राजोचित उपचारों तथा वेद

मंत्रोच्चारण सहित निकलते हैं। ध्वज स्तंभ की परिक्रमा तथा विमान परिक्रमा कर, भगवान के मंदिर में पहुँचते हैं तथा बालाजी को समर्पित करते हैं।

इतनी विशेषताओं वाला है यह यमुनात्तुरै! इसके स्वामी एवं पुष्प प्रेमी, तिरुमलेश का कीर्तिगान कर, आगे बढ़ेंगे।

गोविन्द! गोविन्द! गोविन्द!

20. फूलों का कुआँ

जी हाँ! यमुनोत्तरै के सामने के 'आईना महल' की उत्तरी दिशा पर एक कुआँ है देखिए! यही है फूलों का कुआँ!

अभी तक हमने भगवान तिरुमलेश के लिए तैय्यार होनेवाली फूल मालाओं के बारे में जानकारी ली। भगवान को समर्पित इन मालाओं और फूलों को प्रसाद के रूप में बाँटाने का संप्रदाय इस क्षेत्र में नहीं है। इसीलिए इन फूलों के निर्माल्य को इसी कुएँ में डाल देते हैं। इसी लिए इसे 'फूलों का कुआँ' कहते हैं।

इसे भूतीर्थ भी कहा जाता है। भूदेवी से स्थापित यह तीर्थ, कालांतर में लुप्त हो गया। बाद में श्रीनिवास जी के आज्ञानुसार, रंगदास (तोंडमान चक्रवर्ती का पूर्व जन्म) नामक भक्त ने कुएँ को खोदा और इस तरह रंगदास इसी कुएँ के पानी से अपने बगीचे के पौंधो की सिंचाई करता था। वही रंगदास, अगले जन्म में तोंडमान् चक्रवर्ती बनकर फिर से भगवान तिरुमलेश की सेवा करने लगा। इस जन्म में भी श्री वेंकटेश के आदेश से, इस कुएँ का, पत्थरों से पुनर्निर्माण किया। आवश्यकता के अनुसार इस कुएँ के बिल के मार्ग से आकर भगवान वेंकटेश का दर्शन कर लेता था।

कहा जाता है कि एक बार तोंडमान के शत्रु उसके पीछे पड गये और वह इस विवर के मार्ग से दौड दौडकर भगवान के पास आ गया। लेकिन वह एकांत सेवा का समय था। देव - दंपति के एकांत समय में आ गये अन्य पुरुष को देखकर, भूदेवी शरम के मारे इस कुएँ में जा छिप गयी। वराह पुराण के 'वेंकटाचल माहात्म्य' नामक अध्याय में यह कथा वर्णित है।

भगवद्रामानुज ने अपनी तिरुमलै यात्रा के समय इस कुएँ को देखा तो उन्हें वराह पुराण की कथा का स्मरण हो आया। झट उन्होंने, इसी कुएँ में भूदेवी की स्थापना कर, तीर्थ के अधिपति श्रीनिवास जी की अर्चनादियों की व्यवस्था भी की। 'श्री वेंकटाचल इतिहास माला' ग्रंथ में कहा गया है कि श्री वेंकटेश्वर के निर्माल्य को (तुलसी एवं फूल) भूदेवी के लिए ही इस कुएँ में डालने के आदेश भी उन्होंने दिये। उस समय से भगवान श्रीनिवास के निर्माल्य को इसी कुएँ में डाला जा रहा है। तिरुचानूर के कार्तिक ब्रह्मोत्सवों में पंचमी तीर्थ (चक्रस्नान) के दिन, तिरुमल पर भगवान वेंकटेश्वर पर चढ़ाई गई तुलसी एवं फूल मालाओं को हल्दी, कुंकुम, परिमल द्रव्यों, साडी, कुरती, लड्डू, वडे आदि के साथ, छत्र चामर मंगल वाद्यों सहित तिरुमल से पैदल चलनेवाले मार्ग से तिरुचानूर को ले जाया जाता है तथा पद्मावती तायार को उन फूलों से अलंकृत करने के बाद ही, चक्रस्नान का कार्यक्रम संपन्न होता है। बाकी सभी दिनों में भगवान के निर्माल्य को इसी कुएँ में डाल देने का संप्रदाय था। लेकिन हाल ही में तिरुमलेश के उत्सवों, नित्य सेवाओं और बृहस्पति वार के दिन विशेषकर हो रही पूलंगि सेवादियों में बहुत सारे फूलों का उपयोग होने के कारण, निर्माल्य भी अधिक ही जम जा रहा

है। इस कारण, इस निर्माल्य को तिरुमल की पर्वत मालाओं में, किसी के आवागमन न होने की जगहों पर डाल दिया जा रहा है।

यह फूलों का कुआँ, पहले सीढियों सहित था। तदनंतर काल में कुएँ के चारों तरफ पत्थरों की दीवार का निर्माण किया गया है। हाल ही में इस कुएँ के ऊपर एक लोहे की जाली भी बनाकर, उसपर फूलों की कुण्डीयाँ रखी गईं हैं।

इतना बडा इतिहास है इस फूलों के कुएँ का! श्रीदेवी, भूदेवी, तोंडमान चक्रवर्ति, भगवद्रामानुज जी, तिरुचानूर पद्मावती तायार इन सबका स्मरण दिलाकर भगवान वेंकटेश के निर्माल्य को अपने में निक्षिप्त करनेवाला पवित्र कुआँ है यह। यहाँ पर खडे होकर पुष्पालंकार प्रिय भगवान वेंकटेश जी का नमन करेंगे।

जय जय जय श्री गोविन्द!

21. वगपडि अर (प्रसादों का संग्रहागार)

यमुनात्तुरै के सामने ही पूरब दिशा की ओर जो लंबा मंडप दिखाई दे रहा है, वह 1939 में बनाया गया, स्वामी वेंकटेश्वर जी के प्रसादों का संग्रहागार या गोदाम है। महा प्ररिक्रमा से लगकर, ईशान्य दिशा में दो मंजिलों में यह संग्रहागार बना हुआ है जहाँ पर भगवान वेंकटेश के विविध उत्सवों में बनाये गये, लड्डू, वडा, गुड की मिठाईयाँ, जलेबी, मुरुकु आदि अनेकानेक प्रसादों को जमा कर रखते हैं तथा उन्हें प्रसादों के बिक्री केन्द्रों पर आवश्यकतानुसार भेजते रहते हैं।

कल्याणोत्सव, वसंतोत्सव आदि आर्जित सेवाओं को करानेवाले भक्त जनों को पहुँचाने का प्रबंध भी यहीं से होता है। भगवान और भक्तों के बीच प्रसादों के बँटवारे के जरिये, सक्षम संबंध रखनेवाला इस प्रसादों के संग्रहागार को नमन करके आगे बढ़ेंगे।

सप्तगिरीश वेंकट रमण! गोविन्द गोविन्द!

चंपक परिक्रमा में स्थित मंडपों की विशेषताओं की पूरी जानकारी लेने के बाद अब हम 'विमान परिक्रमा' में प्रवेश करेंगे।

22. रजतद्वार

चंपक परिक्रमा के बाद हम फिर ध्वज स्तंभ के पास ही पहुँच गये हैं फिर से ध्यान दीजिये.. इस ध्वज स्तंभ के सामने जो प्रवेश द्वार है यही 'नडिमि पडि कावलि' है जो चाँदी से बना हुआ है। भगवान बालाजी की सन्निधि में जाने का यह दूसरा प्रवेश द्वार है। गोविन्द का नाम स्मरण एक बार क्यों न कर लें हम?

गोविन्द! गोविन्द! गोविन्द!

ध्वज स्तंभ को पार करने के बाद आनेवाला यह दरवाजा, महा द्वार गोपुर से छोटा है। मजबूत काले पत्थरों से बनी चार भुजाओं वाली चौकी पर यह दरवाजा है। 24 फुट के पूरब और पश्चिमी कोने, उत्तर तथा दक्षिण दिशाओं के 36 फुट के कोने, इनके बीच 9.5 फुट चौडाई का यह द्वार तिमंजिला गोपुर है। उसी पर सात स्वर्ण कलश भी शोभान्वित हैं।

इस प्रवेश द्वार पर, पूरब तथा पश्चिमी देशाओं में, समान दूरी पर दो पत्थर के द्वार-बंध भी हैं। पूरब की दिशा पर जो द्वारबंध है, उस पर

दो बडे बडे लकडी के दरवाजे लगे हुए हैं। इन, दरवाजों, देहली तथा सामने की दीवारों, सभियों पर चाँदी की परतें हैं। इसी कारण इसे 'चाँदी का द्वार' कहते हैं। इन दरवाजों में एक पर हिन्दी में तथा दूसरे पर अंग्रेजी में लिखा हुआ है कि सन् 1929 अक्तूबर के दिन नैजाम एस्टट के 'श्रीराम द्वारका दास परभनी' नामक भक्त ने इन दखाजों पर चाँदी की परतों को लगवाया।

इन दरवाजों तथा दीवारों पर भी श्रीनिवास कल्याण, महंतु बालाजी तथा श्रीनिवास भगवान का पासा खेलना, श्रीराम का राजतिलक आदि बहुत ही रमणीय चित्र हैं।

इस चाँदी के द्वार से ही लगकर, एक और शिलानिर्मित रास्ता है जो उत्तर - दक्षिण दिशा पर 160 फुट तथा पूरब पश्चिम दिशा पर 235 लंबा है। यह रास्ता, तीन फुट चौडा और 30 फुट ऊँचा है। इतिहासकारों का कहना है कि प्रवेश द्वार, गोपुर तथा प्राचीर आदियों का निर्माण सन् 12 सदी में शुरु होकर 13 सदी में पूरा हुआ। सन् 1472-82 में तथा 1950-53 के बीच, दो बार इस गोपुर का जीर्णोद्धार हुआ।

अब हम इस गोपुर को पारकर विमान परिक्रमा में प्रवेश करेंगे।

ओम् नमो वेंकटेशाय।

23. विमान परिक्रमा

रजत द्वार को पारकर अंदर प्रवेश करना ही विमान परिक्रमा में प्रवेश करना है। भगवान श्री वेंकटेश के प्रधान मंदिर के चारों तरफ 235 फुट लंबा (पूरब से पश्चिम की तरफ) तथा 160 फुट चौडा (दक्षिण तथा उत्तर की तरफ) यह दीर्घ चतुर्भुजाकार मार्ग दिखाई देता है। दूसरे गोपुर

का प्राचीर तथा भगवान वेंकटेश की वैकुंठ परिक्रमा के बीच के इस मार्ग की चौडाई पूरब तथा पश्चिम की दिशा में 15 फुट है। 30 फुट दक्षिण की तरफ तथा 20 फुट उत्तर दिशा की तरफ यह मार्ग फैला हुआ है।

भगवान बालाजी का प्रधान मंदिर ''आनंद निलय विमान'' की परिक्रमा का मार्ग होने के कारण इसे ''विमान परिक्रमा'' भी कहते हैं।

हर दिन, सुप्रभात वेला में कुछ भक्त, पुष्करिणी में डूबकर गीले वस्त्रों के साथ, मंदिर में प्रवेश करते हैं तथा इस विमान परिक्रमा के मार्ग में भक्ति तथा श्रद्धा के साथ, मंदिर की चारों तरफ ''अंग परिक्रमा'' (एक प्रकार की मनौती जिसमें भक्त जन मंदिर के प्रांगण में लुढकते हुए भगवान की, विशेषकर तिरुमलेश की परिक्रमा की जाती है।) करते हैं।

इस परिक्रमा के मार्ग में रजत द्वार के आगे ऊपर के भाग पर श्री रंगनाथ जी दर्शन देते हैं। दक्षिण की तरफ की परिक्रमा के मार्ग में श्री वरदराजस्वामी का मंदिर, प्रधान रसोई घर, स्वर्ण कूप, अंकुरार्पण मंडप, यागशाला, हुंडी के रुपयों को गिनने का स्थान (परकामणि) चंदन का घर, विमान वेंकटेश्वर का दर्शन, मंदिर संबंधी विविध कागजातों को रखने का कमरा, वेद पारायण, सभा का घर, सन्निधी भाष्यकार (श्री रामानुज जी) श्री योग नरसिंह स्वामी का मंदिर, परिमल का घर, भगवान बालाजी की हुंडी, श्री विष्वक्सेन जी की सन्निधि आदि हैं। विमान परिक्रमा के मार्ग में स्थित इन छोटे मंदिरों के बारे में जानने के पहले भगवान वेंकटेश का साष्टंग प्रणाम कर लेंगे।

24. श्री रंगनाथ

रजत द्वार के मार्ग से विमान परिक्रमा में प्रवेश करते ही सामने - शेषशायी श्री रंगनाथ जी के दर्शन होते हैं। सोने के परत की इस छोटी

सी मूर्ति के ऊपर श्री वरदराज स्वामी तथा नीचे श्री वेंकटेश्वर स्वामी की मूर्तियाँ हैं। अंदर के स्वर्णिम द्वार के सामने जो गरुड मंदिर है, उसके पीछे दर्शन देनेवाली ये मूर्तियाँ, वैष्णवों के लिए प्रधान क्षेत्र, श्रीरंगम्, कांची तथा वेंकटाचल क्षेत्रों की प्रधानता का बोध दर्शकों को देती हैं। सुवर्ण की मुरम्मा को ताम्र की पट्टिकाओं पर चढ़ाकर, उनसे इन मूर्तियों को सन् 1991 - आगस्त के दिन सुसज्जित किया गया था। 55 लाख रुपयों से संपन्न इस सुवर्ण की मुरम्मा का श्रेय, यू.बी.ग्रूप के मालिक श्री विजय माल्या जी का है। इसी रंगनाथ जी के यहाँ से, सुबह भक्त जन, अंग परिक्रमा कर, यहीं पर समाप्त भी करते हैं। सच कहा जाय तो अंग परिक्रमा नामक यह सेवा ही, श्री वेंकटेश्वर को अत्यंत प्रिय है। अपने भक्त की इस सेवा को देखते हुए स्वामी नितांत खुश होकर, उनकी मनोवांछाओं की पूर्ति करते हैं। इसी कारण तिरुमलेश स्वामी को ‘‘अंग परिक्रमा का स्वामी’’ नाम आया है। इस सेवा के बारे में आगेआगे, और अधिक जानकारी प्राप्त करेंगे।

अंग परिक्रमा के स्वामी! वेंकटेश! गोविन्द!

अन्य दर्शनों के समय में भी भक्त जन यहीं पर, स्वामी को साष्टांग दंड प्रणाम समर्पित करते रहते हैं।

इतः पूर्व यहीं पर ‘‘गरुड गंभ’’ भी रहा करते थे। मंदिर में हरेक भक्त स्वयं अपने प्यारे भगवान की मूर्ति को आरती वगैरह चढ़ा नही सकता है न? इस कमी को पूरा करने के लिए मंदिर में स्थित इस जगह पर सभी भक्त जन कपूर आरती उतारेंगे ताकि उनको स्वयं भगवान को आरती उतारने की खुशी मिल जाय। बहुत दिन पहले यहीं पर भक्त जन आरती उतारकर नारियल फोडते थे। मंदिर में भक्तों की संख्या

दिन-ब-दिन अधिक होने के कारण, इस गरुड गंभ को 'ध्वज स्तंभ' के आगे, तदनंतर महाद्वार के सामने गोल्लभामा मंडप के पास रखा गया है। इसे 'अखिलांडम्' भी कहते हैं। इस जगह की एक और विशेषता यह है कि शोभा यात्रा के लिए मंदिर के बाहर जाकर फिर से मंदिर में पुनःप्रवेश करते समय वेंकटेश्वर स्वामी की उत्सव मूर्ति - मलयप्पा की आरती -- रंगनाथ की इस मूर्ति के यहाँ ही उतारी जाती है। भगवान तिरुमलेश की पावन सन्निधि में उस कावेरि रंगनाथ जी का स्मरण क्यों न एक बार कर लें?

श्री रंग रंग रंगा!

श्री रंगनाथ की मूर्ति के ऊपर तीन स्वर्ण - कलशों को देखा है न आपने? वे हैं गरुडाळ्वार के मंदिर के कलश! मंदिर के अंदर, भगवान तिरुमलेश के आगे गरुडजी उपविष्ठ हैं। वेंकटेश जी के सेवकों में प्रथमगण्य है गरुड जी! अंदर मंदिर में प्रवेश करते समय उनके पावन दर्शन से हम पुनीत हो जायेंगे। पहले तो इन तीनों स्वर्ण कलशों की कांति को मन की आँखों से देखिए!

गोविन्द गोविन्द गोविन्द!

हाँ! अब हम आगे बढ़ेंगे! बायीं ओर मुडकर मंदिर की परिक्रमा करेंगे!

25. श्री वरदराजस्वामी का मंदिर

देखिए! विमान परिक्रमा के इस मार्ग में रजत द्वार की दक्षिण दिशा में नौ फुट की दूरी पर पश्चिम की तरफ देखनेवाले श्री वरदराजस्वामी

जी का मंदिर है जो तीन फुट की शिला वेदी पर, अंतराळ, गर्भालय नामक दो भागों में विभाजित है। गर्भालय में, शंख चक्रधारी हँसमुख श्री वरदराज स्वामी की 5 फुट की मनोहारी मूर्ति अभय मुद्रा में खडी है। आँखों भर देख लीजिये। नमन कीजिए। गर्भालय पर वेसर शिल्प शौली में बने गोपुर पर एक ही कलश है। उसे देखिए।

करीब 20 फुट लंबाई तथा 15 फुट चौडाई से बने इस मंदिर की परिक्रमा करते हुए भगवान वेंकटेश के दर्शन के लिए हम सब आगे बढ़ सकते हैं।

यहाँ 'वरदराज स्वामी' के लिए हर दिन प्रत्येकतया पूजा न होने पर भी प्रसादों का भोग तो होता ही रहता है।

हर साल श्री वरदराज स्वामी की जयंति के दिन, अभिषेकादियों के साथ विशेष भोग भी चढ़ाये जाते हैं।

कोई यह तो स्पष्टतया बता नहीं सकता कि तिरुमल पर श्री वरदराज स्वामी की मूर्ति की स्थापना किसने और कब की थी। जो भी हो, वरदराज स्वामी जी का जयजयकार करके आगे बढ़ेगे।

जय जय वरदा! हे कांची वरदा। हाँ तनिक यहाँ पर ठहरिये! यहाँ से सीधे आनंद निलय में जाकर श्री वेंकटेश्वर स्वामी के पावन दर्शन कर लेने के बाद, इस विमान परिक्रमा मार्ग में स्थित अन्य छोटे मंदिरों की जानकारी लेंगे! ठीक है न? चलिए! आगे बढ़िये।

26. घंटामंडप

देखिए! इस तरफ आईये! श्री वेंकटेश्वर स्वामी के प्रधान मंदिर का मुख-मंडप, घंटा मंडप में प्रवेश कीजिये!

विमान परिक्रमा की दक्षिण दिशा से, उत्तर दिशा की ओर मुडते हुए यहाँ पर हम आ गये हैं न? हम ने जहाँ अब प्रवेश किया है, उस जगह की ढेर सारी विशेषताओं को बता पाना मुश्किल काम ही है।

ब्रह्म देवता से लेकर सभी देवी देवताएँ, सनक सनंदनादि महर्षियाँ सभी के सभी भगवान वेंकटेश के पावन दर्शन के लिए जहाँ प्रतीक्षा करते खडे होते हैं वे स्वर्णिम द्वार ये ही हैं।

अब हम स्वर्ण द्वार के आगे के मंडप में खडे हैं। इस द्वार के आगे गरुडजी का मंदिर भी है। इन दोनों को जोडते हुए, निर्मित इस मंडप को 'महामणिमंडप' या 'घंटा मंडप' या 'मुख मंडप' कहते हैं। 43 फुट × 40 फुट के विस्तीर्ण के इस महामंडप में कुल 16 खंभे हैं जिनपर भूवराह स्वामी, नृसिंह स्वामी, महाविष्णु, श्री वेंकटेश्वर स्वामी तथा श्री वरदराज स्वामी इत्यादि की मूर्तियाँ हैं। सन् 1417 अगस्त 25 दिन तक इस बडे मंडप का निर्माण चंद्रगिरि के अमात्य मल्लना नामक विजय नगर साम्राज्य के अमात्य के नेतृत्व में पूरा हुआ। माधवदासु नाम से भी अमात्य मल्लन्ना, जाने जाते थे।

स्वर्ण द्वार के आगे, छः फुट की गरुड जी की शिला प्रतिमा, भगवान श्रीनिवास जी को नमस्कार करती हुई मुद्रा में उपस्थित है।

सुवर्ण द्वार तथा गरुड जी की मूर्ति के बीच के महामणि मंडप में ही हर दिन सुबह, तीन बजे के समय पर 'कौसल्या सुप्रजा रामा' आदि सुमधुर सुप्रभात श्लोकों के पठन से भगवान वेंकटेश्वर को नींद से जगाया जाता है। उस प्रशांत वातावरण में आध्यात्मिक भाव तरंगों से पुलकित इस घंटा मंडप में हर दिन स्वर्ण सिंहासन पर विराजमान

वेंकटेश्वर स्वामी जी को उस दिन के तिथि, वार तथा नक्षत्रों का विवरण, पंचांग श्रवण के द्वारा दिया जाता है। पिछले दिन के आय-व्यय का विवरण भी भगवान वेंकटेश्वर को दिया जाता है। इसी को 'भगवान श्रीनिवास जी का दरबार' कहते हैं। उस दिन के नित्यान्न दाताओं के नाम भी इसी समय पर पढ़े जाते हैं।

इसी मंडप में हर बुधवार के दिन, भोग श्रीनिवास मूर्ति, श्री मलयप्पा स्वामी, तथा विष्वक्सेन जी का सहस्र कलशाभिषेक तथा हर बृहस्पति वार दूसरी घंटा के समय ''तिरुप्पावड'' नामक अन्नकूटोत्सव आदि सेवायें भी संपन्न होती हैं।

इनके अलावा उगादि, आणिवार आस्थानम्, दीवाली इत्यादि त्योहारों के दिनों में गरुड देवता के आगे, दोनों पत्नियों के साथ श्री वेंकटेश्वर जी को तथा विष्वक्सेन जी को बिठाकर दरबार का निर्वाह करते हैं।

श्रीराम नवमी के दिन श्री सीता राम लक्ष्मण हनुमान जी गोकुलाष्ठमी के दिन श्री रुक्मिणी कृष्ण जी को भी यहाँ इस मंडप में बिठाकर दरबार का निर्वाह करते हैं।

इसी मंडप में स्वर्ण द्वार की दक्षिण दिशा पर दो बडी बडी घंटियाँ, मोटी मोटी जंजीरों से लटकती हुई दिखाई देती हैं। स्वामी जी, को भोग चढाने के समय, इन को बजाया जाता है। इन घंटों को बजानेवाले ब्राह्मण कर्मचारी को 'घंटापाणि' कहते हैं। इन घंटा नादों के तरंग, पूरे तिरुमल क्षेत्र में तथा तिरुमल की पर्वत श्रेणियों पर भी धीमी गति से व्याप्त होते हैं। इस नाद को सुननेवालों के मनों में भगवान को भोग

चढ़ाने की सेवा का स्मरण हो आता है। तिरुमल में इन दिनों में भी, इस नाद के रुक जाने के बाद ही अपने घरों में, भोजन करनेवाले बहुत सारे लोग हैं।

विजयनगर के महाराजा जब चंद्रगिरी में कुछ दिनों के लिए रहने आते थे तब इस घंटानाद को वहीं से सुनने की व्यवस्था उन्होंने बनायी थी। कहते हैं कि तिरुमल के घंटानाद की श्रृंखला बनाकर विविध प्रांतों के द्वारा इस घंटानाद को निर्धारित करने के बाद ही राजा लोग अपना भोजन लेते थे।

स्वर्ण द्वार के आगे के मंडप में इन घंटों के रहने से ही इसे 'घंटानाद मंडप' का नाम आया है।

घंटों को तमिल में 'मणि' कहते हैं तथा यह मंडप 'तिरु महामणि मंडप' के नाम से भी जाना जाता है।

27. गरुडमंदिर

स्वर्ण द्वार के आगे स्थित इस मंदिर में, श्री वेंकटेश्वर स्वामी की तरफ नमस्कार मुद्रा में पंखों को फैलाकर खडे गरुड जी की 6 फुट की मूर्ति है। सन् 1512 के शासनों में इस गरुड मंदिर की प्रस्तावना है। इसी मंदिर पर तीन स्वर्ण कलश भी हैं। यह मंदिर, बाहर तीनों तरफ, सुवर्ण से पुचारी गयी ताम्र की पट्टिकाओं से नितांत सुशोभित है। इसी मंदिर के पीछे स्थित श्री रंगनाथ जी की सुवर्ण मूर्ति को हमने अभी अभी देखा है न?

इस मंदिर में स्थित अन्य गरुड की मूर्तियों में ''रामुलवारि मेडा'' (राम जी का महल) में स्थित पंचलोह की गरुड मूर्ति स्मरणीय है।

इसके अलावा, रंगनायक मंडप में स्थित सोने व चाँदी से बना गरुड वाहन भी उल्लेखनीय है। हर, साल, ब्रह्मोत्सवों में, श्री वेंकटेश्वर जी सुवर्ण गरुड पर शोभा यात्रा पर जो निकलते हैं - वे क्षण अविस्मरणीय होते हैं।

भगवान बालाजी के समक्ष पंख फैलाये खडे गरुडाळ्वार की, मन से स्तुति कर स्वर्ण द्वार में प्रवेश करेंगे।

कुंकुमांकितवर्णाय कुंदेंदुधवळाय च
विष्णुवाह! नमस्तुभ्यम् पक्षिराजाय ते नमः

चलिए, अब हम स्वर्ण - द्वार की तरफ चलें। तनिक ठहरिये कृपया! इस द्वार में प्रवेश करने के पहले इस द्वार की दिन - रात फहरा देने वाले द्वार पालों के बारे में जानकारी प्राप्त कर, उनकी अनुमति से अंदर प्रवेश करेंगे। ठीक है न? चलिए फिर!

28. जय और विजय

श्री वैकुंठ की ही तरह इस तिरु महामणि मंडप में स्वर्ण-द्वार के दोनों तरफ, शंख, चक्र गदा धारी द्वार - पाल, जय - विजय खडे हैं देखिए! 10 फुट की लंबी - इन पंचलोह मूर्तियों के चारों तरफ लकडी से बनी जालियाँ हैं। यहाँ के दरवाजे जिसतरह, सोने की मुरम्मा से कांतिमय हैं, उसी तरह जय - विजय की दोनों जालियाँ भी स्वर्णिम जल की ताम्र पट्टियों से सुशोभित हैं।

भगवान बालाजी के सामने जागरुकता तथा भक्ति से बर्ताव करने की सूचना दोनों द्वारपाल भक्त जनों को देते हुए, खडे हैं। दक्षिण की तरफ खडे जय, अपनी दायीं अंगूठी से एवं उत्तर की दिशा की तरफ

खडे विजय अपनी बायीं अंगूठी से भक्त जनों को सावधान कर रहे हैं मानो कह रहे हों कि यह क्षेत्र अत्यंत पवित्र तथा धूलि से संरक्षित है। इसी लिए इस क्षेत्र में पहले पुष्करिणी में नहाकर, पवित्र होकर मंदिर में प्रवेश करना चाहिए।

तिरुमल के मंदिर में जय - विजय की बृहत लोह मूर्तियों जैसी मूर्तियाँ, अन्य किसी भी जगह पर देखी नहीं जाती हैं। इनकी स्थापना किसने और कब की, ये बातें तो अभी तक अनकही ही रह गई हैं।

दिन - रात भगवान वेंकटेश की सन्निधि की रक्षा करनेवाले द्वार - पाल जय - विजय को नमस्कार समर्पित कर उनकी अनुमति से मंदिर में हम प्रवेश करेंगे।

जयी भव! विजयी भव! दिग्विजयी भव!
गोविन्द गोविन्द हे गोविन्द!

अब हम भगवान की सन्निधि में प्रवेश दिलानेवाला इस स्वर्ण - द्वार के बारे में जान लेंगे!

29. स्वर्णद्वार

देखिए! इस स्वर्ण द्‌वार का पावन दर्शन कीजिये। श्री वेंकटेश्वर स्वामी के पास हमें पहुँचानेवाला प्रधान द्वार यही है। पीली पीली कांतियों से चमकते हुए द्वार से भगवान श्रीनिवास प्रभु के दिव्य दर्शन हमे मिलते हैं।

अहो भाग्य अहो भाग्य। महान आनंद है न! श्री महावैकुंठ में जो स्वर्णिम द्‌वार हैं, वे ही हैं तिरुमल के ये द्वार! वैकुंठ के द्‌वार - पाल ही हैं यहाँ के ये जय - विजय! यहीं पर बडे सवेरे तीन बजे के ब्रह्म मुहूर्त

में, पुराने जमाने से संपन्न हो रही सुप्रभात सेवा की विशिष्ठता के बारे में क्या कहें?

यह प्रधान शिला द्वार भी स्वर्ण के जल से तपी - पूती ताम्र पट्टिकाओं से सुशोभित हैं। इस द्वार का चौकट भी सोने की लताओं और फूलों से जडी हुई है। चौकट के ऊपरी भाग में ठीक बीच, एक विकसित कमल है। वहीं पर हाथियों से अर्चित पद्मासनी महालक्ष्मी की प्रतिमा भी है।

इस स्वर्ण द्‌वार के दरवाजों पर चौकाकार के खाने हैं जिनमें भगवान विष्णु की छोटी छोटी मूर्तियाँ जडी हुई हैं। एक एक दरवाजे पर चार छोटी गडियों की चार श्रेणियाँ है, दोनों दरवाजों में कुल मिलाकर 32 गडियाँ हैं न?

ऊपर से पहली श्रेणी की गडियों में क्रमशः चक्र, वेंकटेश्वरजी, वैकुंठवासी महाविष्णु तथा शंख गढे हुए हैं।

दूसरी श्रेणी में क्रमशः वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न तथा अनिरुद्ध के चित्र हैं जो आगम शास्त्रानुसार भक्त परंधाम उस महाविष्णु के 'व्यूह रूप' कहे जाते हैं।

3, 4, 5 श्रेणियों की 12 गडियों में केशव, से लेकर दामोदर तक की द्वादश मूर्तियाँ निम्नोक्त क्रम में हैं।

तीसरी श्रेणी - केशव, नारायण, माधव तथा गोविंद
चौथी श्रेणी - विष्णु, मधुसूदन, त्रिविक्रम, वामन
पाँचवी श्रेणी - श्रीधर, हृषीकेश, पद्मनाभ, दामोदर

भगवान विष्णु की ये द्वादश मूर्तियाँ, खडी हुई मुद्रा में हैं देखिए।

छटी और सातवी श्रेणियों तथा आठवी श्रेणी की पहली तथा चौथी गडीयों में क्रमशः श्री महाविष्णु के विभवावतारों (दशावतार) की मूर्तियाँ जडी हुईं हैं। आठवी श्रेणी की दूसरी तथा तीसरी गडी में, दखाजों को बंद करने की कडियाँ हैं। इन्हें नीचे देहली पर जडे हुए लोहे के अँकुडे से लगाकर बडा सा ताला लगा देते हैं। इसके अलावा, इन दखाजों के बीच, तीन जगहों पर तीन ब्योंडे हैं। इन तीनों में पहले और तीसरेवालों को देवस्थान के अधिकारी ही ताले लगाते हैं। दूसरे वाले को भगवान बालाजी के अर्चक स्वामी ही ताला लगाकर, चाबियाँ आप ले जाते हैं।

इतना ही नहीं, इन दखाजों में एक छोटा सा छेद जो है, इस छेद में से बाहर खडे अर्चक गण, दराँती जैसी चाबी से अंदर के अँकुडे को वहाँ की कडियों से लगाते हैं तथा खोलते भी हैं। इस तरह बाहर से ही दराँती जैसी चाबी से ही दखाजे को बंद करना एवं खोलना अर्चक स्वामियों को मिली रहस्यमय पैतृक कला है।

इस द्वार को 'स्वर्णिमद्वार' का नाम भी बहुत पुराने जमाने से ही आया है। सन् 15 सदी में तिरुमलेश के पहली बार दर्शन करने के बाद अन्नमय्या ने कहा 'कनक रत्न द्‌वारों की कांतियों को दोनों तरफ मै ने देखा'। और यह भी कहा कि उन द्‌वारों से ही मैं ने तिरुवेंकटाचलाधीश को भी देखा।

तदनंतर काल में पता नहीं कब कब इन दरवाजों पर स्वर्ण का मुलाम चढ़ा, लेकिन यह तो सुनने में आया है कि सन् 1884 में महंतु धर्मदास ने यह काम किया था। उसके बाद सन् 1958 में आनंद निलय

के विमान के महा संप्रोक्षण के समय में भी स्वर्ण का मुलाम इन दीवारों पर चढ़ाया गया।

आनादि काल से पता नहीं, इस देहली पर से ब्रह्मादि देवताएँ कितनी बार अंदर प्रवेश कर श्री वेंकटेश्वर के दिव्य दर्शन पाये होंगे। सनक सनंदनादि महाऋषि कितनी बार यहाँ तिरुमलेश के दर्शन की प्रतीक्षा करते बैठे होंगे? आळ्वार, कर्नाटक के हरिदास, अन्नमाचार्य, तरिगोंडा वेंगमांबा जैसे महाभक्त, महाराजा लोग, चक्रवर्ति - इस अनंत काल प्रवाह में जाने कितने महानुभाव तिरुमलेश की करूणा वृष्ठि में भीगने के लिए तरस गये होंगे? कितने भक्त अंदर प्रवेश कर उस मंगल मूर्ति को देख पाने के आनंद में तल्लीन खडे हुए होंगे? किसी पुराने जन्म के भाग्य लेश के कारण, हमें उन महानुभावों के आवा - गमन से पवित्र इस स्थान पर आने और इस देहली के पास खडे होने का सुअवसर मिला है! सच कहा जाय तो हमारा भाग्य, अगणित है। चलिए! अंदर प्रवेश कीजिये। हमारे पूरे जन्म को स्वर्णिम बनाने वाले भगवान बालाजी को, इस द्‌वार में से प्रवेश करते हुए हमारी इन आँखों भर देख लीजिये!

मणि किरीट, मकर कुडलों, शंख चक्रों, वरद, कटि हस्तों तथा चिन्मय दिव्य दरहासवाले स्वामी को देख लीजिये। अपलक दृष्टि से देखिए। यहीं से गोविन्द का नामस्मरण करते हुए, स्वर्णिम द्‌वार की देहली को नमन करते हुए, और अंदर चलेंगे! चलिए!

सप्तगिरीश स्वामी! वेंकटेश!
गोविन्द गोविन्द गोविन्द!

30. अभिषेकमंडप (स्नपनमंडप)

हाँ। इधर स्वर्ण द्वार को पारकर अंदर प्रवेश करने के तुरंत बाद जो 27 फुट का चतुर्भजाकार मंडप है, यही अभिषेक मंडप माने स्नपन मंडप है। इस मंडप के बीच चार खंभे हैं जिनपर, बालकृष्ण, योग नरसिंह, काळिय मर्दन आदि शिल्प हैं। तमिल में इसी मंडप को 'तिरुविलान् कोइल' कहते हैं जिसका अर्थ है बालमंदिर।

कभी कभार, गर्भालय के अंदर या बाहर मरम्मत होते रहें तो उन दिनों में बाल मंदिरों की व्यवस्था कर मूलविराट स्वामी के तेज को दूसरी मूर्ति में प्रवेश कराके प्राण - प्रतिष्ठा करते हैं। ई. सदी 614 में पल्लव राणी समवय (पेरुंदेवि) ने मणवाळप्पेरुमाळ नामक रजत भोग मूर्ति की प्रतिमा को मूलविराट मूर्ति की नकल के रूप में इस मंदिर को उपहार के रूप में दिया था। उस मूर्ति की स्नपन मंडप में स्थापना कर, अभिषेकादि पूजाओं को करते रहने का प्रबंध भी उसने किया। इतिहासकारों के विचारानुसार उसी समय से इस स्नपन मंडप का, तिरुविलान कोइल के रूप में उपयोग किया जाने लगा। लेकिन आज कल यहाँ पर किसी तरह के अभिषेकादि नहीं किये जा रहे हैं। ध्यान देने की बात यह है कि हर दिन श्री वेंकटेश्वर स्वामी जी की 'तोमाल सेवा' रूपी पुष्पालंकार सेवा के तुरंत बाद, गर्भालय में स्थित कोलुवु श्रीनिवासमूर्ति की मूर्ति को यहाँ सिंघासन पर आसीन कराकर, दरबार मनाते हैं। इसी समय श्री स्वामी जी को उस दिन के पंचाँग का विवरण तथा, होनेवाले उत्सवों एवं सेवाओं के भी विवरण भक्ति पूर्वक सुनाये जाते हैं। इसी दरबार के समय जिस सिंघासन का उपयोग किया जाता है, वह यही हमारी दायिनी

तरफ के सलाखों वाले विभाग में है। दर्शन कीजिये। एक छोटी सी बात यह है कि भगवान तिरुमलेश का दरबार, अगर सूर्योदय के पहले होगा तो स्वर्ण द्वार के आगे के घंटा मंडप में संपन्न होता है।

इस स्नपन मंडप में स्वर्ण द्वार के दोनों तरफ 'श्री भण्डार' नामक दो कमरें हैं देखिये! इन दोनों कमरों में, उत्तर दिशा की ओर के कमरे में, हुँडी से आयी हुई धन राशी रखी जाती है। हर दिन रात में, स्वामी की एकांत सेवा के बाद हुँडी को खोलकर बाहर से अंदर लाया जाता है तथा उसे ठीक से बाँधकर सील लगाकर स्वर्ण - द्वार के अंदर के इस कमरे के 'श्री भण्डार' में संरक्षित रखा जाता है। इसी कारण भगवान बालाजी के उपहारों को संरक्षित रखनेवाला यह कमरा 'उपहार भण्डार' भी कहा जाता है।

और हाँ, यहाँ इस बायीं तरफ (दक्षिण दिशा की ओर) जो कमरा है, उसमें भगवान बालाजी के आभूषण, कीमती रत्नों जडित शंख, चक्रादि आयुध, अमूल्य नवरत्न हारों को संरक्षित रखते हैं। अब, आपके मन में शायद यह शंका जगेगी कि, भगवान तो हमेशा, सकल आभूषणों से अलंकृत ही रहते हैं, तो फिर इनके अलावा और कितने आभूषण होंगे इस कमरे में रखने के लिए? इसीलिए इस बात को और भी विस्तार रूप से बताना पडेगा! ध्यान से सुनिये!

श्री वेंकटेश्वर स्वामी की मूल - मूर्ति के अलंकार में जिन आभूषणों को समर्पित करते हैं, वह तीन प्रकार का होता है। 1) सदा समर्पण 2)विशेष समर्पण तथा 3) मोजाति समर्पण।

सदासमर्पण

हर दिन भगवान बालाजी को अलंकृत करने वाले आभूषण हैं - स्वर्ण मुकुट, सुवर्ण का कटि हस्त, वरद हस्त, खड्ग, मकर कंठी, लक्ष्मी मलायें - ये सब! ये सब मात्र सुवर्ण से बनाये गये आभूषण हैं जो प्रधान अर्चकों के अधीन में ही रहते हैं। इनकी कीमत करीब एक करोड रूपयों से बढ़कर ही होगी।

विशेषसमर्पण

विशेष पर्व दिनों में या राष्ट्रपती, प्रधानमंत्री आदि अधिनेताओं के आने पर या कुछ विशेष उत्सवों के समय, भगवान को हीरों का मुकुट, हीरों से जडे शंख - चक्र, वैकुंठ कटि हस्त आदि अलंकृत किये जाते हैं जो पारुपत्यदारु नामक अधिकारी के अधीन में रहते हैं। हीरे, वैडूर्य, मरकत, माणीक्यादियों से जडे इन आभूषणों की कीमत दो करोड से भी अधिक होगी।

मोजाति आभूषण

ब्रह्मोत्सव आदि उत्सवों के अवसर पर भगवान वेंकटेश जी की मूर्तियों को इन आभूषणों से अलंकृत किया जाता है। गद्वाल के राजा तथा राणी द्वारा समर्पित पथक आदि इस विभाग के अंतर्गत आते हैं जो आर्थिक एवं ऐतिहासिक विशेषताएँ भी रखते हैं। तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् के कोशागार में लोहे की सलाखों के बंद दरवाजों के बीच के कमरों में रखे जाते हैं।

ये सारे आभूषण क्रमशः मंदिर के अर्चकों, पारुपत्तेदार तथा कोशागार के अधिकारी के अधीन में ये सब रहते हैं।

यही है इस स्नपन मंडप का महोन्नत इतिहास!

हर दिन श्रीनिवास स्वामी का जहाँ पर 'दरबार' संपन्न होता है उसके थोडा आगे है यह ''रामजी का महल'' (रामुल वारि मेडा) उसमें प्रवेश करने के पहले, चलिए एक बार हम सब राम जी का स्मरण करेंगे।

सीता राम की जय हो।

31. राम जी का महल

अभिषेक मंडप (स्नपन तिरुमंजन) को पार कर जब अंदर जायेंगे तो, हम प्रवेश करेंगे इस संकरी जगह में जो 'राम जी का महल' कहलाया जाता है। 12×10 फुट का यह महल, कहा जाता है कि सन् 1262-65 के पहले नहीं था। अब जो 'वैकुंठ परिक्रमा' का मार्ग है, इतिहासकारों के कथनानुसार, यह भी उसी का एक भाग था।

स्नपन मंडप से 'रामजी के महल'' में पहुँचने के लिए छः फुट चौडा, इस शिला - द्वार को पार करना पडता है जिसके बाहर की तरफ लकडी की जाली तथा अंदर की तरफ लकडी के दरवाजे भी हैं। उन दखाजों को बंद कर ताला लगा देने की व्यवस्था भी है।

राम जी के महल में दोनों तरफ, ऊँचे चबूतरे हैं। उत्तराभिमुख होते हुए, राम जी के सेवक अंगद, हनुमान, तथा सुग्रीव की मूर्तियाँ हैं। उत्तर दिशा के चबूतरे पर श्री वेंकटेश्वर जी के सेवक विष्वकसेन, अनंत एंव गरुड जी की उत्सव मूर्तियाँ विद्यमान हैं, जिन्हें 'नित्य सूर' कहा जाता है।

राम जी के सेवक

1. सुग्रीव

वानरों के राजा - सुग्रीव मुकुट धरकर श्रीरामजी को अंजलि समर्पित करता हुआ खडा है। श्री राम नवमी के बाद दशमी के दिन, श्री राम जी के राज तिलक में सुग्रीव भाग लेते हैं।

2. अंगद

युवराज अंगद भगवान वेंकटेश्वर जी का विभव देखकर अश्चर्य चकित सा खडा है। युवराज होने के कारण इसके सर पर छोटा सा मुकुट भी है। श्री राम जी के राजतिलक में अंगद भी रहते हैं।

3. आज्ञापालक हनुमान

देखिए कितनी विनम्र मुद्रा में हनुमान जी खडे हैं - तनिक झुककर मुँह पर हाथ धरकर। श्री राम जी की आज्ञा को सुनते हुए 'जी जी' कहने के समय कहीं अपने ही मुँह से लार की बूँदे स्वामी पर गिर जायें तो बहुत बडा अपराध होगा न? इसी कारण अपने मुँह पर हाथ धरकर, कितनी ही विनम्रता से खडे हैं हमारे हनुमान! श्रीराम नवमी, राजतिलक जैसे उत्सवों में प्रधानतया हनुमान तो रहते ही हैं।

श्री वेंकटेश्वर की सेवा में उनका परिवार

1. अनंत

शय्या के रूप में हर पल श्री महाविष्णु की सेवा करनेवाले आदि शेष ही - ये अनंत हैं। वरद तथा अभय मुद्राओं में, सर पर फणियों से विराजित यह पंचलोह मूर्ति ही अनंत हैं। ब्रह्मोत्सवों के ग्रामोत्सव में, ध्वजारोहण के पहले दिक्पालकों को, अनंत जी ही आह्वानित करते हैं।

2. विष्वक्सेन

अखिलांड कोटि ब्रह्मांड नायक श्री वेंकटेश जी के सेनाध्यक्ष 'विष्वक सेन' जी को 'सेना मोदलियार' भी कहते हैं। शंख, चक्रों को धरकर अभय एवं वरद मुद्राओं में विराजित पंचलोह मूर्ति विष्वक सेन जी, भगवान तिरुमलेश के उगादि उत्सव, दीवाली दरबार, आणिवार दरबार आदि अनेक सेवाओं में अवश्यतया उपस्थित रहते हैं। वेंकटेश जी के हर उत्सव में मृत्तिका संग्रहण (माटी को इकट्ठा करना) कार्य का पूरा भार लेते हैं सेनाधिपति विष्वक सेन!

3. गरुड

भगवान वेंकटेश जी की आज्ञा का पालन करने हेतु सदा अपने पंख फैलाकर सन्नद्ध रहनेवाले सेवक, गरुड जी नमस्कार - मुद्रा में हैं - ब्रह्मोत्सवों में पहले दिन के ग्रामोत्सव में गरुड जी भाग लेते हैं।

करीब 1-1/2 फुट की ये सारी पंचलोह मूर्तियाँ, उन उन उत्सवों में प्रधानतया भाग लेती ही हैं।

आजकल भगवान वेंकटेश जी के गर्भालय में रहनेवाली श्री सीता राम लक्ष्मण जीकी मूर्तियाँ, पुराने जमाने में यहीं, इन चबूतरों पर रहने के कारण, इसको 'राम जी का महल' नाम पडा था। लेकिन बाद में, राम जी की इन मूर्तियों को अंदर रखने के बाद भी नाम तो वही रह गया है। अब यहाँ की सारी प्रतिमाओं को सोने के कुएँ के पास अंकुरार्पण मंडप में रखा गया है। वहाँ उन मूर्तियों के दर्शन कर लेंगे। अधिक भक्त जन होने के दिनों में, श्री राम जी के महल के बाहर से ही वेंकटेश जी के दर्शन करने की व्यवस्था की जाती है।

श्री राम जी के महल का नमन कर, अब हम भगवान वेंकटेश जी के शयन मंडप में प्रवेश करेंगे।

श्री राम जी के महल की, शिला निर्मित देहली के बाहर लकडी की जाली के द्वार हैं। लेकिन यह द्वार तो हमेशा खुला ही रहता है।

रात में भगवान की एकांत सेवा के समय ताळ्ळपाका परिवार के सदस्य हर दिन, राम जी के महल में बैठकर एकतारा बजाते हुए, स्वामी को लोरी सुनाते हैं।

गोविन्द गोविन्द गोविनद

32. शयनमंडप

श्री राम जी के महल को पारकर हम अन्दर प्रवेश करते हैं - सीधे शयन मंडप में। श्री वेंकटेश्वर स्वामी जहाँ विराजमान हैं, उस गर्भालय के आगे का अंतराळ (कमरा) ही शयन मंडप है। 13-1/2 फुट के विस्तार में चतुर्भुजाकार के इस कमरे को 'अर्थमंडप' भी कहते हैं।

यहीं पर हर रात श्री वेंकटेश्वर स्वामी (भोग श्रीनिवास मूर्ति) की एकांत सेवा (शय्या सेवा) संपन्न होती है। इसी कमरे में चाँदी की कडियों से लटकायी गयी निवार की स्वर्णशय्या पर रेशमी पलंग बिछाते हैं तथा यहाँ भोग श्रीनिवासमूर्ति की 'शय्या सेवा' संपन्न होती है। इसी लिए इस कमरे को 'शयन मंडप' कहले हैं।

हर दिन ब्रह्म मुहूर्त में सुप्रभात सेवा के तुरंत बाद संपन्न होनेवाली तोमाल सेवा के समय, वैष्णव स्वामी, इसी शयन - मंडप में वेंकटेश्वर जीकी मूल मूर्ति के सामने खडे होकर, दिव्य प्रबंधों का पठन करते हैं।

इसी तरह इस तोमाल सेवा (पुष्पालंकार सेवा) के बाद संपन्न होनेवाले सहस्त्र नामार्चन में तथा अष्टोत्तर शत नामार्चन में भी वेद पंडित, यहीं पर खडे होकर सहस्त्रनामावली पढते रहते हैं तो अंदर अर्चक स्वामी की अर्चना करते हैं। हर शुक्रवार, शुक्र वाराभिषेक के समय में भी वेद पंडित यहीं पर श्री सूक्त, पुरूष सूकतादि वेद मंत्रों का पाठ करते हैं और अंदर अभिषेक संपन्न होता है।

तोमाल सेवा, सहस्त्रनामार्चना आदि नित्य सेवाओं में, हर मंगलवार ''अष्टदळ पाद पद्माराधना'' के समय में, हर शुक्रवार, अभिषेक के समय में भाग लेनेवाले अर्जित सेवा के भक्तों को इसी शयन मंडप में, एक के पीछे एक को उन उन श्रेणियों में ''स्वर्ण द्वार'' तक बिठाते हैं।

हर दिन जो प्रभात सेवा, तोमाल सेवा तथा सहस्त्र नामार्चन सेवायें होती हैं, मंगलवार की अष्ठदळ पाद पद्माराधना, बुधवार का सहस्त्रकलशाभिषेक, गुरुवार की तिरुप्पावड सेवा, शुक्रवाराभिषेक आदियों में भाग लेनेवाले आर्जित सेवा के भक्तों को इसी शयनमंडप में खडे होकर श्री वेंकटेश्वर स्वामी जी के पावन दर्शन करने की अनुमति मिलती है।

इसी शयन मंडप में माने, स्वामी वेंकटेश के गर्भालय की देहली (कुलशेखर पडि) के आगे ही, वेंकटेश जी के सामने कई सारे अन्न प्रसाद या पकवान रखे जाते हैं। किसी भी परिस्थिति में उन भोगों को कुलशेखर पडी को पारकर अंदर जाने नहीं देते हैं। मात्र दूध, मलई, फल मूँग का गीला दाल तथा सुबह प्रथम भोग के रूप में 'मात्रा' नामक मात्रुदद्योजन मात्र ही गर्भालय में ले जाये जाते हैं।

यह पवित्र स्थान है, तिरुमल वेंकटेश स्वामी का भोजनागार और शयनागार भी। माताओं की माता अलमेल्मंगा, अपने आर्त भक्त जनों की मनोवांछाएँ भगवान वेंकटेश को सुनाकर उनकी पूर्ति कर सकने का एकांत गृह है यह। सातों लोकों के स्वामी सप्त गिरीश की योग निद्रा का निलय है यह पावन स्थल। भक्तों के मन मंदिरों में चिर निवास करनेवाले श्रीनिवास जी के इस शयन मंदिर को विनम्रता से सर झुकाकर नमन करेंगे।

अलमेल्मंगा पति! आनंद निलय वासी
गोविन्द गोविन्द गोविन्द !

यही है तिरुमलेश के शयनमंदिर की विशेषता! तो फिर, क्या? अब हम आगे बढ़ें?

ठहर जाइये! सावधान! किसी भी परिस्थिति में हम यहाँ से आगे बढ़ नहीं सकते हैं और बढना भी नहीं चाहिए। श्रीनिवास भगवान के सेवा कैंकर्य में भाग लेनेवाले अर्चक गण एवं जिय्यंगार के सिवा अन्य कोई भी व्यक्ति को किसी भी समय इस जगह से आगे बढना मना है। इसका तात्पर्य है कि इस शयनागार में से ही, गर्भालय में स्वयंभू के रूप में यहाँ पर विभासित स्वामी श्रीनिवास प्रभू के पावन दर्शन कर सकते हैं। यही यहाँ का नियम है।

तो देखिए! पूरे शरीर भर आँखें हो तो भी इस स्वामी के सौंदर्य को पूरी तरह देख पाना असंभव है। एकटक दृष्टि से चरण कमलों से लेकर नयनोत्पल तक उनकी सुंदरता को परखिये धन्य हो जाइये! मनोकामनाओं की पूर्ति भी हो जायेगी। हाँ वह देखिए!

श्री वेंकट रमण के वदन सरोज को ठीक से देखिए! सफेद ऊर्ध्व पुण्ड्र। मकर कुंडलों की कांति से प्रकाशित कोमल कपोल। कितनी मनमोहक हँसी है स्वामी की! कृपा की वृष्टि करनेवाली आँखें!

हैमोर्ध्वपुण्ड्रमजहन्मकुटं सुनासम्
मंदस्मितं मकरकुण्डलचारुगंडम्
बिंबाधरं बहुळदीर्धकृपाकटाक्षम्
श्री वेंकटेशमुखमात्मनि सन्निधत्ताम्

- अनंताळ्वार

विविध आभूषणों से वेंकटेश्वर जी कितने चमक रहे हैं देखिये! कोटि कोटि मन्मथाकार हैं वे पुष्करिणी स्वामी! अपलक होकर देखिए। अनेकानेक फूलों की मालाओं से, अनेकानेक कांतियों के आगार सिद्ध हो रहे हरि के पावन दर्शन से धन्य हो जाइये। रेश्मी कपडों में कांतिमय देवादिदेव सप्तगिरीश की दिव्य मंगल मूर्ति के सौंदर्य को चरण कमलों से लेकर, वदन कमल तक एकटक देखिए!

कंदर्पकोटिसदृशं कमनीयवेषम्
मुक्तावलीललितकंठमुदारहारम्
पीतांबरद्युतिविराजितदिव्यदेहम्
श्री वेंकटेशवपुरात्मनि सन्निधत्ताम्

श्री वेंकटेश्वर जी को 'वेंकटरमण' कहते हैं। कुछ लोग 'तिरुमलप्पा' कहते हैं। कुछ लोग 'श्रीनिवास' कहते हैं तो और कुछ 'शेषाचलपति'। वेंकटाचल पति, गोविन्द भी इन्हीं के नाम हैं। आर्त भक्त जन, कितने ही नामों से इस अखिलांड कोटि ब्रह्मांड नायक स्वामी तिरुमलेश को

पुकारते ही रहते हैं। तिरुमल स्वामी अपने इन सभी भक्तों के लिए यहाँ आनंद निलय में खडे होकर दिव्य दर्शन प्रदान करते ही हैं।

हाँ! हम अब जहाँ खडे हैं, यहाँ, इस शयन मंडप तथा गर्भालय के बीच एक शिला द्वारबंध है जो श्री वेंकटेश्वर स्वामी के अत्यंत समीप में है। इस देहली के ऊपर - नीचे बाहर और अंदर, सोने की पट्टियाँ लगी हुई हैं। इसे पार कर जायेंगे तो भगवान श्रीनिवास जी की सन्निधि में पहुँच जाते हैं। लेकिन इतः पूर्व हमने कहा कि इस गर्भालय में मात्र अर्चकों के, किसी अन्य व्यक्ति के जाने की अनुमति नहीं है। इतनी परम पवित्र देहली का नाम, क्या आप जानते हैं? हाँ, इसे 'कुलशेखर पडि' कहते हैं। इस कुलशेखर पडि के बारे में अब जान लेंगे!

33. कुलशेखर पडि

केरल के महाराजा एवं वैष्णव भक्त शिखामणि पन्निद्दराळ्वारों में (बारह आळ्वार) कुलशेखर भी एक थे। परम पवित्र क्षेत्र, वेंकटाचल के बारे मे अत्यंत भक्ति एवं श्रद्धा से उन्होंने तमिल में ग्यारह पाशुरों को लिखा। उनकी यह एक पंक्ति है।

पडियाय् केडंदु उन्
पवळवाय् कान्बेने

'हे वेंकटेश जी! कम से कम, एक पत्थर की देहली बनकर तुम्हारे सामने पडा रहूँ तो भी मेरा जन्म धन्य होगा। दिन - रात, तुम्हारे मुखारविंद को देखता रहूँगा न, इस भाव के अनुसार कुलशेखर की मनोवांछा को पूरी करने के लिए ही शायद भगवान वेंकटेश के सामने की इस देहली को 'कुलशेखर पडि' कहते हैं।

'पडि' का अर्थ है देहली या सीढी। श्री वेंकटेश्वर जी की सन्निधि में उनके चरण कमलों के सामने अनुदिन याद आते हुए, भक्त जनों से गौरवान्वित होनेवाले कुलशेखर जी कितने धन्य हैं न?

भगवद्भक्ति से ओत प्रोत मुकुंदमाला जैसी रचना को भी उन्होंने ही रचा। उस परम भक्त शिखामणि की, हर पल याद दिलानेवाली इस देहली को नमस्कार समर्पित कर, आगे देहली के उस तरफ विद्यमान स्वामी वेंकटेश्वर जी का जय जयकार करेंगे।

गोविन्द गोविन्द गोविन्द!

इस स्वर्णिम कुलशेखर पडि को भी पारकर अन्दर जाने और भगवान श्रीनिवास का अत्यंत समीप से दर्शन करने एवं उनके बारे में अधिक जानने को मन तरस रहा है न! लेकिन हमने पहले ही बताया कि अर्चक स्वामी के सिवा अन्य कोई भी व्यक्ति अंदर जा नहीं सकते हैं। खैर, अन्दर जाने की अनुमति न होने पर भी वहाँ की विशेषताओं को अर्चक स्वामियों के कथनानुसार जान लेंगे। और तो और, सदियों से संप्रदायानुसार सुनने में आते रहे विषयों को भी विस्तार पूर्वक जान लेंगे। कुलशेखर पडी के यहाँ से ही भगवान बालाजी को मुकुळित हस्तों से नमन करते हुए, आँखों से उनकी दिव्य सुंदर मूर्ति को देखते हुए, श्रवणानन्द प्रदान करनेवाली इन विशेषताओं को सुनिये!

34. भगवान वेंकटेश का गर्भालय

'कुलशेखर पडि' नामक इस सोने की देहली को पार करने के बाद जो यह परम पावन स्थल है वही भगवान श्रीनिवास का गर्भालय है, जहाँ पर स्वामी सालग्राम शिला के रूप में स्वयंव्यक्त हो, सदियों से विद्यमान हैं। इसे ही 'आनंद निलय' कहते हैं। इसी पर सोने के गोपुर का निर्माण

भी हुआ है जिसे 'आनंद निलय विमान' के नाम से संबोधित भी करते हैं।

भगवान बालाजी के गर्भालय का अंतर्भाग 12.9 फुट का चतुरस्राकार वाला पवित्र स्थल है जिसकी दीवारें, आगम शास्त्रानुसार शयन मंडप की दीवारों से दुगुनी चौडाई की हैं। लेकिन इतिहासकारों ने साफ साफ बताया कि इस गर्भालय की 7.2 फुट की चौडाई एक ही दीवार की नहीं है। उनका कहना है कि पुरानी दीवार के पीछे जो छोटी सी खाली जगह थी, उस को भी जोडकर दूसरी दीवार बनायी गयी है और इसी कारण इतनी मजबूत दीवार यहाँ पर बनी है। अंदर की दीवार से ही लगकर निर्मित बाहरी दीवार नयी हैं। तिसपर, उस बाहरी दीवार पर ही, इतिहास कारों के अनुसार, आनंद निलय के विमान की भी स्थापना सन् 1244 - 1250 के बीच हुई है। इसका तात्पर्य है कि इत : पूर्व, गर्भालय के चारों ओर एक परिक्रमा का मार्ग शयन मंडप श्री राम जी का महल, इनका भी निर्माण होने के कारण, यह परिक्रमा का मार्ग भी बंद पड गया।

इसी गर्भालय के बीचों बीच साक्षात् श्री महाविष्णु श्री वैकुंठ से यहाँ पधारकर सालग्राम शिला की मूर्ति के रूप में श्री वेंकटेश्वर स्वामी के नाम से चार भुजाओं और वक्षः स्थल पर लक्ष्मी को धरकर युगों से, यहाँ पर विद्यमान हैं, तभी से वैखानस आगम के अनुसार, श्री वेंकटेश्वर स्वामी की अनेकानेक पूजायें संपन्न हो रही हैं। अनेकानेक उत्सव और सेवाओं को स्वीकारते हुए मूल विराट स्वामी, ध्रुवमूर्ति (स्थिर मूर्ति) के रूप में विद्यमान हैं। ये ही स्वामी, ''चल प्रतिष्ठा'' (जिनको बाहर या अंदर लाया जा सकता है) के साथ उत्सव, कौतुक, बलि, स्नपन मूर्ति के नाम से भी चार अन्य पंचलोह प्रतिमाओं के रूप में भी यहाँ पर स्थित हैं।

भगवान वेंकटेश्वर जी की इन मूर्तियों के अलावा, श्री सुदर्शन चक्रत्ताळ्वार, श्री सीता राम लक्ष्मण, रुक्मिणी, कृष्णादि पंचलोहों से बनी उत्सव मूर्तियाँ भी इसी गर्भालय में हैं।

विविध पवित्र सालिग्राम भी, नित्याभिषेक तथा अर्चनादि सेवाओं को स्वीकार रहे हैं।

इसी गर्भालय में, भगवान बालाजी की आग्नेय दिशा में और ईशान्य दिशा में 'ब्रह्माखंड' नाम से स्वयं साक्षात् ब्रह्माजी के द्वारा प्रप्रथम स्थापित कांतिमय दीप भी हैं।

हाँ, अब तक गर्भालय की सारी मूर्तियों के बारे में तो थोडी सी जानकारी तो मिली है न! आगे चलकर और भी विस्तार रूप से जान लेंगे। पहले भक्ति में ओत प्रोत हो, गोविन्द जी का नाम लेंगे।!

गोविन्द गोविन्द गोविन्द!

35. श्री वेंकटेश्वर स्वामी (मूल स्वयंभूमूर्ति)

हाँ! यही है, अखिलांड कोटि ब्रह्माण्ड नायक, श्री वेंकटेश्वर जी का अंतःपुर मंदिर! सभी भक्त जनों के लिए अति सुलभ देवादिदेव का निवास! सभीयों को आनंद प्रदान करनेवाला आनंद निलय! इसी आनंद निलय के बीचों बीच, स्वयं अभिव्यक्त के रूप में विद्यमान होकर, सदियों से स्थिर निवास कर रहे पवित्र सालग्राम शिला दिव्य मूर्ति भगवान वेंकटेश्वर जी यही हैं। अपने दर्शन मात्र से अनेकानेक वरदानों की वर्षा करनेवाले स्वामी की दिव्य मंगल मूर्ति को आँखों भर देख लीजिए। एकटक देखिए!

वही है स्वर्णिम पद्म पीठिका! उस पर स्वामी के स्वर्णमय चरण! घुंघरू! उस पर रेशमी धोती! उस धोती पर सहस्र नामों की मालायें! नाभि के पास सूर्यकठारि नामक नंदक खड्ग! कमर पर कसी हुई करधनी! सोने का कटि सूत्र! हाँ, वही है हीरों से जडा हुआ वरद - हस्त, जो भक्तों को बता रहा है कि अपने ये ही चरण, परमार्थ हैं। हाँ, यहाँ, बायी तरफ नाजुक कटि - हस्त है जो भक्तों को बता रहा है कि अपने शरण में आनेवालों के लिए इस संसार का समुंदर, मात्र घुटनों तक ही रह जाता है। छाती पर कौस्तुभ मणि! नवरत्न मालिकाएँ! वक्षः स्थल पर आसीन होकर भक्तों को अनुगृहीत कर रही व्यूह लक्ष्मी! साक्षत् महालक्ष्मी ही है वह! हाँ श्रीदेवी भूदेवीयों के पदकों से बने हुए आभूषण! स्वर्णिम यज्ञोपवीत! हाथों पर नागाभरण! उनके ऊपर हस्त कंकण। भुजाओं से लेकर चरणों तक लटकती हुई सालग्राम की मालायें! भक्तों को अभय दान देने वाले शंख और चक्र! वहीं देखिए नील कमल जैसा वदन! उस पर शशिरेखा सा दरहास! चमकते हुए कपोल! कर्णालंकार! प्रवाल जैसे अधर! उन अधरों के नीचे चुबुक पर सफेद, कपूर की बिंदी! उसके ऊपर सुंदर नासिका! श्वेत ऊर्ध्व पुण्ड्र! भक्तों पर करूणा की अपार वर्षा बरसाते अध खुले नेत्र! सिर पर नवरत्न खचित मुकुट! उसके ऊपर सोने का मकर तोरण! और उस स्वयंव्यक्त साक्षात् भगवान को अपने विविध वर्णो और सौरभों से अलंकृत कर रही मनोहर फूल मालायें!

ओह! अद्भुत! महाद्भुत! परमाद्भुत! कितनी मालायें! कितने आभूषण! कितने अमूलय रत्म! कितनी मणियाँ! कितना अपूर्व वैभव! वाह रे यह मनोहारी सौंदर्य! कितना आकर्षण? कितना आनंद! परमानंद!

किसी अद्‌भुत लोक में विहरण करते हुए आनंद के कोनों तक जाने का महदानंद!

अब आपका संदेह यह होगा कि उन सभी आभूषणों तथा पुष्प मालाओं के कारण स्वामी का सौंदर्य क्या बढ़ गया है या स्वामी के अलंकार में स्थान को पाने के कारण, उनकी मनोज्ञता बढ़ गयी है? इन सारे अमूल्य, अनगिनत आभूषणों को किन किन भक्तों ने दिया होगा? कब दिये होंगे? किस लिए?

हाँ! इस सभी आभूषणों के लिए अलग अलग ही, अपना अपना इतिहास है। एक एक आभूषण के पीछे उस भक्त का प्रेम, त्याग उमड कर भासमान होते हैं। रत्नों की अगणित कांति में भगवान श्री निवास की भक्त - प्रियता दिखाई दे रही है न? भगवान के कंकणों की ध्वनि में, स्वामि के भक्तों की रक्षा दीक्षा सुनाई दे रही है। नेत्रों को चकाचकित करनेवाली वह कांति किसकी है? हीरों से जडे मुकुट की है न। जाने कितने भक्तों के पापों का नाश इसने किया होगा? हाँ वही है सुदर्शन चक्र जाने कितने भक्तों के जीवन चक्रों को सुधारा होगा इसने? देखिए उस पांचजन्य शंख को! जाने कितने पापीयों के सीनों को चीर दिया होगा इसने? आनंद निलयवासी उस श्रीनिवास स्वामी का नंदक खड्‌ग यही है न? जाने कितने भक्तों की अशांति को इसने मिटाया होगा और कितने भक्तों की विपदाओं को दूर किया होगा इसने? इन पदकमलों का पावन दर्शन कर लीजिये जिसने करोडों भक्तों के पापों को धोकर उन सबको उन्नत जीवनों को प्रदान किया है! कितनों को शाश्वत वैकुंठ प्राप्ति दिलायी होगी, इन सबों ने? कितने लोगों के भव - बंधन तोड - मुक्ति को दिलाया होगा? इस स्वामी के अधखिले अधरों की मंद मंद

मुस्कान से, स्वामी की मासूमियत तो स्पष्ट है! लेकिन उस मनोहारी हँसी से जाने कितनों को नयनानंद सुख प्राप्त हुआ होगा? जाने कितनों को इस संसार सागर को पार करने के लिए पैरों में शक्ति मिली होगी! जाने कितनों की भूख मिट गयी होगी? जाने कितनों की गोदें भरी होंगी? जाने कितने लोगों को वचन दिया होगा इस स्वामी ने? और जाने कितने लोगों को दिये वचनों को निभाया होगा इसने? किसे मालुम होगा? कौन जानते होंगे - मात्र स्वामी के सिवा! मात्र स्वामी के सिवा?

इसी कारण बृहत प्रवाह रूपी उस करुणा प्रवाह में आर्ति से, आराधना से डुबकियाँ लगाये हुए जिज्ञासु ज्ञानी भक्त जन सभीयों के मनों में स्वर्णिम अंत:पुर में स्वयं भू होकर विद्यमान ब्रह्मांड नायक वेंकटेश्वर ही भरे हुए हैं। मन, वचन, तथा कर्मों से अपने आप को समर्पित किये होंगे वे सब लोग - उस स्वामी को! स्वामी की अपार कृपा को पाने की खुशी में उनके वरदान को पाने की तृप्ति से, उन उन भक्तों ने अपूर्व उपहार - भगवान वेंकटेश को चढाये होंगे। मोतियों की कितनी, मालायें, विविध रत्नों के आभूषण, ऐसे कई रूपों में, अपनी मन्नतों की पूर्ति की होगी उन सबों ने! वे सभी भक्त तो अब नहीं हैं। लेकिन उन सभी आभूषणों को धरकर, कोटि कोटि मन्मथाकार स्वामी, शंख - चक्रधारी, श्रीनिवास स्वामी उन उन भक्तों की भक्ति का साक्षी बनकर अभी भी हमारे सामने खडे हैं लेकिन मासूम जैसे!

भगवान वेंकटेश अपनी उस लोच लचक से, सुधडाई से, अदाओं से हम सभी को चुम्बक की तरह अपनी ओर आकर्षित कर रहे हैं। उनके सामने बडे छोटों का भेद नहीं है। स्त्री पुरुष भेद नहीं है। अंगविकलता से काम नहीं है। जाति, धर्म, वर्ण, वर्गादि भेद नहीं है। भाषा के भेद की

बात भी नहीं है। वह सप्तगिरीश स्वामी सभीयों की प्रार्थनाओं को सुनते हैं। सभीयों की वेदनाओं को समझते हैं। सभीयों की भाषाओं को जानते हैं। मात्र जानना ही नहीं। उन उनकी भाषाओं में ही जवाब भी देते हैं। उनकी इच्छाओं की पूर्ति करते हैं। देखिए उनके दर्शन कीजिये। दर्शन करते हुए प्रार्थना कीजिये। अपनी अपनी इच्छाओं को सुनाइये। अपनी लज्जा, संकोच सब कुछ छोड दीजिये। भगवान के सामने अहम् की भावना को त्यागकर, हाथ पसारकर, आवाज उठाकर चिल्लाइये। हम सबको मुँह माँगे वरदान देने के लिए ही खडे हैं - श्रीनिवास स्वामी! आँखों भर उस दिव्य मंगल मूर्ति को देख लीजिये।

श्रीनिवास प्रभु के सामने घंटों खडे हों, तो भी तृप्ति नहीं मिलती है! मन ऊबता ही नहीं। कितनी बार देखें, तो भी और देखने को, देखते ही रह जाने को मन करता है। हर भक्त का मन, भगवान के दर्शनानंद को सदा पाने के लिए तरसता ही रहता है। पूरे बदन में आँखें ही हों तो भी यह बुझनेवाली प्यास नहीं है।

उस मूर्ति की सुंदरता को, लगता है - हमने पूरा देख ही लिया! लेकिन बाहर आने के बाद लगता है - हमने चरण कमलों की तरफ देखा ही नहीं। स्वामी के मुकुट को देखा लेकिन सही में वह हीरों का ही मुकुट है क्या? अरे मैं ने ठीक से देखा ही नहीं! लेकिन उस मनोहारी वदन के सौंदर्य का क्या कहने? सफेद ऊर्ध्व पुण्डों में स्वामी कितने सुंदर हैं? शंख, चक्र, मुकुट, कर्ण भूषण, कटि वरद हस्त कितने कांतिमय हैं न? आज स्वामी के हृदय कमल पर आसीन महालक्ष्मी के दिव्य दर्शन से मेरा जन्म पावन हो गया है! जो भी हो ... आज भगवान का सौंदर्य कुछ

अलग ही सा है न! छोटे बालक की तरह दिखाई दे रहे हैं! न न कितनी गंभीर मुद्रा है स्वामी की आज? इस तरह अपने दर्शन के लिए दूर दूर से आये हुए भक्तों को अलग अलग रूपों में दिखाई देते हुए खडे हैं स्वामी। कुछ लोग तो उस ध्यान मग्नता में अपने आप को खो देते हैं। कुछ लोग तो दिव्यानु भूति में तल्लीन हो अपलक रह जाते हैं। कुछ लोगों की आँखों में नमी आ जाती है। विविध भक्तों में विविध भावों को जगाने वाले इस स्वामी के बारे में और कितनी ही विशेषताओं को आगे हम जान लेंगे एक बार फिर उनका पवित्र नामोच्चारण करके।

गोविन्द गोविन्द गोविन्द!

पहले ही हमने आपको बताया कि यहाँ के वेंकटेश्वर स्वामी ''स्थिर मूर्ति'' (स्थानक मूर्ति) हैं। इन्हें स्थानक मूर्ति भी कहते हैं। साथ में श्री देवी तथा भूदेवी के न होने के कारण तथा वक्षःस्थल पर महालक्ष्मी के साथ अकेले ही रहने के कारण इन्हें 'स्थानक विरह मूर्ति' भी कहते हैं।

सीधी बातों में बतायें तो वक्षःस्थल पर महालक्ष्मी को रखकर अकेले ही श्री वैकुंठ को छोड, कलियुग वैकुंठ इस तिरुमल क्षेत्र पर स्वयं व्यक्त रूप में प्रकट हुए हैं - श्री वेंकटेश्वर! मंदिर की बाकी मूर्तायाँ बाद में आ गयी हैं। इसी कारण तिरुमल एकैक मूर्ति का मंदिर है माने एक ही भगवान के होने का मंदिर!

इस पवित्र क्षेत्र में, श्री वेंकटेश्वर स्वामी जी चार भुजाओं से, प्रकाशमान हैं। ऊपर के दक्षिण हस्त में सुदर्शन चक्र तथा वाम हस्त में पांचजन्य शंख हैं। इसी तरह नीचे का दायाँ हाथ वरद हस्त (वैकुंठ हस्त) है तथा नीचे का बायाँ हाथ, कटि हस्त है। हृदय पर श्री महालक्ष्मी

विराजमान हैं। बायीं तरफ तनिक झुककर अधखिली आँखों तथा अधखिले होठों पर मुसकान से भक्तों पर दया बरसाते हुए दर्शन दे रहे हैं - ये वैकुंठनाथ!

लेकिन यह सुनने में आया है कि वेंकटेश्वर के ऊपर के हाथों में अब जो शंख और चक्र दिखाई दे रहे हैं, वे मूल मूर्ति में नहीं थे। आयुध रहित स्वामी को देखकर भगवद्रामानुज जी ने या उनके बाद के भक्तों ने, सोने की मुलम्मा वाली ताम्र पट्टिकाओं से अलंकृत शंख - चक्रों से भगवान वेंकटेश्वर को सजाया होगा। इन बातों में सच्चाई हो भी सकती है। लेकिन, शंख चक्रदियों के न होने मात्र से यह नहीं कह सकते हैं कि यह मूर्ति श्री महाविष्णु की नहीं है।

पद्मावतीं विशालाक्षीं भगवानात्मवक्षसि
अरिशंखविहीनोऽसौ कटिन्यस्तकरोत्तमः
दर्शयन् पाणिनैकेन दक्षिणेन वृषाकपिः
पद पद्मं सुराराध्यं गतिं च परमां नृणाम्
कटिन्यस्तकरेणापि निजपादाब्जकामिनाम्
नृणाम् भव पयोराशिं कटिदघ्नं प्रदर्शयन्
विराजते वेंकटेशः संप्रत्यपि रमापतिः

वेंकटाचल माहात्म्यम् के उक्त श्लोकों से स्पष्ट है कि दया की देवी श्री महालक्ष्मी को अपने दिव्य वक्षःस्थल पर रखकर, शंख चक्रादि भयंकर आयुधों को न धरते हुए, परम शांत रूप में वरद (वैकुंठ) तथा कटि हस्तों से मानवों के पारिवारिक दुखों तथा भयों को दूर करते हुए रमापति, श्री वेंकटगिरीश परमानन्द प्रदान कर रहे हैं।''

उक्त पुराणनुसार तोंडमान चक्रवर्ती तथा वसुमान (श्री पद्मादेवी के भाई) के बीच जब युद्ध हुआ, उस समय श्री वेंकटेश्वर ने अपने शंख तथा चक्रायुधों को तोंडमान चक्रवर्ती को दे दिया। युद्ध के बाद भी तोंडमान से वापस लेना नहीं चाहा। इसी कारण चक्रायुध रहित ही खडे श्रीनिवास भगवान को बाद में, शंख चक्रों से अलंकृत किया गया।

वैखानसागम शास्त्र के अनुसार, भगवान की मूर्तियों के आयुध अवश्य होने की आवश्यकता नहीं है। तिरुमल के स्वामी के वक्षःस्थल पर श्री देवी की उपस्थिति के कारण, यह तो स्पष्ट है कि यह मूर्ति साक्षात् श्री महाविष्णु की ही है।

ब्रह्म देवता भी नहीं है

तिरुमल के स्वामी को पद्मपीठिका पर खडे देखकर आप में से कुछ लोगों को लगा होगा कि यह मूर्ति ब्रह्म देवता की भी हो सकती है।

लेकिन पद्मपीठिका पर अन्य देवताएँ भी रह सकते हैं - मात्र ब्रह्म देवता ही नहीं। अगर वे बह्मदेवता ही हैं तो फिर वक्षःस्थल पर श्रीवत्स का चिह्न कैसे? इसीलिए यह मूर्ति ब्रह्म देवता की नहीं है। तिसपर यह भी कहा जाता है, हर दिन सुप्रभात वेला में ब्रह्म मुहूर्त में स्वयं ब्रह्मा जी भी यहाँ पर स्वयं आकर वेंकटेश्वर की पूजा करते हैं। अर्चक स्वामी ब्रह्म देवता की पूजा के लिए पत्येकतया एक सोने के बरतन में अलग से पानी भी रखते हैं। इसी जल को बाद में ब्रह्मतीर्थ के नाम से, भक्तों को देते हैं। इसके अलावा हर साल, ब्रह्म देवता के द्वारा ही ब्रह्मोत्सव विशेष रीति में संपन्न भी होते हैं। इन सभी कारणों से, तिरुमल पर की स्थित मूर्ति, ब्रह्म देवता की नहीं है। सच कहा जाय तो, ब्रह्म देवता की

मनोकामना के अनुसार ही, श्री महाविष्णु सौम्य रूप में 'वेंकटाचलपति' नाम से यहाँ विद्यमान हुए। इसी लिए हर दिन ब्रह्म देवता की पूजाओं को स्वीकारते हुए तिरुमलेश की, उनके अष्टोत्तर एवं सहस्रनामों में स्तुत्य रीति में ही प्रार्थना करेंगे।

ओम् ब्रह्मस्तुत्याय नम :
ओम् ब्रह्मरुद्रादिसंसेव्याय नम :
ओम् ब्रह्मोत्सवमहोत्सुकाय नम :
ओम् ब्रह्मदेवदुर्दर्शविश्वरूपाय नम :
ओम् ब्रह्म क्लृप्तोत्सवाय नम :
ओम् विरिंचिताऽभ्यर्थितानीतसौम्यरूपाय नम :

शिव भी नहीं है

खैर, इस मूर्ति के शंख तथा चक्र जैसे आयुध नहीं है। लेकिन, देखिए, नागाभरण तो हैं। हर साल धनुर्मास में शिवजी के लिए प्रीतिकर बिल्व पत्रों से स्वामी की अर्चना की जाती भी है। इसी कारण - यह मूर्ति शिवजी की भी हो सकती है। यही शंका आपको खायी जा रही है शायद!

शंख तथा चक्र के न होने मात्र से यह हम कैसे निर्धारित कर सकते हैं कि यह मूर्ति शिवजी की है। ठीक है हम उन्हें शिवजी ही मानोंगे। लेकिन वक्षःस्थल पर लक्ष्मीजी बिराजमान हैं न? उसका क्या जवाब दें। अब यह तो स्पष्ट है कि यह मूर्ति शिव की नहीं है। नागाभरण भी हैं इस मूर्ति की सुंदरता को बढ़ाते हुए! तो जवाब यह है कि विष्णु का सेवक अनंत ही है। उनकी शय्या, पादुका भी वही हैं। इतःपूर्व वायुदेवता तथा

आदि-शेष के बीच लडाई हुई थी तब आदि-शेष, महाविष्णु के पास आ गिरे। महाविष्णु ने आदि-शेष को हाथों में लेकर सांत्वना दी तथा उन्होंने आदि शेष को वचन भी दिया कि तुम्हें मैं अपना आभूषण बना लूँगा। तुम्हें अपनी शय्या बना लूँगा। इसी कारण, आगे आगे मैं ''शेषाचलपति'' के नाम से सुप्रसिद्ध भी होऊँगा। ब्रह्माण्ड पुराण की इस गाथा से स्पष्ट है कि वक्षःस्थल लक्ष्मी से शोभायमान यह स्वामी शिव कदापि नहीं - बलि्क वे महाविष्णु ही हैं।

यहाँ तक तो ठीक है लेकिन, बिल्व के पत्तों से हर शुक्रवार पूजा - अर्चनादि इस स्वामी को क्यों किये जाते हैं? बिल्व तो शिवजी को अत्यंत प्रियं है। इसका क्या जवाब है? हाँ जवाब है। लक्ष्मी देवी जो भगवान वेंकटेश्वर जी के हृदय पर रहती हैं, वे तो बिल्व के वनों में ही वास करती हैं (बिल्व वनस्था) वे तो बिल्व वनालया भी हैं। इसी लिए लक्ष्मी देवी की पूजा बिल्व पत्रों से की जाती है। इतना ही नहीं। शिव की पूजा में तुलसी का उपयोग निषिद्ध है। लेकिन यहाँ पर वेंकटेश्वर जी की सहस्रनामावली में तुलसी का अधिकाधिक उपयोग होता है। तिरुमलेश अधिकाधिक अलंकार प्रिय हैं। तिस पर फूलों से अधिक प्यार करते हैं वे। तुलसी से सर्वाधिक प्रेम भी है। और एक विशेष बात यह है कि इस क्षेत्र का पालक - रूद्र ही हैं। इस बात को तो आपको पहले ही हमने बता भी दिया है न? ब्रह्मोत्सवों के समय में मंदिर के संप्रदायानुसार ईशान्य दिशा के स्वामी के रूप में शिव जी भी आह्वानित होते हैं। इन सभी कारणों से यहाँ की मूर्ति शिव जी की नहीं है। परमशिव जी से भी पूजित स्वामी की स्तुति अष्टोत्तर, सहस्रनामावली के अनुसार आइये अब हम करें!

ओम् शंकरप्रियमित्राय नमः
ओम् वासुदेवप्रियाय नमः
ओम् उपत्यकाप्रदेशस्थ शंकरध्यातमूर्तये नमः
ओम् हरमोहक मायाविने नमः
ओम् ब्रह्मरुद्रादिसंसेव्याय नमः
ओम् ईशचापप्रभंजनाय नमः
ओम् सुवर्णमुखरीतीर शिवध्यानपदांबुजाय नमः

शक्ति की देवी भी नहीं

ठीक है। ब्रह्मा नहीं, शिव नहीं, लेकिन हर, शुक्रवार, इस मूर्ति को जो हल्दी आदियों से अभिषेक संपन्न होते हैं, इससे तो हमें हरगिज यह मूर्ति, शक्ति की देवी सी लगती हैं।

इतना ही नहीं, इससे भी बढ़िया कारण और एक यह है कि आनंद निलय विमान के ऊपर चारों कोनों में सिंहों की प्रतिमायें हैं जो दुर्गादेवी के वाहन हैं। इसी कारण हमें लग रहा है कि तिरुमल की यह मूर्ति देवी माँ की है। एक और बात भी अवश्य बताने योग्य यह है कि उत्तर भारत के भक्त ''बाला त्रिपुर सुंदरी'' के नाम से इस स्वामी को बालाजी भी कहते हैं। अब यह साफ और सीधी बात है कि यह मूर्ति माँ दुर्गा की है।

उपरोक्त वक्तव्यों को सुनने से आप को भी शायद लगता होगा कि यह मूर्ति, देवी माँ की ही है। लेकिन हर शुक्रवार की जानेवाली अभिषेकसेवा, स्वामी के लिए नहीं है। उनके वक्षःस्थल पर स्थित लक्ष्मी देवी के लिए है। वक्षःस्थल पर की जाने के कारण, आधे गीले हो जानेवाले स्वामी की भी पूजा आवश्यक हो गयी है।

अब रही सिंह की प्रतिमायें और सिंघासन आदियों की बात! शैव तथा शाक्तेय रूपी आगमों के साथ वैखानस आगम में भी इन्हें प्रधानता दी गई है। प्रत्येकतया वैखानस में गरुड जी को भी स्वीकारा गया। एतदर्थ आनंद निलय के प्राचीरों पर सिंह तथा गरुड की मूर्तियाँ भी विद्यमान हैं।

खैर अब रही उत्तर भारतवासियों के संबोधन की बात! बालाजी शब्द से संबंधित पूछ - ताछ में यह स्पष्ट हुआ कि बालाजी के नाम से संबोधित करने में स्त्री देवीमाँ का अर्थ ही नहीं है। वहाँ के लोग देवी माँ को कालीमाँ, संतोषी माँ, शारदा माँ, पार्वती माँ आदि नामों से संबोधित करते हैं। 'बालाजी वेंकटेश्वर' शब्द का जो उपयोग वे करते हैं, वह तो हनुमान जी से संबंधित हैं। अजमीर, झान्सी, हरिद्वार प्रांतों में हनुमान जी के मंदिर हैं जहाँ बालाजी वेंकटेश्वर के नाम से उन्हें संबोधित करते हैं। इतना ही नहीं, उत्तर भारत के कुछ प्रांतों में, प्रजा की तन मन से सेवा, रक्षा करनेवाले नायकों की पूजा भी प्रजा करती है। माने बालाजी शब्द का वहाँ पालक या रक्षक के अर्थ में प्रयोग किया जा रहा है। इन सभी कारणों से हम स्पष्ट रूप से कह सकते हैं कि तिरुमल पर जो मूर्ति है वह स्त्री शक्ति की नहीं, बल्कि साक्षात् विष्णु की ही है। इसी कारण आइये भगवान वेंकटेश की प्रार्थना कुछ इस तरह भी करें।

ओम् दाक्षायणी वचस्तुष्टाय नमः

कुमारस्वामी भी नहीं हैं

कुछ लोगों का मत यह भी है कि यह मूर्ति कुमार स्वामी की भी हो सकती है क्यों कि तिरुमल पर जो पुष्करिणी है, उसे 'स्वामी की पुष्करिणी' कहते हैं।

लेकिन यह भी तर्कसंगत नही है। क्योंकि सारे संसार की पुष्करिणियों में, यहाँ तिरुमल पर जो पुष्करिणी है वह स्वामी या राजा ही है। इस लिए इसे 'स्वामी पुष्करिणी' कहते हैं न कि कुमार स्वामी की। तारकासुर का वध करने के बाद, जो 'ब्रह्म हत्या का पाप' कुमार स्वामी जी को लगा, उसे धो लेने के लिए वे स्वयं यहाँ पर आये! यहाँ तपस्या भी करने के बाद, तिरुमल वेंकटेश की कृपा से ही उस पाप को उन्होंने मिटा भी लिया। जहाँ कुमार स्वामी ने तपस्या की थीी, वह 'कुमार धारा तीर्थ' नाम से अभी भी प्रसिद्ध अन्य तीर्थ है। इसी कारण ये स्वामी - वेंकटेश्वर के नाम से अभिहित किये जानेवाले वैकुंठ के प्रभु - महाविष्णु ही हैं। वेंकटेश्वर जी के ये नाम भी सुविरव्यात हैं।

ओम् कुमाराकल्पसेव्याय नमः
ओम् कुमरधारातीर्थस्थाय नमः
ओम् कुमारधारिकावास स्कंदाभीष्टप्रदायिने नमः

वक्षःस्थल व्यूहलक्ष्मी

सच कहा जाय तो वेंकटेश्वर स्वामी जी के विषय में चर्चित उक्त सभी विचारों को महा प्रळयाग्नि के सामने रुई समान भस्मी भूत कर, भगवान तिरुमलेश को श्रीवैकुंठ से सीधे तिरुमल पर आये हुए महाविष्णु निरुपित करने का प्रधान साक्षी, उस पवित्र चिन्ह के पावन दर्शन कीजिये!

भूलोक वैकुंठ - इस वेंकटाचल के शिखरों पर आ उतरा हुआ घन नील घन है श्रीनिवास प्रभु के हृदय में, चकाचौंध कर देनेवाली चमक,

विद्युल्लता, स्वर्णिम देह कांति, से प्रकाशमान हो रही श्री महालक्ष्मी विद्यमान है। वही अलमेल्मंगा है। श्री वेंकटेश्वर की पटरानी! हाँ वही है। आँखों भर उस रूप को देख लीजिये! लोकोत्तर है वह देवी! अनंत है वह देवी! सहस्र कांतियों के साथ दर्शन दे रही उस सौदामिनी (लक्ष्मी देवी) के कारण ही, तिरुमल का यह नील घन, अवर्णनीय सुन्दरता से सबको अपनी ओर आकर्षित कर रहा है।

हाँ! उस देवी का दिव्य रूप! अपने दिव्य दर्शन से हम सब पर अपनी अनुकंपा को बरसाने वाली माँ, सप्तगिरीश की हृदयेश्वरी तिरुमलेश की तिरु (पवित्र) वल्लभा, समस्त भूमंडल का पालन करनेवाली माता की प्रार्थना करें!

''ईशानां जगतोऽस्य वेंकटपतेर्विष्णोः : परां प्रेयसीम्
तद्वक्षःस्थलनित्यवासरसिकां तत्क्षांतिसंवर्धिनीम्
पद्मालंकृतपाणिपल्लवयुगाम् पद्मासनस्थां श्रियम्
वात्सल्यादिगुणोज्ज्वलां भगवतीम् वंदे जगन्मातरम्''

यह लक्ष्मी माता, सब लोकों की स्वामिनी है। साक्षात् श्री महाविष्णु का रूप, तिरुमल वेंकटेश्वर की प्रियतमा है। भगवान श्रीनिवास में क्षमा गुण को जगानेवाली करूणा स्वरूपा है। हमेशा, कमल पर वास करती हुई, अपने कोमल करों में कमलों को ही धरकर दर्शन प्रदान करनेवाली - 'अलर मेल मंगै'! (कमल पर बैठनेवाली तायार) प्रेम, दया, करूणादि सद्गुणों से प्रकाशमान दया की मूर्ति है! सदा के लिए भगवान वेंकटेश के हृदय पर ही आसीन रहना ही चाहती हैं वे! सदा, सर्वदा अखिल जगों का पालन करनेवाली अलमेल् मंगा का, चलो नमन करें!

यहाँ तिरुमल क्षेत्र में माँ लक्ष्मी तिरुमलेश के हृदय में 'व्यूह लक्ष्मी' के रूप में, तथा, वहाँ तिरुचानूर में अर्चामूर्ति के रूप में अलमेल्मंगा तथा पद्मावती तायार के नामों से भक्तों की पूजाओं को स्वीकार रही है।

मातर्नमामि कमले! कमलायताक्षि
श्री विष्णुहृत्कमलवासिनि! विश्वमातः!

माँ लक्ष्मी के कारण ही वेंकटेश्वर जी ''श्रीनिवास'' भी कहलाते हैं। 'श्री' का अर्थ है प्रेम और दया की देवी! श्री जिनके हृदय में निवास करती है - वे ही श्रीनिवास हैं। तिरुमल वेंकटेश के हृदय पर थोडा सा उभरकर आयी हुई महालक्ष्मी, खाली बैठती नहीं है। अपने सभी भक्तों की प्रार्थनाओं, मनोकामनाओं, वेदनाओं तथा व्यथाओं को पहले, स्वयं सुनती है। तुरंत स्वामी को सुनाती है। मात्र सुनाना ही नहीं। उनकी पूर्ति करने की सिफारिश भी करती हैं। अपनी प्रिय पत्नी के दिये हुए वचन को निभाने के लिए ही श्री वेंकटेश जी, हम सब को मुँह माँगे वरदान देते जाते हैं। हम सबके पापों को हर लेते हैं। दुखों को दूर कर देते हैं। फलस्वरूप, हमें सकल संपदाओं को देते हैं!

श्रीनिवास स्वामी का हर दिन इन वेदोक्तियों द्वारा कीर्तिगान होता है।

''वक्त्राब्जे भाग्यलक्ष्मीः करतलकमले सर्वदा दानलक्ष्मीः
दोर्दण्डे वीरलक्ष्मीर्हृदयसरसिजे भूतकारुण्यलक्ष्मीः
खड्गाग्रे शौर्यलक्ष्मीः निखिलगुणगणाडंबरे कीर्तिलक्ष्मीः
सर्वांगे सौम्यलक्ष्मीर्मयितु विजयताम्'' सर्वसाम्राज्यलक्ष्मीः

''इस तरह सर से पाँव तक लक्ष्मी से संपन्न श्रीनिवास जी मुझे विजय दिला दे।'' यही प्रार्थना है इस श्लोक में! इस श्लोक में यह भी कहा गया है कि श्री महालक्ष्मी ''भूत कारुण्य लक्ष्मी'' के रूप में भगवान वेंकटेश के हृदय पर निवास करती हुई हमें दर्शन प्रदान करती हैं। महाविष्णु के साथ सदा सर्वदा रहनेवाली - अनपाइनी लक्ष्मी (सदा सर्वदा हरि का अनुगमन करने वाली) के कारण ही, यह आनंद - निलय के स्वामी भी हम सभी भक्तों की आशाओं और अकांक्षाओं की पूर्ति करते हुए, आनंद को प्रदान करते हुए, कीर्तिमान हो रहे हैं।

इसी कारण, इस क्षेत्र में आविर्भूत होकर अपने दिव्य दर्शन दे रहे भगवान वेंकटेश्वर जी जितने प्रधान देवता हैं, उनके हृदय को ही अपना निवास बनाकर, दर्शन दे रही महालक्ष्मी जी, उनसे भी आधिक लोकप्रिय हैं। महालक्ष्मी माँ अपने इस अस्तित्व के द्वारा यह घोषणा भी कर रही है कि साक्षात् श्री वैकुंठ से यहाँ तिरुमल पर आकर, कलियुग की मानव - जाति के कल्याण के लिए ही स्वयं अर्चामूर्ति के रूप में 'कलौ वेंकट नायकः' के नाम से विद्यमान हो रहे महाविष्णु हैं - तिरुमल के श्री वेंकटेश्वर स्वामी!

इसी कारण हर दिन स्वामी जी की मूल मूर्ति की तोमाल सेवा - अर्चना तथा भोग के तुरंत बाद उनके हृदय पर आसीन - अलमेल्मंगा माई को भी ये सारी सेवायें की जाती हैं। शुक्रवार के अभिषेक की बात क्या कहने?

स्वामी के हृदय स्थल पर आसीन, लक्ष्मी जी के दिव्य दर्शन का आनंद अनुभवैकवेद्य है न! एक बार आवाज देने मात्र से ही प्रत्यक्ष

होनेवाले करूणाजलधि, आर्तरक्षक, पग पग पर प्रणाम को स्वीकारनेवाले स्वामी श्री वेंकटेश्वर की प्रार्थना चलो इस मधुर क्षण में, हम करलें!

''श्रीवत्सवक्षसम् श्रीशं श्रीलोलं श्रीकरग्रहम्
श्रीमंतं श्रीनिधिं श्रीड्यं श्रीनिवासं भजेऽनिशम्''

देखिए! उस देवदेव के वक्षःस्थल पर श्री वत्स का चिन्ह है। साक्षात् श्री महालक्ष्मी के पति हैं ये। दोनों पति पत्नी, सुखों की जलधि में सानंद रहते हैं सदा सर्वदा! ये स्वामी सर्वविद्याओं के भी स्वामी हैं। सकल संपदाओं के स्वामी हैं। इतना ही नहीं। साक्षात् श्री महालक्ष्मी से अर्चित हैं ये स्वामी! महालक्ष्मी के स्तुति पात्र हैं ये स्वामी! इस श्रीनिवास प्रभु का कीर्तिगान करेंगे - इस आनंद निलय को प्रतिध्वनित करते हुए!

श्री लक्ष्मी वेंकट रमण गोविंद गोविन्द!
श्रीमद्रमारमण गोविन्द गोविन्द गोविन्द!

वेंकटाचल में स्थायी रूप से रहने के कारण ये वेंकटाचलपति हैं। शेषाद्रि, वेंकटाद्रि, गरुडाद्रि, नारायणाद्रि, वृषभाद्रि, अंजनाद्रि नामक सात गिरियों के बीच रहनेवाले हैं - इस कारण से 'सप्तगिरीश' हैं। वक्षःस्थल लक्ष्मी के साथ दर्शन देनेवाले हैं - इस कारण वे श्रीनिवास हैं। मलयप्पा, वेंकटरमण, संकटहर्ता, बालाजी, गोविंद, वेंकटाचलपति, वेंकटेश - ये सभी नाम इनके ही हैं। ऐसे कितने ही नामों से, कितने ही भक्तों से संबोधित होनेवाले हैं अलमेल्मंग पती! कैसे भी पुकारें किसी भी नाम से आवाज दें, उसी तरह तुरंत जवाब देते हुए, उनकी इच्छाओं की पूर्ति कर रहे हैं - ये हमारे परब्रह्म स्वरूप स्वामी - वेंकटेश जी! अपने भक्तों

पर वरदानों की वर्षा बरसानेवाले - साक्षात् श्री कृष्ण भगवान ही हैं - ये स्वामी! ''ये यथामाम् प्रपद्यन्ते तां स्तथैव भजाम्यहम्''

(गीता / ४ - ११ श्लोक)

गीता के इस दिव्य संदेश का साक्षी है - यह दिव्य मंगल मूर्ति!

इसी कारण, भगवान वेंकटेश के नंदक खड्ग के अंश संभूत, पद कविता पितामह ताळ्ळपाक अन्नमाचार्य जी इनकी स्तुति कुछ इस तरह करते हैं।

''येंतमात्रमु येव्वरु दलचिन अंतमात्रमें नीवू
अंतरांतरमुलेंचि चूड पिंडंते निप्पटि यन्नट्लु''

'हे अंतर्यामी! कुछ लोग तो विष्णु के रूप में आपकी आरधना करते हैं। शिव के रूप में भी कुछ लोग आपको पूजते हैं। आदि भैरव एवं शक्ति माँ, के नाम से ही आपको कुछ लोग अभिहित करते हैं। दर्शन शास्त्र तो अनेकानेक रूपों में आपका वर्णन करते हैं। लेकिन आपकी महानता को जो समझेंगे उनके लिए आप तो महतो महीयान ही हैं। जाकी रही भावना जैसी, प्रभु मूरति देखी तिन जैसी।'

प्रजा का दृढ़ बिशवास है कि अनंत सूर्य कोटि प्रकाश मय तेज - सीधे वैकुंठ से इस भुवि पर आ उतर, इस वेंकटाचल पर स्थिर रूप से बस गया है। इसी कारण, ब्राह्मी मुहूर्त के समय में ब्रह्मादि सकल देवी देवता, यहाँ पर आकर उनकी अर्चना पूजा करते हैं।

इतना हीं नहीं, तिरुमल पर स्थित इस मूर्ति के पावन दर्शन के लिए वैष्णव, शैव, शाक्तेय, जैन, गाणापत्य आदि वैदिक धर्मावलंबियों के

अलावा, मुस्लिम तथा ईसाई भी कई आकर अपनी इच्छाओं की पूर्ति का फल पाना - तो यहाँ का नित्य कृत्य है।

इस तरह इतने धर्मों को आकर्षित करनेवाले, दिव्य सौंदर्य को अपनाकर, दर्शकों को दिव्यानंद प्रदान करनेवाले हैं - तिरुमल के वेंकटेश्वर स्वामी। सारे संसार भर में कहीं भी नहीं दिखाई देनेवाला अत्यद्भुत सौंदर्य - इस मूर्ति में केन्द्रित है। अनंत तेजोपुंज इस मूर्ति को घंटों देखें तो भी भक्त थकते नही हैं। तो एक पल की बात क्या कहने! दर्शन के तुरंत बाद, बाहर आने के तत्क्षण, फिर से उस शतकोटि मन्मथाकार स्वामी के दिव्य दर्शन के लिए मन लालायित होता है।

इतना ही नहीं। विविध संदर्भों में, विविध समयों में विविध अनुभूतियाँ भक्तों को देना भगवान वेंकटेश जी की विलक्षणता है। सुबह सुप्रभात सेवा की वेला में, कुछ भक्तों को लगता है - मानो वेंकटेश्वर विश्वरूपी हो, पूरे मंदिर में फैले हुएँ हों। कुछ लोग कहते हैं कि वेंकटेश्वर जी में उन्हें तब, किलकारी करता हुआ एक बालक दिखाई देकर, उनका मन मोह लिया है। कुछ लोगों को एक युवक सा, और कुछ लोगों को वृद्ध सा भी दिखाई देता है। कुछ लोगों का यह भी अनुभव हुआ कि भगवान तिरुमलेश उन्हें एक थका हारा आदमी की तरह लगे। कुछ लोगों को भगवान क्रोध से, इशारा करते हुए भी दिखाई दिये। कुछ लोगों को स्वामी अपने अत्यंत समीप के मित्र जैसे लगे। कुछ लोगों ने, स्वामी को हाथ बढ़ाकर अपनी ओर आते हुए देखा। गुरुवार के दिन नेत्रोत्सव की वेला में स्वामी बहुत छोटे कद के, मगर बडे मेधावी भी लगते हुए आनंद बाँटते हैं।

उसी दिन रात में जो 'पूलंगि सेवा' होती है, उसमें स्वामी नवविवाहित दूल्हा सा दर्शन देते हैं। शुक्रवाराभिषेक के समय वक्षःस्थल लक्ष्मी के साथ, बिना आभूषणों तथा आच्छादनों के स्वच्छ मौक्तिक की तरह भँवर की श्यामल छाया में दर्शन देते हैं। उस अभिषेक के समय, हर भक्त, को लगता है कि अनेकानेक जन्मों के अपने सारे पाप अब धो गये हैं। मन में प्रशान्तता छा जाती है। तन्मयीभूत हृदय से वेंकटेश की चरण सन्निधि में भक्त खो जाते हैं। अपनी पूरी मनोवांछाओं की पूर्ति तत्क्षण हो जाने की भावना मन में जाग जाती है। उनकी सन्निधि में एक विलक्षण दिव्याकर्षण है। अनंत तेजो राशी, इस स्वामी के सामने जब कोई खडा होता है, तो जो आनंदानुभूति होती है, उसे बातों में रख पाना असंभव है। मात्र अनुभवैकवेद्य है, बस! उस दर्शनानंद को शाश्वत बनाना भी असंभव ही है क्योंकि बाहर आते ही एक तरह की माया छा जाती है - हरेक पर! इस तरह वेंकटेश्वर स्वामी का तत्व तो किसी की समझ में नहीं आता है। सारे भूमंडल पर ऐसी दिव्य भव्य मूर्ति मिलती ही नहीं है।

मात्र दर्शकों को ही नहीं, हर दिन स्वामी की पूजा अर्चना करनेवाले अर्चकों को भी ऐसी ही दिव्यानुभूतियाँ प्राप्त होती रहती हैं। परमानंद, परमाद्भुत तथा आश्चर्य की बात यह है कि आभूषणों से अलंकृत करते समय, फूलों की मालाओं को पहनाते समय, स्वामी के चरणों या हस्तों के कोमल स्पर्श से पुलकित हो, निश्चेष्ट होना क्या भला कोई सोच भी सकता है? अभिषेक के बाद कहा जाता है कि स्वामी के शरीर पर आधिकाधिक स्वेद बिंदु दिखाई देते हैं। इस तरह के अनुभवों से उन अर्चकों को तो स्वामी शिला मूर्ति मात्र नही लगते हैं। उनको लगता है

कि एक शाश्वत और अनंत चैतन्य शक्ति, पुरुषोत्तम श्रीमन्नारायण के रूप में यहाँ विद्यमान हैं। अहोभाग्य अहो भाग्य!

इस तरह अनंत काल गमन में ब्रह्मादि देवताओं से लेकर, सामान्य भक्तों तक, सभी लोगों से सेव्य ये स्वामी, वेंकटेश्वर जी की मूल मूर्ति की अति प्राचीनता भी अनेकों, योगियों, महर्षियों, वेदविदों, पौराणिकों, के अलावा, शिला, शिल्प तथा भूवैज्ञानिकों द्‌वारा सिद्ध तथा धृवीकृत भी हुई है।

1979 में तिरुमल क्षेत्र में वैज्ञानिक शास्त्र कोविदों ने यहाँ के एक अपूर्व शिला तोरण को करीब 250 करोड सालों पुराना निर्धारित किया। आश्चर्य की बात यह है कि इस शिला तोरण की लंबाई तथा तिरुमल क्षेत्र की मूल मूर्ति की लंबाई समान हैं। वैज्ञानिकों का कहना है कि इसी शिलातोरण के एक भाग से, श्री वेंकटेश्वर का उद्भव हुआ होगा। इसका तात्पर्य यह है कि वेदों, तथा पुराणों में इस वेंकटाचलक्षेत्र को अति प्राचीन जिस तरह कहा गया है, उसी तरह भूवैज्ञानिकों ने भी इसे पुराकालीन कहा।

इतनी प्राचीन मूर्ति का सौंदर्य, किसी भी शिल्पी की कल्पना या कुशलता के बाहर, निस्संदेह है। इस स्वामी की नासिका के सौंदर्य का क्या कहने? अध खुले वे नेत्र, नेत्रों के वे पलक, पलकों पर के बाल, केश राशि, हाथों की उंगलियाँ, आभूषण, शरीर के सूक्ष्मातिसूक्ष्म मोड व उनका सौंदर्य, - एक से बढकर एक होते हुए, लगता है कि हर पल इनकी आकर्षणीयता बदलती और बढ़ती भी जा रही है। शिल्प शास्त्र एवं आगम शास्त्र के कोविदों की समझ में यह बात आ नहीं रही है,

आश्चर्यजनक तथा अद्भुतानंद वाली यह बात तो, स्वयं व्यक्त - इस मूर्ति की सहजता ही है।

लेकिन लौकिक दृष्टि से देखों तो हमें लगता है कि भगवान विष्णु तो अनेकानेक अवतार लेकर इस धरा पर पधारे ही तो थे। अब इस कलियुग में श्री वेंकटेश्वर का रूप धरकर, इस वेंकटाचल क्षेत्र में, परमाद्भुत रीति में, स्वयंव्यक्त विद्यमान हो गये हैं। उनका यह रूप तो 'न भूतो न भविष्यति' ही है। अद्भुत सौंदर्य तथा लावण्य की राशि है।

तिरुमल की इस मूर्ति को मात्र ''शिला की मूर्ति'' कहना तो युक्ति संगत नहीं है। केवल भौतिक वादियों या नित्यशंकितों को तृप्त करने के लिए उसे शिल्प मात्र कह रहे हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि तिरुमल के आनंद निलय में विद्यमान श्री वेंकटेश्वर जी की यह मूर्ति, दिव्य शरीर धरकर नयन सुंदर रीति में दर्शन दे रही अनंत चैतन्य मूर्ति ही है।

यह दिव्य सुंदर मूर्ति हमें भ्रम में डाल रही है कि यह मात्र शिल्प ही है। लेकिन इस मूर्ति के रूप में जो परमात्मा है, वह तो सब के ऊपर नजर रखता है लेकिन ऐसा दिखता ही नहीं। सब कुछ देखता रहता है लेकिन कुछ कहता नहीं है। मुँह खोलकर जवाब तो नहीं देता। मौन ही उसकी भाषा है। उन उन प्रांतों के भक्तों से उन उनकी भाषा में ही मौन - भाषण करता है। पुराने जमाने में श्री वेंकटेश्वर स्वामी के परम भक्त तोंडमान चक्रवर्ती की नादानगी के कारण स्वामी जी से प्रत्यक्ष भाषण का भाग्य हमने खो दिया! वह कैसे?

पुराने जमाने में कूर्म नामक ब्राह्मण काशी जा रहा था। अपनी वापसी तक अपनी पत्नी एवं संतान की देखभाल करने का भार -

तोंडमान राजा को उसने सौंपा। उन सबको राजा ने एक भवन में रखा और भोजन सामग्री का प्रबंध भी वहीं कर दिया। उनकी रक्षा के लिए घर को ताला लगा दिया। लेकिन बाद में इनके बारे में भूल गया। भोजन सामग्री खतम हो गयी। लेकिन, और देने के लिए कोई नहीं था। भूख के मारे, ब्राह्मण की पत्नी और संतान सब भगवान के प्यारे हो गये। एक साल के बाद जब ब्राह्मण वापस आया और तोंडमान राजा से अपने परिवार के बारे में पूछा! तब जाके राजा को उनके बारे में याद आया। झट जाकर उस भवन के द्वार खोलकर देखा तो ब्राह्मण के परिवार के स्थान पर उन सबकी अस्थियाँ थीं। उसका मन भय से काँप रहा था। लेकिन ब्राह्मण को क्या जवाब दे? तोंडमान, ब्राह्मण के पास गया और कहा कि आपका परिवार, हमारे परिवार के साथ वेंकटाचल गया है भगवान वेंकटेश का अभिषेक कराने के लिए। उनके वापस आने तक आप विश्राम करो!'' स्वयं वेंकटाचल चला गया और भगवान वेंकटेश के चरणों पर गिर पडा और रक्षा माँगी। भगवान ने तो अभय दे दिया। लेकिन अपने भक्त की गलती जानकर स्वामी, चिंतित हो गये। उन्होंने तोंडमान से कहा - 'यह क्या कर दिया तुमने? 'ब्रह्म हत्या पाप' तुम्हें लग गया है। उसका फल तो तुम्हें भोगना ही पडेगा। लेकिन तुम मेरा परम भक्त हो। मैं ने तुम्हें अभय प्रदान किया है। उस पाप की निवृत्ति मैं तो कर दूँगा। उसके फलस्वरूप मैं तो अब से किसी के सामने प्रत्यक्ष नहीं होऊँगा! किसी से बात भी नहीं करूँगा।' यह कहते हुए श्री वेंकटेश्वर ने ब्राह्मण के परिवार जनों को पुनः जीवित कर दिया।

इतने में ब्रह्मादि देवताओं ने आकर, भगवान वेंकटेश्वर से कहा - 'भगवान! इस कलियुग में मानव सभी कमजोर एवं अल्प आयुष के ही

होते हैं। उनके उद्धार के लिए ही सही, आप कलियुग के अंत तक यहीं ठहर जाइये और भक्तों की मनोवांछाओं की पूर्ति कीजिये।' श्रीनिवास जी तो मान गये। लेकिन उन्होंने कहा - 'मै तो अपना दिव्य दर्शन दूँगा। उनकी इच्छाओं की पूर्ति भी करूँगा लेकिन मौन - मुद्रा में। बस!' उस दिन से ''कलौ वेंकट नायकः'' के नाम से जाने जाते हुए, वेंकटेश्वर जी कन्यामास के श्रवण नक्षत्र के पर्व दिन पर यहाँ पर प्रत्यक्ष हुए। दिव्य सालिग्राम शिला के रूप में धरा पर उतरे स्वामी के लिए, तोंडमान राजा ने मंदिर और गोपुर के निर्माण किये। ब्रह्म देवता ने मंदिर में दो अखंड ज्योतियों का भी प्रबंध किया और कहा कि ''ये दोनों ज्योतियाँ कलियुग के अंत तक जलते ही रहेंगी।'' भगवान वेंकटेश्वर की आज्ञा के अनुसार दस दिनों के ब्रह्मोत्सवों का भी आयोजन ब्रह्म देवता ने किया। तब से लेकर आज तक कन्या महीने में श्रवण नक्षत्र के दिन तक समाप्त करते हुए दस दिन के ब्रह्मोत्सव महान वैभव के साथ संपन्न हो ही रहे हैं।

हम कितने भाग्य शाली हैं न? भगवान श्रीनिवास यद्यपि हमसे बात चीत तो नहीं कर रहे हैं, लेकिन ब्रह्मादि देवताओं की प्रार्थना के अनुसार हमें तो अपने पावन दर्शन दे ही रहे हैं। आनंद निलय में निवास करनेवाले स्वामी हम सबको आनंद दिलाते हुए खडे हैं। सप्तगिरीश स्वामी गिरियों समान वरदानों को हम पर बरसा रहे हैं।

कलियुग के स्वामी वेंकटेश जी, इस धरा पर वास कर रहे हम जैसे मानवों की रक्षा हेतु यहाँ स्वयं व्यक्त मूर्ति के रूप में विद्यमान होकर अपने दिव्य दर्शन से हमें भी पवित्र बना रहे हैं! उस स्वामी के दरहास को प्रत्यक्षतया देखकर आनंद को लूटना हमारा सौभाग्य ही तो है।

इस मधुर क्षण में मात्र आनंद निलय ही नहीं, बलिक यहाँ की सभी गिरि शिखरों को भी प्रतिध्वनित करते हुए एक बार और, उस श्रियः पति का नाम ले लेंगे!

कलियुग वैकुंठ वासी गोविन्द!
सप्तगिरीश! गोविन्द!

ये स्वामी परम दयालू हैं। भक्तों के प्रेमी हैं। भले ही उन्होंने प्रतिज्ञा की कि ''मैं किसी से बात नहीं करूँगा'' लेकिन अपने ही उस शपथ को भूलकर, अपने आप को भी भूलकर, सीमाओं को तोडकर, अपने बछडों के लिए दौडती आती गोमाता की तरह भक्तों के पीछे पडे हैं ये स्वामी! कितनों की गुलामी भी की इस पागल स्वामी ने! कितनों के साथ खेला, कूदा, बात किया अपने आप को भी भूलकर आनंद के समुंदर में डुबकियाँ ली इसने! कितनों को अपनी ओर आकृष्ट किया! स्वयं कितनों की ओर आकृष्ट हुआ उनकी भक्ति की तीव्रता के कारण! उन उन संदर्भों में उन उन भक्तों के साथ हुए अनुभवों को स्वयं भूल न पाकर, शाश्वत रूप में उन्हें अपने ही शरीर पर अंकित कर लिया - मनमोहक चिन्हों के रूप में! इतना ही नहीं, उन उन अनुभूतियों को शाश्वत रूप देने के लिए, और अन्य भक्तों को भी विदित कराने के लिए, उन उन समयों के नामों से अपनी कुछ सेवाओं को आभूषित किया उन्होंने! वे सेवायें अभी भी जारी हैं। भक्तों की गाथायें ही नहीं, उन उन समयों के आचार व्यवहारों को भी जैसे के तैसे आचरण में रखा जा रहा है। तिरुमल की इन सेवाओं और आचार व्यवहारों के द्वारा वेंकटेश जी के विविध भक्तों की गाथाओं के परिचय के साथ उनकी भक्त - प्रियता का भी दिव्यानुभव हमें हो रहा है।

अनंत काल के गमन में धुंधली हो गयी उन भक्तों की गाथाओं के जरिये, हमें प्राप्त समाचार के अनुसार, हमारी समझ के अनुसार, श्रीनिवास भगवान के परम दयावान चरित्र को लोगों के सामने रखने का प्रयत्न अब हम करेंगे। उन मीठी घटनाओं के स्मरण में स्वयं को खो देंगे। पहले भक्तों के कल्पवृक्ष वेंकटेश्वर स्वामी का कीर्तिगान करेंगे!

भगवान के श्रीचरण

देखिए! दर्शन कर लीजिए! आँखों भर देखिए! स्वर्णिम पीठिका पर बिराजते हुए स्वामी के चरण कमल हैं ये। हर रोज ब्रह्मादि देवताएँ यहाँ आकर अपने कांतिमय मणिमुकुटों से युक्त अपने सरों को झुकाकर इन चरण कमलों की वंदना करते हैं। इन चरणों की सुंदरता को एकटक निहारिये जो मंजीरों तक विविध मनोहर सौरभ बिखेरनेवाले फूलों से अलंकृत होते हुए, भक्तों की नजरों को आकृष्ट कर रहे हैं। इनको देखने की प्यास मिटती ही नहीं है। बार बार, ऐसे देखते ही रहने को मन करता है न? महालक्ष्मी जी अत्यंत प्रेम व भक्ति के साथ - इन चरणों को अपने कोमल हाथों से, अत्यंत कोमल तरीके में दबाने पर भी, दब जाकर अरुणिम हो जाते हैं कभी कभी! इतने नाजुक हैं हमारे स्वामी के ये सुँदर चरण! इन मन-मोहक चरणों को अपने मन मंदिर में प्रतिष्ठित कर लीजिये! कलियुग का वैकुंठ, इस तिरुमल में, दूर दूर से आये कोटि कोटि भक्त जनों पर वरदानों की वर्षा करनेवाले स्वामी के दिव्य चरणारविदों के बारे में ऋग्वेद ने क्या कहा - ''ये, श्री महा वैकुंठ के स्वामी श्री महाविष्णु के चरण नहीं - परम दिव्यामृत के निर्झर हैं!'' इन वेदोक्तियों को सच्चे साबित करते हुए, स्वयं भगवान ही अपने चरणों

की ओर दिखाते हुए कह रहे हैं कि हाँ! यह तो सही है। सच में ही ये दिव्यामृत के निर्झर हैं। सदा दर्शनीय हैं ये, शाश्वत तथा सत्य आनंद - अपने भक्तों को देने वाले सरोवर हैं ये मेरे चरण! इनका दर्शन कीजिये! धन्य हो जाइये।'' इतना ही नहीं, वेंकटेश स्वामी यह भी संकेत हमें दे रहे हैं कि अगर मेरी शरण में आ जायेंगे तो यह विशाल तथा गहरा संसार का सागर तो आपके लिए घुटनों तक ही रह जायेगा और आप अनायास इसे पार कर सकेंगे भी।''

''श्री वेंकटेश चरणं शरणं प्रपद्ये''

ये दिव्यातिदिव्य - स्वर्ण कमल जैसे चरण - सदा - सर्वदा फूलों - तथा तुलसी से भरे रहते हैं। सुबह सुप्रभात दर्शन के समय में ही इन चरणों को बिना फूल और तुलसी चढ़ाये देख सकते हैं। भगवान वेंकटेश्वर के आभिषेक समय में या तदनंतर संपन्न होनेवाले अभिषेकानन्तर दर्शन के समय में ही - स्वामी के निज - चरण दर्शन होते हैं।

इसके अलावा, हर दिन सुप्रभात सेवा के बाद, तोमाल सेवा (पुष्पालंकरण सेवा) के पहले, अर्चक स्वामी, चरण कवचों को निकालकर, स्नान - पीठिका पर रखते हैं तथा आकाश गंगा तीर्थ जलों से अभिषेकित करते हैं। इनके साथ तिरुमलेश की कौतुक मूर्ति - 'भोग श्रीनिवास' जी का भी नित्याभिषेक होता है। एकांत में होनेवाले इस सेवा को देखने की अनुमति किसी को भी नहीं मिलती है। लेकिन हर शुक्रवार के दिन श्रीनिवास जी की मूल मूर्ति का अभिषेक, भीमसेनी कपूर, चंदन, संकुमद और अन्य अनेकानेक सुगंध द्रव्यों युक्त आकाश गंगा जल से होता है। इस अभिषेक में, निर्धारित मूल्य चुकाकर भक्त जन शामिल हो सकते

हैं। नित्याभिषेक में भाग लेनेवाले स्वामी, भोग श्रिनिवास मूर्ति के बारे में, तथा श्री वेंकटेश्वर स्वामी की मूल मूर्ति के शुक्रवाराभिषेक के बारे में आधिक जानकारी - हम बाद में प्राप्त कर लेंगे।

हर शुक्रवार के अभिषेक के लिए हर दिन सुबह आकाश गंगा जल को लाया जाता है। रजत कलशों को लेकर गज - राज पर श्री वैष्णव भक्त चढते हैं। छत्र - चामर तथा मंगल वाद्यों के साथ आकाश गंगा तीर्थ पर जाकर संप्रदायानुसार वहाँ से तीर्थों को श्रीवारि अभिषेक के लिए लाते हैं। (यह आकाश गंगा तीर्थ तिरुमलेश के मंदिर से ५ किलो मीटर की दूरी पर है। भक्तों के लिए बस की सेवा भी उपलब्ध है।)

सन् 11 वी सदी में ''तिरुमल नंबी'' नामक भक्त शिखामणि ने, तिरुमलेश जी के लिए इस तीर्थ - सेवा का प्रप्रथम आयोजन किया था। इन्हें ही ''श्री शैल पूर्ण'' भी कहते हैं। भगवद्रामानुज जी को श्रीमद्रामायण के रहस्यों का उपदेश, तिरुपति के अलिपिरि में इन्होंने ही दिया था। मात्र गुरू ही नहीं, ये, भगवद्रामानुज जी के मातृक मामा जी भी थे। आज भी तिरुमल क्षेत्र में संपन्न हो रहे, तिरुमलेश के स्वर्ण चरणाभिषेक, भोग श्रीनिवास मूर्ति का अभिषेक तथा निज मूर्ति के शुक्रवाराभिषेक के लिए आवश्यक आकाश गंगा तीर्थ सेवा में, तिरुमल नंबी के परिवार के लोग भाग लेते हुए, अपने जीवनों को धन्य बना रहे हैं।

श्रीशैल पूर्ण जी इतने भाग्य शाली थे कि भगवान तिरुमलेश जी स्वयं उन्हें दादा कहकर पुकारते थे। उनके इस अलौलिक भाग्य के कारण ही आज तक उनके परिवार के लोग भी इस वंशानुगत भाग्य को अपना रहे हैं। ऐसे भक्त शिखामणि और भगवान वेंकटेश के बीच जो

मधुर घटनाएँ हुई हैं, उन्हें जानने के पहले तिरुमलेश का जय जय कार, मन से क्यों न कर लें?

हे भक्त जन पारिजात गोविन्द!
हे सप्तगिरीश गोविन्द!

तिरुमलनंबी

सन् 10 ई. सदी में प्रसिद्ध वैष्णव क्षेत्र श्रीरंगम् में यामनाचार्य नामक भक्त वरेण्य रहा करते थे। श्री रंगनाथ स्वामी के नित्य कैंकर्य में व्यस्त होते हुए भी, अपने शिष्यों को श्री वैष्णव धर्म के रहस्यों तथा श्री वैष्णव धर्म के सिद्धांतों की विशेषताओं का विवरण भी वे देते थे। एक दिन के पाठ में उन्होंने वेंकटाचल क्षेत्र के बारे में बताते हुए कहा कि वेंकटाचल का दूसरा नाम है - पुष्प मंडप! 'परांकुश दिव्य सूर' नाम से सर्वविदित भक्त शेखर नम्माळ्वार के विचार में तिरुमल के स्वामी वेंकटेश्वर को अभिषेक, पुष्प माला कैंकर्यादि सेवाओं को करना भगवान श्री महाविष्णु के लिए अत्यंत प्रीति कर होगा। यामुनाचार्य जी ने यह भी कहा कि वे ही स्वयं तिरुमल क्षेत्र पर जाकर कुछ दिन के लिए वहाँ ठहरे थे और तिरुमलेश की उक्त सेवाओं में उन्होंने कुछ दिन के लिए भाग लिया भी था। लेकिन वहाँ की सर्दी तथा कीडे मकोडों की बाधा का सामना न कर पाने के कारण, उन्हें वापस श्रीरंगम लौटना ही पडा। यामुनाचार्य जी ने अपने प्रिय शिष्यों से कहा कि यदि कोई - इन बाधाओं को किसी तरह सहते हुए हर दिन श्री वेंकटेश्वर जी की ये सेवायें हर दिन अगर कर सकता है तो एक तरफ वैष्णव - आचार्य प्रमुखों के विचारों को गौरवान्वित करने का भाग्य मिलेगा ही। दूसरी तरफ भगवान वेंकटेश्वर जी के भरपूर आशीर्वाद भी मिलेंगे! इन बातों को कहते हुए यामुनाचार्य,

अपने प्रिय शिष्यों को तरफ गौर से देख रहे थे कि शायद कहीं अपने वक्तव्यों की पुष्टि का भास उन शिषयों के वदनों में मिल जाय! उनकी आशा सही निकली। उन शिष्यों में से 'तिरुमलनंबी' नामक एक शिष्य ने आगे बढ़कर कहा कि गुरुवर! हाँ, मैं तिरुमल जाऊँगा।, अभिषेक के लिये तीर्थ लाना एवं पुष्पालंकार सेवायें आदि अनुनित्य करूँगा। तत्क्षण वे तिरुमल के लिए निकल भी पडे।

वहाँ पहुँचने के बाद हर दिन भगवान वेंकटेश्वर के मंदिर में नित्याभिषेक के लिए हर दिन बडे सवेरे ही दस मील की दूरी पर स्थित 'पाप विनाशनम्' तीर्थ के पवित्र जलों को एक माटी के घडे में भर लेते थे तथा सर पर रखकर अत्यंत भक्ति एवं विश्वास के साथ भगवन्नाम लेते हुए, अभिषेक के समय तक मंदिर में ला सौंपते थे। तिरुमलेश के अर्चक, इन जलों से मूलविराट् मूर्ति एवं मणवाळ् पेरुमाळ (भोग श्रीनिवास मूर्ति) की रजत मूर्ति का अभिषेक किया करते थे। इस तरह परम भक्त श्रीशैल पूर्ण जी (तिरुमल नंबी) अपने गुरु यामुनाचार्य की आज्ञा का पालन करते हुए, वेंकटेश की निरंतर सेवा में अपना जीवन पुनीत कर ले रहे थे। कितने साल बीत गये लेकिन उनकी सेवा में एक भी चूक नहीं आयी। अपने भक्त की इस कठोर निष्ठा को देखकर भगवान वेंकटेश अत्यंत संतुष्ट हुए। उन्होंने चाहा कि तिरुमल नंबी की इस गुणवत्ता को संसार के सामने रखना ही चाहिए।

तिरुमलनंबी जी एक दिन पाप विनाशन तिर्थ के जल को घडे में भरकर, तिरुमल के मंदिर की तरफ त्वरित गति से चल ही रहे थे कि दादा! दादा! की पुकार बारंबार उन्हें सुनायी दी। इस पुकार को सुनकर

तनिक रुककर, तिरुमल नंबी ने पीछे मुडकर देखा तो चाप बाणादियों को धरकर एक किरात युवक थोडी दूरी पर खडा था। तिरुमल नंबी जी ने पूछा - 'हाँ! बताओं क्या?' किरात युवक के रूप में स्वयं आये हुए वेंकटेश्वर जी ने कहा - ''दादा! बहुत प्यास लग रही है। थोडा सा पानी दो न?'' तिरुमलनंबी ने कहा - 'स्वामी तिरुमलेश के अभिषेक के लिए इन जलों को तिरुमल ले जा रहा हूँ। तुझे कैसे दूँगा? देरी हो ही गई है नित्याभिषेक के लिए! मुझे जाने दे।' तिरुमलनंबी बिना रुके चले जा रहे थे - भक्ति में तल्लीन होकर!

पानी न देते हुए जा रहे तिरुमलनंबी के पीछे पीछे छद्मवेषी वेंकटेश्वर भी चलने लगे। एक बाण का प्रयोग कर माटी की घडे में उन्होंने छेद किया और घडे से बाहर आती हुई जलधारा से प्यास को बुझाने का नाटक करने लगे। वेंकटेश के नामोच्चारण में तल्लीन चलते जा रहे तिरुमलनंबी जी को घडे के खाली हो जाने की बात बहुत देर बाद मालुम हुई। पीछे मुडकर देखा तो किरात युवक पानी पी रहा था। वे कृद्ध हो गये। नाराज होकर उन्होंने कहा - ''अरे मूर्ख किरात! यह तूने क्या किया? भगवान के निवेदन के लिए जो पानी मैं ले जा रहा था, उसे तूने अपवित्र कर दिया। मेरी इस सेवा में तूने आज बाधा डाली है। फिर से पानी भरकर लाने - में और भी देरी हो जायेगी! अब मैं क्या करूँ? हे प्रभो वेंकटेश! इस दास को आज क्षमा करो हे कृपावतार!'' कहते हुए रोने लगे। आँखों से अश्रुओं की धारा बहने लगी।

इतने में माया किरात ने कहा - ''दादा! चिंता मत करो! यहाँ सामने एक और तराई पर एक पवित्र तीर्थ है। मेरे साथ आओ! मै तुम्हें दिखाता हूँ।'' किरात युवक एक और दरी में उन्हें ले गया लेकिन कहीं तीर्थ

दिखाई न देने के कारण - अपने तीर से एक जगह पर मारा तो झट वहाँ से स्वच्छ पानी की धारा निकली। किरात युवक ने कहा कि दादा। इस जल को लेकर जाओ अभिषेक के लिए। और हाँ! आज से इसी तीर्थ से तुम्हारे स्वामी के अभिषेक व अन्य सेवाएँ कर लो।'' इन बातों को कहकर वह किरात युवक अंतर्निहित हो गया।

आश्चर्य व आनंद से तिरुमलनंबी निश्चेष्ट हो गये। कुछ देर बाद होश में आने के बाद उन्होंने सोचा कि वह किरात युवक ही श्री वेंकटेश्वर था न? उस मधुर घटना को बारंबार याद करते हुए, आकाश गंगा तीर्थ के पानी को लेकर मंदिर में भगवान तिरुमलेश को उन्होंने समर्पित किया। उसी समय पर - मंदिर में भगवान वेंकटेश ने वहाँ के एक अर्चक स्वामी में अदृश्यतया प्रवेश कर अपनी वाणी सुनायी कि 'तिरुमल नंबी! आज तुम्हारे हाथों के उस जल को पीने से मेरी प्यास बुझ गई है। आज से तुम उस आकाश गंगा तीर्थ का ही जल मेरे लिये लाओ। उसी पानी के अभिषेक से ही मुझे तृप्ति मिलेगी।'

इस घटना के द्वारा श्रीशौलपूर्ण नामक तिरुमलनंबी की शरणागति की महत्ता तथा आचार्य निष्ठा को मानव जाति में फैलाने के साथ अपनी भक्त प्रियता एवं भक्तानुग्रह दीक्षा को भी भगवान वेंकटेश्वर ने स्पष्ट किया।

तिरुमल में वेंकटेश्वर जी के मंदिर की महा परिक्रमा के मार्ग की दक्षिण दिशा में तिरुमलनंबी का छोटा सा उत्तराभिमुख मंदिर, आज भी हमे दिखाई देता है। तिरुमल में भगवान वेंकटेश्वर के ''प्रप्रभम तीर्थ कैंकर्य सेवी'' के नाम से सुविख्यात तिरुमल नंबी, अपना कुटीर बनाकर

यहीं पर वास कर रहे थे एवं अपनी सेवा स्वामी को समर्पित करते थे। उस दिन से आज तक कभी भी, किसी भी दिन, तिरुमल की वीथियों में शोभायात्रा के लिए निकल पडें तो तिरुमलेश अवश्य तिरुमलनंबी के इस मंदिर के पास रुककर प्रथम आरती को स्वीकारते हैं। उसके बाद दक्षिण माडा वीथी से ही वेंकटेश्वर की शोभा - यात्रा पहले जिय्यंगारों के दिव्य प्रबंध पारायण के साथ शुरु होती है। इस संप्रदाय के द्वारा तिरुमल की आराधना एवं सेवाओं में तिरुमल नंबी की प्रमुखता स्पष्ट है।

साक्षात् श्री वेंकटेश्वर जी ने तिरुमलनंबी जी को 'दादा' कहकर पुकारा। इसी कारण वे सब भक्तों के दादा बन गये। उनके इस भाग्य को सूचित करते हुए उन्हें सब 'पेरिय तिरुमल नंबी' (बडे तिरुमल नंबी) नाम से गौरवान्वित करने लगे।

तिरुमलनंबी जी तिरुमल के भगवान वेंकटेश्वर के भक्त होने के अलावा, संस्कृत तथा द्रविड (तमिल) भाषाओं के महान पंडित भी थे। श्री वैष्णव विशिष्ठाद्वैत धर्म का उद्धार करनेवाले 'श्री भाष्यकारों के रूप में भगवद्रामानुज जी के पाँच गुरुवों में तिरुमलनंबी भी एक थे तथा रामानुजाचार्य जी के 'मात्रुक मामा'' भी थे।

एक बार भगवद्रामानुज जी श्रीरंगम् से तिरुपति कारणवश आये थे। मामाजी से उन्होंने श्रीमद्रामायण के रहस्यों को पढ़ाने को कहा। दोनों ने एक समझौता कर लिया। तिरुमलनंबी जी अपने नित्य सेवा कार्यक्रमों के बाद तीर्थ प्रसादों - को लेकर तिरुमल से उतरकर नीचे अलिपिरि पर स्थित एक इमली के पेड के नीचे बडी सी चट्टान तक पहुँच जाते थे।

भगवद्रामानुज जी भी तिरुपति में स्थित गोविन्द राज स्वामी की सेवा तथा अर्चना कर, उस समय तक वहाँ पहुँच जाते थे। वहीं बैठकर, तिरुमलनंबी, अपने भगिनेय को, रामायण के रहस्यों का पाठ पढ़ाते थे। इस तरह एक ही साल में पुनरुक्ति के दोष बिना, अठारह बार श्रीमद्रामायण के रहस्य, अपने भगिनेय, भगवद्रामानुज को पढ़ाये हुए पंडित शेखर थे - तिरुमल नंबी जी! इस तरह श्रीमद्रामायण का पाठ जब चल रहा था, एक दिन तिरुमलनंबी जी को चिंता हुई कि इन पाठों के कारण दो पहर में तिरुमलेश के चरणों का दर्शन - सुख, मुझे नहीं मिल रहा है - सिवा सुबह और - शाम के। मैं वंचित हो जा रहा हूँ - इस सुख से। उसी दिन रात ही, तिरुमलेश जी, तिरुमलनंबी जी के सपने में प्रत्यक्ष हो गये। उन्होंने कहा 'हे तिरुमल नंबी! चिंता बिलकुल मत करो। तुम्हारे रामायण प्रवचन को मत रोको। दो पहर में भी तुम्हें मेरे चरणों की सेवा कर लेने का अवसर मैं स्वयं दूँगा तुम्हें। जहाँ आप दोनों का पठन पाठन हो रहा है, वहीं मेरे चरणों का दर्शन भाग्य तुम्हें प्राप्त होगा।' अगले दिन, जिस इमली पेड के नीचे तिरुमल नंबी और भगवद्रामानुज जी श्रीमद्रामायण की चर्चा कर रहे थे, वहीं पर श्री वेंकटेश्वर जी के श्री चरण पत्यक्ष हो गये। कहा जाता है कि अलिपिरि में जिन श्री चरणों के दर्शन से हम पुलकित हो जा रहे हैं, वे तो इसी घटना से संबंधित श्रीचरण हैं।

इतने परमभक्त तिरुमल नंबी का जन्मस्थान, तिरुमल ही कहा जाता है। इतिहासानुसार तिरुमलनंबी जन्म भर तिरुमल वेंकटेश्वर की सेवा - अर्चना करते हुए, तिरुमल क्षेत्र में ही परम पद को प्राप्त हो गये।

जिस स्थान पर तिरुमल नंबी को श्रीनिवास ने व्याध के रूप में दिखाई देकर, उनके घडे का जल पिया था, उस दिन की याद ही में,

''आकाश गंगा तीर्थोत्सव'' नामक उत्सव हर साल संपन्न हो रहा है। तमिळ में इसे 'तन्नीर मदु उत्सवम्' कहते हैं। इसका अर्थ है ''अमृत जलोत्सव''। हर साल वैकुंठ एकादशी के ग्यारह दिन पहले से प्रारंभ होकर, वैकुंठ एकादशी के बाद चौदह दिनों तक, पूरे 25 दिन तक यह ''भगवान वेंकटेश का अध्ययनोत्सव'' संपन्न होता है। आखिरी दिन तिरुमलनंबी जी का ''तिरुमंजन तीर्थ कैंकर्योत्सव'' होता है। उस दिन वंशानुगत अधिकार से 'आकाश गंगा तीर्थ कैंकर्योत्सव' में भाग लेते आ रहे तिरुमलनंबी के परिवार - जन, चाँदी के कलशों में आकाश गंगा का तीर्थ लाते हैं। छत्र, चामर, मंगलवाद्यादि राजोपचारों के साथ श्री पीठिका पर अर्चक स्वामी उन पवित्र तीर्थ कुंभों की आरती देकर स्वागत करते हैं। भगवान वेंकटेश के राजोचित गजों पर मंदिर की महा परिक्रमा कर, पूजाओं को स्वीकारते हुए, मंदिर में प्रवेश करते हैं तथा वे पवित्र जल के कलश, स्वामी को अर्पित किये जाते हैं। गर्भालय में भगवान श्रीनिवास के अर्चक स्वामी, सुगंध मनोहर फूलों से अनुनित्य अलंकृत उन पवित्र पद कमलों, स्वर्णिम शठारि (श्री चरणों से अंकित, आशीर्वाद का एक पवित्र उपकरण जिसे आर्चनानंतर भक्तों के सरों पर एक दो पल रखा जाता है जिससे भक्तों को, भगवान के श्री चरणों को स्वयं छूकर आशीर्वादि पाने का आनंद प्राप्त होता है।) का भी उन पवित्र जलों से फिर से पवित्र कर, धूप, दीपादि समर्पित करते हैं। बचे हुए कलशों के पानी को भगवान वेंकटेश जी को पेय के रूप में समर्पित किया जाता है। तदनंतर तिरुमल नंबी के परिवार वालों का चंदन, तांबूल सहित सत्कार करते हैं। इस तरह भगवद्रामानुज के समय से ही यह वार्षिक उत्सव महान वैभव के साथ संपन्न हो रहा है।

वैष्णव परमाचार्य के हाथों का जल पीने के लिए जिस तरह वेंकटेश्वर स्वामी उस दिन तरस गये थे, उससे भी बढ़कर, एक अनपढ सीधे - सादे कुम्हार के हाथों का खाना खाने को भी वे तरस गये। वह कुम्हार कौन था? उसकी रोचक कहानी क्या थी? यह सब जानने के पहले, एक बार भक्त वरद बालाजी का स्मरण कर लेंगे।

आखिलांड कोटि ब्रह्मांड नायक!
गोविन्द गोविन्द गोविन्द!

इस तरह भक्तों को अपनी अपार कृपा से अनुग्रहीत करनेवाले स्वामी वेंकटेश जी, तिरुमल नंबी के परिवार की आकाश गंगा - अभिषेक सेवा को स्वीकार रहे हैं - सदियों से। कहा जाता है, उस भक्तानुग्रहतत्पर स्वामी के चरण कमलों के नीचे ही विरजा - नदी नामक देवनदी का तीर्थ प्रवाहित होता रहता है - हमेशा!

हर दिन सुबह तोमाल - सेवा के बाद, श्री वेंकटेश के श्री चरणों का सहस्रनामार्चन होता है जिसमें तुलसी दलों के साथ, ब्रह्माण्ड पुराणांतर्गत 'श्रीवेंकटाचल महात्म्यम्' से ''ओम् वेंकटेशाय नमः'' ''ओम् विरुपाक्षाय नमः'' ओम् विश्वेश्वराय नमः'' इत्यादि से आरंभ होकर ''ओम् वेंकटाद्रि गदाधराय नमः'' जैसे सहस्त्र नामों से अर्चना संपन्न होती है।

तिरुमल के मंदिर में हर दिन सुबह सहस्रनामार्चना के नाम पर संपन्न होनेवाली इस आर्जित सेवा में, निर्देशित शुल्क चुकाकर भक्त जन, लगभग आधे घंटे तक भगवान वेंकटेश का पावन दर्शन करते हुए अनपे जन्म को सार्थक कर सकते हैं। इस सेवा के बारे में बाद में जान लेंगे।

(अनुदिन तिरुमल के मंदिर में संपन्न होनेवाली उपर्युक्त नामावली तथा ''ओम् विश्वम् विष्णुर्वषट्कारों'' से शुरु होनेवाली ''विष्णु सहस्त्र नामावली'' दोनों अलग अलग हैं।)

फिर दो पहर में तथा रात्रि के समय, वराह पुराणांतर्गत श्री वेंकटाचल माहात्म्यम में उधृत अष्टोत्तर शतनामावली से श्री चरणों की पूजा तुलसी दलों से होती है जो ''ओम् वेंकटेशाय श्री वेंकटेशाय नमः, ओम शेषाद्रि निलयाय, श्री वेंकटेशाय नमः ''इस तरह शुरु होकर, आखिर में'' ओम् श्रीनिवासाय वेंकटेशाय नमः'' (108) से समाप्त होती है।

इस तरह सुबह, अपराह्ण और रात के समय वेंकटेश्वर स्वामी के श्री चरणों की अर्चना होने के तुरंत बाद, उन्हीं तुलसी दलों से वक्षःस्थल लक्ष्मी की अर्चना ''ओम् श्रियै नमः, ओम् लोकदात्र्यै नमः, और ओम् अब्धिजायै नमः'' आदि चतुर्विंशति (24) नामों से होती है।

हर साल धनुर्मास में भगवान बालाजी की सहस्त्र नामावली में तुलसी दलों के स्थान पर बिल्व दलों से पूजा की जाती है।

मूलमूर्ति के चरण - कमलों की अर्चना, हर मंगलवार की दूसरी अर्चना के रूप में 108 स्वर्ण कमलों से ''अष्टोत्तर शत नामावली''' संपन्न होती है, जिसका नाम है ''अष्ट दळ पाद पद्माराधना''। इस सेवा में भी भक्त जन, निर्धारित शुल्क चुकाकर भाग ले सकते हैं।

कहा जाता है कि भगवान बालाजी की सेवा करने, हर रात ब्रह्मादि देवतालोग मंदिर में आते हैं। इसी लिए मंदिर के स्वर्ण द्वारों को बंद करने के पहले, अर्चक स्वामी एक स्वर्ण - पात्र में जल को, उन

देवताओं की सुविधा के लिए रखते हैं। इसके अलावा, भगवान बालाजी के चरणों पर एक चंदन का निवाला भी रखते हैं। इन दोनों से बह्मादि देवता लोग, श्रीनिवास जी की पूजा - अर्चना करते हैं। सुप्रभात के बाद अर्चक इसी तीर्थ को ब्रह्म तीर्थ के नाम से, भक्तों में बाँटते हैं।

श्री वेंकटेश्वर का प्रीतिभोज

श्री वैकुंठ वासी श्रीमन्नारायण - भूलोक वैकुंठ इस वेंकटाचल क्षेत्र पर, जब से श्री वेंकटेश्वर के नाम पर वास करने लगे तब से कई कई भक्तों से बात करते रहे। खेलते रहे। कूदते रहे। इन सभी बातों या खेलों की कहानियाँ भक्तों के लिए कर्ण रसायन ही सिद्ध हो रही हैं। 'प्रीति भोज' का नाम सुनते ही - अत्यंत आश्चर्यजनक एक कहानी की याद आ रही है। तिरुमलनंबी जैसे परम वैष्णवाचार्य जी के हाथ का पानी पीने के लिए, वेंकटेश जी आखिर एक किरात युवक का रूप धारण करने में भी नहीं झिझके। इससे भी बढ़कर, एक पामर निराडंबर भक्त के कुल्हड की काँजी के लिए अधिक तप्पर हो गये थे वे। उस भक्त के आतिथ्य को प्रेम से स्वीकारा उन्होंने! परमानंद से खाया उन्होंने! तद्वारा हम सबको भी तृप्त किया उन्होंने! संतुष्टि दी उन्होंने! इस कथा को सुनने के पहले एक बार तिरुमलेश का नाम लेंगे।

गोविन्द गोविन्द गोविन्द !

''कुरुवनंबि''

भगवान वेंकटेश जब पहले पहल अर्चामूर्ति के रूप में तिरुमल पधारे थे, उन दिनों तोंडमान राजा उनके चरण कमलों को सुवर्ण से बने तुलसी - दलों से पूजा करता था। हर दिन सुवर्ण दलों की पूजा करते

करते, वह मन ही मन गर्व करता था कि मेरे जैसे स्वार्ण दलों से पूजा करनेवाला दूसरा भक्त कोई, इस धरा पर नहीं होगा। एक दिन ऐसा हुआ कि जैसे ही वह मंदिर में प्रवेश किया उसे भगवान वेंकटेश के चरणों पर पडे हुए चिकनी मिट्टी के फूल दिखाई दिये। तोंडमान राजा, अचरज में पड गया। भगवान श्रीनिवास जी के पास गया और पूछा कि हे भगवन्! यह कैसे हुआ?' भगवान वेंकटेश का समाधान क्या था? 'अरे तोंडमान राजा! मेरे लिए अत्यंत प्रिय भक्त और कई हैं। उनमें से एक है भीम नामक कुम्हारा। वह मंदिर के लिए आवश्यक घडे तो बनाता ही रहता है। मेरी एक दारू की प्रतिमा बनाकर घर में रख लिया है उसने! हर दिन भक्ति से चिकनी माटी के फूल बनाकर उन्हीं से मेरी पूजा करता रहता है। उन्हीं फूलों को तुमने अभी मेरे चरणों पर देखा है। यहाँ से उत्तर की ओर, एक योजन (दूरी की एक नाप) की दूरी पर वह रहता है। उसके माटी के फूल - मेरे लिए अत्यंत प्रिय हैं। तुम्हारा यह गर्व तो गलत ही है।'

वेंकटेश्वर की इन बातों से तोंडमान राजा का गर्व टूट गया। अपने सारे राजोचित उपचारों को छोडकर पैदल 'भीम' के पास चला गया और उसके पैरों पर गिर कर बेहोश हो गया। इतने में वहाँ भगवान तिरुमलेश भी प्रत्यक्ष हो गये। कुम्हार भीम, भगवान को भी वहाँ देखकर, फूला न समाया। अनेक प्रकार उनकी स्तुति करके अपने घर का खाना खाने की प्रार्थना भी उसने की। श्रीनिवास जी ने झट मान ली। उसके घर के कुल्हड में बनी काँजी को प्रीति पूर्वक उन्होंने खा लिया। देवता लोगों ने पुष्प वृष्ठि की। स्वर्ग लोक से आये हुए पुष्पक विमान में कुम्हार दंपति, दिव्य शरीरों से वैकुंठ धाम को पधारे। उस दिन से आज तक भी भगवान

वेंकटेश जी को 'ओडु' नामक कुल्हड के टुकडे में ही भोगं चढ़ाया जाता है। वही कुम्हार भक्त, 'कुरवरति नंबि' और 'कुरुवनंबि' नामों से मशहूर हो गया।

देखा, आपने हमारे सप्तगिरीश की भक्त-प्रियता को! इसी भक्त वत्सलता के कारण तिरुमल से उतरकर दौडते हुए कहीं दूर के गाँव में माटी का काम कर रहे कुरुवनंबी के यहाँ पहुँचना और उनके धर की बनायी गयी काँजी को प्यार से खाना, यह किसी और भगवान से होनेवाली बात है क्या? उस अति सामान्य भक्त के इस अति सामान्य भोज को सदा याद रखते हुए, वैभवोपेत आनंद निलय में, राजोचित मर्यादाओं के बीच, घडे के टुकडें में ही भोज लेने का नियम रख लेना - भगवान की निर्मल करूणा का उदाहरण है न? तिरुमल में कितने कितने मीठे और कीमती पकवान, बडे से बडे बर्तनों में पके और भोग - के रूप में श्री वेंकटेश को समर्पित किये भी जाते हैं। लेकिन वे सब ''कुलशेखर पडी'' के बाहर ही रखे जाते हैं। घडे के टुकडे में जो भोग (नैवेद्य) रखा जाता है वही कुलशेखर पडी को पारकर अंदर ले जाकर भगवन वेंकटेश को समर्पित किया भी जाता है। भगवान भी बडे ही चाव से उस भोग को खाते भी हैं। इस भोग के लिए हमेशा नये घडे ही उपयोगित किये जाते हैं जिन्हें हर दिन शुद्ध करने की आवश्यकता नहीं होती। इसी कारण, भगवान वेंकटेश्वर जी को ''धुलाये नहीं जानेवाले बर्तनवाला'' नाम से भी प्यार से पकारते हैं।

इस तरह कितनी सदियों से, कितनी विधाओं में भक्तों को अपनाये हुए स्वामी वेंकटेश का पावन स्मरण फिर से एक बार कर लेंगे।

गोविन्द गोविन्द गोविन्द

वेंकन्ना की लीलाएँ

यह वेंकटेश्वर बडा ही चोर है। एक अजीब चोर है। एक मायावी है। हमेशा भक्तों से खुशामदी करता रहता है। तमाशें करता रहता है। खुद खुश होता है। हमें भी खुश करता है। ये सब चेष्ठायें आज के नहीं हैं न? द्वापर युग के ही हैं। उन दिनों अनपढ़ गोपियों से खूब गालियाँ खायी इसने! गालियाँ ही नहीं, मार भी खाया। वैसे गालियाँ खाना, फिर से कुछ बदमाशी करना उसे तो बहुत पसंद है। मार खाने में तो मजा ही मजा है उसे! उन दिनों के सभी गुणों को अपनाया हुआ यह सप्तगिरीश भी कम पागल नहीं है। इस कलियुग में खाली प्यास बुझाने के शौक में, एक भक्त से खूब गालियाँ खा खाकर भी उन्हीं का पानी भी पिया उससे! (तिरुमल नंबी) इतना ही नहीं, किसी और भक्त के पास जाकर 'बन्धवा - मजदूर' भी बन गया। भेष बदलकर जाना ही नहीं, मुफ्त में काम करना ही नहीं, उस भक्त से खूब मार भी खाया। घाव भी हो गया मुँह पर! लेकिन उस घाव को पीले कपूर से अलंकृत कर प्यार से आज भी सबको प्रदर्शित करता रहता है। वह भी कहाँ! भगवान वेंकटेश्वर जी के अति लोक सुंदर वदन पर ही है। अत्यंत रोमांचकारी इस कहानी को सुनने से पहले भगवान का नाम ले लेंगे।

गोविन्द गोविन्द गोविन्द

अनंताळ्वान्

वह श्रीवैष्णव सिद्धांत कर्ता भगवद्रामानुज का समय था। (सन् 1017 - 1137) उन दिनों, वे अपने शिष्यों को श्री वैष्णव विशिष्ठाद्वैत

सिद्धांतों का पाठ पढा रहे थे। एक दिन उन्होंने बताया कि श्रीरंगम् भोग मंडप कहलाता है। कांची क्षेत्र त्याग मंडप है तो तिरुमल पुष्प मंडप कहलाता है। तिरुमल के स्वामी वेंकटेश जी पुष्पालंकार प्रिय हैं। उन्हें पुष्पालंकार सेवा अति प्रिय है।'' इतना कहकर उन्होंने अपने शिष्यों से पूछा कि हाँ! अब बताइये! तिरुमल पर ही रहते हुए, पुष्पोद्यान लगाकर, भगवान वेंकटेश की ''पुष्पालंकार सेवा'' करनेवाला कोई मेरे शिष्यों मे है क्या? सभी शिष्य एक दूसरे की ओर ताक रहे थे। कोई जवाब ही नहीं दे रहा था। कहाँ का तिरुमल! कहाँ की सर्दी! उस घने जंगल में कीडों मकोडों की कमी नहीं हैं। तो फिर इतने सारे कष्टों को सहने के लिए, कोई भी शिष्य तैयार नहीं था! उसी समय 'अनंताळ्वान' नामक शिष्य उठ खडा हुआ और कहा - ''हाँ गुरूजी! मैं वहाँ जाने के लिए तैयार हूँ।'' भगवद्रामानुज जी बहुत ही खुश हो गये। ''धन्य हो अनंताळ्वान! तुम ही हो सही अर्थ में ''पुरुष''!'' (आणपिळ्ळै) उन्होंने अपने शिष्य को आशीर्वाद देकर, तिरुमल जाने की अनुमति दे दी! उसी दिन से अनंताळ्वान (अनंताचार्य) ''आनंदान पिळ्ळै'' तथा ''अनंत पूरुष' के नामों से भी प्रसिद्ध हुआ!

अनंताळ्वान के लिए गुरु ही भगवान थे। इसीलिए गुरु की आज्ञा होते ही, अपनी धर्मपत्नी को लेकर तिरुमल पर पहुँच गया। बहुत ही निष्ठा से विविध सुगंध वाले फूलों का चयन करके, श्रीवेंकटेश्वर को समर्पित करने लगा। अनंताळ्वान से बहुत पहले से ही 'तिरुमल नंबी' तिरुमल पर वास कर रहे थे। उनके द्वारा तिरुमल के पुष्पोद्यानों के बारे में तथा तिरुमलेश की पुष्प प्रियता के बारे में अनंताळ्वान ने बहुत कुछ सुना ही तो था। इतना ही नहीं, उसकी खुशी की सीमा न रही जब उसने

सुना कि भगवद्रामानुज जी के परम गुरु एवं तिरुमल नंबी के गुरु यामुनाचार्य ने भी तिरुमल पर कुछ समय के लिए रहकर भगवान वेंकटेश को पुष्प माला कैंकर्य समर्पित किया। उसने सोचा कि अपने गुरु भगवद्रामानुज के परमगुरु यामुनाचार्य जी के ही नाम पर क्यों न इस पुष्प माला कैंकर्य को करें? यह संकल्प उसके मन में ऐसे आते ही, झट उसने निर्णय ले लिया और भगवान वेंकटेश जी के मंदिर के परिसर में ही 'यमुनोत्तरा' नामक पुष्प मंडप को बनाया। उस दिन से इसी मंडप में बैठकर विविध फूलों की मालाएँ गूँथकर सुबह, शाम तिरुमलेश को मालायें समर्पित करना शुरु किया। (इसी यमुनोत्तरै के बारे में, संपंगि परिक्रमा के यहाँ हमने जान लिया है।)

इस तरह, बडी ही श्रद्धा और निष्ठा के साथ तिरुमलेश की सेवा में तल्लीन आनंदाळ्वान ने एक दिन सोचा - 'क्यों न मैं ही खुद तिरुमलेश के लिए एक पुष्पोद्यान को लगा लूँ?' झट उसने अपने उद्यान के लिए एक तालाब को खोदना चाहा। उसका निर्णय था कि भगवान के लिए करते हुए इस कार्य में किसी भी बाहरवाले की सहायता की आवश्यकता ही नहीं है। अपनी गर्भवती धर्मपत्नी को साथ लेकर काम में लग गया। भगवान तिरुमलेश के मंदिर की दक्षिण दिशा में तालाब की खुदाई शुरु हो गई। हर दिन सुबह पुष्प मालाओं की सेवा होने के बाद, तीर्थ और प्रसाद को लेकर, दोनों पति पत्नी, तालाब खोदने के काम में लग जाते थे। फावडे से मिट्टी को निकालकर टोकरे में अनंताळ्वान डाल देता था और उसकी पत्नी उस मिट्टी को दूर ले जाकर फेंक आती थी। कई दिनों तक यह काम चलता ही रहा। भगवान वेंकटेश को इस दंपति की दीक्षा तथा भक्ति, बहुत प्यारी लगीं। इस काम में दोनों की सहायता

उन्होंने करना चाहा। बारह वर्षीय बालक के रूप में उनके पास उन्होंने पहुँचा और कहा - ''स्वामिन्! मैं भी थोडी सी मदद करूँगा।'' अनंताळ्वान ने कुछ जवाब नहीं दिया। बार बार उस बालक के आकर पूछते रहने से, अनंताळ्वान इस स्फुरद्रूपी बालक को आश्चर्य से देखकर बोला'' ''अरे ओ लडके! हम हमारे गरु की आज्ञा से इस दैवकार्य को कर रहे हैं। हम नहीं चाहते कि कोई और आकर इसमें भाग लें। तिस पर बिना किसी मूल्य के, काम करवाना तो हम चाहते ही नहीं हैं।'' बालक रूपी श्री वेंकटेश बहुत खुश हुए। लेकिन मन ही मन, वे चाहते थे कि किसी तरह इनकी सहायता करनी ही चाहिए।

कुछ और दिनों तक तालाब का काम जल्दी जल्दी चला। अनंताळ्वान की पत्नी के प्रसव का समय समीप आने लगा। लेकिन अनंताळ्वान को तालाब की रट लगी थी। कुदाली से टोकरों में मिट्टी भरता ही जा रहा था। उसकी पत्नी भी जल्दी जल्दी उस मिट्टी को बाहर फेंक आती थी। अनंताळ्वान सोच रहा था कि कब इस तालाब में पानी आयेगा? कब पौधे लगेंगे? कब फूल निकलेंगे? कब जाके मैं मालायें गूँथकर मंदिर में दे पाँऊगा?' उसकी पत्नी भी नौ महीनों के पेट से होने पर भी इस काम में पति के खिलाफ एक शब्द भी न कहती थी। 'पति ही पत्नी के भगवान हैं। उनकी सेवा करना तथा उनके विश्वासों को सर आँखों पर सदा रखना ही उसका कर्तव्य है। तिसपर मेरा पति तो भगवान वेंकटेश्वर के आंतरिक सेवक हैं। साक्षात् भूलोक का वैकुंठ इस तिरुमल में अखिलांड कोटि ब्रह्माण्ड नायक की सन्निधि में मग्न मेरे पति की सेवा से बडा सौभाग्य कुछ और हो ही नहीं सकता! मेरे जन्म जन्मों के पुण्य विशेष के कारण ही मुझे ऐसे पति मिले हैं। वह कितना भी कष्ट हो,

मुझमें जिस हद तक शक्ति है, तब तक मैं उनके ही लिए काम करूँगी। बाद में तो, वह भगवान है ही'। इस तरह सोचती हुई वह गर्भवती पत्नी पग पग पर भगवान का नाम लेते हुए एक अव्यक्त आनंद को तन मन तथा कर्मों से संपूर्णतया पाती हुई काम कर रही थी।

इसी समय पर बालक रूपी वेंकटेश्वर, फिर से वहाँ पहुँच गये। उस दंपति की निष्ठा को देखकर वे दंग रह गये। लेकिन अनंताळ्वान की पत्नी की वर्तमान स्थिति को देखकर उनसे रहा नहीं गया। उसके पास जाकर उन्होंने कहा - ''मायी! उस टोकरे को मुझे दे दो। मैं मिट्टी को दूर फेंक आँऊगा।'' और उसके हाथों से टोकरी लेकर चले भी गये। बच्चे के मिलन - सार व्यक्तित्व को देखकर वह नकार नहीं सकी। इस तरह वह पति से मिट्टी भरे गमले को लेकर आती थी और बालक बीच में ही गमले को उसके हाथों से लेकर भाग जा, खाली कर लाता था। बहुत देर बाद, अनंताळ्वान को शंका हुई कि मिट्टी को खेदने से पहले ही अपनी पत्नी आकर, गमले की प्रतिक्षा कैसे कर सकती है? इतना जल्दी जल्दी वह मिट्टी भरे गमले को खाली करके वापस कैसे आ सकती है। तिस पर वह गर्भावस्था में भी हैं! यह कैसे मुमुकिन है?'' उसने अपनी पत्नी से पूछा कि कारण क्या है? सहमी सहमी सी उसकी पत्नी ने सच सच बता दिया कि एक बालक उसकी सहायता कर रहा है। बस! अनंताळ्वान गढ्ढे से बाहर निकल आया।

बालक पर जोर से चिल्लाने लगा - 'अरे बालक! मेरे मना करने पर भी तू फिर से आ गया इधर? तेरी सहायता हमें नहीं चाहिए! हम दोनों पति पत्नी भगवान की जो सेवा कैंकर्य कर रहे हैं उसमें मेरी पत्नी को धोखा देकर भाग लेना चाहते हो न तुम!' कहते हुए अपने हाथ में जो

फावडा था, उसे ऊपर उठाकर उस बालक को मारने उसके पीछे पडा। कपट - बालक डर के मारे मिट्टी के टोकरे को वहीं फेंककर चंपत हो गया। लेकिन अनंताचार्य तो रुकनेवाला ही नहीं था। उसके पीछे पडा! आगे बालक उसके पीछे पीछे अनंताळ्वान! बालक तो हाथ लग ही नहीं रहा था। अनंताळ्वान के क्रोध की सीमा न रही। हाथों में जो कुदाली थी, उसे बालक की ओर, उसने जोर से फेंका। बस! वह तो जाकर, बालक की ठोंडी पर लग गयी। चोट लग गयी, खून भी निकलने लगा। लेकिन बालक रुका ही नहीं। दौडते, दौडते, आनंद निलय में जाकर छिप गया। अनंताळ्वान तो उसके लिए ढूँढ़ ढूँढकर थक गया और घर वापस लौटा - ''वह बालक तो मुझे तिरुमल ही पर कहीं न कहीं अवश्य मिलेगा ही न! तब तो छोड़ूँगा नहीं उसे'! कहते हुए।

सूरज तो ढ़ल गया। सायं संध्या के बाद दर्शन के लिए मंदिर में अनंताळ्वान चला गया। अर्चक गण में खलबली मची हुई थी। उसने जाकर पूछा कि कारण क्या हैं? ''उन्होंने उसे मंदिर में ले जाकर, भगवान वेंकटेश्वर के चिबुक पर घाव के कारण बहते हुए खून को दिखाया। खून भरे उस घाव पर भीमसेनी कपूर को मलते हुए एक अर्चक ने कहा -'' 'भगवान तो लीला विनोदी हैं। किस भक्त से कौन सा नाटक वे खेल रहे हैं - पता नहीं!' बस! अनंताचार्य को सब कुछ समझ में आया। बेदना भरे हृदय से भगवान के वदन की तरफ देखते हुए, अपनी गलती को माफ करने की प्रार्थना उसने की। तिरुमलेश के वदन में धुंधले से उस बालक का हँसमुख भी उसे दिखाई दिया और तुरंत गायब भी हो गया। इतना ही नहीं। अनंताळ्वान से भगवान ने कहा - 'अनंतार्या! चिंता की बात नही है। तुम्हारी सेवा तथा निष्ठा को लोगों को

विदित करने के लिए ही मैं ने इस लीला को रचा है। हाँ! मेरे चिबुक पर तुम्हारे कारण जो चोट पहुँची है, उसका निशान तो हमेशा रहेगा ही। उसे मैं हर दिन भीमसेनी कपूर लगाकर सजा लूँगा और भक्तों को तुम्हारा स्मरण दिलाता रहूँगा। आनंद बाँटूँगा।'' उस दिन से ठोढी पर भीमसेनी कपूर के चिन्ह से तिरुवेंकटपति अपने हँसमुख चेहरे की कांति बढ़ाते ही दिखाई दे रहें हैं। एक अजीब आनंद को बाँट भी रहे हैं। इस तरह कई कई रीतियों में कितनों को, खुश रखनेवाले सप्तगिरीश के बारे में उसकी लीलाओं के बारे में अन्नमाचार्य ने कुछ ऐसा कहा।

''सप्तगिरियों पर हैं विराजमान पुष्करिणी स्वामी
गिरि सम वरदानों को देनेवाले हैं स्वामी

कुम्हार कुरुवरतिनंबी को
मुँह माँगे वरदान मिले उससे
परम भक्त तोंडमान को
हर जगह पर साथ दिया उसने ।। सप्त ।।

पुष्पोद्यान के अनंताळ्वान को
मुफ्त मे माटी को ढोया उसने
पवित्र तीर्थ दूर से लाते तिरुमल नंबि को
तरह तरह की कहानियाँ सुनायी उसने ।। सप्त ।।

(तेलुगु - कोंडललो नेलकोन्न)

सप्तगिरीश स्वामी! वेंकटरमण!
गोविन्दा गोविन्दा! गोविन्दा!

उसके बाद, भगवान वेंकटेश के संपूर्ण अनुग्रह से, अनंताळ्वान ने तालाब को जल्दी ही खोद दिया। उसके परिसर में खूबसूरत बगीचा भी डाला। अपने गुरु भगवद्रामानुज की याद में उसे ''श्री रामानुजोद्यान'' नाम रखा। विविध सुरभिळ भरित फूलो के पौधों को उसमें - लगाकर उस उद्यान को सजाया। इतना सुंदर उद्यान, अलमेल्मंगा और श्री वेंकटेश्वर जी का विहार स्थल भी हो गया। हर रोज स्वामी अपनी पत्नी के साथ वहाँ आया करते थे। हर पेड को छूकर बातचीत करते थे। हर फूल को सूँघकर उसकी खुशबू का आनंद लेते थे। इस तरह उस दिव्य दंपति के लिए एक और नंदनोद्यान, तिरुमल पर भी मिल गया! एक और रसवंत घटना का केन्द्र हो गया। उस घटना के स्मरण में आज भी उसी दिन अपनी दोनों पत्नियों के साथ, छत्र, चामर तथा मंगल वाद्यों के साथ, वृषभ, गज, तुरग पदाति दल तथा भक्त वृंदों के साथ वेद मंत्रोच्चारण के बीच अनंताळ्वान के इस उद्यान में पधारते हैं और अपनी भक्त विधेयता का प्रमाण देते हैं।

असल में वह घटना कौन सी थी और वह कैसे घढी?

अनंताळ्वान अपनी पत्नी के साथ श्री रामानुज पुष्प वाटिका का निर्माण किया। रंग बिरंगे सुराभिळ फूलों के पौधों को लगाया। विविध ऋतुओं में विकसित होनेवाले विविध कुसुमों से सुंदर मालाओं को गूँथकर भगवान वेंकटेश को अर्पित करता था। इन मालाओं को पहनकर भगवान भी नये सौंदर्य के साथ भक्तों को रिझाते थे।

उधर अनंताळ्वान के मन में सर्वदा भगवान! उनके बारे में, उनकी सुंदरता को दुगुनी करने की रीतियों के बारे में, निरंतर सोच! भगवान

वेंकटेशजी के श्रीचरणों पर कौन सा फूल अधिक भाता है? हाँ, इनकी मालाएँ तो वक्षःस्थल लक्ष्मी पर अधिक जँचती हैं। तिरुमलेश की कंठ सीमा को किन फूलों से सजायें? हाँ इन फूलों की खुशबू तो अत्यंत मोहक है। भगवान के मुकुट की शोभा अवश्य इन फूलों से बढ़ती ही है।'' इस तरह के विचारों में ही उसका दिन कट जाता था।

हमेशा अपने उद्यान में ही वह रहता था। पौंधों को पानी देना, लताओं को ऊपर फैलने का सहारा देना, नये नये पौधों को लगाना.. ऐसे! नव पल्लवों को देखता तो उसके मन में आनंद की लहर दौडती थी। पेडों पर ऊपर कलियों को देखता हुआ, उनके खिलने के समय का अन्दाजा लगाता था। विकसित कुसुमों को देखता तो उसका मन भी खिल जाता था। हर पेड को प्यार से छूता था। प्यार से बातें करता था। उद्यान का हर एक पेड और पौधा उसके दोस्त हो गये थे। इन के साथ उद्यान में फिरने वाले कोयल, खरगोश, तितली, तोते सभी उसके परिवार के हो गये। इस उद्यान के फूलों से अलंकृत तिरुमलेश हर होज, एक नये रूप में दर्शन देने लगे। हर पल विभिन्न कांतियों से भक्तों को नयनानंद प्रदान करते थे।

इन सभी फूल मालाओं को देखते हुए, तिरुमलेश को लगा - ''ये सभी फूल ही इतने सुंदर हैं। तो फिर अनंताळ्वान का उद्यान और कितना सुंदर होगा? देखना ही चाहिए बस!'' उन्होंने मन ही मन तय कर लिया। इतने में एक दिन एकांत सेवा का कार्यक्रम संपन्न होने के बाद अर्चक स्वामी मंदिर को ताले लगाकर चले भी गये। मौका पाकर तिरुमलेश ने, अपनी पत्नी अलमेल्मंगा के साथ अनंताळ्वान के उद्यान में प्रवेश किया। उस बगीचे के हर पौधे से बात चीत की। अच्छे से अच्छे

फूल को, अलमेल्मंगा के जूडे में रख दिया। अगर उससे भी बढ़िया फूल दिखे तो पहले वाले फूल को निकालकर दूसरे फूल को पत्नी की केश राशि में रखकर, उसकी सुंदरता को वे परखने लगे। कुछ फूल तो इतने अच्छे लगे कि उनकी खुशबू को सूँघकर उन्होंने स्वयं पहन लिया। अलमेल्मंगा भी तो कुछ कम नहीं थी। ''हाँ स्वामी! इस लता को देखिए! कितना सुंदर है न! इन फूलों को तनिक सूँघिये न! कितने खुशबूदार हैं ये!'' हर एक पौधे के पास जाकर, आप सूँघकर स्वामी को भी देती थी। इस तरह रात भर पति पत्नी, हाथों में हाथ धरकर बगीचे में घूमे। फिरे। फिर सुप्रभातवेला तक मंदिर में पहुँच भी गये।

सुबह होते ही, उद्यान में आये अनंताळ्वान, भौंचक्का रह गया। जहाँ देखे, मुरझाये फूल ही दिखाई दे रहे थे। डालियाँ तोड दी गई थीं। आधार खोकर मुँह लटकाई हुई कलियाँ! तोड दिये गये पत्ते। पान की थूक से भद्दा परिसर! ये सब उससे देखा नहीं गया। नाराजगी की सीमा न रही। ''कोई चोर तो उद्यान वन में प्रवेश कर गये। फूल तो तोड लिया। लेकिन उद्यान को खराब करने की क्या आवश्यकता थी? पान के थूक से बगीचे की सुंदरता को नष्ट करने की क्या जरुरत थी? पापी हैं कहीं के। दुष्ट हैं महान! जाने कहाँ से आये होंगे यहाँ पर!'' इस तरह मन ही मन उन्हें कोसते हुए, उद्यान में धूमने लगा। एक बार लंबी साँसें लेता। एक बार जोर से रो पडता। 'किसी भी तरह उन चोरो को पकड लेना है। खूब मारना है जी भर के!' इस तरह सोचते हुए उसने तय कर लिया कि आज से उद्यान की रक्षा करनी है। ''नहीं तो मेरे भगवत् कार्य का क्या होगा?'' रात भर जागते ही रहा ताकि उद्यान में अगर कोई आये तो झट उसे पता लग जाना चाहिए! लेकिन कुछ फायदा नहीं

निकला। वे चोर तो माहिर निकले। अनंताळ्वान की आँखें चुराके किसी तरह फूल तोडते थे। सुगंध सूँघकर फूलों को कुचल देते थे। पान थूकने की बात तो थी ही! अनंताळ्वान की सारी चतुराई व्यर्थ हो गयी। देखते ही देखते, आठ दिन हो गये। चोरों का पता ही नहीं चला। निस्सहायता तथा निर्वेद में अनंताचार्य ढ़ीला पड गया। ''यह कैसा अन्याय है? मैं तो किसी के पास जाता ही नहीं! किसी से शत्रुता भी नहीं है! तो फिर मेरे साथ इस तरह कौन कर रहा है? किसे इस अन्याय के बारे में बतायें? कहा जाता है जिसका कोई नहीं है, उसका सहारा साक्षात् परमात्मा ही होता है। हे सप्तगिरीश! अब तो तेरे सिवा इस आपत्ति से बचानेवाला - मेरा कोई नहीं है। मेरे गुरुवर की आज्ञा के अनुसार मैं जो यह पुष्प मालाओं की तेरी सेवा कर रहा हूँ उसमें बाधा मत होने देना! चूक तो मेरी कही भी नही हैं।'' आँसुओं के साथ भगवान को अपनी रामकहानी उसने सुना दी।

वेंकटेश तो हमेशा भक्त सुलभ हैं ही! अपने भक्तों की आँखों में आँसूओं को वे देख ही नहीं सकते हैं। अनंताळ्वान की भक्ति और सेवा तत्परता को समाज के सामने रखने का समय आ गया है। इसी लिए उन्होंने सोचा कि अनंताळ्वान को और न सताकर सच तो सामने लाना ही चाहिए। नौवे दिन रात, अनंताळ्वान एक पेड के पीछे छुपकर बैठा था। आधी रात का समय! लंबे लंबे तुलसी के पौधों के पीछे कुछ न कुछ हिल रहा था। उस झाड की तरफ ही आँखें फाड फाडकर अनंताळ्वान देख रहा था। कान खोलकर सुन रहा था - पूरी एकाग्रता के साथ! उन पौधों के बीच दो आकार अस्पष्ट दिखाई दिये। ''शायद स्त्री - पुरुष ही हैं। कुछ भी संदेह नहीं हैं। हाँ वह स्त्री और वह पुरुष दोनों हाथों में हाथ

डाले हुए हैं। कितने सुकुमार शरीर वाले हैं दोनों! कितने सुंदर हैं दोनों! इन दोनों के शरीरों से कितनी मीठी खुशबू निकल रही है? राज दंपति हैं शायद! इसीलिए इतना वैभव है इनका! लेकिन लेकिन! ये दोनों हैं चोर! पक्के चोर! मेरे उद्यान को तितर बितर कर दिया इन दोनों ने! इनको छोडना ही नहीं चाहिए! जी भर गालियाँ सुनानी है।'' मन ही मन सोचते सोचते, अनंताळ्वान झट, उन दोनों के बीच जाकर, हाथ पकड लिया। अपनी भुजाओं के नीचे दबाकर रख लिया! इस हठात् परिणाम से वे पति पत्नी घबरा गये। अनंताळ्वान से अपने आप को छुडाने के लिए लाखों कोशिशें की। आखिर पति तो अपने प्रयत्न में सफल हो गया। अनंताळ्वान से हाथों को छुडाकर भाग निकल गया। लेकिन स्त्री होने के कारण पत्नी तो भाग नहीं पायी। अनंताळ्वान ने उसे अपने उद्यान के चंपक पेड को लताओं से बाँध दिया और उसे डाँटने लगा - ''अच्छा तो आप दोनों ही कारण हैं - मेरे उद्यान के इस हालत की! आप कौन हो? देवता हो या मानव? राज दंपति लगते हो। आपकी शकल - सूरत देखें तो लग रहा है कि धनी परिवार के ही हो। लेकिन आप दोनों के चरित्र तो वैसे नहीं लगते! आपकी खुशामदी के लिए मेरा ही उद्यान मिला है क्या आपको! मेरे ही खुशबूदार फूल चाहिए था क्या आपको! कितना घोर अपचार है यह! साक्षात् श्री महाविष्णु दंपति की सेवा में समर्पित इन फूलों को इस तरह सूँघकर कुचल देने का हक किसने दिया आपको! कहाँ रहते हैं आप लोग? तुम्हारा पति जो अभी भाग गया - उसका नाम क्या है? लेकिन भाग - कहाँ और कैसे जायेगा? आखिर अपनी पत्नी याने कि तुमहारे लिये तो उसे आना ही पडेगा न?'' पकडी गई स्त्री गिडगिडाने लगी। 'पिताजी! मैं आपकी बेटी समान हूँ। मुझे छोड

दो। मैं अपने पति को बता ही रही थी कि इस तरह अन्यों के उद्यान में घुसना मना है। लेकिन उसने माना ही नहीं। और यह भी कहा कि सबसे बढ़िया उद्यान यही है। पति की बात सुननी ही है न। मेरे पति का नाम मैं कैसे बता पाऊँगी बोलो! यह तो हमारा संप्रदाय नहीं है न? पता नहीं मेरा पति अब कहाँ गया और कहाँ रहेगा! वह तो एक मायावी है। चोर है। इतनी आसानी से वह किसी के हाथ नही लगता है। हम दोनों की जोडी जब से बनी है, तब से मैं उसे देख ही रही हूँ न! बडा ही बदमाश है। पक्का चोर है। देखो! अब मुझे आपके हवाले छोडके भाग गया है न! मैं उम्मीद ही नही करूँगी कि वह वापस आकर मुझें ले जायेगा यहाँ से! पिताजी! मुझे छोड दीजिये न कृपा करके! मैं अपनी राह ढूँढ़ लूँगी।'' कहती हुई हाथ जोडकर प्रार्थना करने लगी। लेकिन अनंताळ्वान ने उसे नहीं छोडा।

उसे अच्छी तरह लताओं से पेड को बाँध देने के बाद उद्यान के बाहर जाकर उस पति के लिए देखा। वह पूरूष तो अभी भी उद्यान के बाहर ही छिपकर इधर उधर ताक रहा था कि अनंताळ्वान ने उसे देख ही लिया और उसके पीछे भी पडा। वह आदमी तो उद्यान से मंदिर की दक्षिण दशिा की वीथी में चल पडा और मंदिर की वामावर्त दिशा में घूमकर मंदिर के पास, पुष्करिणी, उत्तर वीथी, पश्िचम की वीथी में से होते हुए भाग भागकर फिर से अनंताळ्वान के उद्यान के परिसर में अंतर्निहित हो गया। अनंताचार्य भी उसके लिए ढूँढ़ ढूँढकर थक गया और उद्यान में पहुँच गया। पेड से बाँधी रखी युवती के पास आ गया। उसे देखते ही युवती चिल्लाने लगी ''पिताजी! मुझे छोड दिजिये न!'' लेकिन अनंताळ्वान ने उसकी एक न सुनी। सुबह की प्रतीक्षा में तनिक उसकी आँखें लग गयीं।

इतने में सुबह भी हो गयी। सुवर्ण द्वारों को खोलकर श्रीनिवास स्वामी को अर्चक स्वामियों ने जगाया। लेकिन स्वामी का वक्षःस्थल, श्री के बिना खाली है। अलमेल्मंगा की स्वर्ण प्रतिमा, स्वामी के हृदय पर ही रहती है सदा! वह आज स्वस्थान पर नही हैं। कहाँ चली गई? अर्चक स्वामी सब घबरा गये। इतने में स्वामी वेंकटेश ने कहा - 'हे अर्चक वर! इसमें कोई घबराने की बात नहीं है। अलमेल्मंगा अनंताळ्वान के उद्यान में बंदी है। आप सब जाओ और उसे गौरव से यहाँ लेकर आओ।''

झट अर्चक स्वामीयों, ने छत्र, चामर, मंगळ वाद्यों के साथ अनंताळ्वान के उद्यान को जाकर, भगवान के वक्तव्य को सुनाया - और कहा - ''हे अनंत! तुम कितने भाग्यवान हो! साक्षात् श्रीदेवी को ही अपने यहाँ बाँध दिया तू ने!'' अनंताळ्वान को तो अपना अपराध मालुम हुआ। अपने कपोलों पर आप थप्पड बांरबार मार लिया। माँ लक्ष्मी को सष्ठांग दंडवत प्रणाम किया और फूल भरे गमले में बिठाकर मंदिर पहुँचा। मंदिर में श्रीनिवास ने अनंताळ्वान से कहा - ''हे मेरे श्वसुर जी! तुम्हारी इस बेटी को गमले में बिठाकर मुझे सौंप रहे हो न! इसी लिए तुम कन्यादाता हो और मैं आपका दामाद हूँ।'' गमले में बैठी अलमेल्मंगा तत्क्षण श्रीनिवास जी के वक्षःस्थल सीमा पर जा बैठ गयी। भगवान वेंकटेश ने अनंताळ्वान को वस्त्र, चंदनादियों से पुरस्कृत किया।

उस दिव्य गाथा के स्मरण में आज भी माने हर साल कन्या मास के ब्रह्मोत्सवों के ध्वजावरोहण के बाद के दिन ''श्रीवारि बाग सवारि'' (भगवान का बगीचा - दर्शन) नामक उत्सव होता है। इसे ही ''पुरिशै तोट उत्सवम्'' भी कहते हैं। 'पुरिशै' का अर्थ है पुरुष! रामानुज जी द्वारा अनंताळ्वान को प्रदत्त उपाधि है वह! इस बाग सवारि उत्सव में अकेले

श्रीनिवास जी ही मंदिर की वामावर्त दिशा में परिक्रमा कर, अनंताळ्वान के उद्यान में आते हैं। तदनंतर भगवान की मूर्ति पर जो फूलमाला है, उसे उद्यान में अनंताळ्वान के वृन्दावन पर स्थित ''सुलतान चंपा'' वृक्ष को समर्पित कर शठारि से अर्चक छूते हैं। उद्यान के बाहर आकर शठारि (श्रीचरणों के चिन्हों वाला एक मुकुट सा पूजोपकरण जिसे पूजा अर्चना के बाद भक्तों के सरों पर अर्चक स्वामी रखते हैं) पर पवित्र जल छिडक कर, वापस मंदिर पहुँचते हैं उसी वामावर्त दिशा की परिक्रमा की पूर्ति करते हुए! अनंताळ्वान के उद्यान में, उनके वृन्दावन को छूकर जिस अर्चक स्वामी ने, उसे फूलमाला को अभी अभी समर्पित किया, वह, पुष्करिणी में स्नान कर, फिर से पवित्र हो, वेंकटेश की पूजादिकों में भाग लेता है।

आदि मास (कर्काटक मास), पूर्व फल्गुणी के दिन भी ''तिरुवाडि पुरम्'' नामक उत्सव भी होता है, जिसमें तिरुमलेश, अपनी दोनों देवेरियों के साथ मंदिर की दक्षिणावर्त परिक्रमा कर, उद्यान जाते हैं। वहाँ पूजादिकों के बाद पुष्प मालाएँ, अनंताळ्वान के वृन्दावन को समर्पित कर, शठारि से छूकर, बाकी उसी दक्षिणावर्त परिक्रमा की पूर्ति कर मंदिर में प्रवेश करते हैं। कहा जाता है कि इसी दिन अनंताळ्वान परम पद को प्राप्त हुए थे और उनके वृन्दावन से ही, ''सुलतान चंपा'' के वृक्ष के रूप में उन्होंने जन्म लिया! लेकिन आज ही का दिन गोदादेवी (आण्डाळ्) का भी जन्म दिन होना विशेषतया उल्लेखनीय है। पहले कहे संप्रदायानुसार अर्चक स्वामी पुष्करिणी स्नान के बाद, मंदिर में प्रवेश करते हैं।

अपने गुरु भगवद्रामानुज से, अनंताळ्वान 36 साल छोटे थे। ई.स. 1053 में इनका जन्म हुआ। कोई 84 साल जीवित रहकर, आखिर

तिरुमल में ही उनका स्वर्गवास हो गया। इस तरह कई सालों तक भगवान वेंकटेश की पुष्पांलकार सेवा में भाग लिये हुए धन्यात्मा - अनंताळ्वान भगवान वेंकटेश्वर जी से निरंतर बात चीत करते थे। इन दोनों के बीच क्या क्या मीठी बातें होती थीं कौन जानें?

अनंताळ्वान् ने जिस पुष्प - सेवा का शुभारंभ किया था, अभी भी वह, उसी नाम पर तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् द्वारा जारी है।

कलियुग वैकुंठ तिरुमल क्षेत्र में, श्री वेंकटेश्वर की मूल विराण्मूर्ति की, अनंताळ्वान ने अपने परमगुरु यामुनाचार्य के नाम पर 'यमुनोत्तरा' नामक ''पुष्प कैंकर्य सेवा'' का शुभांरभ किया था उसी नाम पर उपरोक्त सेवा अभी भी कायम है।

तिरुमल क्षेत्र में भगवान के मंदिर की नैऋति दिशा में, महा परिक्रमा के मार्ग में अनंताळ्वान के निवास को अभी भी हम देख सकते हैं। इस घर के सामने ही उस समय के बगीचे का परिसर भी है। दक्षिण की दिशा में जो वैकुण्ठम् क्यू समुदाय है, उसके पास ही एक बडा विशाल तालाब जो दिखाई देता है, उसे ही अनंताळ्वान अपनी पत्नी के साथ खोदा था। इस तालाब के पास जो भक्तों के लिए 'अल्पकालिक गृह समुदाय' है, उन्हें भी ''अनंताळ्वान टैंक काटेजेस'' कहते हैं। इस तालाब के पानी का भी, यात्रियों के लिए ही उपयोग किया जा रहा है।

अनंताळ्वान के घर की दीवारों पर, बगीचे के मंडप में भी, अनंताळ्वान, उनकी पत्नी, पुत्र एवं सेवकों की प्रतिमायें हैं। इनके अलावा, उस घर के पीछे एक कुएँ को भी हम देख सकते हैं जहाँ पर अनंताळ्वान अपने नित्यानुष्ठान किया करते थे।

अनंताळ्वान के घर के पीछे ही, उद्यान के अत्यंत समीप में उस भक्त शिखामणि की समाधि (वृन्दावन) देखी जा सकती है जिसमें से ही एक ''सुल्तान चंपा'' का वृक्ष उग आया था। अनंताळ्वान की तीव्र मनोवांछा थी कि अगले जन्म में भी इस तिरुमल क्षेत्र में ही कोई पेड, पहाड, पंछी था बाँबी बनके रह जायें। बडों का कहना है कि अनंताळ्वन की इच्छा का फल ही था वह ''सुल्तान चंपा'' का पेड! अर्चक स्वामियों का भी यही विश्वास था कि उस पेड के रूप में अनंताळ्वान ने फिर से यहीं पर जन्म लिया है। इसीलिए उसी पेड को पुष्पामाला कैंकर्य, शठारि संप्रदाय, का पालन, भक्तिपूर्वक किये जाते थे। इसी बीच वृन्दावन का वह ''सुलतान चंपा'' का वृक्ष, सूख गया है। उसके स्थान पर एक बरगद का पेड उग आया है जो आज वह एक महान वृक्ष हो गया है।

हर साल दो बार अभी भी तिरुमलेश अपने उस प्रिय शिष्य के यहाँ जाकर, प्रिय भाषण करके आते हैं। इसके अलावा किसी दिन, कभी कभार या ब्रह्मोत्सवों जैसे विशिष्ठ उत्सवों में मंदिर की महापरिक्रमा में, नैऋति दिशा में स्थित अनंताळ्वान के घर के सामने रुककर उनके परिवारवालों की आरती लेने के बाद ही उनकी शोभा यात्रा आगे बढ़ती है। इस कपूर आरती को लेने में ही भगवान तिरुमलेश का परमानंद है। आज भी अनंताळ्वान के परिवारवाले कपूर आरती कैंकर्य को उन्हें समर्पित करते हुए धन्य हो ही रहे हैं।

उस दिन अनंताळ्वान की कुदाली के कारण जो चोट लगी थी, उस पर कपूर का चिन्ह लगाकर उस घटना की याद जिस तरह तिरुमलेश हम सभियों को दिला रहे हैं, उसी तरह अनंताळ्वान की उस कुदाली को भी तिरुमल मंदिर के महाद्वार में 'पडिकावलि' द्वार के ऊपरी दीवार की

उत्तर दिशा में समुचित स्थान दिया गया है और उस कुदाली से संबंधित विवरण भी दिये गये हैं।

मात्र उद्यान में भगवान के लिए विविध फूलों के पौधों और वृक्षों की निगरानी ही नहीं, अनंताळ्वान ने संस्कृत तथा द्रविड (तमिल) सारस्वत सरस्वतियों को अपनी कविता मालाओं से अलंकृत भी किया।

''हैमोर्ध्वपुण्ड्रमजहन्मकुटं सुनासम्
मंदस्मितं मकरकुण्डलचारुगंडम्

बिंबाधरं बहुळदीर्घकृपाकटाक्षम्
श्री वेंकटेशमुखमात्मनि सन्निधत्ताम्''

''श्वेत ऊर्ध्व पुण्ड्र, मुकुट, सुंदर नासिका, सदा सर्वदा मंदस्मित वदन, बडे बडे नयनों में कृपा की कांति इन सबसे प्रकाशमान श्री वेंकटेश्वर स्वामी का मुखारविंद, हमेशा मेरे मन में बस जायें।''

इस तरह भूलोक वैकुंठ वासी, भुवन मोहन मूर्ति, एक मात्र पुकार से ही जवाब देनेवाले दयावान स्वामी वेंकटेश्वर की स्तुति, अनंताळ्वान के शब्दों में भक्ति की चरमसीमा का द्योतक है। तिरुमल मंदिर का इतिहास, यहाँ के उत्सवों की विशेषताएँ, सेवायें इत्यादियों का विवरण, अनंताळ्वान विरचित ''श्री वेंकटाचल इतिहास माला'' (गद्य रचना) में हमें मिलता है। (इस संस्कृत रचना को, श्रीमान एक.सी.वी. नरसिंहाचार्य ने तेलुगु में अनूदित किया जिसे ति.ति. देवस्थानम् ने कई बार प्रकाशित भी किया है।) इसी कारण, तिरुमल मंदिर के इतिहास से भगवद्रामानुज के प्रिय शिष्य - अनंताळ्वान की कहानी भी इतनी जुड गई है। अतएव अनंताळ्वान भी चिरजीवी तथा चिर स्मरणीय वैष्णव भक्तशिखामणि हैं।

अनंताळ्वान जब तिरुमल पर ''पुष्प माला कैंकर्य'' की सेवा कर रहे थे, उस समय भगवद्रामानुज भी घुटनों से तिरुमल पूर्वत को चढ़कर, श्रीनिवास भगवान के दिव्य दर्शन भी किये थे। उस समय पर, अपना प्रिय शिष्य अनंताळ्वान की भक्ति और दृढ़ दीक्षा को देखकर वे चकित भी हो गये थे। अनंताळ्वान की खूब प्रशंसा भी उन्होंने की। अनंताळ्वान की इच्छा के प्रकार, अपनी ही प्रतिमा का आलिंगन कर, अपने प्रतीक के रूप में उन्होंने दे दिया। बाद में अनंताळ्वान ने इसी प्रतिमा को, तिरुमलेश के मंदिर में ही विमान परिक्रमा के मार्ग में हुंडी के सामने दक्षिण दिशा की ओर मुँह करते हुए प्रतिष्ठित किया! इतना ही नहीं, भगवद्रामानुज के चरणों के चिन्होंवाली शठारी को अनंताचार्य ने अपना ही नाम 'अनंतार्य' रखा। अनंताळ्वान के उद्यान का नाम भी 'रामानुज नंदनवन' है। इससे अनंताळ्वान की गहरी गुरु भक्ति का आभास हमें मिलता है।

'श्री रामानुज चतुश्श्लोकी' 'श्री गोदा चतुश्श्लोकी' नामक संस्कृत रचनाएँ भी अनंताळ्वन के ही हैं।

विमान परिक्रमा में पुनः हम भगवद्रामानुज की तिरुमल सेवा के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त करेंगे।

अब एक प्रश्न हमारे मन में अवश्य उठेगा कि अपने तीव्र भक्त्यावेश से, अविश्रांत सेवा से भगवान को अपने अधीन किए हुए कुरुवनंबि, तिरुमलनंबी, अनंताळ्वान, आदि अनेकों भक्त क्या महान हैं या इन सभी भक्तों के साथ बात करते, गाते, खेलते हुए, तद्वारा अपनी भक्त - पराधीनता को व्यक्त कर खुश हो रहे भगवान महान हैं? क्या पता और किसको पता? जो भी हो, लीलाविनोद प्रेमी श्री वेंकटेश्वर की महिमाओं के बारे में मालुम करना किसको साध्य है? इसी

लिए ''पद कविता पितामह'' अन्नमाचार्य ने भगवान श्रीनिवास जी की महिमाओं की स्तुति कुछ तरह की।

तू है कैसा, तेरी महिमा है कैसी
जानेंगे हम कैसे ओ स्वामी!
शिवजी और ब्रह्मा भी जानें नहीं
हम मानव कैसे जानेंगे?

दादा जब पुकारे तुम तिरुमल नंबी को
बडप्पन आपका ज्ञात हुआ हमें
कुरुवरति नंबि के माटी को फूलों को
स्वीकारने में प्यार आपका ज्ञात हुआ हमें
अनंताळु के तालाब के काम में
आपकी चतुराई है, माटी को ढोने में
गरुडगंभ के सामने, लेते हो सिक्कों को
श्रीनिवास स्वामी तुम देते वरदानों को
दी तू ने संपदा तोंडमान राजा को
तभी तेरी अनुकंपा मालुम हुई हम सबको
(येटुवंटिवाडवो - तेलुगु मूल)

कुछ इस तरह अन्नमय्या ने अपने उक्त गीत में तिरुमलेश की भक्त प्रियता को सराहा। उनके पक्षपात की तारीफ की। सिक्कों के बदले वरदानों को देने की अनुकंपा की बखान की। उनकी लीलाओं को तो तीन आँखों वाले शिवजी भी नहीं जानते हैं। चार मुखों वाले ब्रह्माजी भी वर्णन नहीं कर सकते हैं। तो फिर सामन्य मनुष्य हम कैसे जान सकेंगे?

गोविंद

किसी भी नाम से पुकारें, सप्तगिरीश तो जवाब देंगे ही। लेकिन गोविन्द के नाम से पुकारेंगे तो उन्हें बेहद खुशी मिलती है। गोविन्द नाम लेने से शायद - द्वापर युग में अपने दोस्तों के साथ जो घडियाँ बितायीं, उनकी याद उन्हें आ जाती है। तब वे अपने आप में खो जाते हैं। गोविन्द नाम ही उन्हें सबसे प्यारा है क्योंकि उनके विचार में, अनन्त युगों के अपने सारे अवतारों में, अपनी सारी उपलब्धियों में चरवाहें का पद ही अत्युत्वम है। गोविन्द की पुकार में उस पागल गोपाल को वेदनादों से भी बढ़कर द्वापर कालीन बाँसुरी का मीठापन ही सुनाई देता है और वे परमानंद में डूब जाते हैं। इस पुकार में सुनाई देनेवाले गायों और उनके बछडों के रुचिर अंबारव ही, उनके कर्णामृत हैं। यहाँ वहाँ, इधर उधर भागनेवाली यमुना के तरंगों की याद आती है। उन तरंगों में तैरनेवाले अल्हड दोस्तों की याद आ जाती है। यमुना नदी के तीरों पर के हरे मैदान, उनमें घास खाती हुई गायों के झुंड - इन सबकी मजेदार यादें, उनके लिए बहुत प्यारे हैं। गोविन्द नाम से पुकारें तो वृन्दावन में उस यमुना नदी के तीरों पर, पेडों की छाँव में अपने प्यारे दोस्तों के साथ, बासी खाने के कौरों के लिए आप, लालायित होने, की याद आती है। उन अचारों की याद आती है। मुँह भर रखकर जी भर खाने वाले मक्खन के कौरों की याद आ जाती है। वत्सासुर, बकासुर, शकटासुर, धेनुकासुरादि राक्षसों को मारना, कालिंग जैसे विष नाग की अहंता को मिटाकर, वृन्दावन वासियों की रक्षा करना इन सब घटनाओं की याद आते ही, इस घोर कलियुग के भक्तों की भी रक्षा करने के लिए श्री

वेंकटेश्वर जी सन्नद्ध हो जाते हैं। इसी लिए परम भक्त अन्नमाचार्य ने पग पग पर चौकन्ना किया!

''भाव में और बाहर में, रे मन, पूजो,
गोविन्द गोविन्द कहकर, स्वामी को''

कहते हैं।

अनन्त युगों में अनन्त अवतारों को लेने पर भी उन सभियों में द्वापर युग का ग्वाला - कृष्ण कन्हैया का सीधा सादा अवतार ही आज भी उन्हें अच्छा लग रहा है। गोविंद के रूप में सामान्य मानवों में एक होकर उन पर दया बरसाने के गुण को इस कलियुग में भी दोहराते हुए श्री वेंकटेश्वर जी, उन दिनों की गो - ग्वालाओं की रक्षा की तरह ही हम सब की रक्षा कर रहे हैं। हमारी सारी मनोवांछाओं को पूर्ति कर रहे हैं। तो फिर तिरुमलेश के अत्यंत प्रिय नाम को एक बार फिर से लेंगे।

इस वेंकटाद्रि पर हमें दर्शन दे रहे, तिरुमल के गोविंद, उन दिनों की आदतों तथा आचार व्यवहारों का अभी भी - तिरुमल के मंदिर में अनुसरण कर रहे हैं।

हर रोज सुप्रभात समय में गायों का दूध पीते हैं। ताजा मक्खन खाना तो हर रोज की बात है। मलई के साथ दही का अन्न, त्यार से, आतुरता से, पेट भर खाते हैं। इतना ही नहीं। गोकुल में ग्वालाओं के बीच जो सच्चे आनंद का अनुभव था उसे ''जन्मांतर संबंध'' मानते हुए, ब्रह्मादि देवताओं को भी अलभ्य, कम से कम कल्पना में भी नहीं आनेवाले अवसर को, अपने दिव्य दर्शन भाग्य को, अपनी दिव्य मंगल मूर्ति को सबसे पहले देखने का भाग्य, एक अनपढ़ भक्त को वे प्रदान

कर रहे हैं। आज भी, हर दिन सुबह, सब से पहले, एक ग्वाला ही भगवान वेंकटेश के यहाँ पहुँचता है, उनके सर्वप्रथम पावन दर्शन के लिए! उस अकेले को ही नहीं। उसकी संतति को भी इस युग के अंत तक - उसके परविार का यह वंशगत अधिकार रहेगा। आखिर यह भक्त कौन है? किस युग का है? यह सब सुनने के पहले, एक बार गोविन्द का नाम लें।

गोविन्द गोविन्द गोविन्द!

पहला - दर्शन

तिरुमल क्षेत्र पर, हर दिन बह्म मुहूर्त में सुप्रभात सेवा के पहले भगवान वेंकटेश के अर्चक स्वामी, सप्रभात का पाठ करनेवाले पंडित, आचार्यवर, स्वामी को जगाने के गीत गानेवाले अन्नमाचार्य के वंशज, मंदिर के अधिकारी, सेवक - सब लोग बालाजी के स्वर्ण द्वार के सामने खडे रहते हैं। इतने में 'सन्निधि गोल्ला'' नाम से जाना जानेवाला एक यादव वंशज, सोने के द्वारों का ताला खोलता है। द्वार को थोडा सा खोलकर गर्भालय में प्रवेश करता है। उसके पीछे पीछे अर्चक स्वामी और सेवक भी प्रवेश करते हैं। तुरंत स्वर्ण द्वारों को बंद कर देते हैं। सप्रभात का पाठन प्रारंभ होता है। इतने में सबसे पहले अंदर आया हुआ ग्वाला, तिरुमलेश का दर्शन कर लेता है। यह रिवाज बहुत सारे सालों से, हर दिन जारी है। हर दिन भगवान के पवित्र दर्शन का वरदान, जिस ग्वाला को मिलता है, वह उसी ग्वाला के परिवार का है जिसने श्रीवैकुंठ से वेंकटेश जी के रूप में यहाँ स्वयं आने के पहले दिनों में इस स्वामी का सर्वप्रथम दर्शन किया था। (उसे ही सन्निधि गोल्ला कहा जाता है।) उसके भाग्य का क्या कहने? उसी की संतति, आज भी भगवान वेंकटेश

जी के सर्वप्रथम दर्शन को पा रही है। उन दिनों इस ग्वाला ने किस तरह भगवान का सर्वप्रथम दर्शन किया होगा?

बाँबी में भगवान

श्री महाविष्णु के लिए अत्यंत प्रीतिकर दिव्य स्थल दो ही हैं। पहला है श्रीवैकुंठ। दूसरा है भूलोक वैकुंठ - तिरुमल।

'दिव्य प्रशांत धाम' परम पद श्रीवैकुंठ में श्री देवी और भूदेवीयों की सेवाओ - को स्वीकारते हुए, अपने दरबार में बिराजमान श्रियःपति, श्रीमन्नारायण का, दिव्य दर्शन वहाँ पर जा सकनेवाले ब्रह्मादि देवताएँ, सनक सनंदनादि महर्षिगण नारदादि देवर्षिगणों को ही मिलता है।

दूसरा स्थान है - कलियुग वैकुंठ यह तिरुमल क्षेत्र। यहाँ पर भी श्रीनिवास स्वामी, अपने संकल्प के अनुसार, यहाँ, इस तिरुमल पर - लीला - मानुष वेष धारी बनकर, तपोनिधियों तथा देवताओं को ही दर्शनीय होते थे। अदृश्यमान भी रहते थे। इसका तात्पर्य है कि श्री वैकुंठ जितना प्राचीन है, जितना महिमान्वित स्थल है, उतना ही परम पवित्र तथा प्राचीन है यह तिरुमल क्षेत्र!

उसी समय, भृगु आदि महर्षि गण एक याग - कर रहे थे। उनका संदेह था कि याग का फल किसको दिया जायें? कौन सा देवता इसके लिए योग्य है? आखिर - भृगुऋषि, इस काम पर लग जाते हैं। पहले बह्मदेवता के पास, बाद में शिव के पास जाते हैं लेकिन उन्हें नहीं लगता कि ये दोनों इसके योग्य हैं। आखिर श्रीवैकुंठ जाकर महाविष्णु से वे बात करना चाहते हैं। लेकिन भगवान विष्णु अपनी प्रिय पत्नी लक्ष्मी के साथ प्रेमालाप में निमग्न हो, महर्षि के आगमन की ओर ध्यान नहीं देते हैं।

भृगु अत्यंत कृद्ध हो गये। श्रीनिवास के वक्षःस्थल पर - विवेक शून्य होकर, उन्होंने एक लात मारी। इतना महान - पाप करने पर भी - भगवान श्रीनिवास उनसे नाराज ही नहीं हुए। तिस पर उस महर्षि से अनुनय विनय कर क्षमा प्रार्थना भी उन्होंने की। भृगु को लगा कि अपने याग का फल स्वीकारने, भगवान विष्णु ही सबसे योग्य देवता हैं।

अपने पति के इस व्यवहार से लक्ष्मी देवी महाविष्णु पर रूठ गयीं। भृगु ने जहाँ लात मारी वह तो लक्ष्मी का निवास स्थान है। इतना पवित्र है श्रीनिवास का वक्षःस्थल! पत्नी के स्थान को अपवित्र किये हुए मुनि पर आग बबूला होने के बजाय, सम्मान सत्कार कर भेजना, लक्ष्मीदेवी को अच्छा नहीं लगा। इसी लिए भगवान श्रीनिवास से रुठकर, लक्ष्मीदेवी भूलोक आकर कोल्हापुर में बस गयीं। वैकुंठ - लक्ष्मी देवी के बिना कलाविहीन व शून्य हो गया! अपनी प्रिय पत्नी को ढूँढ़ते हुए भगवान विष्णु भी भूलोक पर आ पहुँचे। कितना भी ढूँढने पर भी, महालक्ष्मी उन्हें नहीं मिली। महाविष्णु थक गये। यहाँ वेंकटाचल पर्वत पर पुष्करिणी की दक्षिण दिशा में जो एक इमली का पेड था, उसके नीचे बडी सी बाँबी में उन्होंने आराम ली। लेकिन भूख - प्यास से पीडित हो गये। महाविष्णु की इस दशा को देखकर चिंतित ब्रह्मा और शिव जी ने कोल्हापुर में निवास कर रही लक्ष्मी देवी को विष्णु के बारे में बताया। लेकिन लक्ष्मी देवी मानी ही नहीं। आखिर वे दोनों, कम से कम विष्णु की क्षुद्बाधा को दूर कराने में सहायता देने तक लक्ष्मी जी को राजी कर सके।

ब्रह्मा जी गोमाता बन गये और शिव जी उनका बछडा! लक्ष्मी देवी गोप वनिता के रूप में उनके साथ आयीं। तीनों वेंकटाचल के पहाडों में पहुँच गये। उन दिनों वहाँ पर एक चोळ राजा, शासन करता था। गोप

वनिता (लक्ष्मी) ने अपनी गाय और बछडे के साथ उनके पास जाकर, कहा कि ऐसे असाधारण दैवांश वाली गाय आपके दरबार में हों तो वैभव अपने आप आ जाते हैं। गाय और बछडा - दोनों को, राजा को बेचकर लक्ष्मी चली गयी। हर दिन राजा का ग्वाला अपनी अन्य गायों के साथ इस नयी गाय और उसके बछडे को पहाड पर चराने ले गया।

पहाड में चरने गयी नयी गाय, ग्वाला की आँख चुराकर, महाविष्णु को खोजने चली गयी। बाँबी में स्थित विष्णु जी को पहचान कर बाँबी के छेदों द्वारा अपनी क्षीर धाराओं को बहाकर, विष्णु की भूख को उसने मिटायी। फिर से वापस आकर झुंड में मिल कर राजा की गोशाला पहुँच गयी। हर दिन इसी तरह करने लगी। एक दिन महारानी को लगा कि इस नयी गाय में कुछ विशिष्ठ दैव - शक्ति है। क्यों न इसका दूध अपने बेटे को पिलायें? गवाला को बुलाकर उसने आज्ञा दी कि इस गाय का दूध उसे आज चाहिए। ग्वाला ने रानी की आज्ञा का पालन करने, गाय के पास गया। लेकिन गाय ने दूध नही दी। रानी नाराज हो गयी। राजा से उसने शिकायत की। दो तीन दिन तक ऐसा ही हुआ। आखिर राजा को संदेह हुआ कि शायद ग्वाला ही इस गोमाता के दूध को पी जा रहा होगा। ग्वाला दरबार में बुलाया गया। खूब डाँट, डपट के बाद खंभे को बाँध कर चाबुक से खूब मारा भी गया।

वह ग्वाला तो कुछ नहीं जानता था। रोते बिलखते हुए उसने कहा - 'महाराज! मुझे मालुम नहीं, आखिर यह गाय दूध क्यों नहीं दे रही है। आज से मैं इस पर कडी नजर रखूँगा और आपको बताऊँगा कि आखिर दूध कहाँ जा रहा है?' चोळ राजा ने उसे एक दिन का समय दिया। किसी

भी तरह दूध दिलाना है या कारण बताना है। नहीं तो उसे प्राण गवा देना ही होगा।

अगले दिन, ग्वाला, गायों को लेकर पहाड पर चला गया। नयी गाय को गौर से देखता हुआ सोच में पड गया। ''यह गाय तो बहुत सुंदर है। साधु स्वभाव की भी लगती है। इसकी कांति से लगता है कि यह स्वर्ण लोक की गाय है। लेकिन एक बूँद तक दूध नहीं दे रही है! इस राज को छेदना ही होगा! अरी मायी! मुझ पर तरस खा! आज तो दूध तुझे देना ही पडेगा। नहीं तो मेरे प्राण पखेरु उड जायेंगे मायी! तुझे लाख लाख सलाम!'' वह इस तरह सोच में डूब गया कि नयी गाय, झुंड को छोडकर दूर जाती हुई नजर आयी। ग्वाला झट अपना कंबल और कुल्हाडी को लेकर उसका पीछा किया।

गाय तो हर दिन की तरह, उतार चढाव के बाद, पुष्करिणी के पास इमली के पेड के नीचे बाँबी पर चढ़कर छेदों में दूध की धाराओं को बहाने लगी। उसका पीछा कर रहा ग्वाला, उसकी इस चर्या को देखकर अचरज में पड गया। 'अरे भाई! यह तो कितनी अजीब बात है। गाय का यहाँ सीधे आना, बाँबी में अपना दूध, मुफ्त में छोडना! यह तो कहीं देखा नहीं और सुना भी नहीं। आखिर इस बाँबी में कौन है? कोई महान ऋषि है क्या? ये ऋषि और मुनि भी, बुजुर्ग कहा करते हैं कि इसी तरह लोगों की नजरों से बचते हुए बाँबियों में बैठकर तपस्या करते रहते हैं। खैर जो भी हो! मुझे क्या! आज तो राजा को जवाब देना ही होगा! मेरे सर पर मौत तो मँडरा रही है न! आज तो इसे छोड़ूँगा नही!' ग्वाला इस तरह सोचता हुआ, कुल्हाडी को उठाकर गाय पर वार करने जा ही रहा था कि गाय इसकी आहट से डरकर दूर भाग निकली। गाय की घबराहर

को पहचानकर, बाँबी में बैठे हुए भगवान विष्णु उठ खडे हो ही रहे थे कि कुल्हाडी की मार उनके माथे पर आ पडी। खूब खून निकल पडा। बहते हुए खून को पोंछ लेते हुए महा विष्णु ने ग्वाला को डाँटा - ''अरे मूर्ख! दूध पिलाती हुई मेरी रक्षा कर रही गोमाता को तूने कुल्हाडी से मारना चाहा क्यों!'' ग्वाला तो इस परिणाम पर दंग रह गया। बाँबी! बाँबी में से कोई स्वामी! स्वामी को अपने कारण चोट! चोट से खून! तिस पर डाँटें! - 'अरे बाबा खून! कितना खून! मुझे क्षमा करो भगवान! गलती हो गयी। मुझे क्षमा करो!' चिल्लाता हुआ वह ग्वाला महाविष्णु की आँखों में देखते देखते नीचे गिर पडा और उसके प्राण - पखेरु उड गये।

उधर गोमाता, दौडती चिल्लाती महाराजा के पास चली गयी। उसकी स्थिति को देखकर राजा घबरा गया। दैवी गोमाता के साथ साथ, वहाँ चला गया जहाँ ग्वाला, भगवान का प्यारा हो गया था। गाय के रंभाने को सुनकर बाँबी में से महाविष्णु भी बाहर आ गये और उन्होंने राजा पर चिल्लाया - ''अरे ओ पापी! तुमने बडा ही घोर काम किया। उसका फल तो तुझे भोगना ही पडेगा।'' राजा बहुत डर गया और कहा - 'हे देव! मुझे कुछ भी मालुम नहीं है।' भगवान का जवाब था - ''गोमाता के क्षीर के लिए तुम, मासूम ग्वाले को चाबुक से मारा। तिस पर मरण दण्ड भी दिया। इन सबों के कारण, ग्वाला आज गाय को कुल्हाडी से मारने जा रहा था कि मैं ने उसे रोक दिया। चोट तो मुझे लगी। राज्य में जो भी पाप करेगा उसकी जिम्मेदारी राजा की ही होती है। इसलिए दण्ड तुझे ही भोगना होगा। इस क्षण से तुम पिशाच बन जाओगे।'' चोळ राजा, डर के मारे पानी पानी हो गया और कहा - 'हे देव! आपके दर्शन मात्र से

समस्त पाप मिट जाते हैं न? ऐसे में तुम ही कैसे श्राप दे रहे हो? मुझ पर दया करो!' आँसूँ बहाते हुए वह भगवान के चरणों पर गिर कर गिडगिडाने लगा! भगवान तो भक्तों के लिए कल्पवृक्ष समान हैं। इसीलिए उस राजा पर तरस खाकर तुरंत उन्होंने कहा - 'कुछ ही दिनों में आकाश राजा अपनी प्रिय पुत्री पद्मावती का परिणय मुझ से करवायेगा उस समय दामाद होने के नाते, मुझे एक सुवर्ण का मुकुट प्रदान करेगा। उसे मेरे धरने के तुरंत बाद ही तुम अपना स्वस्वरूप धारण करोगे!' चोळराजा भी पिशाच का रूप धरकर चला गया।

ग्वाला जो मर गया, उसके परिवार वाले आकर शोक मना रहे थे। उनसे स्वामी ने कहा - ''इस भूलोक में सर्वप्रथम मुझे देखने का महान भाग्य इसे मिला है। इसीलिए आज से इस कलियुग के अंत तक, हर दिन मुझे सर्वप्रथम देखने का अवसर, इस ग्वाले की संतति को ही मैं - प्रदान कर रहा हूँ।'' हाँ! उस दिन से आज तक भी उसी ग्वाले के परिवार वालों को ही हर दिन भगवान वेंकटेश के सर्वप्रथम दर्शन का सौभाग्य मिल रहा है तथा आगे भी मिलता रहेगा।

वेंकटाचल क्षेत्र में बाँबी के छेद में से स्वामी वेंकटेश को दुग्ध धाराओं को देकर उनकी भूख - प्यास को मिटानेवाली गोमाता का नाम, ''श्रीवारि कैंकर्य रत्नावली'' के अनुसार 'गौतमी' धेनु थी। इसी कारण तिरुमल में भी सुप्रभात वेला में जागते ही स्वामी तिरुमलेश को, पहले गोदुग्ध को ही समर्पित करते हैं। गोमाता के रूप में आये हुए ब्रह्म देवता को भी, हर दिन ब्रह्म मुहूर्त में स्वर्ण द्‌वारों को खोलने के पहले ही अपनी सेवा कर लेने का महद्‌भाग्य भी भगवान वेंकटेश ने उन्हें प्रदान किया।

इसी तरह, गाय के बछडे के रूप में आये हुए शिव जी को 'तिरुमल क्षेत्र के पालकत्व' से गौरवान्वित भी किया।

हर दिन सुप्रभात वेला में प्रप्रथम दर्शन पाने के महदवसर के साथ, ब्रह्माण्ड नायक के सुनहरे द्वार पर अन्य अनेक सेवाओं में, उस धन्य ग्वाले के परिवार का व्यक्ति भाग ले ही रहा है जिसे 'सन्निधि गोल्ला' के नाम से संबोधित करते हैं।

उसकी उन सेवाओं को जानने के पहले, सामान्य ग्वालाओं से लेकर ब्रह्मादि देवताओं की सेवाओं एवं प्रार्थनाओं को भी स्वीकारनेवाले स्वामी वेंकटेश जी का जय जयकार हम कर लेंगे।

गोविन्द गोविन्द गोविन्दा!

सन्निधिगोल्ला

''सन्निधि गोल्ला'' नामक यह यादव हर दिन ब्राह्म मुहूर्त में (बडे सवेरे 2.30 का समय) नींद से जाग जाता है। स्नान, शौचादि के बाद ऊर्ध्व पुण्ड धारण कर, गोविन्द का नाम - स्मरण करता हुआ, हाथ में छोटी सी मशाल लेकर (जिसे 'पौंजु' भी कहते हैं) उत्तर माड वीथी की ओर निकल पडता है जहाँ वैखानस अर्चक स्वामियों के निवास गृह रहते हैं। (उस प्रांत को 'तिरुमाळिगा' कहा जाता है।) वेंकटेश्वर स्वामी के नित्य कैंकर्य तथा सेवा कार्यक्रमों में निरंतर मग्न उन स्वामियों को भक्तिपूर्वक नमन कर उन्हें प्रभात सेवा के लिए मंदिर आने का आग्रह करता है।

भगवान के अर्चक स्वामी

भगवान के अर्चक स्वामी भी उस समय तक शौच स्नानादियों के बाद, ऊर्ध्वपुण्ड्रों का धारण कर सन्निधि गोल्ला के साथ तिरुमलेश

स्वामी के मंदिर की तरफ चल पडते हैं। मौन मुद्रा में गोविन्द का नाम - स्मरण करते हुए, मंदिर की चाबियों के साथ, एक बडी कुदाली जैसे औजार को भुजा पर लेकर सन्निधि गोल्ला का, वे अनुसरण करते हैं।

ब्रह्म मुहूर्त की उस पुनीत वेला में, भगवान वेंकटेश जी की सेवा के लिए निकले हुए उन अर्चक स्वामियों की राह को अशुचि तथा अपवित्राता सें बचाने के उद्देश्य से, सन्निधि गोल्ला, मार्ग में सबसे आगे चलते हुए उस मार्ग पर चलनेवाली आम जनता को ''भगवान वेंकटेश जी के सेवक आ रहे हैं। सावधान! सावधान!'' जैसे नारों से सतर्क करता है। मशाल की कांतियों के बीच अर्चक स्वामियों को मंदिर ले जाता है।

ये वैखानस अर्चक स्वामी, मार्ग में भूवराह स्वामी के मंदिर के शिखर को भक्तिपूर्वक मन में ही आत्म - परिक्रमा से वंदन समर्पित कर, सन्निधि गोल्ला के साथ भगवान वेंकटेश्वर के आनंद निलय के महाद्वार (पडि कावलि) के यहाँ पहुँच जाते हैं। यहाँ पर सामने सीढियों पर दक्षिण की दिशा के भवन की पहली मंजिल पर ''नौबत खाना'' (नगाडा मंडप) में स्थित बडी सी काँसे की घंटा को जोर से बजाते हैं ताकि अपने आगमन की सूचना सब लोगों को मिल जायें! उस घंटानाद से महाद्वार के दरवाजे खोले जाते हैं। मंदिर के कर्मचारी अर्चक स्वामियों के मार्ग से हट जाते हैं। मंत्रोच्चारण के बीच सन्निधि गोल्ला, अर्चक स्वामी आदि मंदिर में प्रवेश कर, 'ध्वज स्तंभ' एवं क्षेत्र पालक शिला (रुद्र) का, अपने हाथों की कुदाली तथा चबियों की गुत्थी से स्पर्श करते हैं। साष्टांग दंडवत प्रणाम विनम्रता पूर्वक करने के बाद परिक्रमा के मार्ग में रजत द्वार को पारकर स्वर्णद्वार तक पहुँच जाते हैं।

जिय्यंगार

उन अर्चक स्वामियों को स्वर्ण द्वार के पास छोडकर सन्निधि गोल्ला मंदिर के आगे, बेडी आंजनेय स्वामी के मंदिर के सामने स्थित 'बडे जिय्यंगार मठ' में पहुँच जाता है। तब तक स्नानादियों के बाद अनुष्ठानादियों को पूरा कर ऊर्ध्व पुण्ड्रों के साथ, स्वामी वेंकटेश की सेवा में हाजिर होने तैय्यार जियंगार जी एवं उनका सेवक 'एकांगी' को, मंदिर में आने का निमंत्रण देता है। जिय्यंगार स्वामी भी एकंगी के साथ मंदिर के स्वर्ण द्वार तक पहुँच जाते हैं।

पेष्कार

तब तक आनंद निलय मंदिर के पेष्कार (मंदिर का आधिकारी) भी स्वार्ण द्‌वार तक पहुँच जाते हैं।

सुप्रभातस्तोत्र का पाठन

उस समय तक सुप्रभात स्तोत्र पढनेवाले तीन या चार अर्चक स्वामी भी शुचि स्नात होकर भक्ति पूर्वक स्वर्ण द्वार पर पहुँच जाते हैं।

सुप्रभात के गायक

पद कविता पितामह उपाधि से पुरस्कृत अन्नमाचार्य जी (भगवान वेंकटेश्वर के अति निकट भक्त) के वंशज, एकतारा के साथ - सुप्रभात गीत गाने के लिए स्वर्ण द्वार पर सन्नद्ध होते हैं।

भक्त

सुप्रभात सेवा के लिए निर्धारित शुल्क भरे हुए भक्त, वैकुण्ठम क्‌यू समुदाय से मंदिर में प्रवेश करते हैं। सुवर्ण द्‌वार की दक्षिण दिशा की ओर पुरुष तथा उत्तर दिशा की ओर स्त्रियाँ कतारों में खडे होते हैं।

स्वर्णद्वार की चाबी

अर्चक स्वामी, जिय्यर स्वामी, मंदिर के अधिकारी ताळ्ळपाका के वंशज, सन्निधि गोल्ला, तथा सुप्रभात सेवा में भाग लेने आये हुए भक्त जन - ये सब लोग, स्वर्ण द्वार पर आतुरता से खडे हैं।

सबसे पहले, अर्चक गण अपने साथ लायी गई कुदाली को, द्वार के छेद में से अंदर कर, नेकीदारी से अंदर की अगडी को खोलते हैं। इस तरह, इस खास औजार से, रात में मंदिर के स्वर्ण द्वार के अंदर वाली अगडी को डालना तथा सुबह सुप्रभात वेला में बाहर से ही उसे खोलने की यह उनकी वंशानुगत विद्या है। इसके बाद द्वार के बीच के बडे से ताले को भी अपने पास की चाबियों से वे खोलते हैं।

इसके बाद पेष्कार (मंदिर का अधिकारी) से 'सन्निधि गोल्ला' वह छोटी सी मोहर लगायी गई थैली को ले लेता है जिसमें द्वार के बाकी तीन तालों की चाबियाँ रखी हुई हैं। उस थैली की मोहर की जाँच पडताल होती है कि कल रात के अर्चक स्वामियों ने द्वार की चाबियों को इस थैली में सुरक्षित रख, मोहर लगाकर पेष्कार जी को सौपा है कि नहीं। इसके निर्धारण के बाद ही सन्निधि गोल्ला, अर्चक स्वामी, जिय्यंगार तथा मंदिर के अधिकारियों के सामने स्वर्ण द्वार को चाबियों से खोलता हैं। इन तीनों में, एक के न होने पर भी, सुवर्ण द्वार को बंद करना या खोलना नहीं होता है।

स्वर्णिम द्वारों के तीनों तालों को खोल देने के बाद 'सन्निधि गोल्ला' अपने साथ लाई हुई छोटी सी मशाल को लेकर स्वर्ण द्वार के दरवाजे को थोडा सा खोलता है, तथा पहले स्वयं आनंद निलय में प्रवेश

करता है। उसके तुरंत बाद अर्चक स्वामी भी ‘कौसल्या सुप्रजा रामा’ आदि सुप्रभात श्लोकों का पाठ करते हुए अंदर प्रवेश करते हैं। बाद में जिय्यंगार स्वामी या उनका सेवाक एकांगी, महंतु के पास आता है। उनके द्वारा लाये गये गौदुग्ध, चीनी, मक्खन, तांबूल आदियों की थाली को लेकर गर्भालय में प्रवेश करता है अर्चक स्वामी और स्वर्ण द्वार के यहाँ खडे हुए वेद पंडित सब मिलकर सुप्रभात स्तोत्र का समवेत पाठ करते हैं। उसी समय पर, स्वर्ण द्वार के यहाँ खडे ताळ्ळपाका के वंशज भी अन्नमय्या रचित सुप्रभात गीतों का आलाप करते हैं।

सन्निधि गोल्ला, अर्चक स्वामी और एकांगी - इन तीनों के अंदर जाने के बाद स्वर्ण द्वार के दरवाजे बंद किये जाते हैं। अंदर सन्निधि गोल्ला अपने हाथ की मशाल की कांति में अर्चकों को गर्भालय में विद्यमान भगवान वेंकटेश्वर स्वामी के सामने ले जाता है। अर्चक गण, श्री राम जी के महल के तालों को भी खोलकर, शयन मंडप में शय्या पर लेटे हुए भोग श्रीनिवास मूर्ति की परिक्रमा कर श्री वेंकटेश जी की मूल विराट् मूर्ति तक पहुँच जाते हैं।

अपने हाथ में जो छोटी सी मशाल है, उसकी, कांतियों में सन्निधि गोल्ला ‘कुलशेखर पडी’ के पास मात्र खडे होकर, आनंद निलय में असाधारण कांतियों में प्रकाशमान तिरुमल गोविन्द जी का प्रप्रथम दर्शन मन भर कर लेता है। एकांगी, वहाँ, सन्निधि गोल्ला के हाथों की मशाल को लेकर गर्भालय में प्रवेश करता है और वहाँ के दीपों को मशाल से प्रज्जवलित कर, पुनः मशाल सन्निधि गोल्ला के हाथों में पकडा देता है। तब वह, कुलशेखर पडी से लेकर स्वर्ण द्वार तक के बाकी सभी दीपों की अपनी मशाल से ही प्रज्जवलित करता है।

दीपों को प्रज्जलित करने के बाद अर्चक गण, श्री वेंकटेश्वर स्वामी की मूल विराट मूर्ति के पास जाकर, स्वामी के चरण कमलों को भक्ति पूर्वक, सर झुकाकर छूते हुए नमस्कार करते हैं। फिर से 'शयन मंडप' में शय्या पर लेटे हुए भोग श्रीनिवास मूर्ति के पास जाकर उन्हें भी प्रणाम करते हैं और दोनों हाथों से तालियाँ बजाते हुए, नींद से जाग जाने की प्रार्थना करते हैं। भोग श्रीनिवास मूर्ति की प्रतिमा को मूल विराट स्वामी के चरणों के पास (जीव स्थान) प्रतिष्ठित करते हैं। बाद में अर्चकों द्वारा चरण सेवा एवं आरती भी संपन्न होती हैं। तदनंतर भगवान वेंकटेश जी की सन्निधि में रखनेवाले आभूषण, स्वर्ण तथा रजत से बने सेवा के उपकरण इत्यादियों का निरीक्षण किया जाता है जिसे 'साबूत' कहते हैं।

क्षीरनिवेदन

फिर अर्चक स्वामी आनंद निलय के 'कुलशेख पडी' के यहाँ परदा डालकर मूल विराट स्वामी को दंत धावन, जिह्वा लेखन (जीभ को साफ करना) आचमन, अनुष्ठानादि क्रियाओं को समर्पित कर, सबसे पहले महंतु मठ वालों के भेजे गये गाय के दूध को समर्पित कर आरती उतारते हैं, श्री वेंकटेश्वर स्वामी ने प्रथमतया भूलोक में गौतमी धेनु (गोरूप में ब्रह्म देवता) के दूध को ही पिया था न? उस क्षीर कैंकर्य का ही प्रतीक है यह क्षीर निवेदन! भगवान गोविन्द को समर्पित इस क्षीर को पहले अर्चक स्वामी स्वीकारते हैं। तदनंतर जिय्यंगार, एकांगी और सन्निधि गोल्ला को भी देते हैं।

स्वर्णद्वार के बाहर, सुप्रभात स्तोत्र का पाठ और ताळ्ळपाका परिवार द्वारा सुप्रभात गीतों का गायन भी इस बीच संपन्न हो जाता है

तथा स्वर्ण द्वार भी खुल जाते हैं। तब तक अर्चक स्वामी महंतु मठ वालों द्वारा भेजे गये मक्खन का भी, मूल विराट स्वामी को निवेदन करते हैं। सुवर्ण की थाली में भीमसेनी कपूर की आरती भी उतारी जाती है। इस आरती की कांतियों में भगवान सप्तगिरीश, अलौकिक अनुभूतियों को भक्तों में बाँटते हुए अपना दिव्य दर्शन देते हैं। इसके बाद अर्चक स्वामी, भगवान तिरुमलेश के यहाँ रात में ब्रह्माजी की पूजा अर्चना के लिए रखे गये ब्रह्म तीर्थ चंदन, एवं, शठारी को पहले स्वयं लेकर, बाद में एकांगी को देते हैं। सन्निधि गोल्ला को भी ब्रह्म तीर्थ, शठारि आदि देकर उस थाली में बचे हुए प्रथम तांबूल से भी सन्निधि गोल्ला को अनुगृहीत करते हैं। इस तरह आनंद निलय की सालिग्रम मूर्ति व मूल विराट स्वामी के प्रथम दर्शन के भाग्य के अलावा, स्वामी को समर्पित प्रथम तांबूल को भी पाना, उन यादवों का वंशानुगत वरदान ही है।

इतना ही नहीं, तिरुमल में कभी भी कोई भी प्रत्येक सेवा हो, वैखानस अर्चक स्वामियों को उनके निवास गृहों से (तिरुमाळिग) गौरव व मर्यादा के साथ मंदिर में आह्वानित कर भक्ति - पूर्वक उन्हें बुला लाता है - यही सन्निधि गोल्ला। इस यादव भक्त शिखामणि के पुराकृत पुण्य विशेष का क्या कहने? तोमाल सेवा, एकांत सेवा, पारुवेटा (आखेटलीला) उत्सव आदियों में भी यह अपनी सेवाओं को श्रीनिवास जी को समर्पित करता है। उन सेवाओं के बारे में अब थोडी सी जानकारी प्राप्त करेंगे।

तोमालसेवा के समय

तोमाला का अर्थ है बगीचे से लायी गयी तुलसी तथा फूलों की मालायें। उन मालाओं से मूल विराट मूर्ति को अलंकृत करने की सेवा को

ही 'तोमाल सेवा' कहते हैं। 'तोळ' तमिल शब्द है जिसका अर्थ है - भुजायें। भुजाओं के ऊपर से चरणों तक अलंकृत करनेवाली इन मालाओं को 'तोमाला' कहते हैं।

हर रोज, सुबह और शाम, दोनों समयों पर श्री वेंकटेश्वर स्वामी की मूल विराट मूर्ति को यह सेवा समर्पित की जाती है। इस सेवा के लिए आवश्यक फूल मालायें, 'यमुनोत्तरै' नामक फूलों के घर में तैयार की जाती हैं। उन उन ऋतुओं में उपलब्ध गुलाब, चंपक, केवडा, जूही, चमेली, कनेरी, गेंदा, कमल, सुगंधित पत्ते आदियों से विविध नापों में तैयार करके उन्हें गमलों में रखते हैं।

वैष्णव जिय्यंगार या उनका सेवक एकांगी - कोई एक - यमुनोत्तुरै पर पहुँचकर फूलमालाओं को मंदिर में ले आने के लिए तैयार रहता है। इतने में सन्निधि गोल्ला, छोटी सी मशाल को लेकर यमुनोत्तरै पर पहुँचकर, उसे मंदिर में आने का निमंत्रण देता है। एकांगी फूलमालाओं के गमलों को सर पर रख लेकर चल पडता है। सन्निधि गोल्ला मशाल हाथ में लिए आगे चलता है - ''मार्ग को शुद्ध तथा सुगम रखने के विज्ञापनों के साथ। ढोल, मंगल वाद्य, छोटी सी पत्तरी घंटी के सुमधुर नाद के साथ, छत्र चामरादि राजोचित उपचारों सहित ध्वज स्तंभ की परिक्रमा कर रजत द्वार में प्रवेश करते हैं। विमान परिक्रमा के बाद स्वर्ण द्वार तक आकर मंगल वाद्य तथा छत्र चामरादि रुक जाते हैं। सन्निधि गोल्ला तथा एकांगी दोनों स्वर्ण द्वार के अंदर जाते हैं। कुलशेखर पडी के पास ही सन्निधि गोल्ला रुक जाता है। एकांगी उन फूल मालाओं के साथ अंदर जाता है तथा तोमाल सेवा के लिए उन सुंदर फूल मालाओं को समर्पित करता है।

इस तरह सन्निधि गोल्ला हर रोज, सुबह और शाम, तोमाल सेवा के समय, मशाल को हाथ में लेकर फूलमालाओं सहित एकांगी को भगवान की सन्निधि में गौरवादर के साथ ले जाता है।

फूल मालाएँ और पूजा के द्रव्यों के अलावा आनंद निलय के अंदर रहनेवाली उत्सव मूर्तियों को बाहर लाते समय, या उत्सवों के बाद उन मूर्तियों को अंदर पहुँचाते समय भी 'सन्निधि गोल्ला' हाथ में मशाल लेकर मार्ग को सुगम करने के विज्ञापनों के साथ उत्सव मूतीयं के आगे चलते हुए निरंतर श्रद्धासक्तियों के साथ वेंकटेश स्वामी की सेवा करता है।

एकांतसेवा का समय

हर दिन यहीं पर, आनंद निलय वासी श्री वेंकटेश्वर की 'एकांत सेवा' संपन्न होती है। इस समय, मूल विराट मूर्ति के चरणों पर स्थित ''भोग श्रीनिवास मूर्ति'' (मणवाळप्पेरुमाळ) की प्रतिमा को आगे के शयन मंडप में चाँदी की कडियों से लटकी गयी, निवार की स्वर्ण शय्या पर रेशमी पलंग बिछाकर सुलाते हैं।

इस सेवा के समय, सन्निधि गोल्ला अपनी छोटी सी मशाल से श्रीनिवास मूर्ति की शय्या के सामने की दीप स्तंभों की ज्योतियों को प्रज्जलित कर बाहर आता है।

इस तरह हर दिन एकांत सेवा के समय पर, शय्या के आगे के दीपों को प्रज्जवलित करनेवाला भाग्यशाली, सन्निधि गोल्ला कितना धन्य है न? तिरुमल गोविन्द आखिर, सन्निधि गोल्ला की कितनी तरफदारी करते हैं न? कितना गहरा प्यार एवं बंधन है उन दोनों का?

इस तरह, हर सुबह दूध, मक्खन खाना ही नहीं। हर गुरुवार के नेत्रदर्शनोत्सव में भी श्री वेंकटेश्वर स्वामी (मूल सालिग्रम मूर्ति) बगैर किन्ही कीमती आभूषणों या पुष्प मालाओं के, गले में ग्वालों की तरह दो कंठिकाओं, एक ही ऊर्ध्व पुण्ड्र व कपोल पर कपूर की दीठी पहनते हैं। सर पर रुमाल बाँधकर, नील मेघ सी काया और स्निग्ध सुंदर दरहास के साथ अपना पावन दर्शन देते हैं। भक्तों को लगता है कि द्वापर युग के कृष्ण कन्हैय्या, ये ही हैं। इसी लिए हर गुरुवार, श्री वेंकटाद्रि स्वामी के इस रूप को 'ग्वाला गोविंन्द' कहते हैं।

सुप्रभात तथा मध्याह्न की सहस्रनामावली, के समय, दो पहर की अष्टोत्तर शतनामावली में भी वेंकटेश स्वामी, द्वापर युगीन श्री कृष्ण के रूप में ही पूजे जाते हैं।

ओम् देवकीगर्भसंभूताय नमः
ओम् यशोदेक्षणलालिताय नमः
ओम् वसुदेवकृतस्तोत्राय नमः
ओम् नंदगोपमनोहराय नमः
ओम् नीलकुंतलाय नमः
ओम् पूतनाप्राणसंहर्त्रे नमः
ओम् तृणावर्तविनाशनाय नमः
ओम् गर्गारोपितनामांकिताय नमः
ओम् वासुदेवाय नमः
ओम् गोपिकास्तन्यपायिने नमः
ओम् बलभद्रानुजाय नमः

ओम् वत्सजिते नमः
ओम् वत्सवर्धनाय नमः
ओम् क्षीरसारासनरताय नमः
ओम् दधिभांडप्रमर्दनाय नमः
ओम् नवनीतापहर्त्रे नमः
ओम् बकद्वेषिणे नमः
ओम् महाजगरचंडाग्नये नमः
ओम् शकटप्राणकंटकाय नमः
ओम् अक्रूरस्तुतिसंप्रीताय नमः
ओम् कुब्जायौवनदायकाय नमः
ओम् कृष्णाय नमः
ओम् कृष्णासखाय नमः

इस तरह आनंद निलय स्वामी, स्वयं को द्वापर युग के श्री कृष्ण स्पष्ट कर रहे हैं न?

इतना ही नहीं। श्री वेंकटाचल माहात्मय में स्पष्ठतया उल्लिखित है कि साक्षात् वेंकटेश्वर स्वामी ने पद्मावती से अपने कल्याण के समय, स्वयं को वसुदेव पुत्र, बलराम सहोदर, कृष्ण के नामों से अभिहित किये थे।

द्वापर युग कालीन अपनी मीठी यादों को भुला न पाने के कारण ही यह तिरुमल गोविन्द, हर साल गोकुलाष्टमी के ''छींका उत्सव'' में बडे ही शौक और चाव से भाग लेते हैं। 'पारुवेट उत्सव' में भी विशेषतया, सन्निधि गोल्ला पर आदर बरसाते हैं - तिरुमल गोविंन्द जी!

पारुवेट उत्सव वेला

हर साल संक्रांति त्योहार के बाद, श्री वेंकटेश्वर स्वामी, पंचायुधों को धरकर 'पारुवेटा' (आखेट उत्सव) को निकलते हैं। मंदिर की उत्तरी दिशा में जो आखेट का मंडप है, वहाँ जाकर स्वामी मृगया में भाग लेते हैं। दूसरी पालकी पर कन्हैय्या के वेष में शोभायात्रा पर निकलकर 'आखेट मंडप' में पहुँचते हैं। वहाँ मृगया का उत्सव संपन्न होता है। तदनंतर उस मंडप के सामने वास कर रहे सन्निधि गोल्ला के घर जाते हैं। उनके द्वारा समर्पित दूध, मक्खन, तथा फलों को स्वीकारते हैं। तांबूल, चंदन, शठारियों से सन्निधि गोल्ला के परिवार को अनुगृहीत कर वापस मंदिर पहुँचते है - ये वेंकट गोविंन्द! इसतरह अपने मृगया विनोद के समय भी सन्निधि गोल्ला को गौरवादर से सम्मानित करने के द्वारा द्वापर युग के ग्वालों से अपनी मीठी यादों तथा प्रेम बंधन को लोगों के सामने प्रकट करते हैं वे! भगवान वेंकटेश की भक्त वत्सलता यहाँ पर उललेखनीय है। ऐसी शुभ वेला में इस वेंकटाद्रि गोविन्द को द्वापर युग के गोविन्द के रूप में संभावित कर, इन सप्तगिरियों को प्रतिध्वनित करते हुए उनका नाम लेंगे।

सप्तगिरीश गोविन्द गोविन्द गोविन्द!

भक्तों को छोडकर रह नहीं पाऊँगा

सप्तगिरियों पर विराजमान श्री वेंकटरमण को, श्री वैकुंठ से भी बढ़कर, भूलोक वैकुंठ यह तिरुमल ही उत्यंत प्यारा है। इस कलियुग में यहाँ पर हर वक्त, हर पल लाखों भक्त, उनके चरण कमलों का प्रश्रय पाने आते ही रहते हैं। 'तुम ही हमारा आधार हो हे भगवन!' कहते हुए

दूर से आनेवाले उन भक्त जनों की शरणागति एवं भक्ति को देखकर उन्हें लगता है कि हाँ, इस कलियुग में मुझे ही सर्वोपरि समझकर अपनी मनोवांछाओं की पूर्ति के लिए, दूर दूर से ये आ रहे हैं। वांछित वरदानों को मैं अवश्य उन्हें दूँगा।'' मात्र लगना ही नहीं, मुस्कुराते हुए कभी, शान दार तरीके से कभी, अनायास ही कभी उन्हें दर्शन देते हुए उनकी इच्छाओं की पूर्ति वे करते हैं। वरदान उन पर बरसाते हैं।

तिस पर अपनी खडे होने की भंगिमा में भी वे यही अर्थ दर्शाते हैं। दक्षिण हस्त से अपने दोनों चरणों को वे दिखा रहे हैं। इसका अर्थ है ''मेरे शरण में आप सभी आ जाओं''! वाम हस्त (कटि हस्त) से अभय मुद्रा दिखाते हुए कहते हैं कि हाँ, मेरी शरण में जो जो आते हैं, उन सबको मैं अपने सीने से लगा लूँगा! आसरा खुद बनूँगा। आर्त भक्तों को मेरा हाथ देकर उनके कष्टों को दूर करूँगा।'' अपनी दिव्य मंगल मूर्ति को देखने के लिए आनेवालों को वे आनंदित करते हैं तथा उनका आनंद देखकर खुद खुश हो जाते हैं।

वैकुंठं वा परित्यक्ष्ये न भक्तांस्त्यक्तुमुत्सहे
मेऽतिप्रिया हि मद्भक्ता इति संकल्पवानसि

''वैकुंठ को भी छोडकर रह सकता हूँ। लेकिन मेरी शरण में आये हुए भक्तों को छोडकर एक पल भी न रह पाऊँगा।'' यही तिरुमलेश का शपथ है। इसी शपथ के कारण उन्होंने तिरुमल को ही अपना शाश्वत निवास बना लिया है। मात्र भक्तों की इच्छाओं की पूर्ति ही नहीं, ये उनमें स्वयं घुल मिल जाते हैं। उनके साथ खेलते हैं। कूदते हैं। उनसे साथ हँसी मजाक भी करते हैं। गालियाँ खाते हैं। मार भी खुशी खुशी सह लेते हैं।

उनकी ये सब क्रीडायें, आज की ही नहीं। इस युग की ही नहीं। अनंत युगों की हैं। हमारी अल्प बुद्धियों के अनुमान से कहीं दूर हैं। उनकी अद्भुत लीलाओं और महिमाओं में से यह भी एक है।

इसी कलियुग में, आनंद निलय के ये स्वामी, अपने सोने के महल से बाहर निकलकर तिरुमल क्षेत्र - के ही एक भक्त के घर पहुँचकर पासा खेलते हुए अपने आप को भूल जाते थे। बाद में जब वह भक्त एक कडी विपदा में था, उसे अपना आसरा देकर उसकी रक्षा भी की। तब से अब तक उस भक्त के द्वारा भेजे गये दूध तथा मक्खन को, हर दिन ब्रह्म मुहूर्त की सुप्रभात वेला के समय, चाव से खाते है - श्रीनिवास स्वामी! आज भी आनंद निलय के - प्रथम निवेदन में यही नियम जारी है। आखिर वह भक्त कौन था? उसकी कहानी क्या भी? जान लेने को मन कर रहा है न? सुनने के पहले एक बार बालाजी का नाम ले लेंगे!

श्री हथीराम बावाजी

भूलोक वैकुंठ है तिरुमल! तिरुमलेश का मंदिर है - आनंद निलय! इस आनंद निलय के बाहर ठीक आग्नेय कोने में एक छोटे से टीले पर एक ऊँची महल है जिसे ''महंतों का भवन'' कहते हैं। महंत का अर्थ है, साधु, या सन्यासी! इस मठ की स्थापना एक महंत ने की थी। परम भक्त उस महंत का नाम था ''हथी राम जी।'' गौरव और सम्मान से इसे लोग 'हथी राम बावाजी' भी कहते थे। उत्तर भारत में प्रचलित रामानंद संप्रदाय के परम भक्त शिवामणि हैं - ये हथीराम् जी!

लगभग 500 साल पहले, दिल्ली से 24 मील की दूरी पर स्थित ''क्रेडल क्रेला'' नामक एक गाँव में रामानंद का मठ था। इस मठ के गुरु

(आश्रम का अधिकारी) अभयानंदजी थे। इस महापुरुष के शिष्य ही थे हमारे हथी राम बावाजी! अपने गुरु की आज्ञा के अनुसार क्षेत्र तथा तीर्थों की यात्रा पर निकले हथीरामजी आखिर वेंकटाचल क्षेत्र पर आ गये। तिरुमल क्षेत्र की सुंदरता को देखकर वे मुग्ध हो गये। तपस्या के लिये अनुकूल वातावरण के साथ 'कलौ वेंकट नायकः' नाम से सुप्रसिद्ध तिरुमलेश की करुणा, वरदानों को देने की दयालुता तथा उनका कांतिमय केतन - आनंद निलय की विभा को भी देखकर वे दंग रह गये। तिरुमल पर ही बस गये। कोटि कोटि सूर्यों के प्रकाश से तेजोमय आनंदनिलय के स्वर्णिम विमान की कांतियों को हर दिन देखते रहने की आशा से मंदिर के समीप की एक टीले के ऊपर ही अपना निवास उन्होंने बना लिया। वहाँ से वेंकटेश जी के मंदिर के शिखरों को देखते हुए मन ही मन सोचा करते थे कि अयोध्या के राम ही यहाँ पर तिरुमलेश के रूप में विद्यमान हैं।

मात्र आनंद निलय में ही नहीं, बल्कि मंदिर के बाहर, तिरुमल की यात्रा पर आये हुए हर व्यक्ति में भगवान वेंकटेश्वर जी का ही दर्शन कर, बाबाजी आनंद विभोर हो जाते थे। इसी कारण तिरुमल आये हुए यात्री, साधु, सन्यासी आदियों को अन्नदानादि बडी ही भक्ति और श्रद्धा से वे करने लगे। स्वयं के लिए कोई इच्छा न रखते हुए 'मानव सेवा को ही माधव सेवा' के रूप में लेकर हमेशा यात्रियों की सेवा में तल्लीन, परम भक्त हथी राम बावाजी जब भी बुलाते थे, वेंकटेश जी तत्क्षण जवाब देते थे। यह भी कहा जाता है कि जो भी बावाजी कहते थे, सो वेंकटेश्वर स्वामी करते थे। इस स्थिति में तिरुमल भक्तों को यहाँ के संदर्शन स्थल दो ही हो गये। पहला है तिरुमलेश का दर्शन दूसरा -

महायोगी महंत हथीराम बाबा का दर्शन! अगर श्री वेंकटेश्वर के दर्शन न हो पाये तो भी भक्त मानते थे कि हथीराम बाबाजी के आशीर्वचन मिल जाय तो बस, समझो - आनंद - निलय वासी का भी आशीर्वाद मिल गया है। भक्तों के इस विश्वास में बावाजी की पवित्रता, साधुता तथा व्यक्तित्व की महत्ता स्पष्ट हैं।

हर दिन रात एकांत सेवा के बाद तिरुमल क्षेत्र जब सन्नाटे में खो जाता था, तब आनंद निलयवासी स्वामी, वेंकटेश्वर जी स्वयं अपने अतीव प्यारे भक्त महंतु के घर जाते थे। बावाजी से बातचीत खूब करते थे। इतना ही नहीं, वह भक्त और ये परमात्मा दोनों, घंटों पासा खेला करते थे। बाजी भी रखते थे। तरह तरह के वादोपवाद भी होते थे। लेकिन कुछ भी हो, अंततः बावाजी ही जीत जाते थे। भक्त को जिताकर, उसके आनंद को देखते हुए खुद खुश होना ही आनंद निलय वासी की इच्छा रही। ऐसा हर दिन होता ही था। बावाजी के शिष्य और अन्य भक्त जो बाहर सोते थे, बावाजी के कमरे में एकांत में बावाजी की बातें तथा बाजी रखकर पासा खेलने के शब्द - सब साफ सुनाई ही देते थे। लेकिन श्रीनिवास जी के दर्शन तो - किसी को नहीं मिलते थे। यह बात इतनी फैल गई कि यात्री, भक्त, मंदिर के अर्चक स्वामी, अधिकारी, मंडलाधीश सबों को बावाजी के प्रति भक्ति तथा श्रद्धा बढ़ गयी। इसी कारण भक्तों से लेकर महाराजाओं तक जो कोई उनके पास आते थे, उन्हे धन दौलत चन्दा (दान) के रूप में देते थे। इस से महंतु बावाजी तिरुमल क्षेत्र के अपने ही आश्रम में भक्तों, साधु संत जनों को, हर वक्त अन्नदान करने लगे। दावत भी देते थे। स्वयं तो 'राम पत्र' नामक विलक्षण पत्तों को आहार के रूप में लेते हुए, एक आडंबर रहित जीवन बिताते थे। तपस्या

में डूबे रहते थे। भगवान वेंकटेश्वर के दर्शन से पुनीत बावाजी के दर्शन से अनेकों भक्तों की बीमारियाँ दूर हो जाती भी। मुसीबतें टल जातीं भी। सुख और संतोष मिलते थे। बावाजी की ख्याति पूरे देश भर फैल गयी।

ऐसे तपश्शाली बावाजी की प्रतिष्ठा को देखकर चंद्रगिरि के राजा गिरिधर रायलु ने उनकी परीक्षा लेनी चाही। ''लोग कहते हैं कि तिरुमलेश जी आपसे बातचीत करते रहते है। पासा भी बाजी लगाकर खेलते रहते हैं। आप जैसे बैरागी, इस तरह के प्रचारों से धन - दैलत इकट्ठा करने में माहिर होते हैं ही। अगर यह बात सही ही है तो देखो इस ईख के ढ़ेर को खतम कर दो सुबह तक! नहीं तो तिरुमल क्षेत्र से भगा दूँगा।'' उस रात पशुशाला में ढ़ेरो गन्नों को रखवाकर उसमें बावाजी को बिठाकर ताला लगा दिया गया। उस रात तिरुमलेश यथारीति आ गये। बावाजी के साथ पासा खेलते बैठ गये। पशुशाला में हाथी के रूप में पहुँचकर पूरे गन्नों को उन्होंने खतम कर दिया। पशुशाला के बाहर रहे सब लोगों को हाथी की चिंघाड सुनाई देती ही रही। लेकिन सुबह देखे तो हाथी भी नहीं था और ईख भी नहीं थे। उनकी महिमा से प्रभावित भक्त सभी उन्हें 'हथीराम बावाजी' नाम से भक्ति से पुकारते थे। 'हथी' का अर्थ हाथी है तथा बावाजी माने हाथी के रूप में आये हुए भगवान द्वारा बचाये गये बाबाजी। इस लीला को देखने के बाद गिरिधर रायलु 'गिरिधर दास' नाम लेकर बाबाजी के शिष्य बन गये। जिस घडी से एक चक्रवर्ति बावाजी का शिष्य बन गया, तभी से उनका नाम बैरागी चक्रवर्ती, 'विरागी चक्रवर्ती' हो गया। सिंहासन, मुकुट, नगाडे, पालकी ध्वजा आदि राजोचित गौरवों की व्यवस्था भी हो गयी। तिरुपति एवं तिरुमल में जो राजावास थे, वे सब महंत के मठ हो गये। कुछ मठ तो

राज भवनों की तरह पुनर्निर्मित भी हुए। मंदिर के निर्वाह में आधिकारिक सत्ता न होने पर भी मंदिर के कार्यक्रमों में महंत बावाजी प्रधान व्यक्ति हो गये। हर दिन सुप्रभात सेवा के समय ताजा दूध और नवनीत (मक्खन) को भेजकर स्वामी वेंकटेश को 'कपूर की आरती' भी, बावाजी समर्पित करने लगे। उस दिन से शुरु हुई ये सेवायें अभी भी जारी हैं। तदनंतर काल में इस मठ की शिष्य कोटि के द्वारा महंत मठ की जायदाद तो इतनी बढ़ गयी कि एक संस्थान के रूप में बाबाजी का मठ सुव्यवस्थित हो गया। दक्षिण के यात्रियों के लिए ही नहीं, उत्तर भारत के यात्रियों को भी मठ प्रश्रय देने लगा।

इस तरह बहुत दिन बीत गये। भगवान बालाजी की सेवा में बावाजी का जीवन धन्य होता गया। वृद्धावस्था में बावाजी, तिरुमल के गोगर्भ तीर्थ तथा आकाश गंगा तीर्थो के बीच एक आश्रम का निर्माण कर एकांत वास करने लगे। मौनव्रत तथा निराहार व्रत करते हुए तपस्या में वे निरंतर डूबे रहे। रामपत्र नामक पत्ते को कभी कभी खाया करते थे। यहीं पर उन्होंने एक भव्य 'श्री वेणुगोपाल मंदिर' को भी बनाया। उसमें होमगुंड (धुनी) को भी रखकर तपस्या में डूबे रहे। दिन ब दिन भक्तों की संख्या बढ़ते जाने से उनकी तपस्या का भंग होने लगा इसी लिए एक साल अश्विन मास के बहुळ त्रयोदशी के दिन वेणुगोपाल स्वामी के मंदिर के सामने तथा धुनि के अत्यंत समीप में ही 'सजीव समाधि' में वे प्रवेश कर गये। हर साल उस दिन माने नरक चतुर्दशी और दीवाली के पहले दिन 'श्री हथीराम बाबाजी की बर्सी' नाम पर उत्सव मनाये जाते हैं।

उस दिन तिरुमल के महंतु मठ से 'माखन कन्हैया' नामक उत्सव मूर्ति की शोभा यात्रा निकलती है। आकाश गंगा तीर्थ के समीप के

वेणुगोपाल स्वामी मंदिर तक यह यात्रा चलती है जिसमें मंदिर की तरफ से दो हाथी, दो छत्र तथा मंगल वाद्य भी देवस्थानम की तरफ से बाबाजी के प्रति गौरव को सूचित करते हुए, भेजे जाते हैं। वहाँ की वेणुगोपाल स्वामी की मूर्ति तथा बावाजी की समाधि का अभिषेक एवं पूजायें भी संपन्न होती हैं जिसमें हजारों भक्त एवं यात्री भाग लेते हैं। इस उत्सव के दिन महंत के मठ में अन्नदान भी संपन्न होता है।

तिरुमल मंदिर में ध्वज स्तंभ के पास जो रजत द्वार है - वहीं पर दक्षिण की दीवार पर बावाजी और श्रीनिवास जी के पासा खेलने तथा सामने ही खडे गिरिधर दास (गिरिधर दास) का दृश्य अंकित हैं। प्रवेश द्वार, दरवाजों के साथ, यह चित्र भी चाँदी की पट्टिका से अलंकृत है। सन् 1472 - 1482 के बीच इस रजत - द्वार का पुनरुद्धार किया गया था। महंतु मठ में भी श्रीनिवास स्वामी तथा बावाजी के पासा खेलने के स्थान पर एक गद्दी का निर्माण किया गया है जिस पर बालाजी वेंकटेश्वर के पासा खेलने का चित्र अंकित है।

नवनीत आरती

आज भी तिरुमल मंदिर में सुप्रभात सेवा में गोक्षीर निवेदन तथा नवनीत आरती संपन्न होते हैं। महंतु बाबाजी के नाम पर ही आज तक इन दोनों सेवाओं के संपन्न होने में ही भक्त और भगवान के बीच के बंधन की विशिष्ठता व्यक्त है।

हर दिन सुप्रभात सेवा के समय तक महंतु मठ का एक साधु (सन्यासी) स्नान संध्यादियों के बाद द्वादश ऊर्ध्व पुण्ड्रों को धरकर, गोविन्द का नाम जपते हुए एक रेशमी वस्त्र से ढकी हुई थाली ले आता

है, जिसमे ताजा क्षीर, ताजा नवनीत तथा भीमसेनी कपूर युक्त तांबूल रहते हैं। ठीक सुप्रभात सेवा के प्रारंभ होते ही 'कौसल्या सुप्रजा - राम' नामक स्तोत्र के साथ अर्चक स्वामी सन्निधि गोल्ला, एकांगी आदि स्वर्ण द्वार के अंदर प्रवेश करते हैं इस थाली को लेकर! अंदर स्वामी को ताजा क्षीर और नवनीत का निवेदन कर तांबूल को भी समर्पित कर नवनीत आरती उतारते हैं। सुप्रभात सेवा के संपन्न होने के बाद ताळ्ळपाकम् तरिगोंडा परिवारों के साथ महंत मठ वालों को भी तीर्थ - चंदन तथा शठारियों से पुरस्कृत किया जाता है। हर दिन की सुप्रभात आरती के अलावा, उगादि, श्रीराम नवमी, आणिवार आस्थानम्, दिवाली आदि पर्व दिनों तथा ब्रह्मोत्सवों में रथोत्सव के दिन भी महंत मठ की आरती को श्रीनिवास स्वामी, आज भी प्यार से स्वीकारते हैं तथा बावाजी की तरफ से आये हुए साधुओं तथा संतों को शठारि से आशीर्वाद देते हैं।

हर साल तिरुमल में भगवान वेंकटेश्वर का 'पारुवेटा उत्सव' (मृगया) जो संपन्न होता है उसमें उत्सव के समापन के बाद मंदिर की चारों माडा - वीथियों में महंतु मठ के नेतृत्व में श्रीनिवास स्वामी की शोभा यात्रा संपन्न होती है तथा आखिर में मठ की ओर से आये हुए संतों को आरती, शठारि का गौरव दिया जाता है।

तिरुमल में पापविनाशम तीर्थ तक जाने के मार्ग में ही 'श्री वेणुगोपाल स्वामी' का मंदिर तथा, स्वामी हथीराम बावाजी के सजीव वृन्दावन (समाधि) को हम देख सकते हैं। जो भक्त वहाँ पर जाते हैं, उन सभी को ''राम पत्रम'' पत्तें को (जिसे बावाजी कभी कभार आहार के रूप में लेते थे) दिव्य प्रसाद के रूप में दिया जाता है। यह थोडा सा मीठा होता है।

आजकल, बावाजी की समाधि तथा श्री वेणुगोपाल स्वामी का मंदिर - दोनों महंतु मठ के अधीन में हैं तथा हर दिन पूजादिक संपन्न भी होते हैं।

स्वामी हथीराम बावाजी के मठ की शाखायें, तिरुमल तथा - तिरुपति के अलावा तिरुचानूर, चित्तूर, वेलूर, षोलिंगर, वृद्धाचल, तंजाऊर, मथुरा, नाशिक, पंचवटी, सुगूर, मुंबई, भागलकोट, गुजरात, अयोध्या, नाभा आदि प्रदेशों में भी विस्तरित हैं। तिरुमल तिरुपति के महंत - मठों में श्रीराम तथा हनुमान जी के मंदिर भी हैं। सैकडों सालिग्राम भी वहाँ पर देख सकते हैं। इन मठों में विशेष दिनों पर, उत्तर भारत से आये हुए साधु - संतों को आन्नदान का आयोजन किया जाता है। खासकर बंजारन, सुगाली आदि उत्तर भारत वासी अनेकों पहले हथीराम बावाजी के मठ में ही उतरते हैं। उनके दर्शन के बाद ही श्री वेंकटेश्वर के दर्शन के लिए जाते हैं। यही संप्रदाय आज भी जारी है।

अंग्रेजों के पहले, तिरुमल तिरुपति के मंदिर, विजयनगर, चंद्रगिरि, कार्वेटि नगर के महाराजाओं के अधीन में थे। अंग्रेजों के राज में ईस्ट इंडिया कंपनी वालों ने, (सन् 1817 के शासनानुसार) मद्रास राज्य के रेवेन्यू बोर्ड के संचालन में, उत्तर आर्काट जिलाधीश को, तिरुमल वेंकटेश्वर के मंदिर का आधिकारी बनाया। इतने में अंग्रेजों की सरकार ने एक और शासन लाया कि भारत देश के धर्मादियों, विश्वासों, मंदिरों एवं मंदिरों के अनुशासन आदियों में दखल - अंदाजी न लेनी चाहिए। इसके अनुसार तत्कालीन जिलाधीश ने मैसूर राजा तथा वेंकटगिरि संस्थानाधीश से आग्रह किया कि तिरुमल मंदिर का संचालन करें।

लेकिन उन उन संस्थानाधीशों ने इस कार्य - भार को स्वीकारने से इनकार किया क्योंकि वे अपने संस्थानों के संचालन में ही अधिक व्यस्त थे। लेकिन भगवद्रामानुज जी के समय से ही, तिरुमल - तिरुपति मंदिर के संचालन में अधिकाधिक उत्तरदायित्व, श्री वैष्णव पीठाधिपतियों का ही होने के कारण मठ से संबंधित बडे जिय्यंगार एवं छोटे जिय्यंगार ने इस अधिकार को अपने मठों को सौंपने की अभ्यर्थना, जिलाधीश से की। क्योंकि तिरुमल में सुबह से रात्रि तक हो रहे अनेकानेक, नित्योत्सव, वारोत्सव, मासोत्सव, एवं वार्षिकोत्सवों में जिय्यंगारों के व्यस्त होने के साथ साथ, सभी पूजाओं में भी इन्हीं का प्राधान्य होने के कारण, जिलाधीश ने इसे ठुकरा दिया क्योंकि मंदिर की पूजाएँ और मंदिर का प्रशासन - दोनों वैष्णव जिय्यंगारों के लिए भारी पड जायेंगे तथा ठीक तौर से दोनों को निभाना एक ही मठवालों से न हो सकेगा। तिस पर वैष्णव जिय्यंगारों में वडहला - तेंगला नामक दो शाखाएँ हैं जो हमेशा अपने अस्तित्व के लिए झगडती रहती हैं।

उस समय तक 'महंतु मठ' एक धार्मिक संस्था, के रूप में मशहूर हो गया था। भक्तों की सेवा को ही अपना प्रधान उद्देश्य बनाकर काम करते रहने के अलावा वैष्णवों की तरह वडहला - तेंगला नामक शाखा - भेद भी इसमें नहीं थे। उत्तर तथा दक्षिण भारत - दोनों प्रांतों के भक्तों के बीच समन्वय की तरह भी, मठ काम कर रहा था। उसकी जायदाद भी असीम थी। इन सब कारणों से, सन् १८४३ अप्रैल २१ वी तारीख पर तत्कालीन जिलाधीश के द्वारा, एक 'सनद' निवेदन के आधार पर, महंत के मठ के महंतो को तिरुमल तिरुपति के मंदिर के प्रशासन का उत्तरदायित्व सौंपा गया।

आणिवार आस्थान
(16.7.1843)

सन् 1843, जुलाई 10 वी तारीख पर, तत्कालीन तिरुमल महंतु मठ के अधिशासी सेवादास जी के नाम पर आज्ञा जारी की गयी कि सन् 1843 जुलाई 16 के दिन, दक्षिणायन संक्रांति के पर्वदिन पर, अणिवार आस्थान के संदर्भ में अंग्रेजों की सरकार से, तिरुमल तिरुपति के वेंकटेश्वर स्वामी के मंदिर की पूरी जायदाद, आभूषण, मुकुट, वस्त्रादि, बरतन, उत्सव मूर्तियाँ, वाहनादियों के साथ साल की आमदनी तथा खर्च के विवरण सहित तत्कालीन महंतजी (सेवादास जी) को सौंपा जायें। मंहत जी को 'निरीक्षण कर्ता' का नाम और पद भी दिया गया।

संचालन प्रणाली की इस बदलावट का सर्वप्रथम उत्सव, तिरुमल के इतिहास में एक स्वर्णिम घटना, माना जा सकता है। सन् 1843 जुलाई 16 की तारीख पर महंतु मठ के तत्कालीन अधिकारी सेवादास को निरिक्षण कर्ता के रूप में - तिरुमल मंदिर का कार्यभार सौंपा गया। आज भी हर साल, जुलाई 16 वी तारीख पर देव - स्थान से संबंधित सभी चाबियों के गुच्छे को महंतु मठ के कार्यनिर्वहणाधिकारी को सौपा जाता है।

उस दिन से तिरुमल के मंदिर का प्रशासन, महंतु मठ के महंतों के अधीन में आ गया जो श्री स्वामी हथीराम् बावाजी के शिष्यों की परंपरा के ही होते थे। उनकी आधिकारिक मोहरा 'विष्वक् सेन' है।

पहले निरीक्षण कर्ता का नेतृत्व 21 सालों तक रहा। उनके बाद का क्रम निम्नलिखित है।

भगवान तिरुमलेश की सेवा में महंतु-मठ

सन् 1849 सौम्य नाम वत्सर के भाद्रपद शुद्ध त्रयोदशी, श्रवण नक्षण युत गुरुवार के दिन महंतु सेवादास जी ने श्रीनिवास जी की पुष्करिणी का पुनरुद्धार किया जिसकी आठों दिशाओं में नौ तीर्थ विराजमान हैं जैसे पूरब दिशा में मार्कन्डेय तीर्थ, आग्नेय दिशा में अग्नि तीर्थ, दक्षिण दिशा में याम्य तीर्थ, नैऋति दिशा में वशिष्ठ तीर्थ, पश्चिम दिशा में वरुण तीर्थ, वायव्य दिशा में वायु तीर्थ, उत्तर दिशा में कुबेर तीर्थ, ईशान्य दिशा मे गालव तीर्थ तथा सरस्वती तीर्थ। उस पुष्करिणी में श्रीदेवी भूदेवी समेत श्री वेंकटेश्वर स्वामी के 'प्लवोत्सव' का भी (जलकेलि मंडपोत्सव) का भी आयोजन उन्होंने कराया।

महंतु धर्मदास जी ने, तिरुपति के श्री कपिलेश्वरम् तीर्थ की पुष्करिणी तथा उसके चारों तरफ स्थित संध्यावदन मंडपों का 10-2-1865 के दिन (रक्ताक्षी वत्सर - माघ मास - के शुद्ध पूर्णिमा के दिन) जीर्णोद्धार करवाया। फिर से 11-9-1878 में (बहुधान्य नाम वत्सर, भाद्रपद पूर्णिमा के दिन) तिरुमल मंदिर के महाद्वार गोपुर की मरम्मतें भी इन्होंने ही करवायीं। अन्य मंडपों का निर्माण भी इन्हीं के नेतृत्व में हुआ।

ई. स 1900 में देव - स्थान के निरीक्षण कर्ता महंतु प्रयाग दास ने, अपने मठ के अधिकारी रामलक्ष्मण दास की निगरानी में आनंद निलय शिखर पर ''स्वर्ण - कलश'' की स्थापना की। (इस आनंद निलय विमान को ई. स 1260 से लेकर, पाँच बार स्वर्णिम विलेपन हुआ जिसकी पूरी जानकारी हम बाद में प्राप्त करेंगे।)

सन 1900 से लेकर 1933 तक - लगातार तैंतीस साल तक 'निरीक्षण कर्ता' के पद पर रहे प्रयाग दास जी के समय में तिरुमल के श्रीनिवास मंदिर का अनगिनत विकास हुआ। तिरुमल यात्रियों के लिए तिरुमल तथा तिरुपती में उचित अस्थायी आवास, पैदल चलने के मार्ग में सीढ़ियों की मरम्मतें, वायुगोपुर का निर्माण, सडकों का निर्माण, यात्रियों के स्वास्थ्य संबंधी रक्षा, पीने के पानी की व्यवस्था, मद्रास में मंदिर के मुद्रणालय की स्थापना, नेल्लूर, तिरुपति में हाई स्कूल, वेद पाठशाला, प्राच्य कलाशाला, आयुर्वेद पाठशाला, मंदिरों के शिलाशासनों का संशोधन तथा छपाई, श्री वेंकटेश्वर स्वामी के लिए आभूषण मुकुट आदियों की खरीददारी आदि अनेकानेक कार्यक्रम इनके जमाने में संपन्न हुए।

तिरुमल तथा तिरुमल के मार्ग पर भी यात्रियों के चलने फिरने में सहूलियत के लिए वाषिंगटन लाइटों को भी प्रयाग दास जी ने रखवाई। तिरुमल के यात्रियों की संतान के लिए उचित गोक्षीर का वितरण तथा विद्यार्थियों को उचित भोजनादि भी इन्हीं के कार्यकाल में संपन्न हुए।

लेकिन सरकार को एक फरियाद मिली कि कुछ - महंतों के द्वारा 'महंत, - मठ' की निधियों का दुरुपयोग किया जा रहा है जिसका प्रभाव प्रयागदास जी पर भी पडा। इस कारण - तत्कालीन मद्रास के राज्यपाल ने तिरुमल - तिरुपति मंदिरों के निर्वाह के लिए धर्मकर्ताओं की मंडली का आयोजन किया जिसके कारण महंतों के सारे अधिकार छीन लिये गये। फलतः 1933 से महंतों का तिरुमल मंदिरों पर अधिकार, समाप्त हो गया।

	से - तक	पूरा शासन काल
1. महंतु सेवादास जी	1843 - 1864	- 21 साल
2. महंतु धर्मदास जी	1864 - 1880	- 16 साल
3. महंतु भगवान दास जी	1880 - 1890	- 10 साल
4. महंतु महावीर दास जी	1890 - 1894	- 4 साल
5. महंतु रामकृष्ण दास जी	1894 - 1900	- 6 साल
6. महंतु प्रयाग दास जी	1900 - 1933	- 33 साल
कुल		90 साल

कई कठिनाइयों के बीच, 90 सालों के लिए लगातार (1843-1933) तिरुमल तिरुपति मंदिरों का प्रशासन, महंतों के नेतृत्व में चला।

आज कल तिरुमलेश के मंदिर में महंतों का स्थान, अवशेष के रूप में ही रह गया है। हर दिन सुप्रभात सेवा में गोक्षीर तथा नवनीत आरती आदि महंतु मठ के द्वारा ही भेजे जाते हैं। श्री वेंकटेश्वर स्वामी के उगादि, श्रीराम नवमी, आणिवार आस्थानादियों में, आरती तथा शठारि की मरियादा तो उन्हें मिलती ही है। आज भी करोडों की जायदाद रखने वाला यह मठ - इन दिनों, आंध्रप्रदेश के देवादाय शाखा के अधीन में है।

तिरुपति वेंकटेश्वर और तरिगोंडा वेंगमांबा

भाई सुनो मेरे! श्री वेंकटेश जी
सर पर आज पहने हैं चीज ऐसी
चमक दमक है उसकी,

पहने हैं वे मालाएँ फूल की
और कानों में हैं पहने
घडियाल जैसे कर्णफूल,
पीला पीला सा चूर्ण है चिपकाया
तन पर पूरा उन्होंने अपना,
घुंघरु हैं चरणों में
शंख चक्र हाथों में
कमर पर है कसा
नंदक खड्ग को
नील वर्ण है काया
पीले हैं ऊर्ध्वपुण्ड्र
श्री युत आँखों में दोनों
चिन्मय दरहास है
बेठन पीला सा है
पहना है वह चितचोर

(तेलुगु मूल-विनरन्न ने जूचु)

देखिए। घुंघुरु वाले सुवर्ण चरण! चमक दमक से आकृष्ट कर रही है सोने की धोती! उस पर कसकर बाँधा हुआ नंदक खड्ग! कमरबंद! वरद हस्त! कटि हस्त! शंख चक्र! वक्षःस्थल पर कौस्तुभ मणि! गले में रत्नों के आभूषण! माथे पर चमकता हुआ पीला तिरुपुण्ड्र! मणि मुकुट! मकर कुंडल! चिन्मय मुस्कान से इस तरह दर्शन दे रहे हैं - हमारे वेंकटेश्वर स्वामी जी। उनकी दिव्य मंगल विराण्मूर्ति को एकटक देखिए! अपने जन्म को धन्य बना लीजिये!

कितना महिमामय वैभव है उनका! कितना मनमोहक है उनका सौंदर्य! कितनी शालीनता है उसमें! कितनी तन्मयता है उसको देखते रहने में! भुवन मोहन है उस ब्रह्माण्ड नायक की सुन्दरता! कितनों कितनों को अपनी ओर आकृष्ट किया जमानों से! उनके पास आये हुए भक्तों में कुछ लोगों को उनकी मंद मंद हँसी खूब भायी। मकर कुण्डल कांतियों से चमकते हुए कपोलों ने कुछ लोगों को आकृष्ट किया। कुछ भक्त तो उनके ऊर्ध्व पुण्ड्रों को देखकर दास बन गये। दया भरी हष्टियों की शीतलता, कुछ दासों के मनों में बैठ गयी। शंख चक्र और अभय वरद मुद्रा युत हाथों से स्वामी जिस तरह खडे हैं, उस भंगिमा को देखकर स्वामी से प्यार हो गया कुछ भक्तों को! जन्म जन्मों के पापों को दर्शन मात्र से मिटा देने बाले उन दिव्य चरण द्वयों की शरण में चले गये बहुत सारे भक्त! इस तरह वेंकटेश्वर स्वामी की हर अदा, यक्ष, किन्नर, गंधर्वादियों से लेकर, सामन्य मानवों तक सभीयों को अपनी ओर आकृष्ट करने ही वाली है। उस दिव्य सुंदर मूर्ति को दो आँखें से देख पाना ना मुमकिन है। उस दिव्य तेजोमय विभव को सिर्फ एक ही दर्शन मात्र में देख पाना असंभव है। इसी कारण सैकडों भक्त, तन, मन तथा कर्मों से उस पर न्योछावर होकर, बारंबार तिरुमलेश की दिव्य सन्निधि में आते ही रहते हैं।

अनंत कोटि युगों से तिरुमलेश स्वामी, अपनी अद्भुत सुंदरता से भक्तों को आकृष्ठ कर, अपने दिव्य दर्शन भाग्य से पुनीत करने के साथ, उनके सारे दुखों को भी दूर कर रहे हैं। उनकी ऐसी लीलाएँ तो अनगिनत हैं। महिमाएँ अपरंपार हैं।

हमें यह खुनकर खुशी हुई कि भक्त रक्षक बालाजी ने अपने एक भक्त के घर में, माटी के कुल्हड की काँजी को प्रीतिपूर्वक खाया और उसकी सारी मुसीबतों को दूर भी किया। हमने यह भी सुना कि अपने एक भक्त के माँगते ही अपने सारे आयुधों को उसे उन्होंने दे दिया। इतना ही नहीं। खाली हाथों से खडे हैं अब! जो कुछ भी माँगे, मात्र ''पग पग पर वन्दन मात्र माँगनेवाले'' भोले भाले स्वामी की दयालुता भरे कामों को तो हम देख रहे हैं तथा खुद अनुभव भी कर रहे हैं।

कितने ही भक्तों की दाहार्ति को मिटानेवाला स्वामी, खुद प्यासा होकर तिरुमल नंबी के पास गया और उसकी डाँट - डपट सहते हुए भी, उसी से पानी माँगकर पिया और अपनी प्यास बुझायी। कितनों कितनों की जन्मांतर वासनाओं को मिटानेवाला स्वामी, खुद अनंताळ्वान के उद्यान के फूलों के आकर्षण में फँस गया! अपने संकल्प मात्र से सकल जगों को नचानेवाले श्रीनिवास जी के, खुद एक सन्यासी के निवास को जाकर उसके साथ पासा खेलने की मजा लूटना - कितना अजीब है?

लेकिन, क्या आपने सुना कि तिरुमल के गोविंद जी ने एक भक्तिन से कपूर आरती लेने के लिए खूब जिद भी किया था? क्या आपने यह नहीं सुना कि हर दिन मंदिर की एकांत सेवा के बाद सुवर्ण द्वारों के बंद होते ही वह अखिलांड कोटि ब्रह्माण्ड नायक, सीधे उस भक्तिन के घर जाकर उसके गीतों को सुनता हुआ, आस पास वहीं खेला करता था। इतना ही नहीं। उस भक्तिन की 'हाँ में हाँ' मिलाता था। इसी तरह एक बार उसके पास आ ही गया था तो वापस मंदिर जाते समय, उस भक्तिन की पकड में आयी अपनी रेशमी धोती को भी वैसे

ही छोडके भाग निकला भी था। इतना ही नहीं, हर दिन, मंदिर में एकांत सेवा के बाद सुवर्ण द्वारों के बंद होने के बाद, योग मार्ग के द्वारा आनंद निलय से बाहर आकर उस भक्तिन के पास भगवान जाता था और अपनी सेवा करने का भाग्य भी उसे दिया था। अद्भुत! परमाद्भुत! एक बार, उस भक्तिन के अपमान को अपना ही अपमान मानकर, अपने रथोत्सव को भी खुद भगवान ने रोक दिया था।

आप सब अचरज में पड गये होंगे कि आखिरकार वह भक्तिन कौन थी? उसकी यह कथा किसी वेदकाल की थी या पुराण काल की? उस आनंद निलय वासी की इन लीलाओं को सुनने को तरस रहें हैं न आप सब लोग?

हाँ! उस भाग्य शाली भक्तिन की यह कहानी, किसी पुराण काल की या वेद काल की नहीं है। सिर्फ दो सौ साल पुरानी दिव्य गाथा है बस। वेंगमांबा और वेंकटेश्वर! दोनों के नाम कितने मिलते जुलते हैं न? इन दोनों के बीच जाने कितनी मीठी घटनाएँ घटीं! इस मीठी कहानी की शुरुआत करने के पहले एक बार उस 'ब्रह्माण्ड नायक' का नाम लेंगे!

गोविन्द गोविन्द गोविन्द!

मोतियों की आरती

हर दिन रात आखिर में उस सप्तगिरीश स्वामी के मंदिर में एकान्त सेवा संपन्न होती है। एकांत सेवा का अर्थ है - ''शय्या सेवा'' भगवान बालाजी के गर्भालय के आगे जो शयन मंडप है - उसमें इस एकांत सेवा के लिए चाँदी की कडियों से लटकी गयी निवार की स्वर्ण शय्या पर रेशमी पलंग बिछाकर ''मनवाळप्पेरुमाळ'' (नित्य नूतन दूल्हा) नामक

भोग श्रीनिवास मूर्ति को सुलाते हैं। उस समय आनंद निलय में श्री वेंकटेश्वर की मूल विराट मूर्ति की ''मोतियों की आरती'' नामक सेवा - तरिगोंडा वेंगमांबा के नाम पर की जाती है। फिर वही मोतियों की आरती बाहर लायी जाकर, निवार की शय्या पर लेटे हुए भोग श्रीनिवास मूर्ति को भी दिखाई जाती है। इसी आरती की कांतियों में स्वामी उस शय्या पर लेटकर झूलते रहते हैं तथा उस समय राम जी के महल में भगवान के सामने बैठकर एकतारा को बजाते हुए अन्नमय्या की ''जो अच्युतानंद जो जो मुकुन्दा'' लोरी गीत मधुर स्वर में गाते रहते हैं। एक तरफ तरिगोंडा वेंगमांबा की आरती, दूसरी तरफ ताळ्ळपाका की लोरी - इन दोनों का आनंद उठाते हुए, योग निद्रा के लिए तैय्यार हो रहे श्री वेंकटेश्वर जी की दिव्य कांति देखते ही बनती है। शब्दों में इसका वर्णन कर पाना - नामुमकिन ही है।

यही संप्रदाय आज तिरुमल में जारी है। तरिगोंडा वेंगमांबा की आरती, ताळ्ळपाका की लोरी - दो अविरल भक्तों की सेवा की झाँकी इस उक्ति से हमें मिलती है।

हर दिन सुप्रभात वेला में स्वामी तिरुमलेश को जगाने तथा रात, एकांत सेवा में उन्हें सुलाने के गीतों के रचनाकार अन्नमाचार्य के बारे में, विमान परिक्रमा के समय हुंडी के पास ''ताळ्ळपाका के संकीर्तन भंडार'' के पास जाते समय, जान लेंगे।

तरिगोंडा वेंगमांबा

तिरुमल क्षेत्र के परिसरों में कई सारी पुण्य भूमियाँ हैं। कितने ही योगी और महापुरुषों का यहाँ पर जन्म हुआ। वैसा ही एक पुण्य स्थल

है - तरिगोंडा। तिरुपति की पश्चिम दिशा में वायलपाडु नामक एक शहर है। उस शहर से चार मील की दूरी पर यह तरिगोंडा गाँव है। सन् 1730 प्रांतों में कानाला कृष्णय्या और मंगम्मा नामक दंपति उस गाँव में रहते थे। उनके पाँच पुत्र थे। कन्यादान के फल की प्राप्ति के लिए तिरुमल की यात्रा पर वे निकले। तिरुमलेश से उन दोनों ने मन्नत माँगी कि उन्हें एक बेटी दें।

मुँह माँगे वरदानों को देनेवाला स्वामी वेंकटेश ने उनकी इच्छा की पूर्ति की। कुछ ही दिनों में उनकी एक बेटी हुई। वेंकटेश्वर की करुणा का फल होने के कारण, उस दंपति ने अपनी पुत्री का नाम भी वेंकम्मा ही रखा। बचपन से ही वेंकम्मा, हर पल, भजनों में ही लगी रहती थी। घंटों ध्यान में ही बैठ जाती थी। माँ बाप को पहले तो यह अच्छा ही लगा। लेकिन दिन ब दिन, उसकी भक्ति को देखकर वे परेशान हो गये। 'लडकी है, वयस्क हो गई है। शादी की उम्र में भी, भक्ति के नाम पर काम - वाम न करने के अलावा, खाली भजन कीर्तन में बैठी रहती है।' धीरे धीरे यह बात फैल गई कि वेंकम्मा, या तो पगली है या उस पर भूतनी सवार है। यह भी हो सकता है कि पिछले जन्म की कोई भक्त या भक्तिन ने इसके रूप में फिर से जन्मा है। रिस्तेदार तो वेंकम्मा की भक्ति को देखकर खुश थे ही। उसकी सुंदरता की तारीफ भी होती थी। लेकिन उससे ब्याह रचने तो कोई नही आता था। माता पिता को लगा कि अब और देरी करेंगे तो बेटी की ब्याह रचना मुंश्किल ही हो जायेगा। माँ - बाप की कोशिशों को देखकर, वेंकम्मा ने कहा - ''ब्याह और मेरी? वेंकटेश्वर स्वामी ही मेरे पति हैं। मेरी शादी की ये कोशिशें बंद करो आप लोग!'' लेकिन माँ - बाप, इकलौती बेटी को ऐसे कैसे छोड सकते हैं?

बेटी के हाथ पीले कर किसी भले मानस के हाथों सौंप दें तो उनकी जिम्मेदारी पूरी हो जायेगी न? चित्तूर शहर के सामने नारगुंट पाळेम् नामक गाँव के इंजेटि वेंकटाचलपति नामक युवक से उसकी शादी उन्होंने रची। लेकिन बेटी अभी दामाद के पास गई ही न थी कि वर का देहान्त हो गया। वेंकम्मा मायके में ही रह गई। हमेशा पूजा, भक्ति और पारायण! कहती थी कि श्री वेंकटेश्वर ही मेरे पति हैं। लोगों की दृष्टि में वह विधवा थी। लेकिन वह सुहागिनियों की तरह चूडियाँ पहनती थी और माथे पर सिंदूर भी रख लेती भी। जूडे में फूल माला भी रख लेती थी।

बेटी की इस अवस्था को देखकर, पिता कृष्णय्या ने मदनपल्ली के रुपावतारम् कृष्णमूर्ति नामक गुरु के पास उसे ले गया। उसी से वेंकम्मा ने दीक्षा भी ली। सोने पर सुहागा की तरह, वेंकम्मा की भक्ति में, अब अध्यात्मिक उपासना के मार्ग में और भी निखार आ गया। भक्ति शतकों की भी रचना की। अनायास उसके मुँह से संकीर्तन निकलते थे। लोग उसे 'योगिनी' मानकर वेंगमांबा के नाम से बुलाने लगे। भक्ति से उसे पूजते भी थे।

संप्रदायवादी, वेंगम्मा को देखकर चिढ़ते थे। वे उसे कोसने लगे। उसके परिवार को समाज से बहिष्कृत भी किया गया। उस गाँव में एक बार पुष्पगिरि मठ के अधिपति श्री शंकराचार्य जी पधारे। गाँव के लोगों ने वेंगम्मा की भक्ति और संप्रदाय की अवहेलना के बारे में उन्हें बताया। पुष्पगिरि के स्वामी ने वेंकम्मा को अपने यहाँ बुलाया। नारियल और फूलों के लेकर वह भी स्वामी के पास चल पडी। गद्दी पर बैठे हुए स्वामी को समर्पित कर सामने चुपचाप खडी हो गई। नमस्कार तक किये बिना

खडी वेंगमांबा को देखकर मठाधीश ने कहा - ''माई! तुम तो पतिविहीना होते हुए, इस तरह सुहागन रहना संप्रदाय की अवहेलना करना ही है न? क्यों तुम इस तरह कर रही हो?'' मठाधीश के प्रश्न का समाधान, वेंगमांबा का यह रहा - ''स्वामी! मेरे पति साक्षात वेंकटेश्वर जी ही हैं। मैं तो नित्य सुहागन हूँ। ठीक है। अगर आपके कहे अनुसार अगर मैं शिरोमुंडन कर लूँगी तो आप फिर से मेरे सर पर बालों को उगने से रोक सकेंगे क्या?'' मठाधीश के पास इस प्रश्न का समाधान ही नहीं था। लेकिन उन्होंने फिर से पूछा - ''सो तो ठीक है। लेकिन मैं तो एक मठाधीश हूँ। मुझे तुम ने तो नमस्कार तक नहीं किया। ऐसा क्यों?' वेंगमांबा ने झट से कहा -'' स्वामी! आप इस गद्दी पर से उठ खडे हो जाइये। इस गद्दी को मैं नमस्कार करूँगी।' मठीधीश जी उठ खडे हो गये। तत्क्षण वही गद्दी, घोर शब्दों के साथ जल कर राख हो गई। इस हठात् घटना से मठाधीश जी डर के मारे थर थर काँपने लगे। अपने बच जाने की खुशी में वेंगमांबा की खूब तारीफ कर लोगों को यह बताकर चले गये कि वेंगमांबा में देवतांश है। उसे इन सामाजिक बंधनों की आवश्यकता नहीं है। उसे जो भाये, वैसे ही रहने दीजिये। उसकी सेवा में खुद तर जाइयें।

कुन्ते की दुम टेढी की टेढ़ी ही रहती है। इसी तरह दुष्टों की बुद्धि में अच्छे विचार कैसे आयेंगे? कुछ लोग तो अभी भी वेंगमांबा को सताते ही रहे। उस गाँव में जो नृसिंह देवता का मंदिर था, उसमें वेंगमांबा ही पूजादिक भी करती थी। एक दिन, वहाँ के हनुमान मंदिर में जाकर ध्यान में मग्न हो गई तो वहाँ के अर्चकों ने आकर वेंगमांबा को वहाँ से घसीट बाहर कर दिया कि किसी क्षेत्र को जाकर अपनी कडी तपस्या कर लो।

यहाँ रहती हुई हम सबों के प्राण क्यों खाती बैठी है तू?'' वेंगमांबा का ध्यान भंग हो गया। अर्चकों की तरफ जो उसने देखा, उन नजरों की तीक्षणता से वे सब लोग इतना डर गये कि वेंगमांबा के चरणों पर गिरकर गिडगिडाने लगे। उन्हें वेंगमांबा ने तो क्षमा भिक्षा दे दी लेकिन उनके वचनों को भगवान की ही आज्ञा मानकर बीस साल की वेंगमांबा ने तरिगोंडा को छोड, जंगल से होती हुई तिरुमल गिरि पर पहुँच गई। जनम में पहली बार वह तिरुमल क्षेत्र को देख रही थी। प्रथम दर्शन से ही उसके मन से इस गीत का आविष्कार हो गया।

घनगोपुर परिक्रमा के मंडप,रथ
सच्चे पुण्य को देनेवाले तीर्थ
सूर्य के किरणों से
प्रभायुक्त सुवर्ण शिखर,
पावन परिवार देवताओं के मंदिर
महिमामय मुनियों के मठ परिसर
बडे बडे अश्व और गज
और साधु गो संपदा
मीठी मीठी बोलों के शुक पिकादि पक्षियाँ
फल पुष्पों की वृक्ष जातियाँ
तुलसी आदि कुसुम जातियाँ
वेंकटगिरि पुर में हैं भरीं
उस पुरी के दिव्य भव्य मंदिर में
कलशों से विराजित विमान मध्य में

एक उत्तमोत्तम पुरुष, महिमान्वित
वेंकटेश्वर देवता अपनी प्रिय भामिनी
कमला के साथ
सदैव हैं विद्यमान!

- 'वेंकटाचलमाहात्म्यम्'

पहली बार तिरुमल क्षेत्र को देखते ही, वेंगमांबा ने वेंकटेश जी का कीर्तिगान किया। हर दिन तिरुमलेश के दर्शन के लिए आती थी। अनायास ही कई कविताओं और संकीर्तनों को भक्ति रसावेश में लिख देती थी। उसकी कुशलता को देखकर सभी उसके प्रति विनम्र हो जाते थे। उसकी वंदना करते थे। वेंगमांबा के यहाँ आने के पहले से ही उससे संबंधित समाचारों से सुपरिचित जनता, उसकी खूब प्रशंसा करती थी। लेकिन रहने के लिए जगह न होते हुए, मंदिर के परिसरों में पेडों या मंडपों के नीचे बसर कर रही वेंगमांबा के बारे में सोचनेवाला कोई नहीं था।

आखिर एक दिन वेंगमांबा ने खुद श्री वेंकटेश से प्रार्थना की कि अपने लिए कोई जगह तिरुमल मंदिर के सामने ही दिखायें। उस दिन रात, मंदिर ही के पास सो रही वेंगमांबा के सपने में श्रीनिवास जी ने प्रत्यक्ष होकर कहा कि वेंगम्मा! इस महिमान्वित क्षेत्र में अगर तुम रहना चाहोगी तो मुझे कोई एतराज नहीं है। लेकिन मेरे वक्षःस्थल पर विद्यमान व्यूहलक्ष्मी से प्रार्थना करो। उसकी सम्मति हो, तो तुम अवश्य यहाँ पर रह सकती हो! तुम उसकी उपासना करो।'' भगवान तिरुमलेश के आज्ञानुसार वेंगमांबा, अलमेल्मंगा की उपासना कर उससे खूब पार्थना की कि रहने की अनुमति के साथ जगह भी दिलवा दें।

आनंद निलय वासी स्वामी और अलमेलुमंगा दोनों अलग नहीं हैं न? तिस पर भक्तों की रक्षा करने में दोनों एक दूसरे से आगे ही रहते हैं - सदा सर्वदा। कभी कभार माँ लक्ष्मी, अपने भक्तों की तरफदारी करके स्वामी को मना लेती भी हैं। इस तरह दोनों एक जुट होकर, अपने भक्तों को अनुगृहित करते हैं तथा स्वयं खुश होते हैं। वेंगमांबा की प्रार्थना को दोनों ने सुनी और उसे पूरा करने का संकल्प भी किया। तिरुमल में ही वेंगमांबा को एक स्थिर आवास बनाकर दर - दर भटकने की व्यथा को हमेशा के लिए दूर करने के विचार से, स्वामी ने, अपने आंतरिक भक्त और स्वामी हथीराम बावाजी के महंतु मठ का तत्कालीन अधिकारी - आत्माराम दास जी (1745 - 50) को प्रेरणा दी।

आत्माराम ने स्वयं वेंगमांबा के पास जाकर कहा - ''माई! भगवान बालाजी का संकल्प क्या है, मैं तो नहीं जानता। लेकिन मुझे प्रेरणा मिल रही है कि आपको इसी क्षेत्र पर ही आवास की व्यवस्था कर दें। कृपया मेरी इस प्रार्थना को मानकर भगवान तिरुमलेश की सेवा यहीं कर लीजिये और हम सभी भक्तों को धन्य बनाइये।'' पूरब की माडा वीथी में, ईशान्य के कोने में, भगवान के शिला - रथ के सामने एक झोंपडी बनाकर उसने दे दी। इतना ही नहीं, तिरुमलेश की रसोई तथा पकवानों की निगरानी करनेवाली, माँ वकुळा देवी के नाम पर, हर दिन वेंगमांबा को एक सेर चावल तथा अन्य रसोई सामान हर दिन भेजने का प्रबंध भी किया। भगवान बालाजी के मंदिर का प्रशासन, महंतु - मठ के हाथों में जाने के सौ साल पहले की घटना यह है। (1843 - 1933) लेकिन तब भी महंतु मठ के अधिकारी, तिरुमल यात्रियों के सच्चे सेवकों के रूप में मंदिर में भी उन्नत स्थान रखते थे। इस कारण महंतु आत्माराम दास

जी की इस व्यवस्था को उन्होंने ने भी स्वीकारा। हर दिन वेंगमांबा को भगवान तिरुमलेश के भण्डार - घर से चावल, सब्जी आदि भेजे जाने लगे। वेंगमांबा ने भी इस व्यवस्था को साक्षात् भगवान श्रीनिवास की ही आज्ञा मानकर स्वीकारा।

तिरुमल पर प्रश्रय मिलने की चिंता तो टल गयी। लेकिन अब वेंगमांबा की चिंता यह थी कि भगवान वेंकटेश की कृपा - दृष्टि स्वयं पर कब पडेगी? हमेशा मंदिर से चिपककर रहती थी। मंदिर बंद रहने के समय में मात्र, अपनी झोंपडी में रहती थी। अगर खाने के लिए कुछ बना लेती तो स्वामी को समर्पित कर खा लेती थी। उसका सब कुछ अब भगवान वेंकटेश्वर ही है बस! आँखें खुली हों या मूँदी, वेंकटेश्वर उसके मन में बस गये थे। सप्तगिरीश उसके सामने खडे होकर उसकी सारी बातें सुन लेते थे। हाँ में हाँ मिलाते थे।, उसके गीतों को सुनकर, सुध बुध खोकर नाचते थे। - इतने में वेंगमांबा के मन में औरेक इच्छा पैदा हुई कि हर सुबह श्री वेंकटेश्वर की मूल विराण्मूर्ति को फूलमालाओं को समर्पित कर, हर शाम, सभी पूजाओं के बाद कपूर की आरती दें।

तुलसी प्रेमी - श्रीनिवास स्वामी के लिए तुलसी पौंधों को पालने की इच्छा से एक बगीचे की तैयारी वेंगमांबा ने की। पौंधों के लिए पानी चाहिए ही। इस कारण एक कुएँ को भी उसने खुदवाया। लेकिन कुएँ में पत्थर के आने के कारण, जल - धारा रूक गयी। वेंगमांबा ने नीचे कुएँ में पहुँचकर उस पत्थर को पूजा और गंगा भवानी से प्रार्थना की कि अपनी मनोकामना को पूरी करें। वेंगमांबा के कुएँ से बाहर निकलते ही पत्थर में दरारें पड गयीं और पानी की गंगा उभर कर बाहर आयी।

वेंगमांबा की महिमा की प्रशंसा कर, वहाँ के लोगों ने उसकी आरती उतारीं। कुएँ के पानी से बगीचे के पौधों को पानी देना, तुलसी मालाओं को गूँथकर मंदिर में समर्पित करना, विविध वर्णों के फूलों से सुंदर मालाएँ बनाकर भगवान की मूल विराट मूर्ति को अलंकृत करना, यही उसकी दिनचर्या थी। फिर रात में आनंद निलय में पहुँचकर वेंकटेश्वर स्वामी की आरती उतारने से ही उसे तृप्ति मिलती थी।

वेंगमांबा का वह कुआँ अभी भी तिरुमल क्षेत्र में है। पापविनाशम् के रास्ते में तिरुमल की हाथी - शाला जो है, उसके सामने ही ''अम्मोरि बावि'' (माँ जी का कुआँ) के नाम से व्यवहृत इस कुएँ के पानी का ही अभी भी स्वामी के उपवनों के लिए उपयोग करते हैं।

वेंगमांबा से समर्पित तुलसी तथा फूल मालाओं से अलंकृत वेंकटेश्वर स्वामी अधिक आनंद और उत्साह से भक्तों को आनंद बाँटते थे। शाम, आखिरी बार वेंगमांबा की आरती की कांतियों में स्वामी अपनी - विभा को दिखाते हुए भक्त जनों - को दिव्यानुभूतियों को प्रदान करते थे।

खाली समयों में वेंगमांबा तुलसी वन की एक चट्टान पर बैठकर भक्तों के आश्रित - पारिजात, वेंकटेश्वर स्वामी पर कविताएँ लिखती थी। गीत लिखकर गाती भी थी।

वेंगमांबा की लेखिनी से निकलकर वेंकटेश को समर्पित एक रचना, विष्णु पारिजात, यक्षगान के रूप में (लोक संगीत की एक विधा) के रूप में बहुत ही प्रसिद्ध हुई। गंधर्व गान बन भक्तों को खूब रिझाने लगी।

वेंगमांबा की महिमाओं एवं रचनाओं के कारण तिरुमल वासियों और यात्रियों में भी उसके प्रति, दिन ब दिन, भक्ति बढ़ने लगी। तिसपर

लोगों में प्रचार हुआ कि साक्षात् श्रीनिवास स्वामी ही उससे बात करते हैं, उसके गीतों को सानंद सुनते हैं तथा उस खुशी में अपने आप को खोकर नाचते भी हैं। जनता की दृष्टि में वह, वेंकटेश्वर स्वामी की अंश - संभूता ही थी। उसके आशीर्वाद पाना तो साक्षात् वेंकटेश्वर जी के आशीर्वाद पाना ही है।

इस बीच, तिरुमल स्वामी की सेवाओं में प्रमुखतया भाग लेनेवाले ताळ्ळपाक अन्नमाचार्य के परिवार वालों ने तरिगोंडा वेंगमांबा की भक्ति, महिमा एवं रचनाओं के बारे में सुना। तिसपर उन्हें यह जानकर खुशी भी हुई कि वेंगमांबा अपनी ही शाखा - नंदवरीक ब्राह्मण की हैं। इन सभी कारणों से वे लोग वेंगमांबा के पास गये। वराह स्वामी मंदिर के पीछे अपने ही घर के एक भाग में उचित निवास का प्रबंध कर, उसे वहीं रहने की उन्होंने प्रार्थना की। उस दिन से वेंगमांबा अपनी उस झोंपडी को छोडकर अन्नमय्या के परिवार के पास रहने लगी। वहाँ भी विविध सुगंध भरित फूलों के उपवन को पालती हुई, वेंकटेश्वर की सेवा में तुलसी मालाओं और आरती की सेवा को समर्पित करती हुई अपना समय बिताने लगी।

उसके घर के सामने ही भगवान वेंकटेश्वर का अर्चक स्वामी 'अक्काराम दीक्षितुलु' का भी निवास था। प्रधान अर्चक होने के कारण, उनके वैभव में कोई कमी नहीं थी। संपदा के साथ रिस्तेदार भी अधिक थे। नौकर - चाकर भी थे। मंदिर में भी अक्काराम दीक्षितुलु को बडा मान - सम्मान मिलता था। इन सब के कारण, उसके पाँव, जमीन पर न टिकते थे। वेंगमांबा को तो निरंतर वेंकटेश स्वामी की भक्ति के बिना

और कोई ध्यान ही नहीं रहता था। अक्काराम् दीक्षितुलु को वेंकम्मा का रहन - सहन अच्छा नहीं लगा। 'सब लोग मेरा कितना आदर करते हैं। लेकिन यह औरत तो मेरी तरफ ताकती ही नहीं! सब लोग तो इसकी तारीफ करते हैं न! इसी लिए इसका इतना सा घमंड चढ गया है। मैं तो स्वयं भगवान वेंकटेश जी का आंतरिक सेवक हूँ। उनके दिव्य मंगल शरीर को भी छू कर उनकी सेवा पूजा अर्चना करता हूँ। यह तो मुझ से भी बडी भाग्य शाली है क्या? अपने गाँव से निकाल देने के कारण यहाँ आकर बस गई है और बडी भक्तिन बन गई है!' वेंगमांबा की हमेशा निंदा करना ही उसका काम था। एक विधवा होते हुए, सुहागन की तरह सिंदूर और फूल धरना, मंदिर में भगवान की सेवा में भाग लेना, मंदिर के अधिकारियों में भी वेंगमांबा के प्रति गौरवादर होना, सबसे बढ़कर ताळ्ळपाका के परिवार वालों के साथ यहाँ उसका रहना - दीक्षितुलु को जले पर नमक छिडकने सा हो गया। हमेशा दीक्षितुलु, वेंगमांबा की बुराई जोर जोर से इतना करता था ताकि वेंगमांबा को भी साफ साफ सुनाई दें। लेकिन वेंगमांबा तो प्रति क्षण तिरुमलेश के ध्यान ही में लगी रहती थी। उस भव्य आध्यात्मिक जगत में सदा डूबी रहने वाली एक सच्ची भक्तिन के सामने, जगत् कल्याण मूर्ति तिरुमलेश का सुंदर दरहास ही दिखाई देता था न कि दीक्षितुलु की विकृत चेष्टाएँ! ''विनाश काले विपरीत बुद्धिः'' वाली सूक्ति के अनुसार, दीक्षितुलु की सोच और भी बिगड गई। वेंगमांबा के तुलसी - वन में जूठे - पत्तों की थालियाँ दलवाने लगा। उसकी इस चर्या को कुछ हद तक सहने के बाद वेंगमांबा ने एक दो बार सविनय विनती भी की। लेकिन दीक्षितुलु के विचार जैसे के तैसे ही रहे।

एक बार वेंगमांबा ने भगवान के अलंकार के लिए, उनते सर से पाँव तक फूलों की मालाओं को समर्पित किया। पूजा अर्चना के बाद प्रसाद लेकर, भक्ति में ओतप्रोत हृदय से घर लौटी। पिछवाडे में एक गद्दी पर बैठकर, कोटि सूर्य कांतियों से प्रभामय वेंकटेश्वर के आनंद निलय विमान के शिखर को ही एकटक देखती हुई ध्यान में खो गई। अपराह्न की वेला थी। वेंगमांबा अपनी ब्राह्य स्मृति खो बैठी। उस समाधि स्थिति में, आनंद की अश्रुधारा, आँखों से निकल रही थी। दीक्षितुलु के घरवाले भोजनोपरांत पत्तों की थालियों को वेंगमांबा के बगीचे में फेंक दिये। वे सब आकर वेंगमांबा के सर पर ही गिर पडीं।

कहा जाता है कि अगर कोई अपनी ही बुराई करें, था गालियाँ दें तो भी श्री वेंकटेश्वर स्वामी जी सह लेते हैं। लेकिन अपने भक्तों की निंदा या बुराई को वे तिनका भर भी सह नहीं पाते हैं। भले ही वे भक्त, उस निंदा की परवाह न करें लेकिन भगवान तो अपने भक्तों की निंदा करनेवालों को छोडेंगे ही नहीं।

वेंगमांबा के ऊपर पत्तल पडते ही उसे स्वयं भगवान वेंकटेश जी अभिमंत्रित कर दिये। बस। वेंगमांबा की आँखों लाल - लाल हो गईं। दीक्षितुलु को देखते हुए उसने क्रोध में कह दिया - 'रे पापी! आज ही तेरे वंश का आखिरी दिन है। तेरा पूरा परिवार का पेड, जडों सहित नष्ट हो जायेगा।' वेंगमांबा के इस श्राप का फल तुरंत इतना तीखा निकला कि अर्चक और उसके रिस्तेदार सब, खून की उल्टियों से मौत के घाट उतर गये - आग में जल जाती टिढ्ढ़ियों की तरह। उनमें से दीक्षितुलु का एक बेटा लडखडाते पैरों से भक्तिन वेंगमांबा के पास आकर गिडगिडाया कि उसे क्षमा कर दे।' तब तक वेंगमांबा का क्रोध कुछ कम हो गया था।

''हाँ, आज से आप के वंश में सिर्फ एक ही लडका बचेगा।'' कहकर शाप की तीव्रता को उसने घटा दिया। प्राण बचाकर वह लडका वहाँ से भाग निकला। उस दिन से भगवान श्रीनिवास के सरकारी अर्चकों के परिवारों में एक ही बचता आ रहा है। भगवान को दुतकारने से बढ़कर, भक्त को दुतकारने के फल इसी तरह तीखे ही होते हैं न?

तिरुमल मंदिर जब अंग्रेजों के प्रशासन में था, उन दिनों एक बार ऐसा हुआ कि भगवान वेंकटेश्वर की अर्चना वंशानुगत करनेवाले अर्चकों को मंदिर में प्रवेश न कर सकने की स्थिति आयी। उस स्थिति में मंदिर के कार्यक्रमों में बाधा न पहुँचने की दृष्टि से एक और वैखानस अर्चक को, सरकार ने नियुक्त किया था। वही - ''सरकारी अर्चक'' कहलाता है। तब से सरकारी अर्चक नियुक्त हो रहे हैं तथा पूजादिकों में भाग भी ले रहे हैं। आज जो 'सरकारी आरती' 'सरकारी उत्सव' आदि शब्दों का प्रयोग हो रहा है, उनका अर्थ ''देवस्थानम् की आरती'' और 'देवस्थानम् का उत्सव' के रूप में लेना चाहिए।

उस दिन शाम, वेंगमांबा चिंतित हृदय से मंदिर में गयी। मुँह लटकाकर आरती उतारने लगी। उसकी तरफ देखते हुए श्रीनिवास ने कहा - 'वेंगम्मा! यह तो मेरा ही करतूत है। तुम्हें परेशान होने की आवश्यकता ही नहीं है। दुष्टों को सजा मिलनी ही चाहिए। तुम्हें अकारण कष्ट पहुँचानेवाले उस अर्चक को, अपने पाप का फल तो भोगना ही होगा न? यह मात्र मेरा ही काम है। दो पहर में जो कुछ हुआ, तुम उसे भूल जाओ! हर दिन शाम स्वयं आकर मेरी आरती उतारो और खुश करो!'' भगवान के वाक्यों से वेंगमांबा का मन हलका हो गया। हर दिन शाम की आरती भगवान श्रीनिवास को समर्पित करती हुई खुश हो जाने

लगी। इतना ही नहीं। शंख, चक्र, कटि, वरद हस्त धारी, वज्र मुकुट, कर्ण - कुंडल, नागाभरण, नंदक खड्ग श्रीवत्स चिन्ह, तथा पीतांबर धरकर खडे स्वामी के पास तो वेंगमांबा घंटो ध्यान में मग्न हो, अपना सारा समय वहीं पर बिता देती थी। मंदिर के अधिकारी भी उसे कहीं रोकते नहीं थे। तिस पर भक्ति पूर्वक गौरवादर भी करते थे। उसके कारण कभी कभार, मंदिर के कार्यक्रमों में बाधा पहुँचने पर, या देरी हो जाने पर भी, भक्त तो उसे कुछ न कहने के अलावा, यह भी सोचते थे कि उसके इस मंदिर में रहना ही, उन सब के लिए कल्याणकारी है।

कुछ दिनों के बाद फिर से अर्चकों में खलबली पैदा हुई। दिन बीतते बीतते वह बाहर आ गयी। मंदिर में जब जब वेंगमांबा आती भी, अर्चक स्वामी उसे कुछ न कुछ कह देते थे।

वह ब्रह्मोत्सवों का समय था। बहुत ही कीमती आभूषणों से अर्चक स्वामीयों ने श्री वेंकटेश्वर की मूल विराट मूर्ति को सजाया। परिमल भरित पुष्प मालाओं से श्रीनिवास की मूर्ति को मनमोहक बना दिया। वेंकम्मा भी अपने उपवन के फूलों से सुंदर मालाएँ गूँथकर लायी। भगवान वेंकटेश को समर्पित कर आरती भी उतारी। तिरुमलेश के अद्भुत सौंदर्य को निहारती खडी रह गई।

इसे देखकर अर्चक स्वामियों को बहुत गुस्सा आया - ''भक्ति कितनी भी हो, एक विधवा के आकर स्वामी को आरती चढाना क्या सही बात है? शरम ही नहीं है इसे! हम अर्चकों से बढ़कर है क्या इसकी पूजा? सुहागन नहीं है। तिसपर फूल, कुंकुम से सजधजकर स्वामी के सामने भी आती है। क्या अपने इस तरह संप्रदाय के विरुद्ध आकर स्वामी को न पूजें, तो क्या भगवान को कोई कमी होगी कहीं? आज के

लिए तो ठीक है। जो हो गया सो हो गया! कल तो इसे मंदिर में कदम न रखने देंगे बस।' अर्चक स्वामियों की यह बातचीत वेंकम्मा को साफ साफ सुनाई दे रही थी। उनका उद्देश्य भी यही था। वह निराश घर लौटी।

''अगर अपना मंदिर जाना सभियों के दिलों को खटकती है तो आखिर क्यों जायें और उन्हें क्यों तकलीफ दें? आज से मंदिर जाऊँगी हो नहीं। आरती ले जाऊँगी ही नहीं। लेकिन स्वामी तिरुमलेश के दिव्य दर्शन के विना जी पाऊँगी कैसे? यह तो और भी दुर्भाग्य है। उन सभीयों की बातें सुनना ही बेहतर है - तिरुमलेश के दर्शन के बिना रहने से! न न! जो भी हो, मेरा वहाँ न जाना ही अच्छा है - उन अर्चक स्वामियों को तो शांति मिलेगी न?' इस तरह सोचते सोचते, अपने ही भाग्य को वह कोसने लगी! पत्थर सा दिल लेकर घर में ही बैठ गई। एक हफ्ता बीत गया। अर्चक स्वामी बहुत ही खुश हो गये। 'उसे हमने खूब पाठ पढाया। वह अब मंदिर की तरफ मुडकर देखेगी भी नहीं, हाँ!'

अर्चकों की बातों के प्रभाव से वेंकम्मा को मंदिर न आते हुए देख, वेंकटेश्वर स्वामी के मन में खलबली मच गई। 'कल आयेगी, परसों आयेगी। तुलसी मालाएँ लेकर समर्पित करेगी। मेरी आरती उतारेगी।' इस तरह हर दिन उसकी प्रतीक्षा कर करके, वे निराश हो गये। वह तो नहीं आयी। 'अर्चक स्वामियों को फिर से सबक सिखानी ही पडेगी। वेंगमांबा की महिमा को फिर से लोगों के सामने लाना ही होगा।' स्वामी ने ठान ली।

ब्रह्मोत्सवों के आखिरी दिन, रथोत्सव का समय था। श्रीदेवी भूदेवी के साथ मलयप्पा स्वामी (श्रीनिवास की उत्सव मूर्ति) तिरुमल की वीथियों में शोभायात्रा के लिए निकले! लाखों भक्त जनों को अपनी

कनखियों से देखते हुए अनुग्रहीत कर रहे थे स्वामी! रथोत्सव धीरे धीरे दक्षिण तथा पश्चिम की वीथियों से होकर उत्तर की वीथी में प्रवेश कर ही रहा था कि वेंगमांबा के घर के पास आकर रुक गया। अर्चक स्वामी, मंदिर के अधिकारी, सेवक, भक्त जन - सभीयों के लाख कोशिश करने पर भी, एक पग भी आगे बढ़ नही रहा था जैसे सामने मेरु पर्वत ही रास्ते के बीच आ खडा हो गया हो। घंटों बीत गये। लेकिन तिरुमलेश का रथ वहीं खडा है। बुजुर्गों ने कहा - ''किसी महात्मा या भक्त के दिल को ठेस पहुँची है। इसी लिए ऐसा हो रहा है।'' इस निर्णय से अर्चकों को याद आया कि 'आजकल वेंगमांबा मंदिर न आ रही है। कारण तो हमारा व्यवहार ही होगा। क्योंकि यह स्वामी का रथ तो वेंगमांबा के घर के आगे ही रुका हुआ है!'' अर्चक स्वामीयों को अपनी गल्ती का एहसास हुआ। झट वेंगमांबा के पास गये। उसे साष्टांगवत प्रणाम कर क्षमा माँगकर उन सबों ने प्रार्थना की कि मायी। कृपया आकर स्वामी की आरती उतारो! स्वामी से प्रार्थना करो कि हमें माफ कर दें। तभी रथ तो आगे बढ़ेगा!'' उनकी प्रार्थना सुनकर वेंगमांबा ने कहा -'' अगर आपका विश्वास है कि मेरी प्रार्थना और आरती से स्वामी का रथ आगे बढ़ेगा तो मैं जरुर आरती उतारूँगी।'' घर से बाहर निकलकर स्वामी तिरुमलेश की आरती उतारकर प्रार्थना की कि रथ को आगे बढ़ायें!' बस और क्या! सप्तगिरीश का रथ अनायास आगे बढा। उस दिन से अर्चक स्वामी और भी भक्ति और आदर से उसे मंदिर में बुलाते रहे और उसकी प्रतीक्षा कर उसीसे कपूर की आरती उतारा करने लगे।

एक दिन शाम का समय! वेंगमांबा हर दिन की तरह, आरती लेकर मंदिर में पहुँची। आरती उतारते समय वेंकटेश्वर स्वामी की विराट्मूर्ति में

दशावतारों के दर्शनोपरांत, ब्रह्मांड में विस्तरित भगवान के तेजोरूप को अपने चर्मचक्षओं से ही वेंकम्मा ने देखा! उसका जन्म धन्य हो गया! उस दिन से मंदिर के अधिकारियों ने निर्णय ले लिया कि हर दिन सभी सेवाओं के आखिर में वेंगमांबा की आरती होगी। इस आरती के बाद और कोई आरती भगवान को न दी जायेगी। उस दिन के लिए मंदिर के दखाजों को बंद कर देना ही चाहिए!'' उसी दिन से वेंगमांबा की कपूर आरती ही वेंकटेश्वर स्वामी को ''मुत्याल हारती'' (मोतियों की आरती) के नाम पर रात की आखिरी सेवा के रूप में दी जा रही है।

अपने बाद भी इस सेवा को जारी रखने के लिए वेंगमांबा ने अपनी बहन की बेटी मंगम्मा को गोद ले लिया। आज भी उसी के वंशज, वेंगमांबा के ही नाम पर इस 'मुत्याल हारती' सेवा को हर रात एकांत सेवा के बाद समर्पित कर रहे हैं।

भगवान वेंकटेश की अपने प्रति इतनी कृपा तथा महिमाओं से वेंगमांबा में, स्वामी तिरुमलेश के प्रति अधिकाधिक भक्ति और विनम्रता घर कर गयी। अनुदिन उनकी सेवा करना, स्वामी की स्तुति में कविताएँ व कीर्तन लिखना उसका हर दिन का काम था। दिन भर अपने ही मंदिर पर बुला लेकर वेंगमांबा की सेवाओं से आनंदित होनेवाले स्वामी वेंकटेश रातों में उसके ही यहाँ आ जाया करने लगे। उसके गीतों को सुनते हुए सर हिला हिलाकर अपना हर्ष प्रकट करते थे। कभी कभी खुशी से इतना नाचते थे कि उनकी फूल मालाओं की पंखुडियाँ नीचे जमीन पर गिर जाती थीं। ''वेंगमांबा! तुम्हारी ये रचनाएँ तो इनती सुंदर हैं। तुम्हारी सृजनशीलता का क्या कहने? रचनाओं के शब्दों की मधुरता तो बेहद बढ़िया है।'' इस तरह स्वामी उसकी रचनाओं की खूब तारीफ करते थे।

इस तरह तिरुमलेश स्वामी की व्याख्या और प्रमाण के साथ वेंकम्मा की कलम से, 'श्री कृष्ण मंजरी', 'रुक्मिणी कलयाण,' 'गोपिका नाटकम्' 'जलक्रीडा विलासमु' 'अष्टांग राजयोग सार' 'मुक्तिकांता विलासमु' 'वासिष्ठ रामायण' आदि अमूल्य रचनाएँ, वेदांत - ग्रंथ, नाटक, आदि कई रचनाएँ आविष्कृत हुईं। लेकिन वेंकटेश स्वामी की प्यास अभी भी नहीं बुझी।

एक बार वेंकटाद्रि कृष्ण ने बालक के रूप में टेढ़ी मेढ़ी चाल से श्री मद्भागवत को हाथ में लिए उसके पास गया। तोतली बोली में कहा - 'माँ! मुझे इस कहानी को सुनाओं न? तुम कहानी सुनाती जाओ! मैं सुनता रहूँगा।' उसकी बातों से अत्यंत प्रसन्न वेंगमांबा ने जवाब दिया 'मेरे लाल! तेरी बात को कभी ना कहा क्या मैं ने? तेरे लिए जो भी पसंद है, उसे ही मैं भी बोलूँगी! तू जो कुछ मुझसे कहलाना चाहता है, वहीं मैं भी कहूँगी!'' कहती हुई उसी दिन से भागवत की रचना में जुट गई। सुबह मंदिर हो आने के बाद मध्याह्न वेला में पंडितों तथा सामान्यों को भी सुलभ रीति में अवगत होने की रीति में द्विपद वृत्तों में महाभागवत की रचना करने लगी। रातों में एकांत सेवा के बाद अपने घर पर आ रहे श्री वेंकटेश्वर स्वामी को प्रीतिकर पकवानों को बनाकर खिलाने के साथ, अपनी मीठी मीठी रचनाओं को भी चखा देती थी। स्वामी भी पकवानों के साथ, भागवत कथा का भी आस्वादन करते थे तथा फिर सुबह मंदिर पहुँचकर अपने भक्तों को अपने दिव्य दर्शन से आनंदित करते थे।

एक दिन रात, श्री वेंकटेश्वर स्वामी तनिक देरी से वेंकम्मा के घर पहुँचे। उनके चरणों को धोकर, सेवा करती हुई, वेंगमांबा ने कहा - ''स्वामी! सकल जगों के नायक हो आप! इस तरह हर दिन आपका

आना और चले जाना तो मुझे अच्छा नही लग रहा है। आप हमेशा मेरे ही पास रह जायेंगे तो मुझे शांति मिलेगी! आपकी निरंतर सन्निधि का सुख मुझे प्रदान कीजिये!''

तिरुमलेश ने कहा - ''वेंकम्मा! यह कैसे मुमकिन है बोलो! - तुम्हारे जैसे अनेकों भक्त कहीं दूर दूर से भी अनेकानेक कष्टों को भी सहकर आते रहते हैं न? उनकों भी मेरा दर्शन - सुख देना पडेगा कि नहीं। इसलिए हमेशा तेरे ही पास रहने की इस इच्छा की पूर्ति नहीं हो सकती है।'' तिरुमलेश की आँखों में हँसी।

वेंगमांबा ने भगवान के पीतांबर को पकड लिया और कहा - ''वाह रे स्वामी! तेरे नाटक, मेरे पास नहीं चलेंगे हाँ! तू तो आदि मध्यान्त रहित है! स्वयं प्रकाशक हो। जगदीश्वर हो। सर्वांतर्यामी हो! जहाँ कहीं भी ढूँढें वहीं प्रत्यक्ष हो जा सकते हो! ऐसा कोई एक जगह दिखाओं जहाँ तू नहीं हो! ''अणोरणीयान महतो महीयान' हो न! उपनिषदों के इन वाक्यों का अर्थ यही है न? इसीलिए तू वहाँ भी रह सकता है। यहाँ भी रह सकता है - एक ही समय में! इसीलिए तेरी सदा सर्वदा सन्निधि का सुख मुझे चाहिए ही!'' वेंकम्मा इस तरह पार्थना कर ही रही थी। स्वामी वेंकटेश्वर भी उसे समझाने की कोशिश कर ही रहे थे कि इतने ही में मंदिर में सुप्रभात वेला का समय हो गया। स्वर्ण द्वार के पास ''कौसल्या सुप्रजा रामा'' आदि श्लोकों का पठन भी शुरु हो गया। बस! स्वामी चौंक पडे। तत्क्षण अंतर्निहित भी हो गये। लेकिन वेंगमांबा के हाथों में भगवान के चीनांबर का टुकडा, फटकर रह गया। वेंकम्मा ने भगवान के चीनांबर के उस टुकडे को भक्ति पूर्वक आँखों से लगाकर, अपने पूजा गृह में रख दिया।

यहाँ भगवान वेंकटेश के मंदिर में अर्चकों ने स्वामी की मूल विराट मूर्ति का सर से पैर तक निरीक्षण किया तो, मालुम हुआ कि उनका चीनांबर थोडा सा फटा हुआ है। यह कैसे हुआ? चीनांबर मात्र का यह हाल है। तो मंदिर के सारे वस्तु ठीक ठाक हैं। यह तो चोरों का चोर है। इसी की लीला मात्र है यह घटना! इस तरह के विचार विमर्श के बाद सभीयों ने सोचा कि इस तिरुमल पर, वेंगमांबा से बढ़कर भक्त दूसरा कौन हो सकता है। चलो, उसी के पास जाकर पूछ लें।' सब लोग वेंगमांबा के पास चल पडे। नमस्कारादि के बाद, आने का कारण उन्होंने बताया तो वेंगमांबा ने किसी तरह की उत्तेजना के बिना ही बताया - ''तो शायद वही होगा जो पूजा गृह में मैं ने रखा है। जाकर देखिए! अगर वही है तो ले जाइये!''

अर्चक स्वामियों ने देखा तो पीतांबर वहीं रखा हुआ था। लेकिन वह फटा नही था। भगवान वेंकटेश जी का वही चीनांबर वेंकम्मा के पूजा गृह में बिना फटा हुआ! उनके आश्चर्य की सीमा न रही। श्री वेंकटेश्वर भगवान और उनकी आंतरिक सेविका वेंगमांबा के बीच जो अलौकिक घटनाएँ हो रही थीं, उनकी व्याख्या तो कोई कर ही नहीं सकता था। वेंगमांबा की अनुमति से उस पीताबर को चाँदी की थाली में - रखकर, मंगळ वाद्यों साहित मंदिर ले आये। लेकिन तब तक मूल विराट मूर्ति पर जो थोडा सा फटा हुआ पीतांबर था, उसे भी अब गायब देख, अर्चकों की आँखों में आनंद की अश्रुधाराएँ बहने लगीं। 'यह पीतांबर तो अति अमूल्य है। स्वामी को अत्यंत प्रिय है' कहते हुए उन्होंने उसी से विराटमूर्ति को अलंकृत कर उसकी आराधना की। वेंगमांबा को ही भगवान वेंकटेश्वर का अवतार

मानकर, सभी भक्त असीम भक्ति एवं विश्वास से उसकी सेवा अर्चना भी करने लगे।

वेंकम्मा के तिरुमल पर आने से लेकर, अब तक जो सारी घटनाएँ घटीं, इन सभियों के कारण तथा भक्ति से ओत प्रोत उसकी रचनाओं के कारण, तरिगोंडा वेंगमांबा की कीर्ति इतनी बढ़ गयी कि हर दिन तिरुमल पर आ रहे भक्त उसके दर्शन एवं आशीर्वाद के लिए तरसने लगे। दूर दूर से जमींदार, संस्थानाधीश, उसे देखने आते थे तथा दान भी देते थे। जमीन को ईनामों के रूप में देते थे। धन को उपहारों के रूप में समर्पित करते थे।

इस सारी संपत्ति को, वेंगमांबा ने तिरुमल के भक्तों के लिए ही खर्च किया। गरीब यात्रियों के लिए अन्न - दानादि का आयोजन किया। कडी धूप में पियाऊ केन्दों को रखवाया! इसी तरह हर साल वैशाख के महीने में नृसिंह जयंती उत्सवों को दस दिन के लिए वैभव से, स्वयं मनाने लगी। इन उत्सवों में सारे भक्तों को निःश्शुलक प्रसाद वितरण भी कराने लगी। अपनी हर एक रचना में तरिगोंडा नृसिंह स्वामी तथ तिरुमल के वेंकटेश्वर के बीच अभेद की स्थापना भी उसने की! उसकी दृष्टि में ये दोनों एक ही थे! इसी कारण, तिरुमल क्षेत्र पर संपन्न होनेवाले नृसिंह जयंत्योत्सवों में भी श्री देवी भूदेवी सहित श्री वेंकटेश्वर स्वामी तरिगोंडा वेंगमांबा के घर पधारकर, पूजा को स्वीकारते हैं। अभी भी यही रिवाज चलती आ रही है।

इन सबों के अलावा, वेंगमांबा भक्तों के दिये हुए धन से अपने काव्यों की प्रतियाँ भी तैयार करवाती थी। उसके मठ में ''अष्ट

घंटमुलु'' (लिखने के आठ उपकरण) नाम से आठ लिपिक नियुक्त हो गये। ये सब लोग, वेंगमांबा की रचनाओं की प्रतियाँ तैयार करते थे। वेंकटगिरि, काळहस्ति, कार्वेटि नगरम आदि संस्थानाधीश, कूचिपूडि के नृत्य कलाकारादि, वेंगमांबा की रचनाओं की प्रतियों को ले जाया करते थे।

उसकी रचनाओं में अत्यंत उत्तम रचना है ''श्री वेंकटाचल माहात्म्य!'' जगत्कल्याण चक्रवर्ती, श्री वेंकटेश्वर की महिमामय जीवन गाथा ही है यह रचना। दो हजार गद्य तथा पद्य कविताओं तथा छः प्रकरणों में विस्तरित इस रचना के प्रप्रथम श्रोता एवं एक मात्र साक्षी भी श्री वेंकटेश्वर स्वामी ही थे। उनके सामने ही उनकी जीवन गाथा की रचना की उसने! वेंकम्मा की इस रचना का हर दिन पारायण करने से, कहते थे कि विवाहार्थियों का विवाह संपन्न होगा। भक्तों की सत्कामनाओं की पूर्ति भी होगी। श्री वेंकटेश्वर भी अनुग्रहीत करेंगे। इस तरह कीर्तित, इस ग्रंथ की प्रतियों को तैयार करवाकर भक्त ले जाते थे। अब तक प्रकाशित कई ''वेंकटाचल माहात्मय'' ग्रंथों में, इस ग्रंथ की जो प्रचुरता तथा व्यापकता है, वह किसी और ग्रंथ के लिए नही है। इन बातों में कोई भी अत्युक्ति नहीं है।

दिन ब दिन वेंगमांबा के पास आनेवाले भक्तों की संख्या बढ़ती ही जाने के कारण, वेंगमांबा की आध्यात्मिक साधना में बाधा पहुँचने लगी। उसके मन में विचार पैदा हुआ कि इस समस्या का कुछ न कुछ समाधान ढूँढना ही पडेगा। ठीक उसी समय स्वामी तिरुमलेश उसके यहाँ आ पहुँचे।

‘क्या हुआ मेरी प्यारी माई! किस सोच में डूबी है कि मेरे आगमन को भी अनदेखा कर दी तू ने आज?’ स्वामी ने प्यार से पूछा! वेंगमांबा ने जवाब दिया - ‘स्वामी श्रीनिवास जी! दिन ब दिन बढ़ती रही यात्रियों की संख्या के कारण, मेरी साधना में बाधा पहुँच रही है। मैं तो तंग आ चुकी हूँ, मुझे तुझमें ऐक्य कर लो स्वामी।’ वेंगमांबा की प्रार्थना सुनकर भगवान तिरुमलेश ने कहा - ‘अभी और कुछ समय के लिए, तुझे यहीं, इस तिरुमल पर ही रहकर तपस्या करनी होगी। तेरी तपस्या के लिए उचित दिव्य स्थल को मैं ही तुझे दिखाता हूँ! चलो।’ कहते हुए, तत्क्षण मंदिर की उत्तर दिशा की तरफ बारह मील की दूरी पर स्थित ‘‘तुंबुरु कोना’’ नामक स्थान पर वेंगमांबा को पहुँचाया। उस घाटी में स्थित एक गुफा को दिखाकर स्वामी ने कहा - ‘‘वेंगम्मा! तू दिन भर यहाँ अपनी तपस्या व साधना करो। रात में इस गुफा में स्थित विवर द्‌वार से मंदिर में (आनंद निलय) पहुँचकर मेरी पूजा कर लो।’’ उस दिन से वेंगमांबा दिन भर तपस्या कर लेती थी। रात, एकांत सेवा के बाद, स्वर्ण द्वारों के बंद होने के बाद, बिल मार्ग के द्वारा आनंद निलय पहुँचकर स्वामी की सेवा कर लेती थी। कुछ दिन तो ऐसे ही बीत गये। लेकिन अर्चकों ने देखा कि रात, आखिरी बार जिन फूलों को मूल मूर्ति पर उन्होंने चढाया था, वे सब निकाल दिये गये हैं और नये फूलों से फिर से पूजा की गई है। उन्होंने यह भी सोचा कि तिरुमल से अद्दश्य हो गई वेंगमांबा ही रातों में स्वामी के पास आकर वेंकटेश्वर स्वामी की पूजा अर्चना कर रही है।

लेकिन इस भेद को किसी तरह खोलना ही पडेगा! तत्कालीन महंतु बाबा ने इस विचार से, एकांत सेवा के बाद, स्वर्ण द्वारों के बंद होने के

पहले ही भगवान के मंदिर में एक कोने में छिपकर बैठ गया। ठीक आधीरात के समय, श्री वेंकटेश्वर स्वामी के चरणों के पास एक विवर का मार्ग खुला जिसमें से अद्भुत तेजोमय मूर्ति वेंगमांबा, पूजा सामग्री के साथ ऊपर आयी। बस! इस अद्भुत प्रकाश के बीच वेंगमांबा को देखते ही वह महंतु बाबा, बेसुध होकर गिर पडा!

सुबह, सुप्रभात सेवा के लिए स्वर्ण द्वारों को जब खोला गया, तो अर्चक स्वामी, मूर्छित महंतु बाबा को गर्भालय में देखकर चैंक पडे। उसे समझा बुझाकर पूछने पर उसने वेंगमांबा और उसकी पूजा के बारे में सब कुछ बता दिया। उसने आशंका व्यक्त की कि वेंगमांबा तिरुमल क्षेत्र के परिसर में ही रहती है तथा रातों में स्वामी के पास आकर पूजा कर लेती है। सभी भक्त जनों ने तब से वेंगमांबा के लिए तिरुमल क्षेत्र की हर घाटी में खूब खोज की। हर गली की छान मारी।

इसी समय तिरुमल क्षेत्र पर एक ब्राह्मण आया। सिर्फ आँख और मुँह छोडकर उसके सभी अवयवों पर फोडे थे। शरीर से निकलती बदबू के करण सभी उसे सामने आने तक न देते थे। पत्नी, एवं संतान भी उससे प्यार नहीं करती थी। बिचारा वह ब्राह्मण अपनी इस दुरवस्था पर बहुत ही चिंतित होते हुए, अपने इस संचित पाप के प्रायश्चित्त के लिए, अपनों को छोडकर तिरुमल क्षेत्र पर पहुँच गया। भगवान वेंकटेश्वर के दिव्य दर्शन के बाद यहीं पर प्राण त्याग देने का निर्णय भी ले लिया। लेकिन तिरुमल क्षेत्र पहुँचने पर भी उसकी स्थिति जैसी की तैसी रही। यात्री जन, उसे देखकर दूर हट जाने लगे। मंदिर में भी प्रवेश नहीं मिलने से वह ब्राह्मण और भी चिंतित हो गया। अब उसकी तीन चिंताएँ हो

गयीं। एक थी - शरीर पर फोडों की चिंता। इसरी थी मन की अशांति! और तीसरी चिंता - भूख - प्यास की। इन तीनों से वह और - भी निराश हो गया। वह किसी भी तरह तुंबुरु कोना पहुँच गया। अपनी दुस्सह बाधा को वेंकटाद्रि स्वामी को बताते हुए वह चिल्लाने लगा - 'है गोविन्द! सप्तगिरीश स्वामी। मैं और नहीं सह पाऊँगा! मेरे प्राण ले लो स्वामी! इन मुसीबतों से मुझे बचा लो! हे वेंकट रमण स्वामी!'' उसका रुदन, तो तुंबुरु कोना की घाटियों में प्रतिध्वनित होने लगा। गुफा में बैठकर तपस्या कर रही वेंगमांबा को भी सुनाई दिया तो बाहर आयी। ब्राह्मण की दीनावस्था को देखकर उस पर तरस खा, प्रार्थना की। 'स्वामी वेंकटेश जी! इस बिचारे की बाधा को दूर करो! इसकी रक्षा करो।' वेंगमांबा ने उसे मीठे फल दिये। कई दिनों से भूखा पडा हुआ, उस ब्राह्मण ने सोचा कि यह कोई भाग्य देवता या वन देवना - होगी!' भक्ति से वेंगमांबा के चरणों पर वह गिर पडा। उसके दिये हुए फलों को पेट भर खा लिया। वेंगमांबा ने कहा - ''अरे ओ ब्राह्मण! तेरी भूख - प्यास आज से मिट जायेंगी। लेकिन एक बात ध्यान से सुनो! किसी को बताना नहीं कि तू ने मुझे यहाँ देखा है। अगर कहीं बात फिसल गई तो बस, तेरे सर के टुकडे टुकडे हो जायेंगे।'' यह कहते कहते वेंगमांबा ने उसे अपनी आँखें, मूँद लेने को कहा! ब्राह्मण जैसे ही आँखें मूँदकर, फिर से खोला तो देखा, कि वह तिरुमल की पुष्करिणी में से निकला बिलकुल स्वस्थ! पुष्करिणी में स्नान कर रहे भक्तों ने उसे देख लिया और पुष्करिणी से निकलने के कारण उसका नाम ''पुष्करिणीश'' रख दिया। उसके बारे में जान लेने के लिए तरह तरह के सवाल भी करने लगे। लेकिन वेंगमांबा की बातों की याद आते ही वह भयकंपित हो, मुँह नहीं खोलता था।

वहाँ के कुछ लोगों ने इसे पहचान लिया। उसकी आज की परिस्थिति देखकर, अचरज में पड गये। उसे कोई सिद्ध पुरुष समझकर, प्रणाम करने लगे। दान देने लगे। भेंट भी चढाने लगे। कोई मंत्र तंत्र का उपदेश देने की माँग भी करने लगे। इन सभी तारीफों को देखते हुए, वह ब्राह्मण फूला न समाया। अनायास मिली इस ख्याति और संपदा को देखकर वह घमंडी हो गया। इस स्थिति में वह एक दिन यह भी कह दिया कि उसने वेंगमांबा को तुंबुरु कोने में देख लिया तथा उसकी करुणा से ही उसकी सारी बाधाएँ दूर हो गई हैं।' उसी क्षण उसका सर टुकडे टुकडे हो गया। वेंगमांबा जैसी तपस्विनी की बातों की शक्ति ऐसी ही होती है न?

वेंगमांबा का पता - ठिकाना मालुम होते ही, भक्त तथा यात्री सभी उसे ढूँढने में लग गये। उसके दर्शन के लिए तरसने लगे। उससे बातें करने की आस करने लगे। उसके आशीस पाने के आनंद में तिरुमल के परिसर प्रांतो एवं घाटियों में खूब तलाशी करने लगे! इस से वेंगमांबा की एकांतता एवं प्रशांतता में अडचनें होने लगीं।

ऐसे में आनंद निलय में प्रभु वेंकटेश्वर से वेंकम्मा ने प्रार्थना की कि 'हे अखिलांड कोटि ब्रह्माण्ड नायक! तुमने तो बडी ही कृपा से मुझे तुंबुरु कोना में रखा था। लेकिन आज वहाँ भी यात्री मेरा पीछा न छोड रहे हैं। मुझें कुछ नहीं सूझ रहा है!'' उसकी वेदना को सुनकर वेंकटेश्वर स्वामी ने कहा - 'वेंगमांबा! अब से तुझे अकेली छोडना तो उचित नहीं लग रहा है। अब से तुम तीव्र तपोनिष्ठा में प्रवेश करो! तुम तो महान योगिनी हो! उस समाधि से ही हर दिन रात के समय अपने दिव्य तेजोमय रूप से 'आनंद निलय' आकर मेरी पूजा अर्चना कर लो!'

श्री वेंकटेश्वर स्वामी की आज्ञा से सहस्त्र - चंद्र दर्शन की हुई भाग्य - शाली वेंगमांबा तुंबुरुकोना को छोडकर फिर से तिरुमल वापस आ गई। भक्त तथा यात्री सब लोग उसके दर्शन से पुलकित हो गये। कुछ दिनों बाद उसने लोगों को बताया कि अपने जीवन काल की समाप्ति का समय आ गया है। वेंकटेश्वर स्वामी उसे बुला रहे हैं। आज, से करीब एक सौ छियानवे साल पहले, ईश्वर नाम वत्सर के श्रावण महीने के शुद्ध नवमी के दिन समाधि में वेंकम्मा, प्रवेश कर गई। उसकी आज्ञा के अनुसार उसकी समाधि परिमल द्रव्यों से बंद कर दी गई। उस पर तुलसी का पौधा लगाया गया। उस दिन से हर दिन अनेकानेक भक्त उसकी समाधि के दिव्य दर्शन के लिए आते हैं। सन् 1817 में सजीव समाधि में प्रवेश कर गई वेंगमांबा के वृन्दावन को आज भी तिरुमल क्षेत्र के वराह स्वामी मंदिर की उत्तर दिशा में जो ताळ्ळपाका एवं तरिगोंडा वेंगमांबा के निवास हैं, उनकी उत्तर दिशा में सौ गज की दूरी पर स्थित ''वेंगमांबा के उपवन'' में देख सकते हैं। उसके वृन्दावन पर, तिरुमल में पहली बार उसकी रक्षा करनेवाले ''संतकापु मोगलि पेंटा हनुमान जी'' की छोटी से प्रतिमा भी प्रतिष्ठित है।

तिरुमल के स्थानीय लोग, अभी भी, वेंगमांबा की समाधि की परिक्रमा करते हुए उसके प्रति अपनी भक्ति को प्रकट करते रहते हैं। हर शुक्रवार तथा मंगलवार, वृन्दावन के आस पास साफ सफाई कर, रंगोली से अलंकृत करते हैं। तिरुमल में वेंकम्मा 'तरिगणम्मा' नाम से व्यवहृत की जाती है। कहते हैं कि आज भी वेंकम्मा, अपने भक्तों को दर्शन देती हैं तथा अपने भक्तों की मनोकामनाओं की पूर्ति करती रहती हैं।

कहते यह भी हैं कि आज भी वेंगमांबा, उस समाधि में से दिव्य शरीर को लेकर आनंद निलय में प्रवेश कर, स्वामी तिरुमलेश की सेवा करती रहती है। आज भी वेंगमांबा के नाम पर 'मुत्याल हारती' नामक कर्पूर आरती उतारी जाती है जिसकी कांतियों में भगवान बालाजी अपने भक्तों को ढेर सारी मधुरानुभूतियाँ बाँटते ही रहते हैं।

भक्तों के लिए भगवान बालाजी कल्पतरु ही हैं। उनकी दया से कभी उनकी एकांत सेवा में भाग लेने का अवसर आप पायेंगे तो, तरिगोंड वेंगमांबा की मुत्याल हारती (मोतियों की आरती) की आभाओं में प्रकाशमान होनेवाले दिव्य मंगळ विराट मूर्ति को आँखों भर देख लीजिये। शयन मंडप में सुवर्ण डोलिका में योग - निद्रा में मग्न - भोग श्रीनिवास मूर्ति पेरुमाळ के दिव्य दर्शन में तर जाइये! उस समय वेंगमांबा का भी पावन स्मरण कर धन्य हो जाइये। अपने जीवनों को पुनीत बना लीजिए। इतना ही नहीं, प्रत्यक्षतया वेंकटेश्वर स्वामी की एकांत सेवा में भाग लेने के अवसर को प्रदान करने की प्रार्थना उस जगत् कल्याण मूर्ति से कीजिये। इसी पल से आँखें मूँदकर भावना कीजिये कि आप आनंद निलय की एकांत सेवा में तरिगोंडा की मुत्याल हारती की कांतियों में तेजोमय सप्तगिरीश की दिव्य मूर्ति के सामने खडे हैं और परमयोगिनी मात्रुमूर्ति तरिगोंडा वेंगमांबा के ''आरती गीत'' को आप भी गाते हुए, उस तिरुमलेश की कृपा को भरपूर पा रहे हैं।

मंगळ हो! अलमेलमंगा के मन रूपी कमल के
भ्रमर हे! तेरा मंगळ हो!

सद्गुण के निधान! तेरा मंगल हो!
सदगुरु हो श्रीनिवास! तेरा मंगल हो!

(तेलुगु मूल-मंगळमलमेलमंगा)

आनंद निलय-नंदक का अवतारण

देखा मैं ने उन लंबी मालाओं को
देखा मैं ने उन हँस मुखवाले स्वामी को!

''सोने के चरण और उन घुंघुरुओं को
घन पीतांबर, कमर पर बंधे खड्ग को
स्वामी की करधनी की सुंदरता को
उनके नाभी कमल को, उदर बंधनों को''

''तेजोमय उन वरद कटि हस्तों को,
हाथों में धरे शंख चक्रों को,
वक्षःस्थल पर विराजमान कौस्तुभ मणि हारों को
कंठसीमा में अलंकृत आभूषणों को
भुजाओं पर बंधे बाजू बंदों को
माथे पर सजे मोतियों के ऊर्ध्व पुण्ड्र को
हे वेंकटेश! तेरे कर्ण भूषणों को
सिर पर सजे मणिमय मुकुट को (तेलुगु-कंटिकंटि)

कितना सुंदर रूप है? श्वेत कमलों जैसे नेत्र द्वय में वह मधुर मुसकान! मुग्ध मनोहर वदन कांति से विद्यमान वह परंधाम - परमात्मा!

घुंघुरुओं से अलंकृत चरण कमल! चमक दमक से अपनी ओर आकृष्ट कर रहा है वह नंदक खड्ग! स्वर्ण पीतांबर पर अलौकिक

राजसी वैभव से अलंकृत है वह? कटि बंध और नाभि कमल! वरद हस्त! कटि हस्त! वे शंख चक्र! वक्षःस्थल पर कौस्तुभ मणि! चमक रहे रत्नों के आभूषण! गले में विविध मालाएँ! रत्न खचित बाजू बंद! मोतियों सा कांतिमय ऊर्ध्व पुण्ड्र! वे मकर कुण्डल! सर पर विराजमान हीरों का मुकुट! कितना अद्भुत है! कैसा मनोहरी रूप है?

श्री वैकुंठ को भी छोडकर इस भूलोक वैकुंठ तिरुमल पर अपने भक्तों की निधि बनकर दर्शन दे रहे श्री वेंकटेश्वर स्वामी के पल भर मात्र स्मरण से हमारे सभी पाप मिट जाते हैं। उस स्वामी की स्तुति से सभी मनोकामनाओं की पूर्ति हो जायेगी। उस देव - देव की दिव्य मंगल मूर्ति को आँखों भर एक बार देखने से ही, अगले जन्म के भय भी दूर होकर मोक्ष की प्राप्ति होगी अवश्य!

हे पुरुषोत्तम! हमने पहचान लिया आपको
रक्षा करो हे पुष्करिणी स्वामी हमारी!
स्वयं चुनकर हमें, आपने की है रक्षा
आप ही हमारे वंश की हो देवता!
हमारे निधान हो! नील मेघ हो तुम्हीं!
मन के पास सदा रहनेवाले श्रीनिवास हो!

(तेलुगु - पोडगंटिमय्या)

इस धरा पर निवास करनेवाले सभी भक्त मुख्यतया, इस कलियुग के सभी मानव, इस वेंकटाचलपति के दर्शन से पुलकित हो, उनका कीर्तिगान कर रहे हैं।

इन भूलोक वासियों का महद्भाग्य देखिए! साक्षात् वह वैकुंठवासी देवता, इस भूलोक पर पधारकर सभी मानवों के पापों को मिटा रहे हैं। इच्छाओं की पूर्ति कर रहे हैं। कलौ वेंकट नायकः की कीर्ति है उनकी! तिस पर तेलुगु प्रांत के तिरुमल क्षेत्र को चुनकर, यहीं सदा के लिए बस जाना तो तेलुगु प्रजा का पुण्य विशेष ही है न?

वेंकटाचलपति हैं वे! सप्तगिरीश हैं। बालाजी तिरुमलेश, श्रीनिवास, पग पग पर वन्दन माँगनेवाले स्वामी, विपदाओं को टालनेवाले स्वामी, इस तरह बहुत सारे नाम हैं उनके! तिरुमल क्षेत्र पर पधारने के समय से ही, काम्यार्थियों के कल्पतरु के रूप में अपनी दया को हम पर बरसा ही रहे हैं।

लेकिन, सवाल यह है कि उस भक्त परंधाम भगवान को सही तरह तेलुगु लोगों ने पहचाना है क्या? सही तरह उनकी दया का अनुभव प्राप्त किया है क्या? उनके द्वारा पर्याप्त वरदानों को तेलुगु प्रजा ने प्राप्त की है क्या? लगता है कि वेंकटगिरि स्वामी ने एक निर्णय ले लिया है। वह यह है कि इस सारे भूलोक में मैं ने इस तिरुमल को ही चुन चुनकर अपना आवास बना लिया है। लेकिन लगता है - तेलुगु जनता ने मुझसे कुछ अधिक उपलब्धि प्राप्त नहीं की है। किसी भी तरह उनकी अधिक भलाई मेरे द्वारा होनी ही चाहिए। इच्छाओं की पूर्ति करनी है। वरदानों की वर्षा करनी है। इसी लिए, वह जगत् कल्याण चक्रवर्ती ने अपनी दयालुता, उदारता, आर्त रक्षकता आदि को तेलुगु प्रजा के सामने स्वयं ही लाना चाहा। इसके जरिये सबों का कल्याण करना चाहा!

कितने भी दयाशील हो, दानवीर हो, उनकी गुण संपत्ति के बारे में प्रचार की आवश्यकता भी होती है। भले ही उनमें कीर्ति की लालसा न

हो, लेकिन उनके दान गुण, लक्ष्य, आशयादि की सिद्धि के लिए उनके बारे में लोगों को बताने की आवश्यकता है। तभी आर्त जनता, इन जैसे दयावीरों के द्वारा लाभान्वित होती है। यह सप्तगिरीश स्वामी गिरि - सम वरदानों को भी प्रदान करनेवाले महान दाता हैं। जो कोई आकर कुछ भी माँगता है तो झट मुँह माँगे वरदानों को दे देनेवाले स्वामी हैं ये!

श्री श्रीनिवासः परदैवतं नः
श्री श्रीनिवासः परमं धनं नः
श्री श्रीनिवासः कुलदैवतं नः
श्री श्रीनिवासः परमा गतिर्नः
वृषशैलाधिप एव दैवतं नः
वृषभाद्रीश्वर एव दैवतम् नः
फणिशैलाधिप एव दैवतं नः
भगवान् वेंकट एव दैवतं नः

तो फिर अपने बारे में प्रचार करने के लिए किसे चुनना होगा? अपने मन के पास रहते हुए, आंतरिक बंधन से, अपनेपन से करीब आने वाले, वे तेलुगुवाले ही इस काम के लिए उपयुक्त रहेंगे। तभी तेलुगु वालों की भलाई करने की अपनी मनोवांछा पूरी होगी सही तरह!' बस! सकल लोकेश वेंकटेश्वर स्वामी की दृष्टि, अपने खड्ग पर गिरी। युग युगों से अपने से अति निकट रहते हुए, सकल समयों, में आंतरिक सेवक बनकर रहने वाला नंदक नामक यह सूर्य कठारि! युगयुगों से इस जगन्नाटक सूत्रधारी की अनंत लीलाओं को देखते रहने के कारण 'नंदक खड्ग' को उनके इस संकल्प के बारे में तत्क्षण मालुम हो गया। 'जी

स्वामी, जी स्वामी' कहते हुए, भगवान के विचार को वास्तव रूप देने के लिए तिरुमल क्षेत्र से वह निकल पडा। तेलुगु प्रांत के बीचों बीच का प्रांत ''ताळ्ळपाका'' गाँव के नारायाण सूरि - लक्कमांबा दंपति के गर्भ में प्रवेश कर गया। वही 'सूर्य कठारि' - नंदक अन्नमय्या के रूप में अवतरित हुआ। तिरुमलेश की अमृतमय स्तुति, गीतों में करने के लिए, अन्नमय्या का सुरीला स्वर बन गया। उन गीतों को अक्षर रूप देने की लेखिनी हो गयी।

वेंकटेश्वर स्वामी के तेलुगु प्रांत में आकर तेलुगु लोगों के इष्ट देवता के रूप में तिरुमल पर वस जाना ही एक अद्भुत है। तिस पर, यह स्वामी का नंदक खड्ग प्रत्येकतया, तेलुगु प्रांतो के भक्तों के उद्धार के लिए, रक्षा के लिए ''देखो वही है श्री हरि का आवास'' गाते हुए सप्तगिरियों के मार्ग का अनुसरण कराने के लिए ही तेलुगु प्रांत में, तेलुगु भाषी का अवतार लेना तो उससे भी अत्यद्भुत है। तेलुगु प्रजा के महद्भाग्य के बारे में क्या कहने? उसकी तपस्या कितनी उन्नत होगी किसे पता? इसीलिए इस संदर्भ में भगवान वेंकटेश्वर के नंदक आयुध की स्तुति कर - नत मस्तक होंगे।

रक्षोऽसुराणाम् कठिनोग्रकंठ
च्छेदक्षरच्छोणितदिग्धधारम्
तं नंदकं नाम हरेः प्रदीप्तम्
खड्गं! सदाहं शरणं प्रपद्ये।

हाँ! वही है। उसे नमस्कार कर लो! अनंत काल की यात्रा में भगवान वेंकटेश का लक्ष्य है - दुष्टों का दमन, शिष्टों की रक्षा। उस लक्ष्य की पूर्ति में भाग लेता है यह! दानवों तथा शत्रुओं के कंठों को

काटते हुए, रक्त धाराओं को बहाते हुए - भगवान तिरुमलेश की सतत सेवा में तल्लीन इस खड्ग की शरण में जायेंगे हम सब!

गोविन्द गोविन्द गोविन्द !

आजकल इस नंदक की रूप रेखाएँ कुछ बदल सी गई हैं। लक्ष्य भी बदल गया है। लेकिन अन्नमाचार्य के मधुर स्वर में उसका असली रूप सुस्पष्ट है। वही तीखापन। वही गरमी! वही वेग। हरेक भक्त के हृदय - बीन की तंत्रियों को स्वर - भरित कर रहा है। तिरुमलेश के दर्शन के लिए लालची होने उकसा रहा है। अन्नमय्या की लेखिनी बन इस संकीर्तनामृत को उमड उमडकर अविष्कृत कर रहा है।

नंदक खड्ग ने तो स्वयं ही भगवान वेंकटेश का लक्ष्य ''दुष्टों का दमन - शिष्टों की रक्षा'' में स्वयं भाग ले लिया। उनकी लीलाओं, महिमाओं को प्रत्यक्षतया, अति समीप से दर्शाया इसने! तो फिर आज का नंदक? (अन्नमय्या) उन दिनों के सारे अनुभवों को, अक्षर रूप दे रहा है। प्रत्यक्ष रूप से साक्षी हो रहा है।

श्री वेंकटेश्वर की भक्ति के प्रचार का लक्ष्य है - इनका अवतरण! नंदकांश से जन्मा है अन्नमाचार्य! नंदकधारी, आनंद निलय वासी के संपूर्ण अनुग्रह को पाया हुआ धन्य भागा है वह! सिर्फ आप ही नहीं! सभी जनों में इस दया को बाँटनी है। तिरुमलेश की अनुकंपा को सभी तेलुगु लोगों के अनुभव में लानी है। यही अन्नमय्या की ललक है। इसी कारण तिरुमल से लेकर गाँव गाँव में, गली गली में घूमता हुआ भगवान की प्रशंसा पाते हुए, लोगों के मनों को जीतते हुए, मन, वाक् तथा कर्मों से गीतों की रचना कर, वेंकटेश्वर की भक्ति का प्रचार किया। उन उन

गाँवों में जो देवता हैं, उनकी भी स्तुति की। उन उन देवताओं में तिरुमलेश के ही दर्शन कर, 'विना वेंकटेशम्, न नाथो न नाथः' श्लोकोक्ति की तरह भिन्नता में एकता को निरूपित किया। उसी का उपदेश दिया।

जहाँ कहीं गया, हर जगह पर, हर गली में, वेंकटेश्वर की स्तुति ही करता रहा।

परमात्मा है, वह परम पुरुष है,
गौर से देखें तो वही कृपालु है,
तिरुवेंकट नाथ के सिवा धरा पर
भगवान तो कोई और, क्या है?
भाव मे बाह्य में भी
गोविन्द गोविन्द कहते रहो हे मन!

पग पग पर, जनता को समझाता रहा। ''तिरु वेंकटेश के नाम की कीमत बहुत कम है, फल अधिक है'' - कहते हुए प्रचार किया! इस तिरुमलेश की पूजा अर्चना न करनेवालों के जन्म तो एक दम निष्फल है। इस अच्युत के बारे में जो कहानियाँ हैं, उन्हें न सुनना और कलियुग के इस स्वामी की प्रशंसा न कर पाना तो एक दम मानव जन्म का दुरुपयोग ही है। तिरुमलेश के लिए खर्च न करनेवाली मेधा, टिकनेवाली नहीं है। केशव की सेवा में अपने को न खोने वाले जन्म, बीच समुंदर की नौका पर काग के समान है। गोविन्द को समर्पित न हानेवाले नमन, बिन दिवार के चित्र से निराधार हैं। इन सब बातों को गीतों में सुनाते हुए अन्नमय्या कहते हैं -

महोन्नत दाता, कमलनाथ सा हैं क्या कहीं?
विश्वास रखने वालों के देवता हैं क्या कहीं?

कहते हुए जनता को सतर्क करते थे अन्नमय्या! ''अरे ओ मूढ़ मानव! इस कलियुग में, आप सबकी, सदा सर्वदा रक्षा करने वाला आसरा है यह हरिनाम! अन्य कोई आपकी रक्षा नहीं कर सकता है। अन्नार्त का आधार है वह स्वामी। थकी हुई वेला में आधार है वह स्वामी! निराधार स्थिति में आधार है वह स्वामी! बंधु जनों के दूर हो जाने पर आधार है वह स्वामी! कारागार में फँसे हुए हो तो भी वही आधार है। उन सभी संदर्भों में हरिनाम के सिवा और कोई अन्य आधार ही नहीं है। विपदा की वेला में हरिनाम के सिवा, गिडगिडाने से कुछ लाभ ही नहीं होगा! ऋणदाता पीछे पडे हों तो भी वेंकटेश का नाम स्मरण, जितना हो सके कर लो! अल्प बुद्धि से कितना ही प्रयास करें, तो भी कुछ रास्ता दिखाई नही देता है। हे कलियुग के मानवों! देखो वही है, आपकी आँखों के सामने - यह कलियुग का वैकुंठ - तिरुमल!'' कहते हैं अन्नमाचार्य!

देखो आँखों के सामने वैकुंठ है खडा
यह निधि है असमान महिमामय है खडा

कहते हुए वेंकटगिरि शिखरों का रास्ता दिखाया अन्नमय्या ने हम सबको! सामान्य दृष्टि से देखेंगे तो यह पत्थरों का ढ़ेर सा दिखता है। लेकिन असल में यह साक्षात श्री वैकुंठ ही है।

सप्तगिरियों पर, आनंद निलय रूपी महल में विद्यमान उस अखिलांड कोटि ब्रह्माण्ड नायक का वर्णन करते हुए - अन्नमाचार्य कहते हैं - जो जो उनमें विश्वास रखकर जाते हैं, उन सबके लिए वेंकटेश भगवान,

हाथ में माप - नाप का उपकरण है। उनके पास जाकर स्तुति करनेवालों की इच्छा निधि है। निरंतर ध्यान करनेवालों के निधान हैं। ज्ञानियों के लिए वे सच्चिदानंद घन हैं। उन्हें चाहनेवालों के लिए वे कामधेनु हैं! उनकी शरण में जानेवालों की भाग्य राशि हैं वे! उनकी ही पूजा करनेवालों के लिए 'पर - तत्व' वे ही हैं। अपने दासों के स्वामी वे ही हैं। इह तथा परलोकों में भी भक्तों के साथ सदा रहते हुए उन्हें सत्फलों को देनेवाले, तिरुमल के गोविन्द हैं वे!'' अन्नमाचार्य ने इस तरह तिरुमलेश से संबंधित सभी विषयों को अपनी रचनाओं में स्पष्ट कर दिया! इतना ही नहीं, तिरुमलेश के सभी उत्सवों में, सेवाओं में भाग लिया। सुप्रभात वेला में सप्तगिरीश को जगाने के लिए गीत गाया। शोभामय रीति में अलमेल्मंगा - श्री वेंकटेश्वर के कल्याणोत्सव को संपन्न करवाया! श्रीदेवी सहित स्वामी को प्लवोत्सव मनाया! शोभायात्रओं का निर्वाह किया! दूसरों से करवाया! इस तरह भक्तों के निधान स्वामी वेंकटेश जी की सुप्रभात सेवा से लेकर एकांत सेवा तक की सभी सेवाओं में भाग लिया। उनके वैभव के बारे में सुनहरे गीत गाकर, भक्त जनों तक पहुँचाया - अन्नमय्या ने!

हर दिन तिरुमल के आनंद निलय में, ब्रह्म मुहूर्त की वेला में सुबह तीन बजे, भगवान बालाजी की सुप्रभात सेवा से मंदिर के कार्यक्रमों की शुरुआत होती है!

अर्चक स्वामी, सुप्रभात श्लोकों को पढनेवाले वेद पंडित, ताळ्ळपाका के वंशज, मंदिर के अधिकारी सुप्रभात सेवा में भाग लेनेवाले भक्त जन, सभी हर रोज सुबह 2.30 बजे पवित्र ब्राह्म मुहूर्त में उस प्रशांत वेला में,

उन शतिल घडियों में, तन - मनों को शांति पहुँचानेवाले क्षणों में, आनंद निलय के स्वर्ण द्वारों के सामने भक्ति तथा श्रद्धा से विनम्र हो, प्रतीक्षा कर रहे हैं! आनंद निलय वासी, अखिलांड कोटि ब्रह्माण्ड नायक की मूल विराट मूर्ति के दिव्य दर्शन के लिए सभी भक्त आतुर मनों से खडे हैं। उस दिव्य वेला में, मंदिर के अधिकारी जिय्यंगार स्वामी, अर्चक स्वामियों की उपस्थिति में, 'सन्निधि गोल्ला' (ग्वाला) स्वर्ण द्वारों को लगे हुए बडे बडे तालों को चाबियों से खोलता है। तदनंतर अर्चकस्वामी अपने पास की दराँती जैसे उपकरण से स्वर्ण द्वारों में रहे छेदों में से अंदर के ब्योंडे को हटाते हैं। सन्निधि गोल्ला स्वर्ण द्वारों को थोडा सा खोलकर पहले स्वयं प्रवेश करता है। उसके बाद अर्चक स्वामी, कौसल्या सुप्रजा रामा आदि सुप्रभात के श्लोकों को पढ़ते हुए अंदर जाते हैं तथा स्वर्ण द्वारों को बंद कर देते है! स्वर्ण द्वार के इस तरफ खडे अन्य अर्चक, जिय्यंगार, सेवक मंदिर के अधिकारी आदि सुप्रभात के श्लोकों के पाठन की पूर्ति करते हैं - श्रृति सुभगता से!

जगाने के गीत

ठीक इसी समय में, स्वर्ण द्वारों के पास ही एकतारा को लेकर, द्वादश। ऊर्ध्व पुण्ड्रों को धरा हुआ, श्यामल शरीर वाला तेजोमय व्यक्ति, श्री वेंकटेश को जगाते हुए सुरीली आवाज में गाता है।

हे स्वामी! अपने नाटक बंद करो!
योग निद्रा से जाग जाओ हे प्रभू!
गोमाताओं की दोहन क्रिया
करना बाकी है हे गोविन्द!

आमने सामने की गोपियाँ
कर रही हैं प्रतीक्षा हे गोविन्द!
नंदराजा बुला रहे हैं तुम्हें
पलकों को उठाकर जागो हे गोविन्द!
हे वेंकटाद्रि के बालकृष्ण!
हमारी बातों को सुनने जागो हे गोविन्द!

इस तरह सुप्रभात के गीतों को सुनते हुए अपने दिव्य दर्शन हमें प्रदान करते हैं हर दिन!

श्रीकर! हें वेंकट क्षिति धरावास!
नाकेश नुत! रमानाथ जाग जा!
वसुदेव देवकी गर्भ संजात
किसलया धर! रामकृष्ण! तू जाग जा!
यशोदा नंद राजा की तपस्या से
कृपा वश शिशु बना स्वामी! तू जाग जा!
शत्रु शकटासुरादियों का
खूब पिटाई कर दिया स्वामी तूने, जाग जा!
बवंडर रूपी दानव का
संहार किया तू यदुबाल कृष्ण हे! जाग जा!

इस तरह स्वामी को जगाते हैं वे! हरि के अवतार ही हैं हमारे अन्नमय्या! अपने पावन दर्शन से हमारा नेत्रोत्सव करते हैं हमारे ताळ्ळपाका अन्नमाचार्य जी! आज भी उसी अन्नमय्या के वंशज ही, इन सुप्रभात के गीतों से स्वामी तिरुमलेश को जगाते हुए गाते हैं।

लोरी

सुप्रभात वेला में ही नहीं! हर रोज रात, स्वर्ण द्‌वारों को बंद करने के पहले, अखिल लोक स्वामी अपनी स्वर्ण शय्या पर, फिर से योग निद्रा में डूब जाने के पहले, अन्नमाचार्य ही लोरी सुनाते हैं।

सो जा अच्चुतानंद! सो जा हे मुकुंद!
सो जा हे परमानंद! तू सो जा हे गोविन्द!

इस तरह भगवान तिरुमलेश को लोरी सुनाते हुए स्वर्ण द्‌वार के यहाँ, श्री राम जी के भवन के सामने अन्नमय्या हमें दर्शन देते हैं।

हरि के अवतार ही हैं अन्नमय्या
सही बतायें तो हमारे गुरु हैं अन्नमय्या

इस तरह आज भी प्रत्यक्ष रूप से, श्रीवेंकटेश की सेवा में वंशानुगत रीति में भाग ले रही है - अन्नमय्या की अवतार - भूमि - ताळ्ळपाका!

ताळ्ळपाका

सप्तगिरि के नाम से सुविदित शेषाचल शिखरों की चारों तरफ बहुत सारी पुण्य भूमियाँ और बहुत सारे दिव्य क्षेत्र भी हैं। उन सभियों में 'पोत्तपिनाडु' बहुत ही मशहूर है। वेंकटाचल की वायव्य दिशा में स्थित सुंदर प्रांत है यह - पोत्तपिनाडु! इस प्रांत में है एक गाँव जो परमात्मा वेंकटेश जी के हाथों आविष्कृत अद्भुत चित्र रूप है जिसे देखने मात्र से जन्म तर जाते हैं।

उस गाँव में एक ओर हरे गलीचे जैसे खेत! उनमें गीत गाते काम करते हुए गाँव के लोग! दूसरी ओर ताड नारियल के पेडों को और नीले

गगन को प्रतिबिंबित करता हुआ बडा तालाब! तालाब के किनारे, थोडी सी दूरी पर एक मंदिर है जो गौर से देखें तो बहुत पुराना लगता है। उसमे दो फुट की गद्दी पर चेन्नकेशव स्वामी की मूर्ति है। सामनेवाले दिये की कांति में तेजोमय वह स्वामी, आज अपनी अर्धांगिनी लक्ष्मी के साथ, और आकर्षक है!

जनमेजय महाराजा से संस्थापित इस स्वामी की सेवा अर्चना में अपने जीवन को धन्य बना ले रहा था - वहाँ के एक पंडित के वंशज! विठलय्या नामक उस परिवार का ब्राह्मण मंदिर में चेन्नकेशव स्वामी की पूजा और खेतीबाडी - दोनों सानंद कर ले रहा था। बहुत सारे दिनों के बाद उसे एक बेटा हुआ! अपने वंशाचार के अनुसार जिस तरह स्वयं को अपने पितामह का नाम रखा गया था, उसी तरह अपने बेटे को भी अपने पिता ''नारायणय्या'' का नाम, उसने रखा! नारायणय्या, पिताजी के लाड - प्यार के कारण बडा ही बुद्धू निकला! अक्षर क्रम लिखता नहीं! अमरकोश का पठन करता ही नहीं! तिसपर बडा ही जिद्दी हो गया! विठलय्या - ने सोचा कि शायद मेरा लाड - प्यार ही इसका कारण है। तत्क्षण उसे, पास का गाँव 'ऊटुकूरु' ले गया और एक अध्यापक के यहाँ - पढने को छोड दिया! गुरु जी साक्षात् विश्वामित्र जैसे क्रोधालु थे! उन्हें एक बार देखने मात्र से विद्यार्थी थर थर काँपते थे! प्रचंड मूर्ति गुरु जी के पास जाते ही, नारायणय्या, जो कुछ भी उसे आता था, उसे भी भूल गया! दंड भी बहुत कठिन देते थे! खूब मारते थे। धूप में खडे होने को कहते थे! इस स्थिति में नारायणय्या तो बहुत सुस्त हो गया! अगर भागकर पिता के पास जायें तो वहाँ भी मार - पीट होगी! क्या करें? नादान नारायणय्या, ने खूब सोचा और निर्णय ले लिया कि मर जाने के सिवा और कोई चारा ही नही हैं। लेकिन मरना भी कैसे?

उस गाँव की सरहद पर एक चिंतलम्मा का मंदिर और उस मंदिर के सामने एक बडी सी बाँबी थी! लोगों का विश्वास था कि उसे देखने मात्र से प्राण पखेरु उड जाते हैं तो फिर उसका शिकार हो जायें तो मरना तत्थ्य है! नारायणय्या आधी रात, उस बाँबी के पास गया और उसमें हाथ रखके मर जाने की प्रतीक्षा करता हुआ बैठ गया। लेकिन 'नाग' तो नहीं आया। एक स्त्री तो सामने खडी दिखाई दी! वह तो उस गाँव की देवता चिंतलम्मा थी! ''अरे बालक! क्यों इतना साहस कर रहा है तू?'' उसने पूछा! नारायणय्या तो एक दम रो पडा! अपनी पूरी राम कहानी सुनायी! उस देवता ने नारायणय्या को समझा - बुझाकर कहा - ''तू बिलकुल चिंता मत कर! तेरे गाँव में जो चेन्नकेशव स्वामी का मंदिर है न? उस मंदिर की परिक्रमा कर लो, विद्या अपने आप तुझे मिलेगी बस! ध्यान से सुन लो! तेरी तीसरी पीढ़ी में श्री वेंकटेश्वर की कृपा से एक परम भक्त जन्म लेने जा रहा है। तिरुमलेश की कृपा से वह तेरा पोता, साक्षात् उस कलियुग स्वामी के अवतार के रूप में गौरवान्वित होगा! पूजा जायेगा! अब तो तू चला जा!'' बालक उसी रात अपना गाँव वापस चला गया! चेन्नकेशव स्वामी के मंदिर की परक्रिमा करने लगा! उसे सारी विद्यायें आ गयीं! वही आगे आगे नारायण - सूरी कहा जाने लगा! उसकी धर्मपत्नी थी - लक्कमांबा जो साक्षात् लक्ष्मी देवी ही कही जाती थी!

नारायण सूरि दंपती को बहुत दिनों तक संतान नहीं होने से वे दोनों पीले वस्त्र पहनकर तिरुमल की यात्रा पर निकले! तिरुमल की पुष्करिणी में उन दोनों ने नहा लिया। आदि वराह स्वामी के दर्शन के बाद - पग पग पर प्रणाम करते हुए मंदिर में प्रवेश किया! स्वर्ण द्वार तक

पहुँचकर श्री वेंकटेश्वर की मूल विराट मूर्ति के दिव्य दर्शन में अपने आप को खो गये!

सुवर्ण चरणों में घुंघुरु
बढ़िया पीतांबर
पीतांबर पर कर धनी, उदर बंधन
कस कर बंधा हुआ नंदक खड्ग
वरद हस्त, उज्जवल कटि हस्त
शंख चक्र युत कठिन बाहु
सुंदरनाभि और
अलमेल्मंगा वक्षःस्थल पर,
विविध मालाओं और रत्न खचित आभूष्ण
युत हे लक्ष्मीश! सर्वजगन्नायक!
विमल रवि कोटि संकाश! वेंकटेश!

इतने महिमामय वेंकटेश की सेवा - अर्चना के बाद अपनी मनोवांछा को भी उनके सामने रखा उन दोनों ने! विमान परिक्रमा भी कर 'गरुड गंभ' के पास अखंड - ज्योति को प्रज्जवलित कर संतति की मन्नत माँगी! वहाँ साष्टांग प्रणाम कर ही रहे थे कि दोनों को गहरी नींद आ गई! सपने में छोटी छोटी घंटियों से शोभित नंदक खड्ग को उन्हें प्रदान किया - उस तिरुमलेश ने!

उसी क्षण उनकी नींद भी खुल गयी। आश्चर्य चकित हो गये! उन्हें लगा कि तिरुमलेश ने उन्हें संतति देकर अनुग्रहीत किया ही है! उस आनंद निलय वासी के आशीर्वाद को लेकर ताळ्ळपाका लौट आये। अचिर काल में ही लक्कमांबा गर्भवती हो गई।

नौ महीनों बाद, वैशाख शुद्ध पूर्णिमा के दिन, विशाखा नक्षत्र की शुभ घडी में (सन् 1408 - मई 9) तीन ग्रहों की उच्च स्थिति में अत्यंत शुभप्रद मुहूर्त में लक्कमांबा ने एक - प्यारे से बच्चे को जन्म दिया!

ताळ्ळपाका अन्नमय्या

तिरुमलेश के 'नंदक' खड्ग के अंश से जन्मे उस बालक का नाम ''अन्नमय्या'' रखा गया।

तिरुमलेश के वरदान से, विवाह के कई सालों बाद हुए पुत्र को देखते ही उस, दंपति की खुशी की सीमा न रही! धीरे धीरे वह ठुमक ठुमक कर चलने लगा! उसे देखते हुए ''अन्नप्पा! मेरे लाल! अन्नमय्या! मेरे कन्हैय्या! आ जा! इधर आ जा!'' बुलाते हुए उससे खेलते थे! 'हाँ यह वेंकटेश्वर जी का कौर है! हाँ.... यह अलमेल्मंगा का कौर है। लो...!' इस तरह वेंकटेश्वर का नाम लें तो ही खिलखिलाकर हँसता हुआ खाना खाता था। नहाने के लिए, सुलाने के लिए, भी वेंकन्ना का नाम लेना अनिवार्य था!

इस तरह हर पल वेंकटेश्वर का नाम लेते हुए ही बडा होता गया! पाँच साल की उम्र में उसका उपनयन (यज्ञोपवीत) संस्कार कराया गया। तभी से सभी विद्यायें बडी ही आसानी से उसे आ गईं। माँ लक्कमांबा उसे भागवत रामायणादि सुनाती थीं। उन्हीं कथाओं को अपने तरीके से गीतों में ढ़लकर गाया करता था बाल अन्नमय्या! नाट्य भी करता था। उसे देखकर सब लोग अचरज में पड जाते थे। अन्नमय्या का हर शब्द अमृत काव्य सा, उसका हर गीत - दिव्य गीत सा उन्हें लगता था! हमेशा कुछ न कुछ गुनगुनाता हुआ, वह बालक गाँव के पुराने मंदिरों के यहाँ घूमा

करता था! खेतों खलिहानों में उछलता कूदता दिखाई देता था! समय पर खाना खा लेता था और एकतारा - लेकर बाहर चल पडता था! कुछ काम नही वाम नहीं! उसके आलसी पन को देखकर पिता ने उसे डाँटा! दायादी लोग उस पर तंग आकर डपटे! भाभियाँ भी उसपर चिल्लाने लगीं! संयुक्त परिवार होने के कारण, सब लोगों के अपने अपने विचार थे! अपनी अपनी इच्छाएँ थीं! जेठानीयों और देवरानीयों के बीच बिलकुल बात नहीं जमती थी! इसी लिए लक्कमांबा के प्रति जो असहनता थी, वह उसके पुत्र पर दिखाई जाने लगी!

''पेट भर खा लेना दिन भर घूम आना'' यही है बस तेरा काम! भाईयों ने दुतकारा! ''इस तरह बेकार घूमते रहने से अच्छा है, शाम तक कुछ धास - पूस जमा करके आना! चलो! निकलो दराँती पकडके।'' अन्नमय्या को कुछ भी समझ में नही आया। दराँती लेकर यूँ ही खडा था कि किसी ने कहा ''हाँ, वहाँ भी गुनगुनाता बैठना नहीं! जल्दी काम निपटके आना बस!'' आठ साल के अन्नमय्या के मन में, उन बडों के प्रति भक्ति नहीं, भय ही घर कर गया! खेत की ओर कदम बढ़ाता हुआ - वह सोचने लगा - ''कैसे आदमी हैं? क्या क्या बातें करते हैं? मुझे तो मालुम ही नहीं ये सब गीत मेरे मुँह से कैसे निकलते हैं? मैं क्या करूँ वेंकटेश जी! ये सब लोग मेरे गीतों को सुनकर, मुझे डाँट रहे हैं! बरदास्त नहीं कर पा रहे हैं। लेकिन ये चिडियाँ, तो खुशी खुशी गाना गाते हुए स्वेच्छा से उड रही हैं। मैं भी उसी तरह गाता था! अगर मेरा गाना उन्हें पसंद न आया हो तो, न करने दो मेरी तारीफ! लेकिन यह डाँट - डपट क्यों? तिस पर यह जबरदस्ती क्यों? हाँ.. जल्दी वापस भी आने के लिए कहा सबों ने.. मिलकर! अब तक जो घास - पूरा मैं ने जमा किया,

वह सब काफी नहीं है शायद! और कुछ ले जाना पडेगा। हाँ यहाँ तों घास कुछ ज्यादा - ही है! थोडा और काटूँगा! नहीं तो फिर से लाख सुनायेंगे सब मिलकर!'' सोचते सोचते बालक की आँखों में आँसुओं की धारा बहती जा रही थी। जोर से दराँती को चलाता ही रहा - कि बायें हाथ की ऊँगली कट गयी! खून बहने लगा!

''अरे खून! ऊँगली कट भी गई है!'' खून बहने की बाधा से डाँट - डपट की बाधा अधिक थी। ये सब कहाँ के रिश्तेदार हैं? कैसे रिश्तेदार हैं? ये सब बंधन तो क्षणिक हैं! सब झूठ! असत्य!'' खेत में खडे होकर गाँव की ओर देखता रह गया - आँखों में आसूँओं की धारा बिना पोंछे!

''ये सब बंधु और माता पिता सब
बाधा पहुँचानेवाले ही हैं बस,
मेरा हित चाहनेवाले हैं नहीं, सहोदर भी
धन - दौलत के बँटवारे में लडते हैं बस!''

इस तरह सोचते सोचते, वह आग बबूला हो गया! इतने में दूर से सुनाई दिया

पग पग पर प्रणाम माँगनेवाले हे गोविन्द!
सप्तगिरीश हे! वेंकट रमण!
गोविन्द गोविन्द! हे गोविन्द!

भजन करते हुए तिरुपति यात्रा पर जा रहे भक्त जनों का झुँड उसे दिखाई दिया जो परम भक्त सनक सनंदनादियों जैसा लगा! बडी बडी आँखों से उनकी तरफ देखा! वे लोग भी अन्नमय्या की तरफ मुस्कुराते हुए देखने लगे! उस हँसी में अलग से अर्थ! ''रे बालक! हमारा मार्ग ही

सही है। सत्य है। हमारे साथ चलो तुम भी!'' अन्नमय्या को लगा - वे उसे बुला रहे हैं! पता नहीं दर्द कैसे गायब हो गया! मन तो खुशी से भर गया!

माता, पिता, देवता, गुरु
संपदायें, सभी आप बन कर,
सभी तरह मेरी रक्षा करनेवाले
शेषाद्रि नाथ की सेवा करुँगा

उसने निर्णय ले लिया! बिना किसी झिझक के, बिना दूसरी सोच के कदम आगे बढ़ाया! उनमें स्वयं एक हो गया! तिरुमल की ओर चल पडा - भजन के गीतों को गाता हुआ!

पहले तिरुपति क्षेत्र में ग्राम देवता ''गंगम्मा'' का दर्शन कर लिया! झुंड के किसी के पूछने पर एक बुजुर्ग ने जवाब दिया - ''भैय्या! यही तो ''दिगुव तिरुपति'' (नीचेवाला तिरुपति) है जिसे 'श्रीपद पुरि' भी कहते हैं। हाँ, वह देखो गोविंद राज स्वामी के मंदिर का शिखर! उसे गोविंद राज पट्नम् कहते हैं। दूर उस तरफ देखो सप्तगिरियों की श्रेणी... वे ही हैं सात पर्वत जिन पर वह पुष्करिणी स्वामी, सप्तगिरीश, मुँह माँगे वरदानों को देनेवाले स्वामी विद्यमान हैं। हमें वही पर जाना है! चलो चलो! जल्दी करो!' अन्नमय्या भी इन सब बातों को गौर से सुन रहा था!

हाँ! तो यही है न वह गोविन्द राज पट्नम् जिसके बारे में माँ बता - रही थी! हाँ वही है - शेषाचल पर्वत... बडे साँप की ही तरह फणों से कितना अद्भुत है! भजन करता हुआ, गाता खेलता उस वृन्द के साथ

आगे चल पडा हमारा अन्नमय्या! सब लोगों के साथ अलिपिरि पहाड पर चढने लगा! श्री वेंकटेश्वर के चरण कमलों को प्रणाम किया! नृसिंह स्वामी को अंजलि समर्पित किया! बाद में ''तलयेरुगुंडु'', ''चिन एक्कुडु'' ''पेद एककुडु'' 'गालि गोपुरम्' 'मुग्गु बावि' 'कर्पूर कालुव' (तिरुमलेश के दर्शन के लिए पैदल चलने के रास्ते में दिखाई देनेवाले विविध स्थल विशेष) इन सभी जगहों को देखता हुआ, अपने गीतों को सानंद गाता हुआ आगे चल रहा था। उसे लगा कि ये वादियाँ, ये घाटियाँ, ये चिडियाँ.. सब उसके साथ गा रही हैं। कुछ देर के लिए रुक जाता था! पक्षियों के गीतों को सुनता था थोडी देर के लिए! इधर उधर दौडते हुए घास चरते हुए हिरणों को देखता रह जाता था। डरते डरते दौडनेवाले खरगोश उसे बडे ही अच्छे लगे! इतने में भजन वृन्द के सभी लोग आगे निकल गये। अन्नमय्या अकेला ही रह गया - खूब थका हुआ! धीरे धीरे ''अव्वारि कोना'' को पार कर गया! अब तो सामने है ''घुटनों का पर्वत''! चारों तरफ देखा! सामने कोई नहीं है। प्यास लगी है। भूख भी कुछ कम नहीं है! तो फिर क्या करें! अरे यहाँ की सीढ़ियाँ तो कितनी ऊँची हैं? माँ जो बता रही थी ये हैं शायद! जाने कितनी हैं ये सीढ़ियाँ! स्वामी का मंदिर और कितना दूर है? अरे मेरे साथी लोग सब कहाँ चले गये? कितनी दूरी पर होंगे सब? सोचता हुआ जोर से

''हे सप्तगिरीश! वेंकटरमण''
गोविन्द गोविन्द गोविन्द

गोविन्द का नाम स्मरण करता हुआ सीढ़ियाँ चढ ही रहा था कि चक्कर आकर बेहोश हो जाने लगा - 'अरे! मुझे यह क्या हो रहा है? सर चकरा जा रहा है। लगता है कोई मुझे नीचे धकेल दे रहा है। नीचे

गिर जा रहा हूँ मैं! कोई तो रक्षा करो! मेरी रक्षा करो! मुझे बचा लो!' चिल्लाता हुआ नीचे गिर पडा - सुध बुध खोकर!

कुछ देर बाद लगा - कोई उसे बुला रहा है। "चलो, उठो! अन्नमय्या! जल्दी उठ जाओ!"

'मैं कहाँ हूँ? कितनी देर से यहाँ पडा हूँ? क्या मैं यहीं पर ऐसे ही सो गया? कोई तो मुझे बुला रहा है - मेरा नाम भी लेकर! कोई तो बुला रहा है लेकिन दिखाई तो नहीं दे रहा है न? पेट खाली है न? इसी लिए शायद लग रहा है ऐसे!' अन्नमय्या सोच में डूब गया!

फिर से वही पुकार - "अन्नमय्या! उठो! यहाँ देखो।" मीठी पुकार! प्यारी पुकार!

उस पुकार में कितनी मिठास है! अपनापन है। बिना किसी दूरी के, सीधे दिल से आ रही है वह पुकार। कितनी खुशी हो रही है - सुनते हुए। शायद कोई स्त्री मूर्ति मुझे पुकार रही है। अन्नमय्या बेचैनी से चारों तरफ देख रहा था! कोई तो दिखाई नहीं दे रहे थे! यह क्या? अन्नमय्या तो बेचैन हो गया! "माँ! तू कौन है! बिलकुल मेरी माँ लक्कमांबा की ही तरह मुझे बुला रही है माँ तू! मुझे तो दिख नहीं रही है! क्यों? मेरी रक्षा करो माँ!' अन्नमय्या उठकर बैठ गया!

खिलखिलाकर माँ हँस पडी! "अरे बेटा अन्नमय्या! मैं अलमेल्मंगा हूँ! आनंद निलय वासी वेंकटेश्वर की हृदयवासीनी हूँ! पद्मावती हूँ। हाँ सुनो! अब तू जहाँ बैठा है वही तिरुवेंकटगिरि है। परम पवित्र है। यह पूरा पहाड सालग्रामों से भरा पडा है। सच बतायें तो पूरा पहाड ही सालग्राम है! इस पहाड पर विद्यमान तिरुमलेश भी सालग्रामशिला स्वामी

ही हैं न! इस पहाड को जूतों के साथ चलना मना है। जूतों को उतारकर देखे!' उसी क्षण अन्नमय्या जूतों को उतार फेंक दिया। बस! तिरुमल पहाड सहस्र रवि सदृश कांतियों से अद्भुत दिखाई दिया! सामने खडी है अलमेल्मंगा माई! हाथ पसारकर बुला रही है।

''माँ! अलमेल्मंगा! तेरे दर्शन से मेरा जन्म धन्य हुआ! मेरा भाग्य तो अनगिनत है।''

अन्नमय्या ने चारों तरफ देखा - 'अरे बाबा! यहाँ का कोई पत्थर, पत्थर नही हैं सच में! सालिग्राम ही सालिग्राम हैं पूरे के पूरे! यहाँ देखो नृसिंह सालिग्राम! हाँ यही तो है विष्णु सालिग्राम! राम सालिग्राम! कृष्ण सालग्राम! बडी ही अचरज की बात है। मुझझे बहुत बडी गलती हो गई! लेकिन मैं तो जानता नहीं था न! कहते हैं ''बिना जाने कोई गलती करें, तो वह गलती नहीं होगी! तो फिर मैं क्या करूँ? हे माँ! मुझ पर दया कर! मेरे अपराध को अनदेखा कर!'' अन्नमय्या, माँ अलमेल्मंगा को साष्टांग दंडवत प्रणाम किया!

''बेटा! उठो! बहुत थक गया है न! भूख भी लग रही है न? पता नहीं कब खाया तू! लो... तेरे लिए ही यह ''पुलिहोरा'' (चित्रान्न सा एक पकवान) लायी हूँ! धीरे धीरे खा लो! हाँ यह तो है - गुडान्न! (गुड से बना अन्न) यह तो तेरे पिताजी वेंकटेश्वर को बहुत ही प्रिय है! उनके खाने के बाद बचा हुआ खाना तेरे लिए लायी हूँ! हाँ यह देखो, पोंगल... काली मिर्च वाला पोंगल है! घी डालके बनाया है मैं ने! बहुत स्वादिष्ट होता है बेटा! खा ले! हाँ यहीं है दद्योदन.... दही का खाना! मलई भी ज्यादा है इसमें! और कुछ परोसूँ क्या?''

अलमेल्मंगा ने बडे ही लाड-प्यार से अन्नमय्या को खिलाया! पेट भर जाने पर भी माँ ने नहीं माना! खिलाती गयी, खिलाती रही बस!

''तिरुमलेश और आप स्वयं
जिस खाने को खाया मिलकर
उस स्वादिष्ट खाने को लाकर
प्रेम से खिलाया माँ ने स्वयं'' -

''तिरुमलप्पा का पहाड वही है बेटा! उस देवदेव की दरबार में चलो'' कहती हुई तिरुमल का रास्ता दिखाया - माँ ने!

अलमेल्मंगा के हाथों, लाड प्यार से उन प्रसादों को खाने से अन्नम्यया को तसल्ली - मिल गई! एक नयी जोश सी आ गई! एक दिव्य तेज सा शरीर में प्रवेश कर गया! एक आध्यात्मिक शक्ति सी शरीर में घर कर गई! आवेग से आशु धारा की तरह कविता की धारा बहने लगी!

''माँ! अलमेल्मंगा! मैं तेरी शरण में आया आज,
पता नहीं मुझ पर कैसे तेरा अनुग्रह बरसा आज,
हे वेंकटेश्वर! तेरी पत्नी की दया से ही आया यहाँ आज,
तो फिर व्यर्थ बात क्यों करें, बस करुणा बरसा तू भी आज!''

इस तरह अलमेलमंगा को अंकित करते हुए, सौ पद्य कविताओं का एक शतक अन्नमय्या के मुँह से निकल पडा! भक्ति से ओत-प्रोत इस रचना को धारा की तरह पढ़ते पढ़ते, दण्डवत प्रणाम किया - भक्त बालक अन्नमय्या ने!

“वाह अन्नमय्या! वाह! श्री वेंकटेश्वर जी के आशीर्वाद तुम्हें भर पूर मिलेंगे अवश्य!” अलमेल्मंगा ने सानंद अन्नमय्या को गले लगाया और कहा - “देखो! विविध कांतियों से तेजोमय उस गिरि को देखो! वही वेंकटाचल है। उस क्षेत्र पर विद्यमान स्वामी तिरुमलप्पा की शरण में जाओ! उसकी सेवा कर लो! तेरा जन्म धन्य हो जायेगा! तेरे कारण सभी जनों के जन्म भी धन्य हो जायेंगे!” अलमेल्मंगा अंतर्निहित हो गयीं!

अलमेल्मंगा ने जिस रास्ते को दिखाया, उसे ही पकडकर अन्नमय्या चलने लगा!

“कैवल्य - पद दाता वेंकटाद्रि का शिखर वही है!
श्री वेंकटेश की श्रीनिधि यही है!
सकल विभव रूप मानो यही है!
पावन, सब से पावन मय है!”

अन्नमय्या तिरुमल पर पहुँच गया! आनंद निलय वासी, तिरुमलेश ने, तेलुगु लोगों के लिए, अपने नंदक खड्ग को तेलुगु भाषी के रूप में अवतरित होने ताळ्ळपाका भेजा लेकिन उसके घरवालों ने उसे सिर्फ लोहे का उपकरण ही मानकर, घास पूस इकट्ठा कर लाने का आदेश दिया। तेलुगु वालों का भाग्य महान है शायद! सनक, सनंदन आदि महर्षियों ने यात्री के रूप में आकर उससे कहा - “हे नंदक! तुम्हारा काम यह नहीं है। तुम्हारा स्थान भी यह नहीं है। चलो चलें वेंकटाचल!” कहकर उसे अपने साथ ले गये। तिरुमल का रास्ता पकडा दिये। बीच में कदम इधर उधर भटकते समय अलमेल्मंगा ने उसे अपना लिया और समझाया। - “तेरा लक्ष्य तो अलग है बेटा! तू तर जाना - तेरे लोगों को

भी तराना!'' कहती हुई तिरुमलेश की सन्निधि के मार्ग पर ही छोड दिया। इसी कारण हमे साक्षात् हरि का ही अवतार - अन्नमय्या मिला है। तो फिर तेलुगु लोगों की भाग्य राशियाँ कितनी हैं? करोडों होंगी न?

अलमेल्मंगम्मा की दया से अन्नमय्या, तिरुमलेश की चरण-सन्निधि में पहुँच गया! पहले पुष्करिणी में नहाया! आदिवराह स्वामी के दर्शनोपरांत, आर्त जनता के कल्पतरु श्री वेंकटेश्वर स्वामी के मंदिर में प्रवेश करने के पहले महाद्वार गोपुर (पडि कावलि) को नमस्कार किया। फिर मंदिर में क्रमशः महान इमली, गरुड गंभ, संपंगि प्ररिक्रमा, विमान परिक्रमा में वरद राज स्वामी, अलमेल्मंगा, याग शाला, कल्याण मंडप, वाहन मंडपों में प्रकाशमान अश्ववाहन, गरुड वाहन, बुहत् शेष वाहनादियों को देखता रह गया! प्रणाम किया! कई भक्त, पता नहीं कहाँ कहाँ से आये थे, उन सबों के वदनों मे विलसित भक्ति भावना को सानंद देखता हुआ, भगवान वेंकटेश्वर जी के सुवर्ण द्वार में प्रवेश कर गया और मूल विराट मूर्ति - श्रीनिवास स्वामी, श्री वेंकटेश्वर जी के दिव्य दर्शन में अनिमेष रह गया!

घुँघरु युत चरण कमल,
कनकांबर, सुंदर कमर बंध
मूँठी की रत्न जडित छुरी
बिन माँगे ही वरदान देनवोला
वरद हस्त
उदर बंध, केयूर, बाजू बंद
सालिग्राम शरीर से निकलते सौरभ
श्रीवत्स वक्षःस्थल पर,

हृदयवासिनी सागर कन्या के दिव्याभूषण
दिव्य तेजोमय शंख, चक्र
तरने का मार्ग दिखाते कर - कमल
अरुणाधर युत कपोल
नील वर्णवाली कंठ सीमा
मकर कुंडल, मणि मुकुट
विकसित श्वेत कमल सी आँखों की
शीतल दृष्टि, कृश नासिका
श्वेत ऊर्ध्व पुण्ड्रों से
अलमेलूमंगा के स्वामी की सेवा में
पुलकित हो, उनकी स्तुति करता रहा!

तिरुमल क्षेत्र के सभी पवित्र स्थानों का दर्शन करते धन्य हो गया।

अखिलांड के कर्ता को मैं ने देखा,
पापों का परिहार करनेवाले स्वामी को मैं ने देखा।।

महनीय मणि युत फण शिखर देखा
वैभव मुत उन मंडपों को देखा
सहज नवरत्न जडित स्वर्ण वेदियों को देखा
धरा का वहन करनेवाले गोपुर को देखा।।

पावन पापविनाशन तीर्थ को देखा
अपने वश में लेनेवाली गगन गंगा को देखा
दैविक पुण्य तीर्थ सभियों को देखा
माननीयों से स्तुत्य पुष्करिणी को देखा।।

परम योगियों के विचारों में वर्णित
असमान चरण कमलों को देखा
चिर सुख दायी दिव्य हस्त को देखा
तिरु वेंकटाचल के स्वामी को देखा।।

इस तरह गाता हुआ अन्नमय्या, तिरुमल पर स्थित सभी तीर्थों में पवित्र स्नान करते, स्वामी के दर्शन से पुनीत हो रहा था। एक बार वह मंदिर गया तो तब तक मंदिर के स्वर्ण द्वार बंद हो गये थे। अन्नमय्या, स्वामी के दर्शन के लिए तरसने लगा। ''हे तिरुमलेश! आज मुझ पर इतनी नाराजगी क्यों? तेरे दर्शन बिना मैं कैसे जी पाऊँगा?'' इसतरह वह कुढ़ता हुआ वहीं भटकने लगा। तो क्या हुआ? मंदिर के द्वार अपने आप खुल गये! मूल विराट मूर्ति के दिव्य दर्शन से अन्नमय्या के आनंद की सीमा ही न रही! उसके प्रति स्वामी की अपार करुणा को देखकर सारे अर्चक स्वामी, आश्चर्य चकित हो गये। उसे सीने से लगाकर तीर्थ प्रसादों को देकर, उसके भाग्य को सराहा! भगवान की स्तुति में अन्नमय्या एक पद्‌य शतक को भी आशु धारा के रूप में कह दिया! तत्‌क्षण भगवान तिरुमलेश की कंठ सीमा से एक मोतियों की माला फिसलकर चरण तल पर गिर पडी। अर्चक स्वामी ने भगवान के आशीर्वाद के रूप में उसे अन्नमय्या को दे दिया!

'घन विष्णु यति' नामक एक वैष्णव योगी भी श्री वेंकटेश्वर स्वामी की सेवा में रत हो, उसी मंदिर के सामने ही रहा करता था! उस यति को स्वामी ने स्वप्न में साक्षात्कार देकर कहा - ''तिरुमल क्षेत्र में मेरी महिमा के बारे में गाता हुआ एक बालक फिरता रहता है। उसका नाम है ''अन्नमय्या! उसे 'वैष्णव मत' का उपदेश देकर - ''मुद्रा धारण'' करा

दो!'' स्वामी की आज्ञा पाकर विष्णु यति, बालक की तलाश में निकल पडने ही वाला था कि मंदिर के परिसर में अन्नमय्या उसे दिखाई दिया! उसे देखते ही घन विष्णु को लगा कि स्वामी के आदेश, इसी बालक के बारे में हैं।'' वेदोक्त रीति में वैष्णव धर्म का उपदेश भी उसी समय दे दिया। वैष्णव मुद्राओं से (भुजाओं पर शंख और चक्र को अंकित करना) अन्नमय्या अब अन्नमाचार्य हो गया। उस दिन से आनंद निलयवासी के अनंत तत्व का प्रचार - प्रसार करने लगा। तथा 'पदकविता पद' का अधिकारी हो, 'पदकविता पितामह' की उपाधि से अमर भी हो गया!

उधर ताळ्ळपाका में अन्नमय्या की माता लक्कमांबा तथा पिता नारायण सूरि को तो अपने पुत्र के बारे में कुछ मालुम ही नहीं था। खेत से वापस नहीं आया बस! उसके लिए ढूँढ ढूढकर वे थक गये! लक्कमांबा तो सदैव रोती बिलखती रहती थी - आहार निद्राओं को भी त्यागकर! जो भी दिखाई देता, सब लोगों से पूछते थे। उसकी खबर नहीं मिली। आखिरकार तिरुमल जाकर भगवान वेंकटेश से मन्नत माँग लेने का निर्णय लेकर दोनों निकल पडे! श्रीनिवास की सन्निधि में भक्ति की तन्मयता में गीत गाते हुए पुत्र को देखते ही दोनों उससे लिपट गये! लगा कि दोनों की जान में जान आने लगीं! ''भगवान श्रीनिवास की दयालुता का क्या कहने? मासूम बालक को अपने ही पास रख, रक्षा कर रहा है।'' दोनों चाहते थे कि अन्नमय्या को वापस ताळ्ळपाका ले चलें! लेकिन अन्नमय्या तो तिरुमल छोडकर जाना नही चाहता था! माँ लक्कमांबा ने मन ही मन भगवान वेंकटेश्वर से प्रार्थना कर ली - ''मेरे पुत्र को फिर से मुझे दे दो स्वामी!'' अन्नमय्या को सपने में श्रीनिवास का साक्षात्कार हुआ। उन्होंने कहा - ''देखो बालक! माता - पिता को

कष्ट न दो! मात्रुदेवोभव! पित्रुदेवोभव! इसीलिए दोनों के साथ तुम ताळ्ळपाका चले जाओ! उनके आदेशों का पालन करो! तेरी भलाई होगी।'' स्वामी की आज्ञा के अनुसार, अन्नमय्या, माता पिता के साथ ताळ्ळपाका चला गया! कुछ दिनों बाद, तिरुमलम्मा, अक्कलम्मा नामक कन्याओं के साथ उसका विवाह हुआ! कुछ दिनों बाद प्रसिद्ध नृसिंह क्षेत्र अहोबिल के शठगोपमुनि नामक मठाधीश के पास वैष्णव संप्रदायों का अध्ययन किया। वेद वेदांगों में अत्यंत प्रतिभावान और आध्यात्म विद्या में संपन्न ''आदिवन शठ गोप मुनि'' अहोबलेश से प्रत्यक्षतया बात चीत करने में समर्थ थे! भगवान तिरुमलेश की कृपा से आदिवन स्वामी द्वारा अन्नमय्या को 'नृसिंह मंत्र' का उपदेश भी संपन्न हुआ! उनके आशीर्वाद से, वेंकटेश्वर तथा नृसिंह दोनों की अभेद भावना से, अन्नमय्या उपासना करने लगा! उसका मन फिर से तिरुमल जाने लालाचित हो गया! तिरुमल में ही रह जाने की तीव्र आकांक्षा मन में जगी! लेकिन स्वामी का आदेश कुछ अलग ही था ''अन्नमय्या! मैं मात्र अहोबलेश ही नहीं। सकल देवताओं का रूप हूँ। मेरे इस तत्व का, देश भर में प्रचार - प्रसार करो! मेरी दया को सभी लोगों तक पहुँचाओ।''

ताळ्ळपाका से तिरुमल पहुँचा ही था, कि अन्नमय्या को फिर से भगवान तिरुमलेश के आदेशानुसार, तिरुमल को छोडना पडा कुछ ही दिनों में! तेलुगु प्रांत के हर प्रदेश में गया! उन उन गाँवों में राम, कृष्ण, नृसिंह, चेन्नकेशव, पंढरि विठ्ठल.. जो भी देवता थे। उन सभियों के यशोगीत गाता चला। मात्र तेलुगु प्रांत में ही नहीं, दक्षिण भारत के सभी वैष्णव क्षेत्रों की यात्रा उसने की। उन उन देवताओं से वेंकटेश स्वामी के अभेद का प्रचार अपने गीतों द्वारा किया!

सबसे पहले अन्नमय्या तिरुपति क्षेत्र के गोविंद राज स्वामी का दर्शन कर लिया जो योगनिद्रा में डूबे हैं। उनकी स्तुति में यह गीत भी उन्होने लिखा।

पूजा करो तो रक्षा करेंगे गोविंद
भूदेवी श्रीदेवी के पति हैं ये गोविंद

तिरुपति में ही श्री सीता लक्ष्मण हनुमत्समेत विद्यमान 'इष्टा राम' का कीर्तिगान उन्होंने किया। तिरुमल के मार्ग में खडे ''हनुमान देवता'' को भी उन्होंने सराहा जो अपने भक्तों की रक्षा करने की अभय मुद्रा में खडे थे।

अहोबिल क्षेत्र की स्तुति में ''हाँ वहीं है देखो आदि पुरुष'' गीत उन्होंने लिखा जिसमें बडे अहोबल पर घन सिंह अहोबलेश को उन्होंने सराहा।

पावन पिनाकिनी नदी के तीरों पर विद्यमान कडपा के वेंकटेश्वर स्वामी की कपूर सी हँसी को, तथा उनकी अलौकिक सुंदरता की खूब तारीफ उन्होंने की! तदनंतर, कदिरि नृसिंह का कीर्तिगान करते हुए अन्नमय्या ने कहा - ''सहस्त्र बाहुओं में सकल आयुधों को घरकर भयंकर वदनवाले कदिरि नृसिंह जी निकल रहे हैं - दुष्टों का संघार करने! उनकी सेवा करो मन से!''

ओंटिमिट्टा के देवता वीररघुराम के यशोगान के बाद, पवित्र द्वादश नामों से, कलशापुर के हनुमान की प्रशंसा में उन्होंने कहा - ''वेंकटेश महाराजा का सही सेवक सोलह आने की सच्ची कांति वाले हो तुम हे

हनुमान।'' गुत्ती प्रदेश में श्री वेंकटेश्वर प्रचार एवं प्रसार में, वहाँ के सौमित्री सहोदर दशराथ राम के बारे में खूब गाया!

कहीं भी शत्रु का नाम तक न होनेवाले, सभी लोकों पर राज करनेवाले विजयनगर के उग्र नारसिंह का स्तवन किया। पुत्रकामेष्ठी के प्रसाद के रूप में जन्म लेकर, लंका पर विजय द्वारा भूभार को मिटाकर परवह्म बन कीर्तित विजयनगर के राम को सराहा। वेदाद्रि नरसिंह के दर्शन से धन्य हो, स्तुति गान किया!

दक्षिण भारत के वैष्णव क्षेत्रों में अत्यंत प्रमुख श्रीरंगम के देवता, शेषशायी श्रीरंगनाथ ने, अन्नमय्या को छोटे शिशु के रूप में दर्शन देकर उनकी लोरी सुनी! तीनों मूर्तियों का मूल, बहुत सारी महिमाओं की राशि, पवित्र चंद्र भागा नदी के तीरों पर आविर्भूत होकर, सात सौ सतहत्तर भक्तों से कीर्तित पांडुरंग विठल स्वामी के दर्शन से अन्नमय्या ने पुलकित हो गीत गाया।

सिर्फ क्षेत्रों में ही नहीं! श्री वेंकटेश्वर के भक्ति - साहित्य के प्रचार - प्रसार के लिए छोटे छोटे से गाँवों को भी अन्नमय्या ने चुना और उन गाँवों में स्थित देवताओं में भी अपने स्वामी श्री वेंकटेश्वर को ही देखकर अपने जीवन को धन्य माना!

वेलुगोटि, चुक्कलूरु, पेलकुरिति, गाँवों के चेन्नकेशव स्वामी की श्रृंगार लीलाओं का अनोखा वर्णन किया! दासरि पल्ले के ''श्रृंगार श्रीराम'' का बखान किया। अन्नमाचार्य के भक्ति गीतों में, संबटूरु, नल्लवेल्ली के चेन्नकेशव, मुड्यिम् ओगिनूतुला के नरसिंह, उदयगिरि के ''मुद्दकृष्ण'' माडुपूरु के 'माधव', मंगांबुधि (मंगम्पेटा) के हनुमान

आदि देवताओं की स्तुति से स्तष्ट है कि उन उन देवताओं के दर्शन उन्होंने कर लिये!

''दीनरक्षक, अखिल लोक स्तुत्य, शिव जी के तारक मंत्र के अर्थ के रूप में, वाविलिपाटि के वीर विजयी राम जी, महान् महिमावान मार्कापुरम चेन्नकेशव स्वामी की भूरि भरि प्रशंसा भी देखी जा सकती है।

इस तरह भक्ताग्रेसर अन्नमाचार्य जी को हर क्षेत्र में, हर गाँव के मंदिर में, हर देवता में तिरुमलेश का ही दिव्य रूप ट्टगोचर होता था। इसीलिए उन उन देवताओं को तिरुमल के आनंद निलय वासी के प्रतिबिंब के रूप में ही उन्होंने अपने गीतों में सिद्ध किया! उनकी हृष्टि में तिरुमलेश की मूलमूर्ति की, अन्य क्षेत्रों के सभी देवी देवताएँ उत्सव मूर्तियाँ ही हैं।

किसको भी पूजो क्या है कमी?
सब में श्री हरि को पाना ही है काफी''

कहते हुए अपने संकीर्तन के यज्ञ को लगातार करते ही रहे! इस तरह अपनी पदकविताओं के द्वारा, बच्चों से लेकर बूढों तक सभीयों में श्री वेंकटेश्वर के प्रति भक्ति के विकास की व्याप्ति ही उनका लक्ष्य था। भक्ति भाव को सुसंपन्न करना ही उनका सुट्टढ़ संकल्प था! इसीलिए उनकी ख्याति दशों दिशाओं में फैल गई! इसी समय पर पेनुगोंडा के राजा ''साळुव नरसिंह रायलु'', जो पहले से ही अन्नमाचार्य जी को जानता था, उसने उन्हें अपना आध्यात्मिक गुरु मानकर, अपने ही दरबार में रह जाने का आग्रह किया। तिरुमल वेंकटेश्वर का ही भक्त होने के कारण, अन्नमय्या ने भी उसके यहाँ रहने को स्वीकारा। एक दिन

श्रीनिवास जी और अलमेल्मंगा की श्रृंगार क्रीडा के बारे में एक गीत को लिख दिया। उसमें वे अलमेलमंगा की सखियों से पूछते हैं कि ''हे सखि! अलमेल्मंगा के अधरों पर लगी हुई कस्तूरी जो है, वह तो कहीं, श्री वेंकटेश को अलमेल्मंगा द्वारा लिखा गया पत्र तो नहीं है न? तनिक ध्यान से देखो।'' (एमोको चिगुरुटधरमुना) इसे सुनने के बाद, साळुव नरसिंह रायलु में दुराशा जाग गई! यश की आकांक्षा बढ़ गई। अपने बारे में भी इसी तरह की एक रचना करने का प्रस्ताव, अन्नमाचार्य के सामने उसने रखा! लेकिन अन्नमय्या ने साफ साफ इनकार कर दिया! बस, राजा क्रोधित हो, अन्नमाचार्य को कारागार में बंद करवा दिया और लोहों की कडियाँ भी डलवाया जिसे ''मूरु रायर गंडा'' कहते थे! अन्नमय्या बाधा से श्री वेंकटेश्वर की प्रार्थना की। कडियाँ उसी क्षण खुल गयीं! कारागार के सेवकों द्वारा इसे सुनकर, रायलु ने फिर से कडियाँ डालने को कहा। उसकी अपनी आँखों के सामने ही फिर से वे कडियाँ खुल गईं। इस घटना को देखते ही रायलु का घमंड चकनाचूर हो गया। अन्नमय्या से क्षमा - याचना की! अन्नमय्या ने भी उसे क्षमा कर दी लेकिन कहा - भागवतों की अवहेलना आगे कभी भी मत करो। किंतु वहीं पर रह जाना उन्हें अच्छा नहीं लगा! तिरुमल के लिए वे रवाना हो गये!

वेंकटेश्वर स्वामी की दयालुता तथा भक्तों की रक्षा करने की लालसा को विविध रीतियों में अपने संकीर्तनों द्वारा आविष्कृत करने के बाद अन्नमय्या, अपने परिवार के साथ तिरुमल पहुँचकर वहीं हमेशा के लिए निवास करने लगे! हर दिन वेंकटेश्वर की नित्य सेवाओं में भाग लेने लगे! उनके वैभव के बारे में गीत गाने लगे! हर दिन सुप्रभात सेवा

में स्वामी को जगाने के लिए तथा रात में उन्हें स्वर्ण शय्या पर सुलाने के लिए भी, गीतों को ही उन्होंने अपना माध्यम बना लिया। उनके सुरीले गीतों को सुने बगैर वेंकटपति सोते ही नहीं थे। कहा जाता है कि एक दिन एकांत सेवा के समय अन्नमय्या की लोरी सुनने के बाद स्वयं श्री वेंकटेश्वर जी ने उनसे कहा - 'ओ मेरे त्यारे अन्नमय्या ससुर जी! हर दिन रात, आपके सुमधुर गीतों को सुनने के बाद किसी और के गीतों को मेरे इन कानों से हर गिज ही नहीं सुनूँगा।'' इस घटना को अन्नमय्या का दौहित्र रेवणूरि वेंकटार्य ने अपनी रचना ''शकुंतला परिणय'' में रेखांकित भी किया!

आज भी सुप्रभात सेवा तथा एकांत सेवा में जगाने के गीत और लोरी के गायन के बाद, मंदिर के अर्चक स्वामी ताळ्ळपाका के वंशजों को चंदन तांबूलों से पुरस्कृत करते हैं।

हमने पहले ही कहा है कि तिरुमलेश जी अन्नमय्या को अपने ससुर जी कहा करते थे। सच ही में आनंद निलय वासी के अन्नमय्या ससुर थे! वह कैसे?

नित्य कल्याणोत्सव

''अनुदिन कल्याण - अनुदिन तोरण'' के नाम से सुप्रसिद्ध क्षेत्र है - तिरुमल! श्री देवी - भूदेवियों से श्री वेंकटेश्वर स्वामी का हर दिन कल्याणोत्सव संपन्न होता है! श्री वेंकटेश्वर जी हर दिन दूल्हा बनते है तो श्री देवी और भूदेवी उनकी दुल्हिनें! इसी कारण तिरुमल मंदिर का कल्याण - मंडप हर दिन आम के पत्तों के बन्दनवारों से, सजाया जाता

है। इसी कारण, 'अनुदिन कल्याण - अनुदिन तोरण' के नाम से तिरुमल सुविख्यात है तथा सर्व शुभंकर भी है।

तिरुमल के मंदिर में इस तरह नित्य कल्याणोत्सवों के प्रणेता अन्नमाचार्य जी ही हैं। तत्पूर्व, मात्र साल में एक बार ब्रह्मोत्सवों में, तथा विशेष पर्वदिनों में यह कल्याण मनाया जाता था। लेकिन इस तरह हर दिन वेंकटेश स्वामी के कल्याणोत्सवों की परिकल्पना का श्रेय तो अन्नमाचार्य जी को ही जाता है। एक और विशेषता यह है कि वेंकटेश्वर स्वामी का गोत्र 'भारद्वाज जोत्र' है और अन्नमाचार्य का गोत्र भी 'भरद्वाज गोत्र' ही है। ज्योतिष शास्त्र के अनुसार, एक ही गोत्र वालों के बीच कन्यादान निषिद्ध है! लेकिन जगत् कल्याण चक्रवर्ती श्रीनिवास को कन्यादान कर, उनका विवाह रचने के कारण अन्नमय्या, श्री भू देवियों के पिता श्री और इस कारण से वे तिरुमलेश के ससुर भी हो गये हैं! आज भी ताळ्ळपाका के वंशज ही तिरुमलेश के कल्याणोत्सव में, कन्यादान करते हुए, विशेष सेवायें समर्पित कर रहे हैं और समुचित गौरव भी पा रहे हैं। इसी कारण अन्नमय्या ने इस गीत में उस नितनूतन दंपति के बारे में इस तरह लिखा!

शुभ तंडुल हाथों में लिये, यह दुलृहन
तनिक मुडकर हँस रही है, आज, यह दुलृहन

बडी ही विख्यात है यह दुलृहन
बडी मुतियन की महल सी है यह दुलृहन
सुहागिनों के बीच बैठी है यह दुलृहन
पति का नाम बताने में लज्जित है यह दुलृहन

इस तरह दुल्हन के बारे में लिखने के बाद उन्होंने दूल्हें के बारे में क्या लिखा?

सकल लोक रक्षक है यह दूल्हा
सकल असुरों का नाशक है यह दूल्हा''

भूमि को उखाड दिया तब, यह दूल्हा
बांसुरी के रागोंवाला है अब यह दूल्हा
ब्याह रचा है अभी अभी यह दूल्हा
दुल्हन का सही जोडा है यह दूल्हा
धरा पर ब्याह रचा था उस दिन यह दूल्हा
तिरुमल पर बस गया है यह दूल्हा
इतना सारा कारोबार रखा है यहाँ पर यह दूल्हा

नित नूतन दूल्हा श्रीनिवास स्वामी का भी इस तरह कीर्तिगान करने के बाद अब इन दोनों को कल्याण में बुलाते हैं!

सुवर्ण अक्षत लेकर तुरंत आओ आज
सकल दिशाओं की सुहागनों! तिरुमलेश के कल्याण में

श्री वेंकटेश्वर और श्री महालक्ष्मी के
अलौकिक कल्याण का है मुहूरत
भेरी निनाद है वही, गरुड ध्वज है वही
सकल देवताओं! आओ आज! तिरुमलेश के कल्याण में
(तेलुगु मूलः पसिडि अक्षिंतलिवे)

सन.15 वी सदी में अन्नमाचार्य के द्वारा इन नित्य कल्याणोत्सवों का श्रीगणेश हुआ था। आज ये कल्याणोत्सव, उत्तर भारत में ही नहीं,

बल्कि पूरी दुनिया भर परिव्याप्त हो गये हैं। जगत् के कल्याण कर्ता श्रीनिवास के अनुग्रह को संपूर्णतया पाने के लिए उपयुक्त शुभप्रद एवं विशिष्ठ सेवा के रूप में इसे एक पहचान प्राप्त हुई है। इन नित्य कल्याणोत्सवों के निर्वाह के लिए, ताळ्ळपाक के परिवार ने कुछ गाँवों को भी उपहार रूप में मंदिर को सौंपा है।

सिर्फ कल्याणोत्सव ही नहीं। वसंतोत्सव, ब्रह्मोत्सव, पुष्पयाग जैसे वार्षिक उत्सवों में तथा, उगादि, श्रीराम नवमी, आणीवार आस्थानम्, वैकुंठ एकादशी, दीवाली जैसे त्योहारों के समय संपन्न होनेवाले स्वामी के दरबारों (आस्थान) में ताळ्ळपाका अन्नमाचार्य जी स्वयं भाग लेकर तिरुमलेश का कीर्तिगान गीतों के रूप में करते थे। हर शुक्रवार के दिन, स्वामी की दिव्य मंगल विराट्मूर्ति के अभिषेकोत्सव के बारे में रचा हुआ है यह गीत!

शुक्रवार का अभिषेक

शुक्रवार के दिन सात घडी के समय
अलमेलूमंगा के प्रिय पति देवता के देखा मै ने

''आभूषण सब निकालकर नील सुंदर मूर्ति के
वक्षःस्थल शिरोभाग और कटि प्रदेश को
गुलाब जल में भिगोये हुए परिधानों से
अलंकृत करते हुए देखा मैं ने''

''भीमसेनी कपूर के चूर्ण को रखकर स्वर्ण पात्रों में
सिर से पाँव तक लेप हैं लगाये,
अचरज से देरवनेवाली आँखों को प्रीतिकर

नित्य मल्लिका फूल सदृश नित नूतन स्वामी को देखा मैं ने''

''गंध बिलाव के गंध को गलाकर
चाँदी की थालियों में रखकर
उसका गाढा लेप है लगाये
उस आनंद में पुलकित खडे स्वामी को देखा मैं ने''

आनंद निलय वासी स्वामी के उत्सवों में भाग लेकर उस स्वामी पर हर रोज, अवश्य एक नये गीत को लिख समर्पित करते थे और इस तरह 32 हजार पद कविताओं को लिखकर अपने जीवन को अन्नमय्या ने धन्य बना लिया!

तिरुमल में हर उगादी के पर्व दिन पर, प्रारंभ होकर लगातार चालीस दिन तक संपन्न होनेवाले नित्योत्सवों में कुछ दूरी तक सिर्फ अन्नमय्या विरचित गीतों को ही सुनते हुए तिरुमल की गलियों में श्रीनिवास प्रभु घूमते हैं। किसी तरह के वाद्य या वेदनाद के बिना, मात्र अन्नमय्या के वंशज, एकतारा पर, स्वामी के आगे आगे गाते हुए चलते हैं और पीछे श्री देवी भूदेवी सहित मलयप्पा स्वामी उन गीतों का सहर्ष श्रवण करते हुए, उनका अनुसरण करते है! कितना भव्य नजारा है न?

तिरुमलेश की सन्निधि में वैखानस आगम के संप्रदायानुसार उत्सवादियों का निर्वाह सदियों से चालू है। उसका निरीक्षण, भगवद्रामानुज की शिष्य संतति वाले (जिय्यंगार) करते रहते हैं। इस तरह शिष्ठ वैखानस तथा प्रांचरात्रागमों के बीच, वैष्णव धर्म को स्वीकारे हुए नियोगि ब्राह्मण, ताळ्ळपाक अन्नमाचार्य विरचित गीतों का शाश्वत स्थान पाना,

तो अचरज की बात तथा अद्भुत भी है। लेकिन यह भी कहा जा सकता है कि अन्नमाचार्य जी में नंदकांश है। उसके प्रमुख स्थान को वह किसी तरह पायेगा ही न?

मात्र तेलुगु साहित्य में ही नहीं, अनंत आध्यात्मिक जगत में, अन्नमय्या की पदकविता को अनमोल रत्नों से जडित सिंघासन पर बिठाया गया है। तेलुगु पद कविता, तेलुगु सरस्वती और तेलुगु भाषीयों के भाग्य का क्या कहने?

तेलुगु भाषियों के इष्ट देवता हैं - वेंकटेश्वर स्वामी! इस अखिलांड कोटि, ब्रह्माण्ड नायक के दर्शन से पुलकित होने, उनकी सेवा करने का संदेश, गाँव गाँव की प्रजा तक पहुँचाना ही नहीं, उनमें आध्यात्मिक चेतना लाकर, महोन्नत बनाना ही नहीं, बलि्क, सप्तगिरीश के अनुग्रह को भरपूर पाने तक प्रेरणा देने का श्रेय ताळ्ळपाका अन्नमाचार्य जी का ही है!

इस तरह श्री वेंकटेश्वर स्वामी की दयालुता, लीलाएँ एवं महिमाओं को हर रसना पर शाश्वत बनाते हुए, अन्नमय्या कहते हैं!

मेरी रसना से हजारों संकीर्तन
तेरे गुणगान में डटकर गवाया तू ने
सहस्रों नाम वाले हे केशव!
मुझ नाचीज को यह पुण्य दिया, बस तू ने!

इस तरह भक्ति एवं अंकित भाव से श्रीनिवास का सदा स्मरण करते हुए, सकल लोकों को आनंद देनेवाला ''श्रीवेंकटेश्वर पद कविता यज्ञ' को, बिना किसी रुकावट के संपन्न किया उन्होंने! उन 32 हजार

संकीर्तनों को 'संभालो तेरे चरणों में समर्पित मेरे पूजा सुमनों को' कहकर श्री वेंकटश्वर जी को ही समर्पित कर दिया! दिव्य दर्शन तथा सात प्रजननों तक मोक्ष को, तथा शाश्वत रीति में सेवा भाग्य को वरदान के रूप में पाये हुए परम भक्ताग्रेसर हैं ताळ्लपाका अन्नमाचार्य!

एक संकीर्तन है काफी हमारी पूरी रक्षा करने
बाकी गीतों को रहने दे संरक्षित, भंडार में

कहते हुए तिरुमल मंदिर के परिसर में ही एक संकीर्तन भण्डार की व्यवस्था कर, अपने विरचित गीतों को ताम्र लेखों पर लिखवाकर, ''भगवान और भक्तों के स्तुति पात्र ''तरीके से त्रिकरणों से विनम्र अन्नमय्या ने स्वामी को समर्पित किया! विमान परिक्रमा के मार्ग में स्थित ''ताळ्ळपाकम अरा'' (ताम्रलेखों का कमरा) के पास जब हम जायेंगे तब ताळ्ळपाका के पुत्रों एवं उनकी रचनाओं के बारे में जान लेंगे!

यह तो मुमकिन ही है कि एक ही वंश में कई कवि या भक्त भी हो सकते हैं। लेकिन एक ही वंश के प्रजनन में भी कवि - या भक्तों का जन्म लेना, तिस पर सुप्रसिद्ध वैष्णव - क्षेत्र तिरुमल वेंकटेश स्वामी के मंदिर की अर्चना एवं पूजा की विधियों में शाश्वत रीति में भाग लेने का भाग्य पाना, मात्र अन्नमाचार्य के वंशजों को मिला हुआ वरदान ही है। यह संप्रदाय आज भी जारी है। आनंद निलय वासी के साथ सारी तेलुगु जनता को भी हर्ष बाँटनेवाली बात है। हरि के नंदकांश में जन्में अन्नमय्या को ही साध्य विषय है।

इस तरह लगभग 95 साल तक, अपने स्वामी आनंद निलय वासी से बिछुडकर इस धरा पर, एक असाधारण, पाँच भौतिक शरीर का

धारण कर, साक्षात् हरि का अवतार बनकर जीवित था वह - नंदक खड्ग! अपने स्वामी से इतने सारे दिन बिछुडकर रहना, उसे असह्य हो गया! ''हमें छोडना नहीं पुष्करिणी स्वामी।'' कहते हुए, सन् 1503, दुंदुभि नाम वत्सर फाल्गुण कृष्ण द्वादशी के दिन, अपना ''अन्नमय्या'' नामक पाँच भौतिक शरीर को उसने त्याग दिया! फिर से नंदक खड्ग का रूप धारण कर उस अखिलांड कोटि ब्रह्माण्ड नायक के कटि प्रदेश में अपने पूर्व रूप में उनका आभूषण बन गया!

भूलोक वैकुंठ, तिरुमल क्षेत्र में भक्तों के ''हथेली का सुवर्ण'' सा विद्यमान श्री वेंकटेश्वर जी की पूजा अर्चना के लिए कोई मंत्र, श्लोक या विधि की आवश्यकता ही नहीं है। तो फिर क्या चाहिए? हाँ बस, 'वेंकटेश्वर मंत्र' के रूप में आविष्कृत अन्नमय्या के गीत काफी हैं। उन गीतों के शब्द काफी हैं। क्योंकि अन्नमय्या के गीत - तिरुवेंकटाधीश का गुणगान करनेवाले वेद हैं। उनके गीत सप्तगिरियों को चढाने वाले रत्नों के पथ हैं। उनके शब्द - श्री वेंकटेश्वर के मंत्रों की गठरियाँ है! तेलुगु घरों के वंशानुगत देवता अलमेलुमंगापति के श्रृंगार - नृत्य हैं! उनके गीत, श्री वेंकटेश्वर के मनोहर हास की चंद्रिकाओं की व्याख्या करनेवाली दिव्य ध्वजायें हैं!

इस संदर्भ में, मेरी अपनी एक सच बात है। (मूल लेखक) अन्नमाचार्य और उनके गीतों की उपासना करने के कारण ही मुझे एक प्रेरणा एवं तत्संबंधित रचना शाक्ति भी प्राप्त हुई हैं! उसका ही फल है - यह मेरी ''हरि कोलुवु'' (हरि की सन्निधि) रचना, जो प्रथमतया सप्तगिरि मासपत्रिका में धारावाहिक रूप में प्रकाशीत होकर अब पुस्तक का रूप धारण किया है। इसीलिए कह रहा हूँ कि अन्नमय्या के गीतों के द्वारा

आनंद निलय वासी स्वामी की उपासना कीजिये क्योंकि आनंद निलय वासी ही अन्नमय्या हैं। अन्नमाचार्य ही तिरुवेंकटेश हैं!

श्री वेंकटेश परब्रह्म में अपने मन को हमेशा लग्न रखते हुए, हम सभीयों को सद्गति प्राप्त कराने के लिए अवतरित अन्नमाचार्य जी की स्तुति करेंगे! नतमस्तक होंगे!

वेंकटेश परब्रह्म रसतुंदिलमानसम्
अध्यात्मविद्यामर्मज्ञम् अन्नमार्यम् नमाम्यहम्
- श्री गौरिपेद्दि रामसुब्बशर्मा

अत्यंत प्राचीन, इस तिरुमल दिव्य क्षेत्र में विद्यमान श्री वेंकटेश्वर की मूल विराट मूर्ति से संबंधित विषयों को हमने जान लिया! यह भी देखा कि अपने पिय भक्तों को उस दिव्य सुंदर मूर्ति ने कैसे अपनी ओर आकृष्ट किया, अपने अनुग्रह को उन पर किस तरह बरसाया? कितने ही श्रीनिवास के भक्तों की जीवन गाथाओं को हृदयंगम रीति में जान लिया! तिरुमलेश की लीलाएँ अपरंपार हैं। उनकी महिमाओं के उदाहरण रूपी भक्तों की कथाएँ भी अगणित हैं! तिरुमलेश की ये सब लीलाएँ मात्र उन्हें ही मालुम हैं। ब्रह्मादि अन्य देवताएँ भी इन्हें जानते नहीं हैं।

अब हम भगवान श्रीनिवास के बारे में अत्यंत पाचीन भक्त आळ्वारों के अनुभवों को संक्षिप्त रूप में ही सही, जान लेंगे!

आळ्वार

आळ्वारों में प्रप्रथम हैं - पौयगै आळ्वार! स्वामी के बारे में अपने एक गीत में भक्ति से ओतप्रोत होते हुए कहते हैं - ''दशावतारों के बारे

में हमने सुना है बस! देखा ही नहीं! अगर - देखना चाहे तो भी मुमकिन नहीं है। लेकिन यहाँ, तिरुमल में प्रत्यक्षतया अपना दिव्य दर्शन देते हुए, भक्तों की बाधाओं को हरते हुए, हमेशा के लिए यहीं पर ठहर गये स्वामी के दिव्य चरणों की सुंदरता को बस स्वयं देखना चाहिए, वर्णन करना मुशिकल है।''

भूदत्ताळ्वार तो तिरुमल क्षेत्र की सुंदरता का अभूत पूर्व वर्णन करते हैं! हरिहरमूर्ति के रूप में पेयाळ्वार को श्री वेंकटेश्वर स्वामी के भव्य दर्शन मिले! तिरुमळिशै आळ्वार कहते हैं कि अपने भक्तों को आनंद - प्रदान के लिए ही भगवान विष्णु, अर्चामूर्ति के रूप में वेंकटेश्वर बनकर तिरुमल पर सदियों से खडे हैं।

परम वैष्णव शिरोमणि नम्माळ्वार, भक्तों को सप्तगिरि की राह दिखाते हुए कहते है - 'देखिए! श्री वेंकटपति को दोनों हाथों को उठाकर एक बार वन्दन करके देखिए। बस, आपके पूर्व जन्मों के तथा आगामी जन्मों के पाप भी मिट जाते हैं। इस कलियुग में कुछ भी चाहे, तो अवश्य उनका दर्शन कर उनकी प्रार्थना करनी ही पडेगी।''

कुलशेखराळ्वार की इच्छा है - ''वेंकटाचल में पेड पौधा बनकर जीयूँ! या बाँबी का रूप ही अच्छा होगा या तो पुष्करिणी में मछली, बगुला बन कर जन्म लूँ! लेकिन लेकिन यह सभी अशाश्वत हैं। सदा के लिए भगवान वेंकटेश के वदन में कांतिमय हास चंद्रिकाओं को देखते रहना ही अच्छा होगा!'' इस परम भक्त की इस इच्छा के कारण ही शायद, तिरुमल श्री वेंकटेश्वर के मंदिर में मूल विराट मूर्ति के सांमने की

देहली को ''कुलशेखर पडी' नाम से आज भी अभिहित किया जा रहा है।

पेरियाळ्वार नाम से सुविदित विष्णुचित्त जी वेंकटाचलपति का, साक्षात् कृष्ण के रूप में ही वर्णन किया! तिरुप्पाणाळ्वार की प्रार्थना यह है कि श्रीनिवास! हे तिरुमलेश स्वामी! तुम्हारे भक्तों की सेवा करने का भाग्य मुझे प्रदान करो!''

तिरुमंगैआळ्वार कहते हैं - 'स्वामी! मैं ने बहुत सारे पाप किये हैं। उन पापों को मात्र तुम ही मिटा सकते हो।'

आण्डाळ (गोदा देवी) तो तिरुमल के स्वामी में गोविन्द के रूप को ही देखती है - ''सहस्रों कांतियों से विराजित हे स्वामी! दिव्य शंख चक्रों को धरकर विद्यमान तेरे चरणों पर मेरा जीवन पूर्णतया समर्पित है।''

इस तरह कांलांतर में कईयों महनीयों तथा कईयों भक्तों की एक मात्र पुकार से ही, करुणांतरित हो, तत्क्षण जवाब देनेवाले देवता के रूप में भगवान वेंकटेश्वर प्रसिद्ध हो गये! उन उन भक्तों ने, हम सभीयों को उपदेश दिया कि इह, पर दोनों सुखों को भोगने तथा जन्मांतर मोक्ष को भी प्राप्त करने का भी अति आसान और समीप मार्ग है - वेंकटाद्रि! किसी पूर्व जन्म के पुण्य विशेष के ही कारण, जाने अनजाने में ही सही, हम सब लोग, उस तिरुमलेश की सन्निधि में खडे हैं! उनकी दिव्य सुंदर मूर्ति के दर्शन से हमारी आँखों की त्यास बुझ रही है! श्रीनिवास कथामृत का आस्वादन भी कर रहे हैं। एक बार और आनंद निलय को प्रतिध्वनित करते हुए गोविन्द का नाम स्मरण कर लेंगे!

गोविन्द गोविन्द गोविन्द

श्री वेंकटेश्वर की मूलविराट मूर्ति

इस तरह अनेकों को अनेकानेक दिव्य अनुभूतियों को बाँटते हुए, स्तुति पात्र हो रहे श्री वेंकटेश्वर की मूल विराट मूर्ति, लगभग आठ फुट की है!

हर दिन ब्रह्म मुहूर्त वेला में सुप्रभात सेवा के बाद मंदिर में लाखों भक्त और यात्री, सानंद इसी मूल - विराट मूर्ति के दिव्य भव्य दर्शन से पुलकित होने की प्रतीक्षा करते ही रहते हैं। वैकुंठम् क्यू, आर्जित सेवा में भाग लेनेवालो के पी. सी. सी. षेड - मार्ग कुछ भी हो, मूल विराट मूर्ति के दिव्य दर्शन की लालसा तो एक समान है।

कहा जाता है कि रात में एकांत सेवा के बाद ब्रह्म मुहूर्त में ब्रह्मादि देवताएँ भी, इस मूल विराट मूर्ति के दर्शन और आराधना के लिए - आते हैं! इसीलिए अर्चक स्वामी हर दिन रात में ब्रह्मादि देवताओं की पूजा के लिए सुवर्ण पात्रों में पानी को रखते हैं। वही जल 'सुप्रभात सेवा' के बाद भक्तों और यात्रियों को ब्रह्म तीर्थ के नाम से दिया जाता है!

तिरुमल की मूल विराणमूर्ति को हर दिन सुबह और सायंवेलाओं में तोमाल सेवा (पुष्पालंकरण) संपन्न होती है। सुबह मध्याह्न और सायं वेलाओं में तीन बार अर्चना - तथा नैवेद्य सेवायें भी होती हैं।

हर मंगलवार के दिन सुबह 6 बजे ''अष्ददळ पादपद्माराधना'' नामक पूजा, 108 सुवर्ण कमलों से मूल विराट मूर्ति के चरण कमलों में होती है। इस अष्टोत्तर शत नामावली पूजा में, निर्देशित शुल्क चुकाकर दंपति भाग ले सकते है।

हर बृहस्पतिवार दूसरी अर्चना के समय पहले मूल विराट मूर्ति के आभूषणों तथा ऊर्ध्व पुण्डों को निकाल देते हैं। दूसरी अर्चना के बाद, 'अन्नकूटोत्सव' नामक तिरुप्पावड नैवेद्य (भोग) को चढ़ाते हैं। सुवर्ण द्वार के बाहर ''पुलिओदेरे'' (इमली का खाना) को एक बडी सी राशी के रूप में रखकर स्वामी को समर्पित करने को ही ''तिरुप्पावड सेवा' कहते हैं। इस सेवा में पुलिओदेरे के साथ, जलेबी तथा वडा का भोग भी चढ़ाया जाता है। इस सेवा के बाद ही मूल विराट मूर्ति के नेत्रों के दर्शन का भाग्य भक्त जनों को मिलता है। बृहस्पतिवार की सायंवेला में, पूलंगि सेवा'' नामक पुष्पालंकार सेवा में मूल विराट मूर्ति विविध वर्ण पुष्पों से सुसज्जित हो, भक्तों को अपने दिव्य दर्शन देते है।

हर शुक्रवार के दिन, सुप्रभात सेवा के बाद, कस्तूरी, संकुमद आदि परिमल द्रव्यों से युक्त मंगळाभिषेक भी संपन्न होता है। मात्र इस शुक्रवार के अभिषेक में ही, तिरुमलेश की मूल विराट मूर्ति को बिना किसी आभूषणों तथा आच्छादनों के ही देखने का भाग्य भक्त जनों को मिलता है। युगों पहले ब्रह्मादि देवताओं की प्रार्थना को स्वीकारकर कलियुग वैकुंठ पर पधारे हुए स्वयं व्यक्त देवता को, वक्षःस्थल पर विराजित द्विभुज व्यूह लक्ष्मी के साथ भक्त जन देख सकते हैं।

परिमल द्रव्य

हर शुक्रवार को संपन्न होनेवाली इस अभिषेक सेवा में 36 तोले का भीमसेनी कपूर, 36 तोले का केसर, 1 तोला कस्तूरी, 1-1/2 तोले का संकुमद (गंध बिलाव) 24 तोले की हल्दी आदि परिमल द्रव्यों का उपयोग होता है। श्री वेंकटेश्वर की स्वयं व्यक्त मूल विराटमूर्ति का अभिषेक, सर से पाँव तक इन परिमल द्रव्यों से होता है। इससे जो तीर्थ

लभ्य होता है, उसे पुलिकापु तीर्थम् कहते हैं। आर्जित सेवा (शुल्क सहित) के रूप में संपन्न इस सेवा में भाग लेनेवाले भक्तों पर, इस अत्यंत महिमावान तीर्थ जल का संप्रोक्षण होता - है! इस तीर्थ की महिमा का वर्णन अन्नमाचार्य के इस गीत में पाया जाता है।

श्री हरि का यह चरण तीर्थ ही है दिव्य औषधि
मोह पाश तोडकर मोक्ष देनेवाली औषधि
''तीखी नहीं, आँसू नहीं अति शीतल है यह,
घिसी नहीं, उबाली नहीं, अति बारीक है यह,
इच्छा से खरीदकर, लायी जाती नहीं
जडी बूटियों का झंझट इसमें है नहीं''
''तीव्र रोगों के लिए उपयुक्त है यह,
पापों को मिटाने में शक्तिमान है यह
हर पल, ब्रह्मांदियों से सेवित औपधि है यह,
नरक के नाम को मिटाती है यह''
''सभी भयों को मन से हटाती है यह
अवगुणों को जड से मिटाती है यह
पंकजाक्ष वेंकट रमण रक्षक की है यह
निश्शंक अपने दासों को स्वीकारती है यह''

(तेलुगु मूल - श्रीहरि पाद)

ऊर्ध्वपुण्ड्र

हर शुक्रवार के दिन, अभिषेक के बाद, मूलविराट मूर्ति के माथे को ऊर्ध्वपुण्ड्रों से अलंकृत किया जाता है। 'तिरुमणिकाप्पु' कहते हैं। हफ्ते

में एक ही बार माने शुक्रवार के दिन ही, अलंकृत होनेवाले इन ऊर्ध्व पुण्ड्रों के लिए 16 तोले का भीमसेनी कपूर, 1-1/2 तोले की कस्तूरी का उपयोग होता है। शुक्रवार के दिन आँखों को भी अच्छादित करते हुए, अलंकृत होनेवाले इन ऊर्ध्व पुण्ड्रों को फिर से गुरुवार के दिन ही कुछ हद तक हटा दिया जाता है। इसीलिए गुरुवार के दिन ही मूल विराट मूर्ति के नेत्रों के भव्य दर्शन का अवसर भक्तों को प्राप्त होता है!

ब्रह्मोत्सवों के समय में, इन ऊर्ध्व पुण्ड्रों के लिए अधिक भीमसेनी कपूर और कस्तूरी का उपयोग किया जाता है। हर साल ब्रह्मोत्सवों के पहले आनेवाले शुक्रवार के दिन, ब्रह्मोत्सवों में आनेवाला शुक्रवार, तथा ब्रह्मोत्सवों के बाद के शुक्रवार के दिनों में (माने तीन या चार शुक्रवार) मूल विराट मूर्ति के ऊर्ध्वपुण्ड्रों के लिए 36 तोले का भीमसेनी कपूर तथा तीन तोले की कस्तूरी का उपयोग किया जाता है। इसका तात्यर्थ है - साल भर के शुक्रवारों के ऊर्ध्वपुण्ड्रों से दुगुना उपयोग! इसी कारण ब्रह्मोत्सव समयों में आनेवाले इन तीन या चार शुक्रवारों को 'दुगुने शुक्रवार' या 'दुगुने वार' भी मंदिर के संप्रदायानुसार कहा जाता है। श्री वेंकटेश्वर स्वामी के भीमसेनी कपूर के ऊर्ध्व पुण्ड्र का वैखानस आगम के अनुसार

नासिकामूलमारभ्य रेखाद्वितयसंयुतम्
धारयेत ऊर्ध्वपुण्ड्रम् हरेः फालतले शुभे''

नाक के प्रारंभ से लेकर माथे तक होना चाहिए! अभिषेक के बाद, इस मूल विराट मूर्ति को 4 फुट की सोने की किनारेवाली रेशमी धोती, 12 फुट की लंबाई और 2 फुट चौडाई का रेशमी उत्तरीय - पहनाये जाते

हैं। इसी मूलमूर्ति को सैकडों तौलों के आभूषण, वज्र मुकुट, शंख, चक्र, वज्र कटि हस्तादियों से ही अलंकृत करते हैं।

श्री वेंकटेश्वर स्वामी की इस दिव्य मूल विराट मूर्ति के चरण कमलों से शिरो भाग तक, हर दिन अलंकृत होनेवाले आभूषणों के दाताओं का विवरण मिलना कष्ट साध्य ही है। आमूलाग्र अलौकिक छवि को बिखेरनेवाले ये सारे आभूषण, आनंद निलय वासी के आश्रित पक्षपात एवं कृपालुता के प्रतीक ही हैं। इनमें से कुछ आभूषणों के नाम उर्धृत हैं!

तिरुमलेश के आभूषण

1. तिरुमलेश के चरण कमलों के नीचे का सुवर्ण की पंखुडियों वाला पद्म - पीठ
2. सुवर्ण चरण कवच - दक्षिण चरण, वाम चरण
3. स्वर्ण पीतांबर
4. स्वर्ण खड्ग - सूर्य कटारि
5. वैकुंठ हस्त को अलंकृत करनेवाला सुवर्ण कवच
6. वैकुंठ हस्त को पहनाया जानेवाला सुवर्ण दक्षिण नागाभरण
7. वैकुंठ हस्त नागाभरण के नीचे की कडी
8. कटि हस्त को अलंकृत की जानेवाली सुवर्ण की पट्टिका
9. कटि हस्त को अलंकृत की जानेवाली सुवर्ण की कडी
10. कटि हस्त को अलंकृत की जानेवाली - सुवर्ण की लंबी पट्टिका
11. सुवर्ण कटि हस्त का कवच - सुवर्ण की पट्टिका

12. कटि हस्त को अलंकृत की जानेवाला रत्नों का कवच
13. वाम हस्त का नागाभरण
14. सुवर्ण नागाभरण - कटिबंध
15. वक्षःस्थल लक्ष्मी की सोने तथा रत्नों की कडी
16. सुवर्ण सालिग्रामों की सहस्रनामावली माला
17. तुलसी की सुवर्ण माला
18. कम्मर पट्टे नामक सुवर्ण कटिबंध
19. छ : सूत्रों वाला यज्ञोपवीत
20. सुवर्णमय अष्टोत्तर शत नाम माला
21. चार सूत्रों वाली सुवर्ण मोहरियों वाली माला
22. सुवर्ण बाजू बंद
23. रत्नों से जडित सुवर्ण पट्टिका - शंख का आभूषण
24. रत्न जडित सुवर्ण पट्टिका - चक्र का आभूषण
25. रत्न जडित वाम कर्ण पत्र
26. रत्न जडित दक्षिण कर्ण - पत्र
27. रत्न जडित सुवर्ण कर्ण कुंडल - दक्षिण तथा वाम
28. सुवर्ण की कडी जो राका चंद्र जैसे होती है
29. सुवर्ण कंठहार
30. सुवर्ण घंटियों वाला कटि - सूत्र
31. सुवर्ण पट्टिका जैसे दो कर्ण - पत्र
32. दो सूत्रों का स्वर्णहार
33. स्वर्ण से बनी कडियाँ
34. सुवर्ण मुकुट

35. **नये बने सुवर्ण शंख चक्र कवच**
36. **पाँच सूत्रों की सुवर्ण माला**
37. **तिरुमलेश का मकरतोरण**
38. **वक्षःस्थल में बसी लक्ष्मी की प्रतिमा**

हर दिन आभूषित होनेवाले ये कीमती आभूषण, अर्चक स्वामियों के अधीन में ही रहते हैं। इनमें से कुछ गहनों से मूल विराट स्वामी की मूर्ति को अलंकृत करते हैं तो बाकी गहनें, मंदिर मे ही कडी निगरानी में रखे जाते हैं।

सभी आभूषणों से अलंकृत होकर, सदा सर्वदा, भक्तों को अपना भव्य दर्शन देते रहे उस ब्रह्माण्ड नायक की स्तुति करके आगे बढ़ेंगे!

वही है देखो! तिरुमल का छबीला!
सोने की मूँठी का छुरा वाला!

''बडा मुकुट है उसका, पीतांबर है पहना,
सीने पर कौस्तुभमणि गहना भी है
कितना मनमोहक है, ऊर्ध्व पुण्ड्र है
देखो, शंख और चक्र हाथों में हैं''

''देखो कटि हस्त, और वह अभय हस्त उसका
पाजेब और किंकिणी चरणों में है पहना
कानों में सोने के मकर कुण्डल भी हैं
सुंदर बाजूबंद और कडे भुजाओं में हैं''
हँस रहीं है उसकी आँखें, नाभि में हैं कमल धरा,
कटि में बंधा सुंदर कटि सूत्र है,

आकर्षक अधर हैं, श्री वेंकटेश के,
अलमेलूमंगा के गले का वे मंगल सूत्र है''

(तेलुगुमूल-वाडेनो कंटिरटे)

हे सप्तगिरीश! वेंकट रमण! गोविन्द गोविन्द गोविन्द!

36. भोग श्रीनिवासमूर्ति

तिरुमल के 'आनंद निलय' में प्रथम दिव्य मूर्ति है - मूल विराट सालिग्राम मूर्ति जिसे ''ध्रुव मूर्ति'' भी कहते हैं। दूसरी मूर्ति है भोग श्रीनिवास मूर्ति की जिसे ''मनवाळप्पेरुमाळ'' या ''पुरुष बेरमु'' भी कहते हैं। मंदिर में हर दिन रात में एकांत सेवा का वैभव - इसी भोग श्रीनिवास मूर्ति की प्रतिमा को ही मिलता है। 'मनवाळन्' का अर्थ है ''दूलूहा'' पेरुमाळ का अर्थ है देवता! यह दूलूहा कैसा है। ''नित्तनूतन दूलूहा'' है। हर दिन सेवाओं में आखिरी सेवा ''एकांत सेवा'' ही है। रेशमी शय्या पर लेटने का भाग्य पाते हुए, नित्य कल्याण मूर्ति के रूप में विराजित दिव्य भव्य मूर्ति है - यह भोग श्रीनिवास!

शंख चक्रधारी, यह चतुर्भुज मूर्ति, संपूर्णतया, मूल विराट मूर्ति का ही नकल है। 1-1/2 फुट की इस रजत मूर्ति को ''जीवस्थान'' के नाम से अभिहित मूल विराट के चरण तल पर स्थित पद्म - पीठिका पर रखते हैं।

सन् 614 में ''कडवन् पेरुंदेवी'' नाम से भी जाने जानी वाली, पल्लवों की राणी ''सामवाय'' (शयामव्वा या श्यामलांबा) ने इस भोग श्रीनिवास मूर्ति की प्रतिमा को, तिरुमल मंदिर को समर्पित किया था उस समय गर्भालय (आनंद निलय) की मरम्मतें हो रहीं थीं। तब 'सामवाय'

राणी ने स्नपन मंडप नामक 'तिरुविलान् कोइल' का निर्माण करवाया! मूल सालिग्राम मूर्ति की प्रति मूर्ति के रूप में इस भोग श्रीनिवास मूर्ति को प्रतिष्टित कर, स्नपन तिरुमंजनादियों को भी जारी रखवायी। इतना ही नहीं, कन्यामास याने कि तमिल लोगों के पेरटासि महीने में (सितंबर अक्तूबर महीनों में संपन्न ब्रह्मोत्सवों के पहले) इस भोग श्रीनिवास मूर्ति की शोभा यात्रा की भी व्यवस्था उसने की! इस 'मनवाळप्पेरुमाळ' मूर्ति को अनेकानेक आभूषणों को भी समर्पित कर धन्य भी हो गयी थी।

उस दिन से आज तक भी, यह भोग श्रीनिवास मूर्ति की रजत मूर्ति, तिरुमलेश के मंदिर की सेवाओं में प्रमुखतया भाग ले रही है।

हर दिन, ब्रह्म मुहूर्त में सुप्रभात सेवा के बाद, 'तोमाल सेवा' (पुष्पालंकरण सेवा) के पहले इस भोग श्रीनिवास मूर्ति का, आकाशगंगा तीर्थ के जलों से अभिषेक होता है। श्रीनिवास की मूल विराट मूर्ति के स्थान पर, अनुदिन अभिषेक की सेवा, इसी भोग मूर्ति को समर्पित होती है।

हर बुधवार सुबह 6 बजे - सहस्त्र कलशाभिषेक संपन्न होता है। सुवर्ण द्वार के आगे जो महा मणि मंडप है, उसमें, एक स्नान पीठिका पर इस भोग श्रीनिवास की मूर्ति को गरुडाळ्वार के सामने नियोजित करते हैं। आनंद निलय की मूल विराट मूर्ति और इस भोग श्रीनिवास मूर्ति को, एक रेशमी धागा या बरीक सोने के सलाखे से अनुसंधानित करते हैं। इस तरह करने का अंतरार्थ यह है कि भोग श्रीनिवास मूर्ति को संपन्न हो रही यह सेवा, मूल शलिग्राम मूर्ति को ही हो रही है। इस सहस्त्र कलशाभिषेक के समय, भोग श्रीनिवास मूति की दायीं तरफ उत्तर दिशा की ओर एक स्नान पीठिका पर भूदेवी भूदेवी समेत मलयप्पा स्वामी को तथा बायीं

तरफ एक और स्नान - पीठिका पर सेनापति विष्वक सेन महोदय को भी बिठाते है। इस तरह - भोग श्रीनिवास मूर्ति के साथ ''सहस्त्र कलशाभिषेक'' इन सभियों को संपन्न होता है। इस अभिषेक के बाद दूसरे भोग के रूप में क्षीरान्न, पोंगल तथा अप्पालु नामक मीठे पकवान चढ़ाये जाते हैं।

हर दिन रात, एकांत सेवा में शय्या पर मनवाळ पेरुमाळ नाम से अभिहित होनेवाले इस भोग श्रीनिवास मूर्ति को ही लिटाते हैं। लेकिन धनुर्मास के महीने में यह शय्या सेवा, आनंद निलय में ही विद्यमान कृष्ण स्वामि मूर्ति को की जाती है।

हर रात एकांत सेवा के समय इस भोग श्रीनिवास मूर्ति को गर्भालय के आगे जो शयन मंडप है, उस में चाँदी की कडियों से लटकायी गई, सोने की निवार - के पलंग पर रेशमी शय्या पर लिटाते हैं। दक्षिण की दिशा की तरफ तकिया डालकर, उत्तराभिमुख होते हुए स्वामी, भक्तों की तरफ अपनी करुणामय दृष्टि से देखते रहते हैं। पलंग की चारों तरफ, तरिगोंडा वेगमांबा के नाम पर विविध वर्णों की सुंदर रंगोलियों से सजाते हैं। पलंग के आगे दो फुट के रजत दीप स्तंभों की ज्योतियों को को सन्निधि गोलला प्रज्जवलित करता है।

हर दिन रात की इस एकांत सेवा के समय, श्री वेंकटेश्वर स्वामी को शक्कर मिलाया हुआ गोक्षीर, पंचकज्जायम् नामक चूरा (चीनी, काजू, खोपरे का चूरण, इलाइची, किसमिस एवं खसखस आदि का मिश्रण) विविध फलों के टुकडों को मिलाकर बनाया गया मेवा नामक पंचामृत आदि का भोग चढ़ाया जाता है।

इसी समय, दो श्रीचंदन के दो कौरों में से एक को श्री वेंकटेश्वर की मूल विराट मूर्ति के चरणों पर रखते हैं। दूसरे कौर में से आधे भाग को शय्या पर लेटे हुए भोग श्रीनिवास मूर्ति के वक्षःस्थल पर रखते है। अब बचे हुए आधे भाग में से 1/4 भाग मूल विराट मूर्ति के वक्षःस्थल पर आसीन माँ लक्ष्मी के चरणों पर रख देते हैं। अब बचा हुआ 1/4 भाग का श्रीचंदन, आधी रात, आकर मूल विराट मूर्ति की पूजा करनेवाले ब्रह्मादि देवताओं की पूजा में उपयुक्त होने के लिए मूल सालिग्राम मूर्ति के सामने की थाली में रख देते हैं!

भोग श्रीनिवास मूर्ति की शय्या-सेवा, संपन्न होने के समय में, अन्नमय्या के परिवार का एक व्यक्ति, स्वामी के सामने बैठकर अन्नमय्या विरचित लोरी, एकतारा के साथ गाता है।

इस गीत के बाद आखिर में, तरिगोंडा वेंगमांबा के नाम पर ''मुत्याल हारती'' (मोतियों की आरती) मूल सालिग्राम मूर्ति तथा रेशमी शय्या पर लेटे हुए भोग श्रीनिवास मूर्ती को उतारी जाती है! इसी से उस एक दिन की पूजा विधि संपन्न हो जाती है!

'मुत्याल हारती' (मोतियों की आरती) के बाद, स्वामी के भोग में चढाये गये क्षीर एवं मेवा, भक्तों में बाँटे जाते हैं!

फिर से ब्रह्म मुहूर्त में सुप्रभात सेवा के समय, सुवर्ण द्वार के सामने सुप्रभात श्लोकों के पाठ की वेला में, अर्चक स्वामी, रेशमी शय्या पर लेटे हुए भोग श्रीनिवास जी को उचित उपचारों के बाद, फिर से गर्भालय में मूल विराट मूर्ति के चरण कमलों के पास (जीव स्थान) उपविष्ट कराते हैं! इस नित्य कल्याण मूर्ति - भोग श्रीनिवास जी के दर्शन से

पुनीत हो जाईये। समस्त संपदाओं को प्रदान करनेवाले इस भोग श्रीनिवास जी के वैभव को, एकांत सेवा में या सहस्त्र कलशाभिषेक में भाग लेते समय फिर से सानंद देखकर धन्य हो जाइये!

''गोविन्द गोविन्द गोविन्द''

श्री वेंकटेश्वर की एक और मूर्ति ''कोलुवु श्रीनिवासमूर्ति'' के बारे में अब जान लेंगे!

37. कोलुवु श्रीनिवासमूर्ति

देखो! सुवर्ण सिंघासन पर ठाठ से बैठकर दिव्य दर्शन दे रहे कोलुवु श्रीनिवास मूर्ति को आँखों भर देखो!

इस स्वामी के कुछ अन्य नाम भी हैं जैसे, लेखन श्रीनिवास मूर्ति, दरबार श्रीनिवास मूर्ति, अळगप्पिरानार, बलिवेरम्, अनिरुद्ध बेरम् आदि!

मूल विराट मूर्ति की पंचलोह नकल, यह कोलुवु श्रीनिवास मूर्ति, 2 फुट की है जो सन् 826 की मानी जा रही है।

हर दिन सुबह मूल विराट मूर्ति की पुष्पांलकरण सेवा (तोमाल सेवा) के संपन्न हो जाते ही, सुवर्ण द्‌वार के अंदर जो स्नपन मंडप है, उसमें स्थित स्वर्ण सिंघासन पर इस कोलुवु श्रीनिवास मूर्ति को बिठाते हैं। स्वर्ण छत्र विंजामर आदियों से गौरवान्वित करते हैं। अघ्‍र्य, आचमनादि विधियों के बाद धूप, दीप, आरती आदि समर्पित करते हैं। तत्पश्चात् पंचाग श्रवण होता है जिसमें मंदिर के पंडित आकर, भगवान कोलुवु श्रीनिवास जी को साष्टाँग दंडवत प्रणाम के बाद, उस प्रत्येक दिन की तिथि, वार, नक्षत्र, योग, करणादियों के विवरण सुनाते हैं। इसके साथ,

उस दिन होनेवाले उत्सवादि का विवरण भी प्रस्तुत करते हैं। तदनंतर, कोशागार का लिपिक आकर स्वामी को प्रणाम करके, हुंडी के द्वारा पिछले दिन की कमाई, अन्यतया स्वामी को चढ़ाये गये उपहारों उत्सवों तथा प्रसादों के वितरण द्वारा आमदनी आदि का भी विवरण देता है। कुल आमदनी का, विनयपूर्वक ब्योरा स्वामी के पास रखकर, आखिर में ''महाराजा जी के सम्मुख समर्पित है, कृपया ध्यान दे'' कहकर, साष्टांग दंडवत प्रणाम करता है। इसी दरबार में ''नित्यान्नदान योजना'' के तहत, उस प्रत्येक दिन के दाताओं के नाम भी पढ़े जाते हैं। तदनंतर अर्चक स्वामी, सुवर्ण सिंघासन पर आसीन कोलुवु श्रीनिवास मूर्ति जी के द्वारा तंडुल दान (16 किलो) दक्षिणा सहित तांबूल को भी पाकर ''नित्यैश्वर्यो भव'' वाक्यों से श्रीनिवास स्वामी को अपने आशीर्वचन सुनाते हैं! घी में तले हुए तिल और गुड दोनों को पीसकर तैयार किया गया आटा कोलुवु श्रीनिवास मूर्ति को समर्पित कर कर्पूर की आरती उतारते हैं।

सूर्योदय के पूर्व तो सुवर्ण द्वार के सामने के स्नपन मंडप में, या सूर्योदय के बाद हो तो सुवर्ण द्वार के सामने के घंटा मंडप में यह सेवा संपन्न होती है।

कोलुवु श्रीनिवास मूर्ति को 'बलिबेरम्' नाम से अभिहित किये जाने पर भी, मूल विराट मूर्ति के भोग के बाद मंदिर की आठ दिशाओं में बलि समर्पित करने के समय भी, इस मूर्ति को बाहर नहीं लाया जा रहा है। किसी भी घडी में इस मूर्ति को घंटा मंडप के बाहर तक भी लाते ही नहीं! इसी लिए इस मूर्ति को सभी भक्त देख ही नहीं सकते हैं।

अखिलांड कोटि ब्रह्मांड नायक, श्रीनिवास चक्रवर्ती का अनुदिन दरबार यही है। सोने के सिंघासन पर ठाठ से बिराजमान होकर सार्व भौम

के गौरवों को पाते हुए, राजसी वैभव से दर्शन दे रहे इस कोलुवु श्रीनिवास मूर्ति का कीर्तिगान करेंगे!

हे अखिलांडकोटि ब्रह्मांडनायक!
हे आदिमध्यांतरहित स्वामी!
हे जगदेकनायक!
हे राजाधिराज! राजपरमेश्वर!
हे नित्यकल्याणचक्रवर्ती!
हे अलमेलूमंगापती!
जय हो जय हो!

अब श्री वेंकटेश्वर स्वामी की चौथी मूर्ति ''श्री उग्र श्रीनिवास मूर्ति'' के बारे में जान लेंगे!

38. उग्र श्रीनिवासमूर्ति

श्री देवी, भूदेवी सहित श्री उग्र श्रीनिवास मूर्ति जी के ''वेंकटत्तुरैवार'' ''स्नपन बेरम्'' ''स्नपन मूर्ति'' ''अच्युत बेरम्'' आदि नाम भी तिरुमल मंदिर के संप्रदाय में सुनाई दे रहे हैं।

स्नपन बेरम् (स्नानबेरम्) नाम से भी इस मूर्ति को बुलाये जाने पर भी इस मूर्ति के नित्याभिषेक नही होते हैं। कहते हैं कि दोनों पत्नियों के साथ विद्यमान यह पंचलोह मूर्ति, पुराने जमाने में तिरुमल के उत्सवों में भाग ले ही रही थी। लेकिन एक बार इन उत्सव मूर्तियों की शोभा यात्रा में कुछ अनहोनी घटनाओं और भीतावह स्थितियों के होने के कारण, उस समय से (सन् 1330) इन मूर्तियों को उत्सवों में उपयुक्त नहीं किया जा रहा है।

लेकिन साल में द्वादश तिरुवाराधना (कृष्णाष्टमी के दिन होने वाली आराधना) और कार्तीक द्वादशी (कैशिक द्वादशी या क्षीराब्धि द्वादशी) के पर्व दिनों में मात्र, इस उग्र श्रीनिवास मूर्ति का आस्थान (दरबार) संपन्न होता है। माना जाता है कि सूर्योदय के बाद की कांति इस मूर्ति पर गिरेगी तो, इसमे उग्रता आ जाती है। इसी कारण आज भी उक्त दोनों उत्सव, सूर्योदय से काफी पहले ही याने कि सुबह 2-1/2 से 3 बजे के अंदर ही संपन्न हो जाते हैं।

द्वादश तिरुवाराधना के दिन, रात 4 बजे, सुवर्ण द्वार के आगे जो घंटा मंडप है, उसमे श्रीदेवी, भूदेवी सहित उग्र श्रीनिवास मूर्ति को उपविष्ट कराकर स्नपन, तिरुमंजनादियों के बाद भोग भी चढ़ाते हैं। फिर से इन मूर्तियों को आनंद निलय में ही रख देते हैं।

कैशिक द्वादशी के दिन, सुप्रभात तथा तोमाल सेवा के बाद श्रीदेवी भूदेवी सहित उग्र श्रीनिवास मूर्ति को अभिषेकादि संपन्न कर रेशमी वस्त्र, आभूषण तथा पुष्प मालाओं से अलंकृत करते हैं। छत्र, चामर, तथा मंगल वाद्यों के साथ सार्वभौमोचित सत्कार सहित मंदिर के बाहर, महा परिक्रमा के मार्ग में शोभा यात्रा का निर्वाह किया जाता है। यह शोभा यात्रा, सूर्योदय से बहुत पहले ही संपन्न होती है। सुबह 3 बजे के पहले ही इस यात्रा के पूरे होने की कडी सावधानी अर्चक स्वामियों द्वारा ली जाती है। इस शोभा यात्रा के बाद, मंदिर के 'रंग मंडप' में इस उग्र श्रीनिवास मूर्ति को सर्व भूपाल वाहन पर उपविष्ट कर, भोग तथा नीराजनादि सेवाओं के बाद फिर से आनंद निलय में ले जाते हैं।

तिरुमलेश की मूल विराट मूर्ति की अनुकृति, इस उग्र श्रीनिवास मूर्ति की प्रतिमा 20 इंच लंबी है तथा 6 इंच की पद्म पीठिका पर विद्यमान

है। इस स्वामी के दोनों तरफ 5 इंच की अलग अलग गद्दियों पर 18 इंच की श्रीदेवी तथा भूदेवी की पंच लोह मूर्तियों हैं।

पुराने जमाने से, प्रस्तुत समय में उपयुक्त उत्सव मूर्तियों के बहुत पहले ही, तिरुमल के उत्सवों और शोभा यात्राओं में भाग लेते हुए, अपने भक्तों को बाधा पहुँचाने वालों के प्रति क्रोध प्रकट करती रही इस श्रीदेवी भूदेवी सहित श्री उग्र श्रीनिवास मूर्ति के भव्य दर्शन से पुलकित होते हुए, पग पग पर प्रणाम कर लीजिये!

गोविन्द गोविन्द गोविन्द

39. श्री मलयप्पस्वामी

वहाँ देखो! आनंद निलय के बाहर श्रीदेवी भूदेवीयों के साथ हर उत्सव में, हर शोभायात्रा में भाग लेनेवाले उत्सव श्रीनिवास मूर्ती वहीं है!

तिरुमल के मंदिर - संप्रदाय के अनुसार इनके अन्य नाम हैं - मलयकुनियनिन्र प्पेरुमाळ, उत्सव बेरम्, सत्य बेरम् व मलयप्पा स्वामी! कितने भी नाम हो, भक्तों के हृदय मंदिरों में सुस्थिर नाम है - ''श्री मलयप्पा स्वामी''!

तिरुमल के आनंद निलय में श्री वेंकटेश्वर स्वामी की पाँच मूर्तियों में (पंच बेरालु) श्रीदेवी, भूदेवी सहित श्री मलयप्पा स्वामी की यह पंचलोह मूर्ति - पाँचवी है! तिरुमलेश के मंदिर में ध्रुव मूर्ती की दायीं ओर, दक्षिण के कोने में एक पीठिका पर सदा यह मूर्ति विद्यमान हो दर्शन देती रहती है।

सन् 1339 के शासन में मलयप्पा स्वामी का उललेख हमें मिलता है। इत : पूर्व, श्रीदेवी भूदेवी सहित 'श्री उग्र श्रीनिवास मूर्ती' ही उत्सव मूर्ती के रूप में तिरुमल के उत्सवों में प्रधानतया भाग लेते थे!

'वेंकटत्तुरैवार' नाम से प्रसिद्ध होते हुए तिरुमल में उत्सव मूर्ति के रूप में कीर्तित उग्र श्रीनिवास मूर्ति के स्थान पर यह मलयप्प स्वामी कैसे प्रवेश कर गयो! आइये इससे संबंधित अद्भुत गाथा को जान लें!

मलयप्पा घाटी में स्वामी

पुराने जमाने में सन् 13 ई. सदी में ब्रह्मोत्सव का समय था! श्रीदेवी भूदेवी के साथ शोभा यात्रा के लिए श्री उग्र श्रीनिवास मूर्ती, जब निकले, उस समय पता नहीं क्यों, तिरुमल के सभी घर एक साथ जल गये! कई अनहोनी घटनाएँ घटी! इन भयंकर परिणामों को देखते हुए अर्चक स्वामी, तिरुमल के ग्राम वासी - सभी डर के मारे काँप उठे! इस विपदा से बचाने की प्रार्थना, श्री वेंकटेश्वर स्वामी से उन्होंने की! तब स्वामी की वाणी किसी भक्त के द्वारा सुनायी दी - ''आगे इन उत्सव मूर्तियों को उत्सवों में बाहर लायेंगे तो ऐसी ही घटनाएँ होंगी! अन्य उत्सव मूर्तियाँ, मलयप्पा घाटी नामक प्रदेश में मिलती हैं। उन्हें लाकर आगे उनको ही उत्सव मूर्तियाँ बनाओं!''

तिरुमलेश के आदेशानुसार, अर्चक स्वामीयों ने उन ब्रह्मोत्सवों को स्थगित कर दिया और सप्तगिरियों में स्थित ''मलयप्पा घाटी'' में ढूँढ ढूँढकर, आखिर जमीन की अंदरुनी तहों में निक्षिप्त मूर्तियों को ढूँढ निकाला। संप्रदायानुसार, मंगल वाद्यों सहित, वेद नादों के बीच, उन उत्सव मूर्तियों को मंदिर में ले आया गया। संप्रोक्षण आदि आगमोक्त

विधि विधानों के बाद, श्रीदेवी भूदेवी सहित प्राप्त, श्रीनिवास की मूर्ति को उत्सव मूर्तियों के रूप में मंदिर में प्रतिष्ठित कर, उन मूर्तियों से ही उत्सवों का निर्वाह किया गया। बीच में स्थगित ब्रह्मोत्सव फिर से, श्रीनिवास देवता का जन्म नक्षत्र, 'श्रवण' के दिन ही इन नयी उत्सव मूर्तियों के साथ मनाये गये।

क्योंकि मलयप्पा घाटी में ये मूर्तियाँ उन्हें मिली थीं, इस उत्सवमूर्ति का 'मलयप्पा स्वामी' ही व्यवहार नाम हो गया। क्योंकि मलयप्पा घाटी जैसी गहरी घाटी में ये मूतीयाँ मिली भीं, इस कारण तमिळ में इनका नाम हो गया ''मलय कुनिय निन्रप्पेरुमाळ'' माने गहरी घाटी में मिले हुए भगवान।''

श्री वेंकटाचल क्षेत्र में श्री वेंकटेश्वर स्वामी की मूल विराट की सालग्राम मूर्ति - स्वयंव्यक्त है। मलयप्पा स्वामी भी इसी सप्तगिरि क्षेत्र में प्राप्त स्वयं व्यक्त पंच लोह मूर्ति हैं। इतना ही नहीं जिस तरह तिरुमल के भक्तों व यात्रियों को सदा सर्वदा, भक्ति भावना में तल्लीन करते हुए, अपनी ओर आकृष्ट करते आ रहे हैं - आठ फुट के सालिग्राम भगवान वेंकटेश जी ठीक उसी तरह सभी भक्तों के साथ घुल मिलकर, आनंद निलय के बाहर भी, सभी भक्तों के सामने ही रहते हुए, विविध चित्ताकर्षक रीतियों में, विविध आभूषणों तथा पुष्पालंकारों से सम्मोहित करते हुए, आनंद को बाँट रहे हैं - तीन फुट के ये मलयप्पा स्वामी! मंदिर में स्थिर रूप से रहते हुए, सभियों को अपने पास लाने वाले स्वामी ''ध्रुव मूर्ति'' है तो भक्तों के पास ही जाकर दर्शन देनेवाले ''चर मूर्ति'' हैं - हमारे मलयप्पा स्वामी!

मलयप्पा स्वामी की यह 3 फुट की पंच लोह मूर्ति तीन इंच की पद्म पीठिका पर स्थापित है। इस मूर्ति की दोनों तरफ चार इंच की गद्दियों पर 24 इंच की श्रीदेवी (दायी तरफ) तथा भूदेवी (बायी तरफ) की पंच लोह मूर्तियाँ भी हैं।

तिरुमल मंदिर के बाहर माने - स्वर्ण द्वारों के बाहर संपन्न होने वाले - किन किन उत्सवों, दरबारों, त्योहारों, शोभा यात्राओं में श्रीदेवी भूदेवी सहित श्री मलयप्पा स्वामी भाग लेते हुए आनंद को बाँट रहे हैं, इन सभीयों की विशेषताओं के बारे में अब जान लेंगे।

अभिषेक

हर महीने में तिरुमलेश स्वामी का जन्म नक्षत्र श्रवण के दिन सुप्रभात सेवा के बाद तथा तोमाल सेवा के पहले श्री मलयप्पा स्वामी को उनकी पत्नियों के साथ एकांत में अभिषेक होता है।

इसके अलावा आर्जित सेवा के रूप में हर दिन संपन्न होने वाले वसंतोत्सव में, हर बुधवार के दिन - सहस्त्रकलशाभिषेक में, वार्षिक वसंतोत्सव में, ज्योष्टाभिषेक में, पवित्रोत्सव, ब्रह्मोत्सव, पुष्पयाग आदि में अभिषेक सेवा (तिरुमंजन) को श्री मलयप्पा स्वामी स्वीकारते हैं!

दिव्य कवच

श्री वेंकटेश्वर स्वामी की मूल विराट मूर्ति के जैसे ही, श्री मलयप्पा स्वामी को भी अनेकानेक सोने के गहने, वज्र खचित आभूषण, विविध मुकुटादि हैं जिन्हें कई राजा महाराजाओं ने समर्पित किये थे! उनकी ऐतिहासिक विशेषताएँ भी अद्भुत हैं।

इतना ही नहीं, श्री मलयप्प स्वामी के वज्र कवच, मोतियों का कवच और स्वर्ण कवच जो हैं वे तिरुमल मंदिर के किसी अन्य मूर्ति के लिए नहीं हैं। वज्र कवच में स्वामी, अपने भक्तों की रक्षा में वज्र सम संकल्प से व्यक्त होते हैं। मोतियों का कवच जब वे पहनते हैं तो भक्तों के हृदयों को ठंडक पहुँचाते हुए उनकी सभी मनोवांछाओं की पूर्ति करनेवाले सप्तगिरीश की तरह दिखाई देते हैं तथा स्वर्ण कवच में अपनी भक्त - पियता का प्रदर्शन करते हुए दर्शन देते हैं।

भोग

ध्रुवमूर्ति (मूलविराट मूर्ति) के साथ चरमूर्ति श्री मलयप्पा स्वामी को भी, आनंद निलय में विद्यमान होने के समय में ही भोग चढ़ाये जाते हैं। अगर स्वर्ण द्वारों को पारकर, शोभा यात्रा को, या किसी और उत्सव में भाग लेने जायें, तो फिर मलयप्पा स्वामी के फिर से मंदिर के अंदर स्वर्ण द्वार में प्रवेश करने के बाद ही नैवेद्य समर्पित होते हैं। तब तक किसी प्रकार के नैवेद्य समर्पित नहीं होते हैं।

आनंद निलय में ध्रुव मूर्ती के साथ हर दिन तीनों बार ही नहीं, बाहर उत्सवों में भाग लेने के समय भी श्री मलयप्पा स्वामी को अन्नप्रसाद, लड्डू, वडै, दोसै, गुड की मिठाई आदि समर्पित करते हैं।

कई सारी सेवायें, बहुत सारे उत्सव

श्री वेंकटेश्वर स्वामी एक पुकार मात्र से ही प्रकट होनेवाले प्रत्यक्ष देवता हैं। भक्तों, के आत्मीय बंधु हैं वे! उन उन भक्तों के द्वारा छोटी मोटी चीजों को दान के रूप में लेकर उनके सारे पापों को वे मिटा देते रहते हैं। भक्तों से एक लेते हैं - हजारों देते हैं। भक्तों को अधिक से

अधिक वरदान देना चाहते हैं - इसीलिए उनसे उत्सवादियों का आयोजन करवाते हैं। भक्तों के लिए कल्याणकारी कल्याणोत्सव, डोलोत्सव, या शोभा यात्राओं को आयोजित कराते हुए, ''कलौ वेंकट नायक'' की उपाधि उन्होंने पायी है। इस जगत् कल्याण चक्रवर्ती, तिरुमल श्रीनिवास की कई सारी सेवाएँ हैं। कई सारे भक्त इनमें भाग लेते हैं। एक एक सेवा में एक तरह की तृप्ति! एक एक सेवा में एक एक तरह का उत्साह! एक एक दिव्यानुभूति! एक एक तन्मयता! इस तरह के विविध अनुभवों को प्रदान करनेवाले ये सारे उत्सव, साल भर संपन्न होते ही रहते हैं। इसीलिए तिरुमल में हर दिन एक पर्वदिन ही है। हर दिन खीर या गुडान्न के भोग! साल के ३६५ दिनों में कुल मिलाकर ४५० से बढ़कर उत्सव या शोभा यात्राएँ संपन्न होते हैं।

इनकी संख्या दिन ब दिन बढ़ ही रही है। इन सेवाओं में से कुछ सेवायें श्रीनिवास स्वामी की मूल मूर्ति को ही की जाती हैं तो अधिकाधिक सेवायें उत्सव मूर्ति मलयप्पा स्वामी को ही की जाती हैं।

इन सभी सेवाओं का ब्योरा देना कष्ट साध्य ही है। लेकिन कुछ सेवाओं के बारे में जान लेंगे!

नित्य कल्याणोत्सव

संतति, विवाह, नौकरी, घर आदि भक्तों की इच्छाओं की पूर्ति कर, उन से नित्यकल्याणोत्सव का निर्वाह करवाना, श्री वेंकटेश्वर स्वामी को बहुत ही अच्छा लगता है। असल में इस तरह के शुभ संकल्प करने के लिए ही कहते हैं कि तिरुमलेश स्वामी अपने भक्तों द्वारा नित्य कल्याणोत्सव का आयोजन करवाते हैं। इसी कारण तिरुमल के मंदिर

में श्रीदेवी भूदेवी सहित श्री वेंकटेश्वर स्वामी के नित्य कल्‌याणोत्सव मनाये जाते हैं। तो फिर इन नित्य कल्‌याणोत्सवों का दूल्‌हा कौन होता हैं? कोई और क्यों? हमारे मलयप्पा स्वामी जी!

मात्र इन चर्म चक्षुवों से ही नहीं, अपने मन को खोलकर अंदर की तहों से इस दिव्य दंपति के दिव्य सौंदर्य को देखिए! कई कई जन्मांतर वासनाओं को दूर करते हुए, हमारे प्रारब्धों को पापों सहित मिटानेवाले उस नित्य कल्याण चक्रवर्ती के दिव्य दर्शन से धन्य हो जाइये! इस शुभ वेला में स्वामी का जयजयकार कर कदम आगे बढ़ायेंगे!

जगत्‌ कल्‌याण चक्रवर्ती! जय हो जय हो!
नित्य कल्‌याण चक्रवर्ती! जय हो जय हो!

पुराने जमाने में श्री मलयप्प स्वामी का कल्याण, कुछ विशेष पर्व दिनों में ही संपन्न हुआ करता था। लेकिन ताळ्ळपाका अन्नमाचार्य ने तिरुमल में इस नित्य कल्याणोत्सव का शुभारंभ किया। उनके बाद भी यह नित्य कलयाणेत्सव, हर दिन निर्विराम रीति में संपन्न हो ही रहा है। उस जगत्‌कल्याण चक्रवर्ती की संपूर्ण अनुकंपा को पाने की 'विशिष्ठ सेवा' के रूप में सारे संसार के भक्त जनों में पहचान पायी हुई सेवा यही है। तिरुमल क्षेत्र में अधिकाधिक संख्या में दूर दूर से आये हुए भक्त इसमें भाग लेते हैं!

गरीब से गरीब और अमीर से अमीर से भी इस सेवा में भाग लेते हैं। हर दिन 300 कल्याणोत्सव से भी अधिक यहाँ - संपन्न होते हैं। यह संख्या दिन ब दिन बढ़ती ही जाने के कारण कल्याण वेदी भी समयानुसार बदलती रहती है।

भक्तों के आगमन के लिए स्वामी प्रतीक्षा करते हैं। अपनी दिव्य मंगल मूर्ति के दर्शन से उन्हें तन्मयीभूत करते हैं। उन पर वरदानों को बरसाते हैं! इसी कारण नित्य कल्याणोत्सव के लिए भी तैयार होते हैं। ऐसे दयावान, सप्तगिरीश महाप्रभु की फिर से एक बार मंगलमय आरती उतारकर आगें बढ़ेंगे!

जगत् कल्याण चक्रवर्ती! का जयमंगल हो!
नित्यकल्याण चक्रवर्ती! का शुभ मंगल हो!

गोविन्द गोविन्द गोविन्द!

हर साल उगादी त्योहार से ही मलयप्पा स्वामी के उत्सवों की शुरुआत होती है। तेलुगु नव वर्ष 'उगादी' को, तेलुगु जनता के इष्ट देवता श्री वेंकटेश्वर स्वामी के मंदिर में, तेलुगु संप्रदाय के अनुसार ही मनाते हैं जिसमें मलयप्पा स्वामी भाग लेते हैं। इसे ''उगादि आस्थानम्'' कहते हैं।

उगादि आस्थानम्

उगादि आस्थान के दिन श्रीदेवी तथा भूदेवी सहित मलयप्पा स्वामी, हीरे जवाहरात से जडित आभूषणों से अलंकृत होकर मंदिर के स्वर्ण द्‌वार के सामने के घंटा मंडप में पूर्वाभिमुख होते हुए आसीन होते हैं। उनके सामने ही दक्षिणाभिमुख होते हुए, दूसरी गद्दी पर सेनाधिपती विष्वक सेन जी आसीन होते हैं। सांप्रदायिक पूजा के बाद अर्चक स्वामी पंचाग श्रवण करते है जिसके द्वारा उस प्रत्येक वत्सर के लाभ - नष्ट, आय व्यय, फसल आदि के बारे में श्रीनिवास स्वामी, जान लेते हैं। तदनंतर, श्रीनिवास स्वामी को मंगलाक्षत तथा कर्पूर आरती भी संपन्न

होते हैं! यही अगादि का आस्थान है। कुछ इसी तरह, ''कर्काटक संक्रांति'' (जुलाई 16) के दिन आणिवार आस्थानम्, दीवाली के पर्व दिन पर स्वर्ण द्वार के सामने श्री मलयप्पा स्वामी का आस्थान भी संपन्न होते हैं।

इस तरह उगादि के पर्व दिन पर आयोजित इस आस्थान से लेकर, पूरे साल भर, उत्सव संपन्न होते ही रहते हैं जिनमें मलयप्पा स्वामी ही भाग लेते हैं जैसे, नित्य कल्याणोत्सव, वाहन सेवायें, सहस्र दिपालंकार जैसी हर दिन की सेवायें, विशेष पूजायें, सहस्र कलशाभिषेक जैसे वारोत्सव, श्रवण, आरुद्रा जैसे नक्षत्रोत्सव (मासोत्सव) वसंतोत्सव, आणिवार आस्थानम, पवित्रोत्सव, ब्रह्मोत्सव, आखेटोत्सव, पुष्पयाग, पद्मावती परिणयोत्सव, प्लवोत्सव आदि वार्षिक उत्सवों का आयोजन भी होता है। इन सभी उत्सवों में से सर्वोत्कृष्ट है, हर साल, कन्यामास में संपन्न होनेवाला - दस दिनों का ब्रह्मोत्सव! तिरुमल के ये ब्रह्मोत्सव, हर साल दिव्य तथा भव्य रीति में संपन्न होते हुए, जगद्विख्यात हो गये हैं। न भूतो न भविष्यति की रीति में मनाये जानेवाले इन ब्रह्मोत्सवों के बारे में संक्षेप में जान लेंगे!

ब्रह्मोत्सव

श्री महाविष्णु को श्रीवैकुंठ के बाद, अत्यंत प्रीतिकर क्षेत्र है - यह वेंकटाचल! इतःपूर्व अपने, इच्छानुसार, महाविष्णु इस क्षेत्र पर उतरकर भक्तों की मनोवांछाओं की पूर्ति, किया करते थे! बाद में ब्रह्मादि देवताओं की प्रार्थना से, यहाँ पर स्वयं भू अर्चावतार के रूप में स्वामी प्रकट हो गये। उनके प्रकट होने की शुभ घडी, कन्यामास का श्रवण

नक्षत्र युत विजय दशमी से मेल खाती है। उस शुभ घडी को वेंकटेश्वर स्वामी के अवतारोत्सव या आविर्भाव दिनोत्सव के रूप में सदियों से मनाते आ रहे हैं। कहा जाता है कि ब्रह्मा जी ने स्वयं लोक कल्याणार्थ, प्रथमतया इनका आयोजन किया था। इसी लिए उनके ही नाम पर इन्हें 'ब्रह्मोत्सव' ही संबोधित करते हुए, लगातार अत्यंत वैभव से मनाया जा रहा है।

दस दिनों के इन उत्सवों में श्री मलयप्पा स्वामी, अलग अलग वाहनों पर आसीन होकर शोभा यात्रा पर निकलते हैं!

पहले दिन, ध्वजारोहण नामक कार्यक्रम में मंदिर के 'सुवर्ण ध्वजा स्तंभ' पर गरुड - पताका को फहराया जाता है। अष्ट दिक्पालकों, देवी - देवताओं को इन उत्सवों में स्वयं आकर भाग लेने के निमंत्रण, श्री मलयप्पा स्वामी के निदेशानुसार भेजे जाते हैं। तदनंतर उस दिन शाम, श्री मलयप्पा स्वामी बृहत शेष वाहन पर श्रीदेवी भूदेवी के साथ शोभा - यात्रा पर निकलते हैं। उसके बाद के दिन से मलयप्पा स्वामी छोटे शेष वाहन, हंस, सिंह, मोतियों की पालकी, सर्वभूपाल वाहन, मोहिनी अवतार, एवं स्वर्ण गरुड, हनुमान, गज, सूर्य प्रभा, चंद्रप्रभा, अश्वादि वाहनों पर विविधालंकार भूषित हो, अपनी दोनों पत्नियों के साथ तिरुमल की वीथियों में शोभा यात्रा करते हैं।

गरुडोत्सव

इन ब्रह्मोत्सवों में पाँचवे दिन की रात जो गरुडोत्सव होता है, उसमें मलयप्पा स्वामी के वैभव का वर्णन करना असंभव सा है। आनंद निलय

की मूल विराट मूर्ति के लक्ष्मी हार, मकरकंठी, सहस्रनाम हार आदि अमूल्य गहनों से उस दिन मलयप्प स्वामी अलंकृत होते हैं। चेन्नै से नये छत्र लाये जाते हैं। आंध्रप्रदेश सरकार द्वारा स्वामी को समर्पित नूतन पीतांबरो को मलयप्पा स्वामी धरते हैं। उसी समय श्रीविल्लिपुत्तूर से श्री गोदादेवी आण्डाल की पहनी हुई पुष्पमाला भी तिरुमल आ पहुँचती है तो उसे भी प्यार से मलयप्पा स्वामी, गले में अलंकृत कर लेते हैं। इस तरह अनंत वैभवों से, अनगिनत प्रजा - समूह के बीच मलयप्पा स्वामी, सभीयों को आनंद प्रदान करते हुए, गरुड वाहन पर विहार करते हैं। इस उत्सव को मात्र देखना तो साध्य है लेकिन वर्णन करना दुस्साध्य ही है।

रथोत्सव

इन ब्रह्मोत्सवों के नवम दिवस पर, सुबह संपन्न होनेवाला रथोत्सव - पूरे इतिहास में उत्कृष्ट माना जाता है। मेरु पर्वत जैसे दारु पर्वत पर, श्री मलयप्पा स्वामी अपनी दोनों पत्नियों के साथ आसीन होते हैं। अशेष भक्त कोटि, गोविन्द नामोच्चारणों के साथ रथ के बागडोरों को अत्यंत उत्साह से संभालते हुए, आगे ले जाते रहते हैं। उनके उत्साह को मंदस्मित देखते हुए, मलयप्पा स्वामी अपनी दोनों धर्मपत्नियों के साथ तिरुमल की वीथियों में शोभा - यात्रा करते हैं।

''रथस्थं केशवं दृष्ट्वा - पुनर्जन्म न विद्यते''। कहा जाता है कि रध में उपविष्ट श्री मलयप्पा को एक बार देखेंगे तो पुनर्जन्म का भय नहीं होता है। लेकिन यहाँ आनेवाले भक्तों की मलयप्पा से प्रार्थना यह है कि इस रथोत्सव का दृश्य देखने के लिए ही उन्हें बार बार जन्म दें!

चक्रस्नान

ब्रह्मोत्सवों में आखिरी दिन ''चक्रस्नान'' संपन्न होता है जो भगवान वेंकटेश्वर जी का जन्म नक्षत्र, श्रवण से मेल खाता है। उस दिन श्रीदेवी भूदेवी समेत श्री मलयप्पा स्वामी वराह स्वामी के मंदिर पर पधारते हैं। मलयप्पा के साथ श्री सुदर्शन भगवान भी दूसरी पालकी पर पहुँच जाते हैं। उस मंदिर के प्रांगण में श्री मलयप्पा स्वामी के साथ एक ही गद्दी पर श्री सुदर्शन चक्रत्ताळ्वार भी उपविष्ट होते हैं तथा, इन सभियों को एक ही साथ अभिषेक संपन्न होता है। तदनंतर सिर्फ श्रीचक्रताळ्वार का ही, पुष्करिणी में पवित्र स्नान संपन्न होता है। इस समय, श्री सुदर्शन भगवान के साथ सभी भक्त और यात्री, पुष्करिणी में पवित्र स्नान करके पुनीत हो जाते हैं। इस चक्रस्नान से दस दिनों के ब्रह्मोत्सवों का अवबृथ (समापन) हो जाता है। उस दिन रात, श्री मलयप्पा स्वामी की उपस्थिति में सुवर्ण ध्वजस्तंभ पर के गरुड ध्वज को अवनत किया जाता है। इस तरह प्रत्येक वर्ष के ब्रह्मोत्सव संपन्न हो जाते हैं।

इस तरह साल भर आनंद निलय के बाहर तिरुमल की वीथियों में होनेवाले उत्सवों और शोभा यात्राओं में भाग लेते हुए, भक्तों से मिल जुलकर रहनेवाले मलयप्पा के नेतृत्व में संपन्न होनेवाले विविध उत्सवों के बारे में बाद में जान लेंगे! उस भक्त प्रेमी मलयप्पा को साष्टांग प्रणाम समर्पित कर आगे बढ़ेंगे!

गोविन्द गोविन्द गोविन्द!

अन्य मूर्तियाँ

अब तक हमने श्री वेंकटाचल क्षेत्र के आनंद निलय में विद्यमान वेंकटेश्वर स्वामी की पाँच अनुकृतियों के बारे में (पंचबेरमुलु) अब तक

जानकारी प्राप्त की! इनके अलावा, आनंद निलय में स्थित अन्य उत्सव मूर्तियों के बारे में अब जान लेंगे!

40. श्री सुदर्शन चक्रत्ताळ्वार

तिरुमल के आनंद निलय में श्री वेंकटेश्वर स्वामी की सन्निधि में चक्राकार के रूप में श्री सुदर्शन भगवान हमें दर्शन देते हैं। करीब 6 इंच की चतुरस्त्र पीठिका पर दो फुट के चक्राकार रूप में विराजित श्री सुदर्शन भगवान को साल में चार बार चक्रस्नान संपन्न होता है। ब्रह्मोत्सवों में, रथ सप्तमी के पर्व दिन पर, अनंत पद्मनाभ चतुर्दशी के दिन तथा वैकुंठ द्वादशी के दिनों में श्री चक्रत्ताळ्वार जी, यहाँ की पुष्करिणी में पवित्र स्नान करते हैं। तिरुमल श्री वेंकटेश्वर की मूल विराट मूर्ति के दक्षिण हस्त में, ज्योति के रूप में तथा उत्सव मूर्ति के रूप में भी दर्शन देते हुए भक्तों की पूजाओं को स्वीरते तथा उनकी रक्षा करते रहे चक्रत्ताळ्वार के बारे में और कुछ जानकारी प्राप्त कर लेंगे!

आनंद निलय में श्री वेंकटेश्वर स्वामी के दक्षिण हस्त में चक्रायुध के रूप में विद्यमान सुदर्शन जी का सही रूप क्या है?

**''स्फुरत्सहस्रारशिखातितीव्रम्
सुदर्शनं भास्करकोटितुल्यम्
सुरद्विषाम् प्राणविनाशि विष्णोः
चक्रं सदाहं शरणं प्रपद्ये'' -**

कोटि भास्करों के तेज से प्रकाशमान है यह ज्योतिश्चक्र! इसी अर्थ को लेकर अन्नमाचार्य ने भी सुदर्शन चक्र का इस तरह वर्णन किया!

कोटि सूर्यों के संगम से
चमक रहा है यह चक्र!
हजारों काल - रुद्रों जैसे
चलित है यह गहरा चक्र!
- - - - - - - - - - - -
श्री वेंकटेश के हाथ में
सज गया है यह चक्र!

हमने सुना है कि इसी सुदर्शन चक्र को श्री वेंकटेश्वर ने अपने आंतरिक भक्त तोंडमान चक्रवर्ती की रक्षा के लिए दिया था! उसी तरह भक्तों की सदा रक्षा करने हेतु श्री वेंकटेश जी सर्वदा, शंख चक्रों का धारण किये ही रहते हैं। सकल कालों में, सकल देशों में, सभी परिस्थितियों में भक्तों की रक्षा करनेवाले हरेक के अपने करीब के मित्र एवं बधु हैं - श्री वेंकटेश्वर जी! ''दुष्टों का दमन - शिष्टों की रक्षा'' वाले उनके लक्ष्य को सर्वदा जारी रखने का उत्तरदायित्व सुदर्शन भगवान का ही है। बुध जनों का कहना है कि इन समयों में वेंकटेश्वर जी अपने चक्र का प्रयोग नहीं करते हैं, केवल मन में ही संकल्प करते हैं कि हे सुदर्शन! मेरे भक्तों की रक्षा करो! उसी क्षण से, सुदर्शन उस काम पर लग जाते हैं। तिरुमल हो आने का संकल्प भक्तों के मनों मे जागने के क्षणों से, उनके उनके घरों से निकलकर बसों, ट्रेनों में सफर कर तिरुमल पहुँचना, स्वामी की पुष्करिणी में, क्यू कम्पेंक्सों में, दर्शन के समयों में इस तरह सभी जगहों पर उनके ही साथ होते हुए, फिर से उनके घर सकुशल पहुँचने तक उनकी रक्षा करते हैं - हमारे चक्रत्ताळ्वार जी! अगर किसी भक्त को कोई कष्ट पहुँचे तो, वह भक्त श्री वेंकटेश्वर का

ध्यान कर ''विपदा को दूर करनेवाले हे गोविन्द! सप्तगिरीश! वेंकट रमण जी! मेरी रक्षा करो हे देव!'' कहते हुए, प्रार्थना करें तो झट सप्तगिरियों पर सुवर्ण भवन में विराजमान स्वामी उन भक्तों की रक्षा करने के आदेश, सुदर्शन भगवान को दे देते हैं। बस, वह भक्त चाहे कितनी भी दूरी पर हो, सुदर्शन भगवान वहाँ जाकर, उसकी बाधा को दूर कर देते हैं। इसीलिए श्री वेंकटेश्वर जी का नाम ''विपदाओं के नाशक'' भी हैं। सच कहा जाय तो वेंकटेश्वर जी और सुदर्शन स्वामी दोनों अलग नहीं हैं। श्री वेंकटेश्वर जी के मन में जो जो विचार हैं, उन्हें तो लक्ष्मी देवी भी नहीं जानती हैं लेकिन सुदर्शन जी झट जान जाते हैं। इसी कारण यह कहा जाता है कि दोनों अभिन्न हैं। मूल विराट मूर्ति की, हर सुबह तुलसी दलों से जो सहस्रनामार्चना संपन्न होती है, उसमें सुदर्शन के नामों से भी श्रीनिवास स्वामी पूजे जाते हैं!

ओम् दुर्वासोद्दष्टिगोचराय नमः
ओम् अंबरीषव्रतप्रीताय नमः
ओम् महाकृत्तिविभंजनाय नमः
ओम् महा अभिचारकविध्वंसिने नमः
ओम् कालसर्पभयांतकाय नमः
ओम् सुदर्शनाय नमः

इसी कारण यह तो स्पष्ट है कि श्री वेंकटेश्वर जी और सुदर्शन एक ही हैं। शायद इसीलिए ब्रह्मोत्सवों में श्री वेंकटेश्वर स्वामी, एक ही गद्दी पर सुदर्शन के साथ बैठ जाते हैं तथा अभिषेक भी कराते हैं। इस तरह तिरुमल क्षेत्र पर सुदर्शन भगवान के नाम पर संपन्न होनेवाले उत्सवों को 'चक्रस्नान' कहते हैं।

चक्रस्नान

श्री वेंकटेश्वर स्वामी के भक्तों की रक्षा हमेशा करते ही रहना ही श्री सुदर्शन भगवान की जिम्मेदारी है। हर साल कन्यामास में दस दिन के लिए होनेवाले ब्रह्मोत्सवों में आनेवाले भक्तों की रक्षा का उत्तरदायित्व, कुछ अधिक ही है।

इन दिनों तिरुमल क्षेत्र, लाखों भक्तों से भरा रहता है। ब्रह्मोत्सवों में हर दिन सुबह और शाम, क्रमशः बृहत शेष वाहन, छोटा शेष वाहन, कल्पवृक्ष, मोतियों की पालकी, गरुडोत्सव, रथोत्सव इत्यादि वाहनों पर वैभव से शोभा यात्रा पर निकलकर भक्तों को आनंद पहुँचाते हैं - हमारे तिरुमलेश! पूरे तिरुमल भर, भजन गूँज उठते हैं। एक नया आध्यात्मिक वातावरण सा छा जाता है। इन सभी भक्तों की रक्षा करने का भार भी बढ़िया ही होता है जिसे हमारे सुदर्शन भगवान ही संभालते आ रहे हैं। वह कैसे?

इन दिनों में हर दिन सुबह और शाम, श्रीदेवी भूदेवी सहित श्री मलयप्पा स्वामी के, शोभा यात्रा के लिए मंदिर से निकलने के पहले ही - सुदर्शन चक्रत्ताळ्वार जी (उत्सव मूर्ति) पालकी में बैठकर तिरुमल की वीथियों में घूमते हुए दुष्ट शक्तियों को सतर्क करते हैं कि खबरदार! सकल लोकेश भगवान वेंकटेश जी, पधार रहे हैं। हे दुष्ट शक्तियों! उनके मार्ग से हट जाओ! भगवान वेंकटेश के भक्तों को हानि पहुँचाने का साहस मत करो! होशियार!'' इस तरह घोषणा करते हुए वीथियों में घूमकर वेंकटेश स्वामी के आगमन और उनके भक्तों के कल्याण के बारे में होशियारी बरतने की सूचनाएँ देकर, तिरुमल को निरपाय

बनाकर फिर से मंदिर में प्रवेश करते हैं तथा श्रीनिवास जी को इस विषय का विनम् निवेदन भी करते हैं। इसके बाद ही श्रीनिवास प्रभू शोभा यात्रा पर अपनी दोनों पत्नियों के साथ निकलते हैं। इस तरह ब्रह्मोत्सवों में हर सुबह और शाम चक्रत्ताळ्वार की विधि संपन्न होती है।

इस तरह नौ दिन के पूरे हो जाने के बाद, दसवे दिन, श्री वेंकटेश्वर स्वामी का जन्म नक्षत्र, 'श्रवण' के दिन सुबह, अपनी दोनों पत्नियों के साथ वेंकटेश्वर जी आनंदनिलय से बाहर निकलते हैं। सुदर्शन जी भी दूसरी पालकी पर सवार होकर महा परिक्रमा के मार्ग में निकल पडते हैं तथाः पुष्करिणी की वायव्य दिशा पर स्थित श्री वराह स्वामी के मंदिर के प्रांगण में ये सभी पहुँच जाते हैं।

श्री वराह स्वामी के मंदिर के इस प्रांगण में एक ही गद्दी पर अपने साथ चक्रत्ताळ्वार को भी स्वामी तिरुमलेश जी बिठा लेते हैं। ''वाह! सुदर्शन वाह! भक्तों की रक्षा नामक मेरी दीक्षा में तुम भी मेरे साथ साथ चलते हुए मेरी सहायता कर रहे हो! खासकर इन ब्रह्मोत्सवों में क्षण भर आराम तक न लेते हुए काम करके थक गये हो! आओ! मेरे पास बैठो!'' कहते हुए सुदर्शन जी को भी अपने साथ सुगंध द्रव्यों से अभिषेक कराते हैं।

यह भाग्य तो इन ब्रह्मोत्सवों का आयोजन करनेवाले ब्रह्म देवता को भी नहीं मिलता है। न कि क्षेत्र पालक रुद्र को, और श्रीनिवास के वाहन बने आदि शेष, गरुड, हनुमान आदि को भी नहीं! केवल सुदर्शन भगवान को ही यह भाग्य मिलने का तात्पर्थ तो साफ है। वह यह है कि श्री वेंकटेश्वर जी का, सुदर्शन और अपने में अभेद को स्पष्ट करना ही है।

श्री वेंकटेश्वर जी और सुदर्शन चक्रत्ताळ्वार के तिरुमंजन (अभिषेक) के बाद, केवल सुदर्शन चक्रत्ताळ्वार को ही पुष्करिणी में ले जाकर पवित्र स्नान करवाते हैं। इस पवित्र स्नान के समय ईशानदि दिक्पालक, यक्ष किन्नर गंधर्वादि देवताएँ तथा वहाँ के सभी भक्त जन सुदर्शन चक्रत्ताळ्वार का कीर्तिगान करते हैं।

दनुजविस्तारकर्तन! जनितमिस्राविकर्तन!
अमरदुष्टस्वविक्रम! समरजुष्ट भ्रविक्रम!
जय जय श्री सुदर्शन! जय जय श्री सुदर्शन!

गोविन्द गोविन्द का नाम स्मरण करते हुए, सुदर्शन जी के साथ पुष्करिणी में पवित्र स्नान करके पुनीत हो जाते हैं।

तिरुमल के वराह स्वामी मंदिर में श्री वेंकटेश्वर स्वामी के जन्म नक्षत्र श्रवण के दिन संपन्न होने वाला यह चक्र स्नान भक्तों को एक दिव्य संदेश देता है।

तिरुमल क्षेत्र में अवतरित हुए प्रथम देवता हैं श्री वराह स्वामी! ये ज्ञान मूर्ति हैं। इसीलिए शासनों में तथा तमिळ साहित्य में भी, इन्हें 'ज्ञानप्पिरान्' नाम से अभिहित किया जाता है!

श्री वेंकटेश्वर जी आनंद मूर्ति हैं। सुदर्शन का अर्थ है - अच्छी तरह दर्शन करानेवाला! भक्तों को ज्ञान की भिक्षा - श्री वराह स्वामी देते हैं। ज्ञान पाने के बाद आनंद को पाना सुलभ है। इसका सारांश है - तिरुमल में पहले ज्ञानमय कोश में प्रवेश दिलानेवाले श्री वराह स्वामी के भव्य दर्शन से पुनीत हो जाना चाहिए। उसके बाद ही शाश्वत आनंद इसी कोश को अवश्य प्रदान करते हैं - श्री तिरुमलेश जी! इसी कारण तिरुमल में

पहले वराह स्वामी के दर्शन, तदनंतर श्री तिरुमलेश के दर्शन करने का नियम है।

उत्तर भारत से आनेवाले भक्त, श्री वराह स्वामी को भगवान बालाजी के गुरु मानते हैं। यह भावना भी उपरोक्त संदेश को पुष्ठि दे रही है। ज्ञान को प्रदान करनेवाले गरु के द्वारा ही भगवान के दर्शन का शाश्वत आनंद प्राप्त होता है न?

ब्रह्मोत्सवों के अलावा, रथ सप्तमी, वैकुंठ द्वादशी के दिन, अनंत पद्मनाभ चतुर्दशी के दिन, सिर्फ सुदर्शन चक्रत्ताळ्वार का ही, पुष्करिणी में चक्रस्नान संपन्न होता है। लेकिन मात्र ब्रह्मोत्सवों के आखिरी दिन ही, चक्रत्ताळ्वार के साथ मलयप्पा स्वामी भी वराह स्वामी के मंदिर में अभिषेक को स्वीकारते हैं।

इस चक्रस्नान के संदर्भ में हम सब पुनः गोविंद का नाम क्यों न लें?

नमो नमो हे दानव विनाश चक्र!
समर विजयी सर्वेश का चक्र!
रविचन्द्र कोटि तेजोराशि हे चक्र!
दिविज सेवित हे दिव्य चक्र!
श्री वेंकटेश्वर के दक्षिण हस्त का चक्र!
हम, आपके दासों की रक्षा कर हे चक्र!

41. श्री सीता राम लक्ष्मण

धनुर्बाणों को लेकर खडे हैं सीता जी के साथ राम और लक्ष्मण! तिरुमल के आनंद निलय में श्री वेंकटेश्वर स्वामी की मूल विराट मूर्ति की बाँयी तरफ एक गद्दी पर सीता राम लक्ष्मण जी की पंच लोह मूर्तियों

विद्यमान हैं। कहते हैं कि त्रेता युग में सीता देवी की खोज में, जटा धारी राम और लक्ष्मण, इस वेंकटाद्रि पर आये थे और उस घटना की याद में ही ये विग्रह श्रीनिवास जी के मंदिर में स्थित हैं। राम और लक्ष्मण की मूर्तियाँ बिना मुकुट के मात्र जटाओं से ही हैं!

भगवद्रामानुजाचार्य जी जब, अपने गुरु तिरुमल नंबी के यहाँ, वेंकटाचल के पदतल पर (अलिपिरि) श्रीमद्रामायण के रहस्यों का पाठ कर रहे थे, उस समय किसी ब्राह्मण ने आकर इन मूर्तियों को उन्हें दिया था! मंदिर में स्थित ये मूर्तियाँ वे ही हैं।

जो भी हो, आनंद निलय की इन मूर्तियों की प्रस्तावना सन् 1476 तथा सन् 1504 के शासनों में दिखाई दे रही है। इनकी विशेष पूजाओं का प्रस्ताव भी है।

राम की मूर्ति 40 इंच, लक्ष्मण की मूर्ति 37 इंच और सीता की मूर्ति 36 इंच की हैं। इन पंच लोह मूर्तियों की हर दिन अलग से पूजायें न की जाने पर भी अन्य मूर्तियों के साथ, पूजादिक तथा नैवेद्य भी समर्पित होते हैं।

हर साल श्रीराम नवमी के दिन सुवर्ण द्वार के सामने सीता राम लक्ष्मणों का दरबार होता है। पूजा तथा नैवेद्य निवेदन के बाद, तिरुमल की वीथियों में शोभा यात्रा भी होती है। उसके अगले दिन, (दशमी) श्री राम राजतिलक महोत्सव भी स्वर्ण द्वार के सामने ही संपन्न होता है। इन दोनों उत्सवों में सीता राम लक्ष्मण के साथ उनके परिवार के आज्ञापालक हनुमान जी, सुग्रीव और अंगद भी भाग लेते हैं। इस राम परिवार के बारे में हमने पहले ही जान लिया। इतःपूर्व ये सारी मूर्तियाँ ''श्री राम जी के महल'' में ही रखी जाती थीं। लेकिन मूर्तियों की सुरक्षा को दृष्टि में

रखकर, अब इन सीता राम लक्ष्मण की मूर्तियों को आनंद निलय में ही रख रहे हैं।

चैत्र मास की पूर्णिमा के दिन तिरुमल के मंदिर की नैऋति कोने में स्थित वसंत मंडप में ''श्री सीता राम लक्ष्मण'' का वसंतोत्सव संपन्न होता है। तिरुमलेश के तीन दिनों के वार्षिक वसंतोत्सवों में आखिरी दिन (पूर्णिमा) श्रीदेवी भूदेवी सहित मलयप्पा, रुक्मिणी, श्रीकृष्ण एवं सीता राम लक्ष्मण भी भाग लेते हैं।

इसके अलावा हर साल फाल्गुन पूर्णिमा तक समाप्त होने की पद्धति में पाँच दिन के प्लवोत्सव स्वामि पुष्करिणी में संपन्न होते हैं। इनमें पहला दिन, माने फाल्गुन शुद्ध एकादशी के दिन, श्री सीता राम लक्ष्मण जी इस प्लवोत्सव में भाग लेत हैं।

इस तरह के वार्षिकोत्सव ही नहीं, हर महीने में श्री राम का जन्म नक्षत्र पुनर्वसु के दिन सुबह, श्री सीता राम लक्ष्मण की मूर्तियों का अभिषेक एकांत में होता है। बाद में सुवर्ण द्वार के सामने दरबार तथा सायं, मंदिर के बाहर के ''कोलुवु मंडप'' (दरबार का मंडप) में 'सहस्त्र दीपालंकार सेवा' नामक झूले की सेवा भी संपन्न होती है। इसके बाद मंदिर की महा परिक्रमा के मार्ग में शोभा यात्रा के लिए, सीता राम लक्ष्मण जी निकलते है। आखिर में 'सन्निधि वीथी' में जो बेडी हनुमान का मंदिर है, वहाँ थोडी देर के लिए तीनों रुक जाते हैं। उस समय राम जी के गले की पुष्पमाला, हनुमान जी को समर्पित की जाती है। तदनंतर राम जी को भोग आदि चढ़ाकर कर्पूर आरती भी उतारी जाती है और वही भोग और आरती, बेडी हनुमान जी को भी समर्पित की जाती है। तब जाके सीता राम और लक्ष्मण फिर से मंदिर में प्रवेश करते हैं।

श्री वेंकटेश्वर जी भी कन्यामास के ब्रह्मोत्सवों में छटवे दिन सुबह हनुमान के वाहन पर, वेंकटराम के रूप मे शोभायात्रा करते हैं। 'श्री वेंकटाचल महात्मयम्' में स्पष्ट कर दिया गया है कि त्रेतायुग वाले राम ही आज के श्री वेंकटेश्वर हैं तथा पद्मावती तो उन दिनों की वेदवती ही हैं। अन्नमाचार्य जी ने भी अपने सैकडों गीतों में श्री वेंकटेश्वर और श्री रामचंद्र के अभेद को अपने गीतों के द्वारा सिद्ध किया।

रामचंद्र ये ही हैं रघुवीर ये ही हैं
कामित फलों को सभीयों को देनेवाले हैं''

''गौतम की पत्नी का कामधेनु है यही
कौशिक का कल्पवृक्ष भी है यही
सीता देवी का चिंतामणि है यही
अपने दासों के इह-पर के देवता है यही''

''सुग्रीव का आप्त बंधु है यही
हनुमान का साम्राज्य है यही
विभीषण की निधि है यही
जनक राजा का दिव्य पारिजात है यही''

''शबरी का तत्व रहस्य है यही
गुह का आदि मूल भी है यही
आस्तिक वादियों की आँखों के सामने है यही
श्री वेंकटाद्रि का विभु भी है यही

(तेलुगु मूल-रामचंद्रुडितडु)

त्रेतायुग के परब्रह्म, अयोध्या के रामचंद्र जी ही, इस कलियुग में भक्तों के कल्पवृक्ष बन यहाँ श्री वेंकटाचल दिव्य क्षेत्र पर श्रीनिवास परब्रह्म के रूप में अवतरित हुए हैं। इसी कारण ''कौसल्या सुप्रजा रामा'' श्लोक से ही उनके सुप्रभात की शुरुआत भी होती है। सदियों से इसी रूप में वे अपने दिव्य दर्शन हमें प्रदान कर रहे हैं। आदित्य पुराणांतर्गत 'श्री वेंकटाचल माहात्मय' में कथ्यानुसार

''श्रीरामं दशदिग्व्याप्तम् दशेन्द्रियनियामकम्
दशास्यघ्नम् दाशरथिं श्रीनिवासम् भजेऽनिशम्''

अनंत सुख देते हुए दसों दिशाओं में परिव्याप्त हैं ये स्वामी! दस इन्द्रियों के देवताओं को शासित करते हैं ये स्वामी! दशकंठ रावण का संहर्ता है यह स्वामी! दशरथ का पुत्र श्री रामचंद्र है यह स्वामी! इस श्रीनिवास प्रभु की सदा स्तुति करूँगा।''

अब आनंद निलय में स्थित श्री रुक्मिणी श्री कृष्ण के बारे में जान लेंगे!

42. रुक्मिणी श्रीकृष्ण

पुराणों का कहना है कि द्वापर युग के श्रीकृष्ण ही तिरुमल के श्री वेंकटेश्वर जी हैं। इसी कारण उन दिनों के गोविन्द के ही तरह इन्हें 'गोविन्द गोविन्द' के नाम से संबोधित करते हैं। हर दिन सुबह सुप्रभात सेवा में 'उत्तिष्ठोत्तिष्ठ गोविन्द' श्लोकों से श्री वेंकटेश्वर स्वामी को जगाते भी हैं। हर सुबह सब से पहले द्वापर युग की आदत के अनुसार मक्खन और गो क्षीर को स्वामी स्वीकारते हैं। सुप्रभात सेवा में भाग

लेनेवाले भक्तों में इसी माखन को प्रसाद के रूप में अर्चक स्वामी बाँटते भी है।

शायद इसी कारण से आनंद निलय में भी रुक्मिणी श्री कृष्ण की रजत मूर्तियाँ स्थान पा गई हैं। दायें हाथ में माखन को लेकर नृत्य भंगिमा में एक ही पाँव पर खडे बालकृष्ण की नृत्य भंगिमा का भव्य दर्शन कर लीजिये!

दो फुट की इन रुक्मिणी कृष्ण की मूर्तियों को प्रत्येकतया हर दिन पूजादिक न होने पर भी, नैवेद्य समर्पित होते हैं। हर साल कुछ विशेष संदर्भो में इन मूर्तियों की आराधना तथा शोभा यात्रायें भी संपन्न होती हैं।

हर महीने में श्रीकृष्ण का जन्म नक्षत्र ''रोहिणी'' के दिन सुप्रभात सेवा के बाद इन रजत मूर्तियों का अभिषेक एकांत में संपन्न होता है। फिर, उसी दिन सायं वेला में, मंदिर के बाहर झूले की सेवा के बाद शोभा यात्रा का भी आनंद श्री रुक्मिणी कृष्ण उठाते हैं।

हर साल चैत्र मास की पूर्णिमा के दिन, तिरुमल के वसंत मंडप में श्रीदेवी भूदवी सहित श्री मलयप्पा स्वामी, श्री सीता राम लक्ष्मण के साथ, श्री रुक्मिणी कृष्ण भी वार्षिक वसंतोत्सव में भाग लेते हैं।

सावन के महीने में कृष्णाष्टमी की रात, आनंद निलय में तोमाल सेवा (पुष्पालंकार सेवा) के बाद, श्रीदेवी तथा भूदेवी के साथ श्री उग्र श्रीनिवास मूर्ति जी को स्वर्ण द्वार के सामने के घंटा मंडप में स्नान पीठिका पर उपविष्ट कराते हैं। उनके साथ दूसरी गद्दी पर श्री कृष्ण जी को भी पूरब की ओर देखते हुए बिठाकर एकांत में अभिषेक की सेवा समर्पित करते हैं। यह अभिषेक सिर्फ मंदिर के अर्चक तथा आचार्य

पुरुषों (जिय्यंगार) की उपस्थिति में, परदों के बीच ही किया जा रहा है। कहा जाता है कि पुराने जमाने में कृष्णाष्टमी के दिन बारह बार ''द्वादशाक्षर मंत्र'' को अभिषेक के प्रारंभ में तथा समप्ति में भी जोडकर (संपुटीकरण) इस सेवा को समर्पित करते थे जिससे इस सेवा का नाम, 'द्वादश तिरुवाराधना'' पडा। हालांकि आज कल एक ही बार अभिषेक तथा नैवेद्य का समर्पण हो रहा है, कृष्णाष्टमी की यह सेवा तो ''द्वादश तिरुवाराधना'' के नाम से ही प्रचलित है।

अभिषेक के बाद श्री उग्र श्रीनिवास जी, आनंदनिलय के अन्दर ले जाये जाते हैं तो श्री कृष्ण जी को शयन भंगिमा में अलंकृत कर, स्वर्ण द्वार के सामने के मंडप में उपविष्ट कराते हैं तथा जिय्यंगार जी द्राविड दिव्य प्रबंधों का पाठ करते हैं। भोग चढ़ाने के बाद, श्री कृष्ण जी की मूर्ति पर अक्षत डालकर आशीर्वाद देते हैं। इस संदर्भ में श्रीमद्भागवत के तृतीयाध्याय में स्थित श्री कृष्णावतार के वृत्तांत का पुराण का, पंडितों द्वारा सुमधुर प्रवचन होता है। प्रसाद वितरण के बाद श्रीकृष्ण जी अंदर चले जाते हैं।

अगले दिन की सुप्रभात सेवा तथा तोमाल सेवा के बाद, श्री कृष्ण स्वामी को सुवर्ण द्वार के सामने बिठाकर तिल के तेल से सर पर मालिश करते हैं जिसे 'तैळकापु समर्पण' कहा जाता है। नवजात शिशु बालकृष्ण को तिरुमल की महा परिक्रमा के मार्ग में शोभा यात्रा पर ले जाते हैं तथा मालिश के बाद बचे हुए तिल के तेल को भक्तों में बाँटते हैं, जिसे भक्त लोग सरों पर मलकर अभ्यंजन स्नान कर लेते हैं। कृष्ण स्वामी के मंदिर में पुनःप्रवेश के बाद अर्चना तथा नैवेद्य का समर्पण होता है।

दो पहर की अर्चना तथा नैवेद्यों के समर्पण के बाद, श्री मलयप्पा स्वामी तथा श्री कृष्ण जी सर्वालंकारों से आभूषित होकर, अलग अलग पालकियों में मंगल वाद्यों सहित ''यामुनोत्तुरै'' (फूलों का घर) में पधारते हैं वहाँ दोनों का दरबार होता है तथा नैवेद्यों का समर्पण होता है। बाद में तिरुमल की वीथियों में जो दही हंडी (मटका फोड) का उत्सव होता है, उसमें भी ये दोनों भाग लेते हैं।

हर साल संक्रांती त्योहार के बाद कनुमा के दिन जो ''आखेट का उत्सव'' होता है, उसमें श्री वेंकटेश्वर स्वामी के साथ, दूसरी पालकी में श्री कृष्ण जी भी भाग लेते हैं। आखेट का उत्सव जहाँ होता है, वहाँ श्रीकृष्ण ही वहाँ के ग्वालों के घर जाकर, उनकी पूजाओं को स्वीकारते हैं। उनके दिये हुए, दूध, मक्खन तथा फलों को भी चखते हैं। ये ग्वाले ही श्री वेंकटेश्वर स्वामी के यहाँ 'सन्निधि गोल्ला' के नाम से व्यवहृत होते हुए, सदियों से उनकी पूजाओं में भी भाग लेते आ रहे हैं। इस तरह द्वापर युग की स्मृतियों को न भूल पाते हुए, उनकी याद में आप खुश होते हुए, हम भक्तों को भी श्री वेंकटेश्वर स्वामी खुश कर रहे हैं।

संक्रांति पर्व दिन के अलावा, हर तीन साल में एक बार दो ब्रह्मोत्सव मनाये जाने के समय में भी, दशहरे के अगले दिन भी जो ''आखेट का उत्सव'' होता है, उसमें भी श्री कृष्ण भाग लेते हैं।

हर साल ब्रह्मोत्सवों में भी पाँचवे दिन की सुबह, मलयप्पा स्वामी, मोहिनी के अवतार में सब भक्तों के मनों को हर लेते हुए हाथी के दाँतों की पालकी में शोभा यात्रा के लिए निकलते हैं तो उनके साथ दूसरी पालकी में श्री कृष्ण भी आकर भक्तों को बताते हैं कि यह मोहिनी अवतार तथा मनमोहक कृष्ण दोनों मैं ही हूँ।''

धनुर्मास में

हर साल धनुर्मास में, एक महीने तक आनंद निलय में संपन्न होनेवाली ''एकांत सेवा'' में भोग श्रीनिवास के स्थान पर, यह 'माखन कृष्ण' ही शय्या - भाग्य को पा रहा है। धनुर्मास के तीस दिन, सुप्रभात - सेवा नहीं होती है। एतद् स्थान में, स्वर्ण शय्या पर लेटे हुए श्री कृष्ण को गोदा आण्डाल विरचित तिरुप्पावै पाशुरों से जगाते हैं। इसके बाद, छोटे कृष्ण जी को कुनकुने पानी से नहलाकर दूध, मक्खन तथा गरम गरम पोंगल आदि नैवेद्य रूप में समर्पित करते हैं।

43. सालग्राम

तिरुमल के आनंद निलय में श्री वेंकटेश्वर स्वामी की मूल विराट मूर्ति, अन्य उत्सव मूर्तियों के साथ विशेषतया चार बडे सालग्राम, अन्य छोटो सालग्रामों की भी पूजायें संपन्न होती हैं जो तिरुमलेश जी, वेंकटेश भगवान की मूलमूर्ति के चरणों के सामने, चाँदी के बरतनों में रखे हुए होते हैं!

हर दिन भोग श्रीनिवास मूर्ति के साथ, इन सालग्रामों को भी अभिषेक, पुष्पार्चना तथा नैवेद्य का समर्पण होता है। इनके अलावा श्री वेंकटेश्वर स्वामी की मूल विराट मूर्ति की भुजाओं से चरणों तक सुंदर दिव्य सालग्रामों की मालाएँ भी नित्य शोभित होती हैं।

सोने से जडित इन दो सालग्राम मालाओं के अलावा, और एक सालग्राम माला भी है जो प्रसिद्ध द्वैत संप्रदाय के पीठाधिपती श्री व्यास तीर्थ द्वारा समर्पित कही जाती है। पूजनीय व्यास तीर्थ स्वामी जी ही

विजय नगर के वीर नरसिंह रायलु, श्री कृष्ण देव रायलु तथा अच्युत रायलु नामक तीनों विजय नगर महाराजाओं के परम गुरु माने जाते थे!

खासकर श्री कृष्ण देव रायलु को कुहू योग नामक काल सर्प दोष से बचाने के लिए, कुछ समय के लिए विजय नगर सिंघासन पर, श्री व्यास तीर्थ स्वामी आसीन हो गये थे तथा अपनी तपोशक्ति से उस दोष को उन्होंने मिटा भी दिया था! कुछ देर के लिए विजय नगर के सिंघासन पर बैठने के कारण, कहा जाता है कि उन्हें 'व्यास रायलु' नाम से भी अभिहित किया गया।

तदनंतर काल में, तिरुमल के आनंद निलय के नित्य अर्चनादियों में रुकावट आने की विपदा आ पडी। इसकी वजह थी इन अर्चनादिकों का निर्वाह करनेवाले वैखानस अर्चकों के कुछ अवांतर कारण! इस समय व्यासतीर्थ स्वामी ने लगातार 12 साल के लिए तिरुमल पर ही रहकर श्री वेंकटेश्वर स्वामी के पूजादिकों का निर्वाह भी किया। अर्चनादिकों को, अन्यों के आक्रान्त होने से बचाया भी! बाद में संप्रदायानुसार वैखानस अर्चकों को तिरुमल की अर्चना विधियों को सकुशल सौंपा! इन्हीं के निर्वाह काल में आनंद निलय के विमान वेंकटेश्वर की प्रशस्ति इतनी बढ गयी!

पुराने जमाने में विमान - परिक्रमा करते समय, 'आनंद निलय' के शिखर पर स्थित विमान वेंकटेश्वर के दर्शन के बाद ही आनंद निलय के अंदर ''श्री वेंकटेश स्वामी की मूल विराट मूर्ति के दर्शन कर लेते थे। स्वामी के दर्शन न होने पर भी, माना जाता था कि दर्शन की संपूर्ति हो गयी है। इस स्फूर्ति के कारक व्यास राय स्वामी ही थे!

विबुध जनों का कहना है कि व्यास तीर्थ स्वामी भी भगवद्रामानुज जी की तरह श्री वेंकटेश्वर की मूल विराट मूर्ती को दिव्य सालग्राम मूर्ति ही माना करते थे। उनकी यह भी धारणा भी कि तिरुमला गिरि ही साक्षात् तिरुमलेश है। इसीलिए घुटनों पर ही चलकर तिरुमल पहुँचा करते थे!

इतना ही नहीं, अन्नमाचार्य की कथा में भी (ताळ्पाका चिन्नन्ना विरचित) कहा गया है कि जूतों से पहाड पर चढते हुए अन्नमय्या को देखकर तिरुवेंकटाधीश की देवी अलमेल्मंगा ने कहा -''

''बालक! यह महा पर्वत
पूरा सालिग्राम मय है
इसे विबुध जनों को
जूतों से चढना मना है
तू भी जूते छोड चढ
देता दिखाई है यह नग!''

अन्नमय्या ने भी जूतों को छोडकर देखा तो क्या हुआ?

वह पर्वत पूरा दिखा
नारायणाकृति में उसे
श्री राम कृष्ण, लक्ष्मी
नरसिंहादि मूर्तियाँ सभी
एक साथ उसे दिखे

''हाँ, यह गिरि है
सालग्राम मय है सही''

बालक ने विनम्र हो
प्रणाम किया विस्मय से'' -

इस तरह अलमेल्मंगा की अनुज्ञा से अन्नमय्या तिरुमला पर पहुँच गया!

सालग्रामों से पवित्र इस वेंकटाचल क्षेत्र में ''ओम सालग्राम निवासाय नमः'' इस तरह भगवान श्री वेंकटेश कीर्तिमान होते हुए अपने दिव्य दर्शन से हमें धन्य बना रहे हैं। श्री वेंकटेश की सन्निधि में स्थित इन सालग्रामों का पावन दर्शन हमें मिला है - हमारे पुराने जन्मों के भाग्य के कारण! इतना सारा भाग्य और अनंत शुभों को प्रदान कर रहे इस दिव्य अवसर में हम सब एक बार वेंकटेश्वर जी का नाम लेंगे!

हे सप्तगिरीश! हे वेंकट रमण!
गोविन्द गोविन्द गोविन्द!

पुनर्दशन की प्राप्ति हो!

अब तक हमने अदभुत सालग्राम मूर्ति श्री वेंकटेश्वर स्वामी की मूल विराट मूर्ति की अद्भुत गाथा, उनके भक्त तोंडमान राजा, कुम्हार नंबी, तिरुमल नंबी, अनंताळ्वान, अन्नमाचार्य, वेंगमांबा, महंतु हथीराम बावाजी आदियों के द्वारा श्री वेंकटेश्वर की लीलाओं और महिमाओं के बारे में बहुत सारी विशेषताओं को जान लिया। उनकी भक्त प्रियता के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त की। आनंद निलय में श्री वेंकटेश्वर स्वामी की ध्रुव मूर्ति के साथ स्थित श्री भोग श्रीनिवास मूर्ति, कोलुवु श्रीनिवास मूर्ति, श्री उग्र श्रीनिवास मूर्ति, उत्सव श्रीनिवास मूर्ति एवं श्री मलयप्पा स्वामी की मूर्तियों को संपन्न हो रही विविध सेवाओं की विशेषताओं को भी

जान लिया। श्री सुदर्शन चक्रत्ताळ्वार, श्री सीताराम लक्ष्मण, श्री रुक्मिणी कृष्ण, और सालग्रामों के बारे में भी हमें मालुम हुआ है।

''श्री वेंकटेशस्य कथामृतं त्विदम्
महात्म्यसारं सुतपस्विगम्यम्
श्री वेंकटेशस्य महाप्रियप्रियम्
लोकोत्तरं दैवऋषिप्रियं च'' -

इस तरह हमने अब तक तिरुमल श्री वेंकटेश्वर की गाथा और महिमाओं को जान लिया है न! यह पुण्य, भक्तों को जनन - मरणों की बाधाओं से दूर करता है। अत्यंत श्रेष्ट इन महिमाओं को जानने का भाग्य तो सबको मिलता ही नहीं है। इन सभी गाथाओं को इन कानों से सुनना, इस रसना से उनका कीर्तिगान करना महद् भाग्य ही हैं। कहा जाता है कि भगवान तिरुमलेश भी षोडशोपचारों से इन्हें ही उत्तम मानते हैं। देवताओं और ऋषियों को भी मोक्ष प्रदान करनेवाली सेवायें ये ही हैं! इसमें कोई संदेह नहीं कि हमें उपरोक्त सभी भाग्य अवश्य प्राप्त होंगे!

समस्तपापौघविनाशकारणम्
समस्तपुण्यौघसमृद्धिकारणम्
श्री वेंकटेशस्य पदारविंदयोः
सद्भक्तिवृद्धावसमानकारणम्

श्री वेंकटेश्वर से संबंधित ये सारी विशेषताओं को जान लेने से, सकल पुण्यों की प्राप्ति निस्संदेह होगी ही! इतना ही नहीं, श्री वेंकटेश्वर स्वामी के दिव्य चरण कमलों के प्रति असीम भक्ति को भी ये सभी

विशेषताएँ भक्तों में बढाती भी हैं। इसीलिए तिरुमलेश से हम यह प्रार्थना करेंगे कि बारंबार उनकी कथाओं, लीलाओं और महिमाओं को जान लेने का अवसर हमें प्राप्त करायें!

हे सप्तगिरीश! गोविन्द! वेंकट रमण
गोविन्द गोविन्द गोविन्द!

हे वेंकटेश! स्वामी! तुम्हारी दिव्य मंगल मूर्ति के दर्शन से हमें पुनीत कर दिया हे तिरुमलेश! तुम्हारे इस सम्मोहित रूप को मन भर देख पाना मेरी दो आँखों से नहीं हो पा रहा है। मैं क्या करूँ? तुम्हारे कटि वरद हस्तों को देखूँ? या नंदक खड्ग की कांति को देखूँ? या तो फिर तुम्हारें गले में अलंकृत सुवर्ण हारों की सुंदरता को परखूँ? तुम्हारे शंख चक्रों की तीक्ष्णता का अंदाजा लगाऊँ या तुम्हारे कपोलों की कोमलता को निहारूँ? करूणा के आगार - तुम्हारे दोनों नेत्रों का विलोकन करूँ? तुम्हारे माथे पर के श्वेत वर्ण के ऊर्ध्व पुण्ड्र को निर्निमेष देखूँ? या नीले बादलों के बीच बिजली सी, तुम्हारे वक्षःस्थल पर प्रकाशमान, अलमेल्मंगा को सानंद देखूँ? ऐश्वर्य की देवी पद्मावती की सुन्दरता को कैसे देख पाऊँगा - मेरी इन दोनों आँखों से? कहाँ तक देख पाऊँगा?

तुम्हारी दिव्य मंगल मूर्ति की सुंदरता को पूर्णतया, मैं देख नहीं पा रहा हूँ हे स्वामी! अनंत माया से घिरा हुआ मैं तो हरगिज देख नहीं पाऊँगा - तुम्हारी करुणा के बिना! इसीलिए हे आनंद निलय वासी स्वामी! बार बार तुम्हारे दिव्य दर्शन को हमें प्रदान करो! बार बार तुम्हारे चरण कमलों को देखने का भाग्य हमें प्रदान करो! बारंबार तुम्हारे मुख - कमल को आँखों भर देखने की दया बरसाओ! हे सप्तगिरीश! वेंकट

रमण स्वामी! हमारी भव बाधाओं को दूर करने के लिए तुम्हारा दिव्य दर्शन ही पर्याप्त है! यही तो हमारा सौभाग्य है!

पुनर्दर्शनप्राप्तिरस्तु
पुनर्दर्शनप्राप्तिरस्तु
पुनर्दर्शनप्राप्तिरस्तु

इसी तरह हमें अपना आशीर्वाद दे दो हे स्वामी!

गोविन्द गोविन्द हे गोविन्द!

देखिए! अर्चक स्वामी कर्पूर की आरती उतार रहे हैं! उन कांतियों में स्वामी के दिव्य रूप के दर्शन आँखों भर कर लीजिये! अर्चक स्वामी के साथ हम भी उस नित्य मंगल मूर्ति की आरती उतारेंगे!

''नित्याय निरवद्याय सत्यानंदचिदात्मने
सर्वांतरात्मने श्रीमद्वेंकटेशाय मंगळम्''

इस तरह उनका कीर्तिगान करते हुए, उनका स्मरण करते हुए आँखों भर देखते हुए, श्री वेंकटेश जी की तरफ ही होते हुए, पीछे की तरफ सावधानी से चलेंगे स्वर्ण द्वार की तरफ! कयोंकि मीलों दूरी से श्रीनिवास स्वामी के दिव्य दर्शन की आस लगाकर आये हैं न! हमारे जैसे ही जाने कितने बूढ़े, बच्चे, अस्वस्थ लोग, अपंग लोग, स्त्रियाँ, भगवान के दिव्य दर्शन के लिए आकर हमारे पीछे खडे हैं। उन्हें भी भगवान वेंकटेश को देखने का मौका मिलना चाहिए न? जाने कितने घंटो से वे श्रेणियों में खडे हैं? उनकी बारी आने तक भूख त्यास से प्रतीक्षा कर रहे होंगे न? तो फिर उन सभीयों को भी भगवान तिरुमलेश को देखने का भाग्य प्राप्त होना ही है न? हमें तो अब सरकना ही चाहिए!

आनंद निलय के बाहर, सुवर्ण द्वार को पार कर जाने के बाद श्रीनिवास स्वामी को समर्पित तीर्थ प्रसादों को स्वीकारेंगे! उन प्रसादों की तैयारी जहाँ पर होती है, उस रसोई - घर के बारे में हम जान लेंगे! उस रसोई का निरीक्षण करनेवाली वकुळ माता के दर्शन कर लेंगे! स्वामी के शुक्रवार के अभिषेक में उपयोगित ''स्वर्ण कुआँ'' को देखकर पुनीत हो जायेंगे! विमान परिक्रमा की विशेषताओं को भी जान जायेंगे! ''आनंद निलय विमान'' ''विमान - वेंकटेश्वर स्वामी'', ताळ्ळपाका कोश, भाष्य कारों की सन्निधि, योगा नरसिंह स्वामी, परिमल का घर, श्रीनिवास की हुँडी, विष्वकसेन - इन सभीयों के बारे में अभी जानकारी लेनी है! जल्दी चलिए न! श्रीनिवास स्वामी को देखते देखते ही पीछे की ओर चलिए! हाँ सुवर्ण द्वार तक तो पहुँच ही गये हैं! एक बार फिर सुवर्ण द्वारों तथा सुवर्ण देहली को भी नमस्कार कर लेंगे! इस सुवर्ण द्वार में से दर्शन दे रहे सप्तगिरीश स्वामी को आँखों भर देख लीजिये! दिल खोलकर उनका कीर्तिगान कीजिये!

हे सप्तगिरीश वेंकट रमण!
गोविन्द गोविन्द हे गोविन्द!

हाँ! अब हम भगवान वेंकटेश जी के दिव्य दर्शन के बाद, विमान परिक्रमा के परिसर में आ गये हैं! हाँ यहाँ सीधे हमारे सामने दिखाई देनेवाला प्रदेश ही श्रीनिवास जी का प्रधान रसोई घर है। चलिये। यहाँ प्रवेश कर, इसकी विशेषताओं को भी जान लेंगे!

44. प्रधान पाकशाला (पोटू)

अब हम तिरुमला के श्रीनिवास जी के दर्शनोपरांत स्वर्ण द्‌वार के बाहर आकर विमान परिक्रमा में खडे हैं। ठीक हमारे सामने है प्रधान

पाकशाला! यहाँ तैयार होनेवाले पकवानों तथा पाक विधा की निगरानी करनेवाली वकुळामाता के बारे में जान जायेंगे!

विमान परिक्रमा में भगवान वेंकटेश्वर के गर्भालय की आग्नेय दिशा में तीन फुट की शिला वेदी पर 61 फुट लंबा, तथा 30 फुट चौडा यह मंडप शिला स्तंभों से निर्मित है। अत्यंत पुरानी इस पाकशाला में भगवान श्रीनिवास को समर्पित होनेवाले सभी नैवेद्य तथा मीठे पकवान भी तैयार हो रहे थे। दिन ब दिन भक्तों की संख्या बढती जाने के कारण, भगवान वेंकटेश के भोग भी अधिक हो गये हैं। इसीलिए इस पाकशाला का उपयोग प्रधानतया अब अन्न प्रसादों की तैयारी में ही हो रहा है। लड्डू, वडा, गुड की मिठाई, दोसा, सुखिया, मुरुकु, जलेबी आदियों की तैयारी के लिए रजत द्वार के बाहर चंपक परिक्रमा की उत्तर दिशा में स्थित मंडपों को पाकशाला के रूप में आज कल उपयोग में लाया जा रहा है जिसके बारे में हम ने पहले ही जान ली है।

विमान परिक्रमा की ''प्रधान पाकशाला'' को मंदिर के संप्रदाय के अनुसार 'पोटु' भी कहते हैं जहाँ स्वामी के लिए अत्यंत प्रीतिकर खीर, परमान्न आदि तैयार की जाती हैं। तिरुमलेश के वैभव की दो ही विशेषताएँ पधानतया उल्लेखनीय हैं। पहला है - उनके अमूल्य रत्न जडित आभूषण, उत्सव एवं शोभायात्रायें। तो दूसरा है - उनके अत्यंत प्रीतिकर पकवान! पूरी दुनिया भर में इससे बढ़कर वैभव और कहीं नहीं दिखाई देता है। 'न भूतो न भविष्यति' की इस ख्याति का कारण तिरुमलेश की भक्त प्रियता ही है। भक्तों के मुँह माँगे वरदानों को देना, उन भक्तों के कहे अनुसार चलना तथा भक्तों के नेतृत्व में उत्सवादि को

स्वीकारना तथा भक्तों के द्वारा समर्पित नैवेद्यों को पेट भर खाना। यही है उनकी भक्त प्रियता! कहते हैं कि तिरुमलेश जितने अलंकार प्रिय हैं, उतने नैवेद्य - प्रिय भी हैं। जितने नैवेद्य प्रिय हैं उतने भक्त प्रिय भी हैं। इसीलिए चुन चुनकर आप जो खाते हैं, उन सब पदार्थों को भक्तों को भी खिलाना चाहते हैं वे! तभी जाके उन्हें तृप्ति मिलती है। असल में भक्तों को खिलाने के लिए ही वे तरह तरह के पकवानों को, अन्न प्रसादों को खाते हैं! पूरी दुनिया भर में इतने भोजन - प्रिय देवता कोई और नहीं मिलता है। इसी कारण अन्नमाचार्य कहते हैं -

इंदिया जब परोस रही है
तब आप ऐसे ही खाओं स्वामी!''

तरह तरह के पकवानों को इंदिरा तैयार कर परोस रही है। एक और जगह पर दक्षिण भारत के विशेष पकवानों का वर्णन भी है -

''अरिसे, नूने बूरियल, औगुलु
चक्केर मंडिगलु, वडा
बुरुडलु, पाल मंडेगलू, अपूप
तरह तरह के ऐसे नमकीन, मीठे
पकवानों को स्वीकारो श्री वेंकटेश्वर!''

उपरोक्त सभी पकवान, आटे से बने जानेवाले विविध नमकीन व मीठे पकवान हैं जिन्हें अन्नमाचार्य श्री वेंकटेश्वर जी को अत्यंत प्रीतिकर कह रहे हैं।

एक और अज्ञात कवि (17 वी सदी) तिरुमल वेंकटेश की भोजन - प्रियता के बारे में .....

दूध, मक्खन, बैंगन का भात, दही का भात
बुबुळि, योरेमु, परडाला पाशमुलु, चक्केर पुलगमुलु
नुव्वु मंडिगलु, मनोहरम्, अप्पमुलु
इडली, अतिसारमु, पूरन पूरी
वडा, दोसा, शाक, सूप, रसम्
फल, शहद, चटनी

दूध, मक्खन, फल, शहद, पूरन पूरी, चटनी, बैंगन भात, दही भात आदि के अलावा दक्षिण भारतीय अनेकानेक मीठे तथा नमकीन पकवानों के नाम यहाँ उद्घृत हैं।

इस तरह आनंद निलय वासी के प्रिय पकवानों का विवरण उसने दिया। तेनालि रामकृष्ण कवि ने तो बहुत बडी ही उपाधि उन्हें दे दिया कि खाने में उस्ताद हो!

इस तरह विविध पकवानों को हर दिन खानेवाले तिरुमलेश जी हर दिन ''साफ न की जानेवाली थालियों में ही'' खाना खाते हैं। आप शायद यह सोचते होंगे कि हर दिन साफ न होनेवाली थालियों में खाने वाले उस स्वामी के वैभव तथा संपदाओं का क्या कहने? कितने भाग्य शाली होंगे वे? हाँ हाँ! तो सुनिये उनकी भाग्य विशेषता! हाँ स्वामी के भोजन के लिए जिस थाली का उपयोग एक बार होता है - उसका फिर से उपयोग नहीं होता है। नयी थाली ही ले आना यहाँ का संप्रदाय है। वह नयी थाली क्या है? माटी का टूटा हुआ आधा खपडा! उसे ही 'ओडु' भी कहते हैं। भक्त प्रेमी भगवान, आप स्वयं खपडे में खाते हैं तथा हम भक्तों को तो

हर दिन विविध पकवानों से 'प्रीति भोज' प्रदान करते हैं। भक्तों की तृप्ति ही उनका परमार्थ है बस! उनका आनंद ही स्वामी का भी आनंद है।

प्रार्थना करेंगे वेंकटगिरि वेंकटेश्वर की
विपदा को दूर करनेवाला स्वामी, है वह आदि देवता
धोयी न जानेवाली थालियों वाला देवता
पापों को मिटानेवाला, ब्याज को माँगने वाला
बाँझ को बच्चे देनेवाला गोविंद है यह,
मुँह माँगे वरदानों को देनेवाला देवता है यह
अलमेलूमंगा का पति, वेंकटाद्रि नाथ है यह!

भक्त सभी इसी तरह वेंकटेश स्वामी की तारीफ में नाचते, गाते तिरुमल की यात्रा करते हैं।

इन धोयी न जानेवाली थालियों में खानेवाले स्वामी के पास, सदियों से राजा, महाराजाओं से लेकर साधारण गरीब लोग भी आते रहे हैं और अपनी शक्ति के अनुसार उन्हें उपहार भी चढ़ाते रहे हैं। श्री वेंकटेश जी भी उन सभी उपहारों को त्यार से स्वीकारते हैं, उन्हें दिव्यत्व प्रदान करते हैं तथा फिर से भक्तों के लिए ही उनका उपयोग करते हैं।

इस तरह सदियों से कितने सारे भक्त अपने ही तरीके से विविध पकवानों को तैयार करवाते हैं तथा उन्हें स्वामी को समर्पित करते हैं। स्वामी के इन प्रीति कर प्रसादों की तैयारी, तिरुमल मंदिर के 'गमेकार' नामक रसोइये, संप्रदायानुसार 'पोटु' नामक इस रसोई घर में करते हैं। इतःपूर्व लकडियों का उपयोग करते हुए - माटी के घडों में ही पकाते थे। बदलते समय के अनुसार पीतल के कडाहों का उपयोग होने लगा!

दिन ब दिन बढ़ती हुई भक्तों की संख्या के कारण, आज कल 'गैस' का उपयोग करते हुए, रसोइये, शुचि और रुचिकर पकवानों को बडी ही श्रद्धा और लगन से तैयार कर स्वामी तिरुमलेश को समर्पित कर रहे हैं तथा स्वामी के भोग के बाद उन प्रसादों को भक्तों को भी चखाकर, उन्हें आनंदित कर रहे हैं! तो फिर इन रसोइयों के भाग्य का क्या कहने? पुराण काल की कौसल्या या देवकी को भी यह भाग्य न मिला होगा! इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं है! सच ही में उनके जन्म धन्य हैं न?

आज कल तिरुमलेश स्वामी की सुप्रभात सेवा से लेकर एकांत सेवा तक इस रसोई घर में तैयार होनेवाले अन्न प्रसादों के निवेदन का संक्षिप्त विवरण कुछ इस प्रकार है।

आनंद निलय के मूल विराट मूर्ति को हर रोज सुबह, अपराह्न और रात, तीनों संध्याओं में नैवेद्य समर्पित होते हैं। ''पहली पूजा - पहला नैवेद्य तथा पहला दर्शन'' ये तीनों अत्यंत प्रभावकारी हैं। इसी धारणा के अनुसार, श्रीनिवास जी को प्रथम नैवेद्य, छत्र चामर, तथा मंगल वाद्यों सहित, पहले श्री वराह स्वामी के पास जाकर, उन्हें चढ़ाने के बाद ही होता है। श्रीनिवास स्वामी के बाद अन्य उत्सव मूर्तियों को भी भोग चढ़ाया जाता है। तदनंतर विमान परिक्रमा में स्थित द्वार पालक गरुड, वरदराज स्वामी, वकुळा माई, योग नरसिंह स्वामी, विष्वक सेन, भाष्य कार - इस तरह सभिओं को नैवेद्य समर्पित होते हैं। इसके बाद मंदिर की अष्ट दिशाओं में भी 'बली' (अन्नप्रसाद) चढ़ाये जाने से यह निवेदन संपन्न होता है। इसी रिवाज का तीनों संध्याओं में अनुसरण करते हैं। इसके बाद ''सन्निधि वीथी'' में स्थित श्री बेडी हनुमान जी को भी नैवेद्य समर्पित होते हैं।

भोग

हर दिन सुप्रभात सेवा में प्रथमतया, क्षीर, मक्खन शक्कर आदियों का नैवेद्य समर्पित होता है। द्वापर युग में यशोदा जी श्रीकृष्ण जी के जागते ही मक्खन को ही खिला रही थी न! यह तो उन्ही दिनों की आदत है।

इसके बाद श्री तिरुमलेश जी का दरबार होता है। सुवर्ण सिंघासन पर छत्र चामरादि राजोचित मर्यादाओं के साथ ठाठ से बैठे हुए श्री वेंकटेश जी को उस प्रत्येक दिन के तिथि, वार, नक्षत्रादि पंचाग श्रवण सुनाकर, मंदिर के आय - व्ययों का विवरण भी दिया जाता है। तदनंतर, तिल के आटे को समर्पित करते हैं (भुने हुए तिल और गुड का मिश्रण) शनि देवता को प्रीतिकर इस मिश्रण को हर दिन श्री वेंकटेश्वर जी प्यार से खाते हैं। इसी कारण श्रीनिवास को प्रीतिकर शनिवार का व्रत करने से शनिग्रह के कष्टों का निवारण हो जायेगा!

तदनंतर सहस्रनामार्चन सेवा होती है। इसके बाद ''पहली घंटी'' नामक पहले भोग में मूल विराट मूर्ति के सामने (कुलशेखर पडी के सामने) पुलिवोदरै (इमली का भात) पोंगल्, दद्योजन (दही का भात) चक्केर पोंगल (चीनी पोंगल) आदि अन्न प्रसाद, लड्डू, वडा, अप्पालु आदि मीठे पकवान भी रखकर निवेदन करते हैं। प्रधान रसोइया 'ओडु' नामक नया तथा आधे खपडे में सिर्फ 'मात्रा' नामक मात्रु दद्योजन को लेकर आनंद निलय में जाता है तथा स्वामी की मूल मूर्ति को समर्पित करता है। मलई युक्त दही का यह अन्न ही स्वामी को अत्यंत प्रिय है। द्वापर युग का वह अभ्यास - इस कलियुग के वेंकटाद्रि कृष्ण में भी है!

मध्याह्न के समय ''अष्टोत्तर शत नामार्चना'' के ठीक बाद ही ''दूसरी घंटी'' नामक भोग के लिए पकवान इस पाक शाला में तैयार ही रहते हैं। उपर्युक्त अन्न प्रसादों के साथ, शुद्धान्न, सीरा, खीर, केसरी भात, क्षीरान्न, 'कदंबम्' नामक विशेष पकवान आदि प्रसादों को भी 'भोग' में स्वामी को समर्पित करते हैं जिन्हें खाकर तिरुमलेश जी खुद खुश होते हुए हम भक्तों को भी खुशी बाँटते हैं।

इस दूसरी घंटी के बाद श्रीदेवी भूदेवीयों के साथ श्री मलयप्पा स्वामी (उत्सव श्रीनिवास मूर्ति) भक्तों को धन्य बनाने 'कल्याणोत्सव' के लिए ''कल्याण मंडप'' में पधारते हैं जिसके बाद स्वामी को लडडू, वडा, दोशा, अप्पालु के साथ चक्केर पोंगल (चीनी का पोंगल) पुलिओदरै, पोंगल तथा दद्योजन आदि नैवेद्य समर्पित होते हैं।

इसके बाद श्री मलयप्पा स्वामी ''वसंतोत्सव'' में भाग लेते हैं जो सेवा निर्धारित शुल्क चुकाये हुए आर्जित भक्तों के लिए मात्र है। इसमें वे दोसा चखते हैं। वसंतोत्सव के बाद ''डोलोत्सव'' तथा सायं संध्या में संपन्न ''सहस्र दीपालंकार सेवा'' में भी 'पंचकज्जायम्' नामक प्रसाद को समर्पित करते हैं जो, चीनी, मिस्री, खस खस, सूखे किसमिस, काजू, बादाम, तथा खोपरे का चूरण आदि का मिश्रण है।

शाम, श्री वेंकटेश जी को 'तोमाल सेवा' नामक पुष्पालंकार सेवा होती है जिसमें 'तोमाल दोसा पडी' नामक बडे बडे घी के दोसे, मळहोरा (उडद दाल का भात) कदम्बम् नामक पकवान समर्पित होते हैं। तदनंतर स्वामी की तीसरी अर्चना (अष्टोत्तर शत नामावली) संपन्न होती है जिसके बाद 'तीसरी घंटी' नामक रात का भोग समर्पित होता है। इसमें भी पोंगळ, उडद दाल का भात, चीनी का पोंगल, कदंबम् आदि प्रसादों

को स्वामी प्रीति पूर्वक स्वीकारते हैं। आखिरी बार रात में'' तिरुवीसम घंटा'' नामक प्रत्येक भोग में 'चीनी का पोंगल' मात्र समर्पित होता है।

एकांत सेवा के समय, खूब उबालकर ठंडा किया हुआ चीनी मिश्रित दूध, फल, पंचकज्जायम् तथा मेवा नामक मिठाई - श्री वेंकटेश्वर स्वामी को समर्पित करते हैं।

इस तरह हर दिन पक्वान्नों के अलावा, हर सोमवार की सुबह, श्री मलयप्पा स्वामी की विशेष पूजा में बडे बडे वडा, लड्डू अन्न प्रसादादि को भी समर्पित करते हैं। हर बुधवार की सुबह, सुवर्ण द्वार के पास जो सहस्र कलशाभिषेक होता है, उसमें विशेषतया क्षीरान्न के साथ बाकी अन्न प्रसादों को भी स्वामी तिरुमलेश को समर्पित करते हैं। हर गुरुवार संपन्न होनेवाली 'तिरुप्पावडा' सेवा में करीब 420 किलो चावल से, 'पुलिवोदरै' को तैयार कर, मूल विराट मूर्ति के सामने स्वर्ण द्वार के पास एक बडी सी राशि के रूप में रखकर समर्पित करते हैं। इसके साथ सूप के परिमाण के जलेबी तथा मुरुकु को भी तिरुमलेश जी 'तिरुप्पावडा' की सेवा में चखते हैं।

शुक्रवार के दिन तिरुमलेश जी पूरन पूरी - तथा सुखियल (मीठ पक्वान्न) को पसंद करते हैं। रविवार के दिन ''अमृत कलश' नामक प्रसाद को स्वामी प्रीति से स्वीकारते हैं। तदनंतर इसे गरुड जी को समर्पित करते हैं।

एकादशी एवं वैकुंठ एकादशी के पर्व दिनों में, स्वामी, दोसा और चने के दाल से बने 'शुंडल' नामक नमकीन को पसंद करते हैं। इनके साथ गीले मूँग दाल से बना नमकीन तथा शरबत को भी स्वामी को

समर्पित करते हैं। साल में पूरे एक महीने तक जो धनुर्मास का व्रत होता है, उस समय के अन्न प्रसादों के साथ ''गुड की दोसा'' को स्वामी बहुत पसंद करते हैं।

इन सब प्रसादों के अलावा, कुछ विशेष पर्व दिनों में स्वामी, खीर, केसरी भात, शाकरी भात, बगाळा भात, मनोहरम् नामक पकवानों को पेट भर खाते हैं।

इन सब के साथ, 'उगादि आस्थानम्' 'आणिवार आस्थानम्' दीवाली आस्थानम् आदि समयों में, ब्रह्मोत्सव, आखेट उत्सव, शोभा यात्राओं में विशेष भोग भी होते हैं।

इस तरह विविध अन्न प्रसादों को सभी सेवाओं के लिए समयानुसार तैयार करने में, इस पाकशाला के रसोइये, हर पल जागरुकता से तल्लीन रहते हैं। श्रीनिवास के उत्सवों के लिए आवश्यक प्रसादों को रुचिकर रीति में तैयार कर, परोसने वालों की श्रद्धा और भक्ति का, इसी पाकशाला की वायव्य दिशा में श्री वेंकटेश जी की माताश्री वकुळादेवी एक गद्दी पर बैठकर निरीक्षण करती रहती हैं।

सारे संसार भर में कहीं भी, इतने बडे पैमाने पर नैवेद्यों की तैयारी नहीं होती है। सभी पकवान घी से ही तैयार किये जाते हैं। कहा जाता है कि एक दिन के सभी पकवानों की तैयारी के बाद बचा हुआ घी, अन्य मंदिरों में एक साल के उपयोग के लिए काफी होता है।

इसी लिए ही शायद पहली बार अन्नमय्या तिरुमल मंदिर की पाकशाला को देखकर, अचरज में पड गये!

उस स्वामी के पकवानों की तैयारी के बाद
घी बचे हुए कडाहों में हाथ फेरा
लगा कि इतना उपयोग घी का
अन्य मंदिरों में एक साल तक भी नहीं होगा!

इस तरह ''खाने का उस्ताद'' 'नैवेद्य प्रिय' ''धोयी न जानेवाली थालियों वाला'' इत्यादि नामों से सुविख्यात तिरुमलेश जी, अपने को समर्पित सभी पकवानों को फिर से भक्तों में ही बाँट देते हुए, उन्हें पुनीत करते हुए संतृप्त भी करते आ रहे हैं। उस स्वामी का जी भर गुणगान करते हुए, प्रधान पाकशाला, उसमें हर पल अत्यंत सर्तकता से पकवानों को बनाते रहे रसोइये उन सभी प्रसादों को चखकर उन्हें पुनीत कर, फिर से हम भक्तों में बाँटनेवाले तिरुमलेश का जय जयकार कर आगे बढ़ेंगे!

हे सप्तगिरीश! गोविन्द! गोविन्द!

45. वकुळादेवी

अब तक हमने भगवान वेंकटेश की पाकशाला को तथा, उसमें तैयार होनेवाले रुचिकर पकवानों के बारे में जानकारी प्राप्त की। उसी पाकशाला की वायव्य कोने में स्थित इस छोटे से मंदिर को देखिए!

इस चतुर्भुज शिला - वेदी पर पूरब की दिशा की ओर देखती हुई माई ही ''वकुळादेवी'' है। 'वकुळ माता' 'वकुळ मालिका' नामों से भी अभिहित होनेवाली यह देवी, पुरातन काल में लक्ष्मी देवी ही मानी जा रही थी। लेकिन तदनंतर काल में 'वकुळ माता' के नाम से प्रसिद्ध हो गई! असल में यह वकुळा देवी कौन है?

द्वापर युग में कृष्णावतार के समय, नवजात शिशु के समय से ही श्री कृष्ण को, यशोदा ने पाला पोसा! कन्हैया को आँखों का लाल मानकर, लाड प्यार से उसने बडा किया। कितने कितने राक्षसों का दमन कृष्ण के द्वारा होते हुए देखकर आनंदित होते हुए भी, यशोदा को उनके अवतार का रहस्य मालुम ही नहीं हुआ था! कृष्ण की सुरक्षा के लिए, हर पल वह तडप रही थी। लेकिन कंस राजा के वध के बाद कृष्ण अपने माता - पिता देवकी - वसुदेव के पास जा पहुँचा! उनके विवाहादि भी उनके ही पास संपन्न हुए। यशोदा मन ही मन चिंतित थी कि इतने सालों तक पाला पोसा, लेकिन अपने हाथों उसका विवाह तो कर नहीं पायी!'' इसे जानकर कृष्ण के कहा -'' माँ! तू चिंतित मत हो! तेरे बिना इस कृष्ण का अस्तित्व ही नहीं था न! हाँ! तेरी इस चिंता को भी मैं दूर करूँगा! मेरा विवाह भी तेरे ही हाथों होगा - लेकिन अगले जन्म में! कलियुग में तू योगिनी के रूप में वेंकटाचल के शिखरों पर जब रहती है, तब मैं श्रीनिवास के नाम से तेरे पास आऊँगा! द्वापर युग का तेरा कृष्ण, कलियुग में वेंकटाद्रि कृष्ण बनकर विख्यात हो जायेगा! तब मेरा विवाह तेरे ही हाथों, संपन्न होगा! मेरी सेवा का भाग्य फिर से तुझे प्राप्त होगा!''

हाँ, द्वापर युग के उस वरदान के प्रभाव से ही, यशोदा ''वकुळा देवी'' बनकर आयी है।

श्री महाविष्णु, श्रीनिवास के रूप में वेंकटाचल पर आकर श्री वराह स्वामी के सहारे वहीं पर निवास कर रहा था! तिरुमल गिरियों में ही रहती हुई, श्री वराह स्वामी की सेवाओं में मग्न वकुळा देवी को श्री वराह स्वामी ने आदेश दिया कि आगे तुम श्रीनिवास को खिलाती पिलाती,

रहो!'' इस तरह श्री वराह स्वामी के आदेशानुसार श्री श्रीनिवास की सेवा में वकुला माता लग गयी! उन पहाडों में जो बाजरा, चावल मिलता था, उससे अन्न बनाती थी तथा उसे शहद में मिलाकर श्रीनिवास को खिलाती थी!

इसके बाद आकाशराजू नामक महाराजा की पुत्री पद्मावती का श्रीनिवास जी के साथ विवाह रचाने में वकुळा माता का उत्तरदायित्व आधिक था। तदनंतर भी जीवन भर, उन्हीं की सेवा में उसने जीवन बिता दिया। अब भी श्रीनिवास जी की पाकशाला की निगरानी करती हुई - उनके लिए तैयार हो रहे पकवानों के स्वादिष्ट बनाने में लगी ही रहती है।

द्वापर युग में यशोदा देवी ने खूब मक्खन और मलई युत दही का खाना जो खिलाया था, उसके स्वाद को तो अभी तक भुला नहीं पाने के कारण, इस कलियुग में भी उसी के हाथ का खाना खा रहा है - यह वेंकट कृष्ण! हर दिन खपडे में 'मात्रा' नामक दद्योजन (दही का खाना) को प्यार से खाते हुए, अपनी द्वापर युग की माँ यशोदा का स्मरण करता है तथा कृष्ण की लीलाओं की याद हमें दिलाता है।

पाकशाला की इस स्त्री मूर्ति को 'माडपलिल' (मढप्पलि्ल) नाच्चियार तथा 'माडपुलि नाच्चियार' भी कहते हैं। 'पचन लक्ष्मी' 'पाचक लक्ष्मी' नामों से भी ये अभिहित होती हैं।

इतने सारे नामों से जानी जानेवाली इस वकुळमालिका की मूर्ति को, श्री वेंकटेश्वर की पत्नी ''श्री महालक्ष्मी'' भी कुछ लोग कहते हैं। 'पदकवितापितामह' उपाधि से विख्यात अन्नमय्या ने आठ साल की उम्र

में पहली बार इस मंदिर में भगवान वेंकटेश्वर जी के दिव्य दर्शनानंतर 'विमान परिक्रमा' करते हुए कहा -

''श्रीनिवास को नमस्कार मैं ने किया,
भाष्यकारों का कीर्तिगान किया,
श्री नरसिंह की सेवा की,
दानवांतक जनार्दन की सन्नुति की,
अलमेलूमंगा को वंदन किया
सामने की यागशाला की प्रशंसा की''

इस देवता को भी अलमेल्मंगा की ही तरह (महालक्ष्मी) चार भुजायें हैं। ऊपरी भुजाओं में कमल हैं तो नीचे दायें हाथ में 'अभय मुद्रा' तथा बायें हाथ में 'वरद मुद्रा' हैं। इस माँ को भक्ति से प्राणाम कर लें!

वंदे जगन्मातरम्! वंदे जगन्मातरम्!
गोविन्द गोविन्द गोविन्द!

इस वकुळमाता को भी तीनों पहरों में नैवेद्य समर्पित होते हैं। इनके अलावा, हर रात 'एकांत सेवा' के समय ''माँ देवी की खीर'' नामक प्रसाद पाकशाला की अधिष्टात्री इस देवी को समर्पित किया जाता है। उस समय पहले मूल विराट मूर्ति के चरणों पर जो फूलमाला (तिरुवडि पूरम) विराजित रहती है, उसे वकुळामाता को समर्पित करते हैं। तदनन्तर खीर को समर्पित कर आरती उतारते हैं।

हर शुक्रवार के दिन वकुळा माता को अभिषेक तथा अर्चना भी संपन्न होते हैं।

श्रावण के महीने में 'वरलक्ष्मी व्रत' के दिन, मकर संक्रांति के बाद कनुमा के दिन संपन्न, 'गोदा परिणयोत्सव' के दिन भी पंचामृत स्नपन, तिरुमंजनादि सेवायें वैभव से संपन्न होती हैं।

इस तरह श्री वेंकटेश्वर जी की निरंतर सेवा में निमग्न होती हुई स्वादिष्ट पकवानों को बनवाकर उन्हें श्री वेंकटेश्वर को खिलाती रहती है - यह वकुळा माता! उनके भुक्त शेषों को (खाने के बाद बचे हुए पदार्थ) हमें भी खिलाती है यह माँ! इस तरह उस नित्य कल्याण चक्रवर्ती की दया को हम तक पहुँचाने वाली मायी 'वकुळादेवी' को भी साक्षात् महालक्ष्मी के रूप में ही स्तुति कर वंदन समर्पित करेंगे।

''नित्यमुक्ता! दोषदूरा! त्वदूनाधिकसद्गुणा!
त्वत्पादपूजने नित्यं बद्धकंकणभूषिता!
पद्मालंकृतपाणिपल्लवयुगाम् पद्मासनस्थां श्रियम्
वात्सल्यादिगुणोज्जूलां भगवतीं वंदे जगन्मातरम्'' -

हे सप्तगिरीश स्वामी! गोविन्द! गोविन्द!

46. सुवर्ण कुआँ

प्रधान पाकशाला के सामने जो कूआँ है, इसे ही 'स्वर्ण कूआँ' कहते हैं। मूल विराट मूर्ति के भव्य दर्शन के बाद बाहर आते ही दिखाई देनेवाला यह कूआँ, पाकशाला की सीढ़ियों के समीप में ही है। इस कुएँ के चारों तरफ, पत्थरों से ओट का निर्माण हुआ है देखिए और इस ओट को, सोने के पानी से विलेपित ताम्र फलकों से सुसाज्जित किया गया है। इसी कारण इसे ''सुवर्ण कुआँ' कहा जा रहा है। 'श्रीतीर्थ'' तथा 'सुंदरस्वामी कुआँ' भी इसे ही कहते हैं।

श्रीदेवी तथा भूदेवी के साथ जब श्री वेंकटेश्वर इस तिरुमल पर लीलामानुष अवतार में निवास करने आये थे, कहा जाता है कि उस समय महालक्ष्मी ने रसोई के लिए इस कुएँ को बनाया था। इसी कारण इस कुएँ को 'श्री तीर्थ' या 'लक्ष्मी तीर्थ' भी कहा जा रहा है। इसी तरह 'भूदेवी' ने भी एक तीर्थ को बनाया और वह ''भूदेवी तीर्थ'' के नाम से सुप्रसिद्ध हुआ। कालान्तर में ये दोनों तीर्थ, अदृश्य हो गये।

तदन्नतर काल में श्री वेंकटेश्वर स्वामी की, वैखानस आगमानुसार पूजा, अर्चना करते रहे गोपीनाथ नाम अर्चक स्वामी की सहायता के लिए रंगदास नामक सेवक तिरुमल पर आया। भगवान तिरुमलेश की आराधना और पुष्पालंकार के लिए उसने दो कूओं को खोदा तो उसी स्थल पर फिर से 'श्री तीर्थ' और 'भूतीर्थ' दोनों प्रकट हो गये। कुछ दिनों बाद रंगदास के देहांत के बाद फिर से दोनों तीर्थ लुप्त हो गये!

रंगदास की इस पुष्पालंकार सेवा के कारण, तोंडमान चक्रवर्ती के रूप में उसने फिर से जन्म लिया और स्वामी तिरुमलेश के चरण कमलों के पास पहुँच गया। इस जन्म में भी कई रीतियों में तोंडमान राजा, भगवान वेंकटेश की सेवायें करता रहा। श्री वेंकटेश्वर स्वामी ने एक बार उसे, उसके पुराने जन्मों का भेद समझाकर कहा कि मेरे यहाँ रहने के लिए एक मंदिर का निर्माण कर उस पर एक सुवर्ण गोपुर (विमान) की भी व्यवस्था करो। स्वामी ने उसे यह भी आज्ञा दी कि मंदिर के परिसर में जिन दोनों तीर्थों का निर्माण उसने अपने पिछले जन्म में किया था, उनका पुनरुद्धार करें। अपने पूर्व जन्म की गाथा को सुनकर तोंडमान आश्चर्य चकित हो गया तथा भगवान के आदेशानुसार ''श्रीतीर्थ'' का उद्धार कर, चारों तरफ, सोने के पानी से लेपित ताम्र फलकों की

व्यवस्था की। तभी से वह ''सुवर्ण कुआँ'' कहा जाने लगा। इसी तरीके से ''भूतीर्थ'' का भी पुनरुद्धार कर, अन्दर की तरफ सीढ़ियों का निर्माण भी किया जिसे 'फूलों का कुआँ' कहा जा रहा है। (चंपक परिक्रमा में स्थित इस फूलों के कुएँ के बारे में हमने इतःपूर्व ही जानकारी प्राप्त की।)

श्री तिर्थ (सुवर्ण कुआँ) का पानी, प्रधान पाकशाला के लिए तथा स्वामी की आराधना के लिए प्रमुखतया उपयुक्त हो रहा है।

तिरुमल श्री वेंकटेश्वर स्वामी की मूल विराट मूर्ति का अभिषेक, हर शुक्रवार के दिन, भव्य रीति में, सदियों से संपन्न होता आ रहा है। सन 11 वी सदी में इस अभिषेक के लिए आवश्यक पानी को तिरुमलनंबी जी 'पापविनाशनम्' तीर्थ से लाया करते थे जो भगवद्रामानुज के गुरु एवं मातुल भी थे। एक बार तिरुमल नंबी (तिरुमल ताताचार्युलु इनका असली नाम था) के गुरु यामुनाचार्य जी तिरुमल आकर वेंकटेश्वर स्वामी के दर्शन किये! उस समय, निर्विराम वर्षा हो रही थी। तिरुमलनंबी को इस भारी वर्षा में 'पापविनाशनम्' तीर्थ से अभिषेक के लिए पवित्र जल को ले आने में बाधा पहुँची! इस स्थिति को देखकर तिरुमल नंबी के गुरु यामुनाचार्य जी ने श्रीमहालक्ष्मी से प्रार्थना की कि हे माँ! बाहर के सभी तीर्थों में से तुम्हारे इस तीर्थ का पवित्र जल ही श्रीनिवास के अभिषेक के लिए सर्वोत्तम है। इसीलिए तुम्हारे श्रीतीर्थ के जल को ही अभिषेक के लिए योग्य तथा हमेशा उपलब्ध कराओ ताकि श्रीनिवास स्वामी के अभिषेक में कोई बाधा न हो।'' इतना ही नहीं, उन्होंने यह भी कहा कि यहाँ सुवर्ण कुआँ साक्षात् भगवान का ही अवतार होने के कारण इसे 'सुंदर स्वामी का कूप' का नाम अधिक उपयुक्त है। इस कुएँ को तमिल में ''अळगप्पिनार किरणु'' कहते हैं।

बाद में भगवद्रामानुज जी ने अपनी तिरुमल यात्रा में इस वृत्तांत को सानंद सुना और एक नियम भी बनाकर कहा कि श्री वेंकटेश्वर स्वामी की दिव्य मूल विराणमूर्ति के शुक्रवाराभिषेक के लिए, तथा हर दिन संपन्न भोग श्रीनिवास के अभिषेक के लिए भी, पापविनाशनम् तीर्थ या गुरु तिरुमल नंबी को श्रीनिवास जी के दिये आदेशानुसार आकाश गंगा तीर्थ या परम गुरु यामुनाचार्य के निर्णयानुसार 'श्री तीर्थ' नामक सुवर्ण कुएँ का जल मात्र ही उपयुक्त हैं!''

तब से लेकर इस सुवर्ण कुएँ का पवित्र जल, मूल विराट मूर्ति की पूजा - अर्चना में, तथा श्रीनिवास जी की प्रधान पाकशाला के रसोई में उपयोग में लाया जा रहा है तथा स्मरण या दर्शन मात्र से भक्तों को पुनीत कर रहा है।

पुराने जमाने में इस सुवर्ण कुएँ से खींचे हुए पानी को 15 फुट की ऊँचाई में निर्मित पत्थर की नहर के द्वारा पाकशाला के हौज (कुण्ड) में पहुँचाया करते थे। इतिहासकारों के कथन में, विजयनगर राजाओं के जमाने में हंपी नगर में प्रचलित पानी को मुहैया कराने के तरीके से, यह व्यवस्था मिलती झुलती है। करीब 30 साल पहले तक भी, पाकशाला के रसोइये, कुएँ के पानी को मिट्टी के घडों में से ही खींचकर इस नहर के द्वारा ही पाकशाला में पहुँचाते थे। लेकिन दिन ब दिन बढती रही सेवायें और प्रसादों को दृष्टि में रखते हुए, बिजली के द्वारा आज कल, इस कुएँ के पानी को पाकशाला तक पहुँचाया जा रहा है।

इतना उन्नत इतिहास है इस कुएँ का! श्रीदेवी, भूदेवी, तोंडमान राजा (रंगदास) यामुनाचार्य जी, श्री वेंकटेश्वर जी से ही दादा कहलाने

का भाग्य प्राप्त किये हुए तिरुमलनंबी, भगवद्रामानुज आदियों का स्मरण दिलानेवाला यह सुंदर स्वामि कूप अत्यंत पवित्र भी है न! इसे नमस्कार समर्पित करते हुए भगवान बालाजी के जय जयकार करेंगे!

भक्त वत्सल बालाजी की जय हो!
गोविन्द गोविन्द गोविन्द!

47. अंकुरार्पण मंडप

हाँ। देखिए! भगवान बालाजी की पाकशाला के सामने, सुवर्ण कुएँ की दक्षिण दिशा में स्थित इस मंडप को ही ''अंकुरार्पण मंडप कहते हैं।''

हर साल तिरुमल पर दस दिनों के लिए संपन्न होनेवाले ब्रह्मोत्सवों के प्रारंभ होने से पहले अंकुरार्पण का उत्सव यहाँ पर होता है। इसे ही 'बीजावापम्' भी कहते हैं। नव धान्यों के बीजों को बोकर, उन्हें अंकुरित कराने की क्रिया को ही अंकुरार्पण कहते हैं जो हरेक शुभ अवसर या उत्सव के प्रारंभ में की जानेवाली वैदिक प्रक्रिया है।

ब्रह्मोत्सवों में सुवर्ण ध्वज स्तंभ पर ध्वजारोहण के पहले दिन सायंवेला में श्री वेंकटेश्वर स्वामी के सेनाधिपती श्री विष्वकसेन जी के नेतृत्व में इस मंडप में अंकुरार्पण का उत्सव होता है। पहले स्वर्ण द्वार के अंदर, श्रीराम जी के महल में स्थित विष्वकसेन, गरुड, अनंत जी की पंचलोह मूर्तियों को इस मंडप में लाया जाता है। तदनंतर विष्वकसेन जी की देख - रेख में मृत्तिका संचयन यात्रा होती है। श्री विष्वकसेन, सुदर्शन अनंत, गरुडादियों के साथ मंदिर की नैऋति दिशा में स्थित वसंतोत्सव मंडप में पहुँच जते हैं। छत्र, चामर, मंगल वाद्यों के साथ उनकी शोभा यात्रा वसंतोत्सव मंडप में पहुँच जाने के बाद, वहाँ मृत्तिका का संचयन

होता है। पहले वेदोक्त रीति में कुदाली आदि आयुधों तथा बाँबी की पूजा हो जाने के बाद बाँबी की मिट्टी का संचयन होता है। उस मृत्तिका के साथ फिर से विष्वकसेन जी महा परिक्रमा के मार्ग में से मंदिर में प्रवेश करने से यह शोभा यात्रा संपन्न होती है। तदनंतर इस अंकुरार्पण मंडप में, वैखानस आगमोक्त रीति में नवधान्यों का अंकुरार्पण होता है। इस कार्यक्रम के बाद, ब्रह्मोत्सवों के दसों दिन, अनंत, गरुड, तथा विष्वकसेनजी इसी ''अंकुरार्पण मंडप'' में ही रहते हैं।

ब्रह्मोत्सवों के अलावा वर्ष के ज्येष्ट मास में, तीन दिनों के लिए जो ज्येष्टाभिषेक होता है, उसके पहले भी मृत्तिका का संचयन श्री विष्वक् सेन जी के नेतृत्व में होता है। श्रावण महीने की पूर्णिमा के पहले के तीन दिन संपन्न होनेवाले पवित्रोत्सवों, कार्तिक महीने में श्रवण नक्षत्र के दिन संपन्न होनेवाले पुष्प यागोत्सवों के समय में भी श्री विष्वक सेन जी ही मृत्तिका का संचयन करते हैं तथा, तदनंकर नवधान्यों का अंकुरार्पण भी इसी अंकुरार्पण मंडप में होता है।

आजकल स्वर्णद्वार के अंदर राम जी के महल में से अनंत, विष्वक्सेन, गरुड आदि नित्यसूर भक्तों की उत्सव मूर्तियों, तथा श्री राम के परिवार में से सुग्रीव, अंगद, हनुमानादियों की उत्सव मूर्तियों को इसी अंकुरार्पण मंडप में ही भक्तों के दर्शनार्थ रखे हैं। हर पल श्री वेंकटरमण की सेवा मे ही लगे रहे इन देवताओं की सन्निधि में ही, श्री तिरुमलेश के अर्चक, यात्रियों को, तीर्थ तथा आशीर्वाद दे रहे हैं। हम भी उन्हें गोविन्द के स्मरण के साथ स्वीकारेंगे!

गोविन्द गोविन्द गोविन्द!

48. यागशाला

अंकुरार्पण मंडप से लगकर जो यह मंडप है यही - तिरुमलेश की याग शाला है माने याग तथा होमों का निर्वाह, यहीं पर होता है। पहले तो यहीं पर वैदिक कार्यक्रमों के याग तथा होमादि संपन्न होते थे। आज कल सिर्फ ब्रह्मोत्सवों में ही इस याग शाला में होमों का निर्वाह हो रहा है। आज कल तिरुमलेश के ज्येष्टाभिषेक, पवित्रोत्सव, पुष्पयाग आदि वार्षिकोत्सवों में, हर सोमवार सुबह की विशेष पूजा में तथा हर दिन के नित्य कल्याणोत्सव में भी, उन उत्सवों से संबंधित याग या होमादि, चंपक परिक्रमा में स्थित कल्याण मंडप में ही संपन्न हो रहे हैं। हर बुधवार के दिन सुबह, स्वर्ण द्वार के सामने ही 'होम वेदिका' की स्थापना कर, वहीं पर सहस्त्र कलशाभिषेक याग का निर्वाह होता है।

यज्ञो यज्ञपतिर्यज्वा यज्ञांगो यज्ञवाहनः
यज्ञभृद्यज्ञकृत् यज्ञी यज्ञभुग्यज्ञसाधनः
यज्ञांतकृद्यज्ञगुह्यमन्न मन्नाद एव च'' -

विष्णुसहस्रनाम स्तोत्र में श्री महाविष्णु यज्ञ के रूप में ही कीर्तित हैं। भृगु महामुनि आदियों के यज्ञ के कारण ही इस कलियुग में भूलोक वैकुंठ नाम से विख्यात इस तिरुमल पर श्री महाविष्णु, श्री वेंकटेश्वर के रूप में आकर बस गये हैं। उस श्रियःपति की 'हृदय वासिनी' श्री अलमेल्मंगा भी इन्ही वेंकटाचल पर्वतों में स्थित 'नारायण वन' में आकाश राजा की यज्ञ भूमि में अवतरित हुई तथा आनंद निलय वासी की अर्धांगिनी बनी! श्री वेंकटेश्वर जी, अपने भक्तों की मनोवांछाओं की पूर्ति करते हुए, वैभवों की वर्षा कर रहे हैं।

तिरुमलेश स्वयं यज्ञ हैं। यज्ञपुरुष हैं। यज्ञ द्रव्य हैं। ऋत्विक भी वे ही हैं। यज्ञ के कारण ही अवतरित वेंकटाचलपति, अलमेल्मंगापति, श्रीनिवास का कीर्तिगान, सहस्र नामार्चन में हर दिन होता है।

ओम् यज्ञाय नमः
ओम् यज्ञविभावनाय नमः
ओम् यज्ञीयोर्वीसमुद्धर्त्रे नमः

भगवान तिरुमलेश के मंदिर के परिसर में स्थित इस यज्ञशाला के पास, श्री पद्मावती श्रीनिवास भगवान के अवतार विशेषों की याद दिला रही इस पवित्र यज्ञशाला को, अनादि काल से लोक - कल्याण के लिए संपन्न हो रहे पवित्र यज्ञों को, तथा उन उन यज्ञों के निर्वाह में कर्ता, कर्म, क्रियादि स्वयं होते हुए, विद्यमान यज्ञ स्वरूप, भगवान सप्तगिरीश को भक्ति पूर्वक प्रणाम अर्पित करेंगे।

गोविन्द गोविन्द गोविन्द!

49. सिक्को का ''गिनती-केन्द्र'' (कल्याण मंडप)

भगवान तिरुमलेश की यागशाला की तरफ ही एक और विशाल मंडप है जो दूसरे प्राचीर से, अंदर से जुडा हुआ है।

तीन फुट की शिला वेदी पर 80 फुट लंबा तथा 36 फुट चौडा यह मंडप सन् 1586 में चेन्नप्पा नामक विजय नगर साम्राज्य के प्रतिनिधि द्वारा निर्मित कहा जाता है। अलग अलग किश्तों में बना इस मंडप में अत्यंत सुंदर शिल्पों से शोभित 29 काले शिला स्तंभ - विजयनगर शिल्प शैली के प्रतिबिंब लगते हैं। इतना ही नहीं, विजय नगर राजाओं की

त्यागमयता तथा तिरुमलेश के प्रति उनकी भक्ति तत्परता का भी यह मंडप प्रतीक है।

इस मंडप के खंभों पर स्थित उग्र नरसिंह स्वामी, त्रिविक्रम हयग्रीव, सहस्त्रबाहु सुदर्शन चक्र स्वामी आदि शिल्प, अत्यंत बारीक कुशलता को प्रदर्शित कर रहे हैं तथा चंपक परिक्रमा में जो 'तिरुमलराय मंडप' है उसका स्मरण दिला रहे हैं न?

इसी मंडप में पश्चिम दिशा की ओर, बीच में, 9 फुट की एक चतुर्भुजाकार कल्याण वेदी है देखिए।

करीब पचास साल पहले तक भी, श्री वेंकटेश्वर स्वामी के नित्य कल्याणोत्सव इसी मंडप में संपन्न होते थे! दिन ब दिन यात्रियों की संख्या बढ़ती जाने के कारण, ये नित्य कल्याणोत्सव कुछ सालों तक, रंगनायक मंडप में किये जा रहे थे। जगह की कमी के कारण करीब बीस सालों से चंपक परिक्रमा में खास कर निर्मित ''श्री वेंकट रमण स्वामी कल्याण मंडप'' में ही हर दिन संपन्न होनेवाले नित्य कल्याणोत्सव, भक्तों की मनोकामनाओं की पूर्ति कर रहे हैं।

इतःपूर्व ब्रह्मोत्सवों के दसों दिन भी, श्री मलयप्पा स्वामी, अपनी दोनों पत्नियों के साथ इसी मंडप में दीवाली तक रह जाते थे। धनुर्मास के अध्ययनोत्सव में भी 25 दिन का आस्थान इसी मंडप में हुआ करता था। उन दिनों में इसी कल्याण मंडप के छोटे मंदिर में उत्सव मूर्तियों को संभालके सुरक्षित रखते थे।

अब इस कल्याण मंडप में हर दिन सुबह 6 बजे से शाम छे बजे तक यहाँ पर हुण्डी के द्वारा आये हुए सिक्कों की गिनती होती है।

दूर दूर से आये हुए भक्त, श्रीनिवास स्वामी को मन्नत या उपहारों के रूप में समर्पित किये गए सिक्कों को विभाजित कर उनकी गिनती करने की विधा को 'परकामणि' कहा जाता है। इस पवित्र कार्यक्रम को भक्त भी, इस मंडप के चारों तरफ लगायी गयी लोहे की जाली के द्वारा देख सकते हैं।

हाँ! इस तरफ देखिए। 25 पैसों के सिक्के! उस तरफ हैं 50 पैसों के सिक्के! इस कोने में एक रूपये के सिक्के! हाँ उस तरफ देखिए! कितने पुराने सिक्के हैं न? हाँ! ताँबे के भी सिक्के हैं न? एक आना! चार आना! अठन्नी! अब अमल में जो सिक्के हैं वे भी हैं तथा, पुरातन सिक्के भी यहाँ हमें दर्शन दे रहे हैं न?

हाँ! सब जगहों पर व्याप्त श्री महालक्ष्मी का वैभव ही है - इन सिक्कों का यह विलास! इतने बडे पैमाने पर अन्य किसी और जगह पर दिखाई नहीं देनेवाला वैभव है यह!

पता नहीं, इन्हें किन भक्तों ने, क्यों, कितने सिक्कों को समर्पित किये होंगे? इसमें मूल धन कितना होगा तथा ब्याज कितना होगा? अगर मालुम है तो सिर्फ उस ब्याज के पैसे वसूल करनेवाले स्वामी को ही मालुम - होगा! ब्याज पर ब्याज भी इस हाथ से लेता है और वरदान भी उस हाथ देता भी है न?

भक्तों से सिक्के लेकर उनके दुखों को दूर करनेवाला उस तिरुमलेश का कीर्तिगान क्यों न करें?

ब्याज के पैसेवाला! गोविन्द!
गोविन्द गोविन्द गोविन्द!

इसी कल्याण मंडप के यहाँ से हर शुक्रवार के दिन सुबह चार बजे श्रीनिवास जी की मूल विराट मूर्ति के अभिषेक के लिए, रेशमी कपडे, पूर्ण कुंभ, सुरभिल द्रव्यों के साथ मंदिर के अधिकारी, जिय्यंगार जी, एकांगी, अर्चक स्वामी तथा भक्त जन, छत्र, चामर, मंगल वाद्यादि राजोचित गौरवों के साथ निकलते हैं तथा विमान परिक्रमा के बाद चाँदी के द्वार के बाहर ध्वज स्तंभ की परिक्रमा भी कर फिर से तिरुलमेश की सन्निधि में पहुँच जाते हैं।

इस तरह पुराने जमाने में, तिरुमलेश के कल्याणोत्सवों में तथा आज सिक्कों की गिनती में उपयुक्त होते हुए शुक्रवाराभिषेक में भी भाग ले रहा है यह मंडप! तिुरमेलेश स्वामी के महान भक्त विजय नगर राजाओं द्वारा निर्मित इस मंडप के पास खडे होकर उस श्रीनिवास का जय जयकार करेंगे!

जय जय गोविन्द!
जयहो गोविन्द!

50. नोटों का गिनती केन्द्र

इसी विमान परिक्रमा के मार्ग में ही पश्चिम की ओर माने आनंद निलय के ठीक पीछे की ओर 153 फुट के इस मंडप में अब नोटों की गिनती हो रही है।

50 वर्ष पहले उत्तर दक्षिण दिशाओं में व्याप्त इस मंडप का कई तरह उपयोग हुआ करता था। श्री वेंकटेश्वर स्वामी के लिए उपयोग में लायी जानेवाली गजदंत की पालकी, गज वाहन, गरुड, आदि शेष जैसे वाहन यहीं पर रखे जाते थे। इस विराट मूर्ति के लिए मुश्क तेल की

तैयारी भी इसी मंडप के एक कोने में होती थी। तिरुमलेश को समर्पित प्रसादों का वितरण भी होता था। अन्नमाचार्य की कथा में भी इन सबका वर्णन है।

कलूयाण मंडप को पार कर
अश्व वाहन को वंदन किया
स्वर्ण गरुड की तारीफ की
सामने खडे शेष जी को नमन किया
सुगंध परिमल को बिखेर रहे
मुश्क के गट्ठों को देखा
सोने की पतली सलाखों में चुभकर
मुश्क को निकालने की विधा को देखा

लेकिन दिन ब दिन बढ़ती रही भक्तों की संख्या के अनुसार अनेकानेक परिवर्तन आ गये हैं। स्थल, तथा समयों में भी बदलावट हुई है। आजकल इस लंबे मंडप में नोटों की गिनती हो रही है।

कई सालों से भगवान वेंकटेश की दीक्षा लेकर, मन्नतें माँगकर भक्ति तथा श्रद्धा से यात्रा करते हैं भक्त लोग! अपनी मन्नतों की पूर्ति पर, अपने उपहारों को हुँडी में समर्पित कर देते हैं। इस तरह हुँडी में समर्पित विविध उपहारों को कडी निगरानी में, अलग अलग विभागों में बाँटा जाता है तथा उनके मूलूयों को निर्धारित किया भी जाता है।

पुराने जमाने में विविध मूल्यों के सिक्के प्रचलित थे जैसे एक पैसा, दो पैसों का सिक्का, तीन पैसों का सिक्का, आना (छःपैसे) दो आने (12 पैसे) चार आने का सिक्का (25 पैसे) आधा रुपया (50 पैसे) एक रुपये

का सिक्का (100 पैसे) इस तरह विविध मूल्यों के सिक्कों को अलग करने के स्थल तथा क्रम को 'परकामणि' कहते हैं। मणि माने मंडप है।

आजकल यहाँ नोटों की गिनती हो रही है। साक्षात् लक्ष्मी जी का ही रूप है स्वामी तिरुमलेश की यह हुंडी! इसमें से भक्तों के उपहारों को अत्यंत श्रद्धा एवं दीक्षा से अलग अलग विभागों में बाँट रहे कर्मचारियों को देखिए।

इस परकामणि कार्यक्रम को भक्त भी यहाँ पर व्यवस्थित शीशों की खिडकियों में से देख सकते हैं।

हाँ! इस तरफ देखिए! एक कर्मचारी सिर्फ सुवर्ण को ही अलग कर रहा है। इस राशि में कितने सारे मंगल सूत्र हैं। कितने सारे कर्णा भरण हैं। अंगूठियाँ हैं। चूडियाँ हैं। कमरबंद, नथनीयाँ, कंकण, कढ़ियाँ कितने सारे हैं देखिए! हाँ अब इस तरफ देखिए! चाँदी के बरतन! हार, पांजेब, घुंघुरु, चाँदी के झूले, चाँदी की गुडियाँ, आँख, पाँव, हाथ! चाँदी के घर के नमूने!

इस तरफ तो विविध मूल्यों के सिक्के भी हैं। विविध ऐतिहासिक विशेषताओं वाले सिक्के भी यहाँ पर हैं। हाँ! इन सबको सिक्कों की गिनती केन्द्र पर भेजते हैं जिसे हमने अभी अभी देखा है न!

इधर देखिए! नोटों की गिनती हो रही है। एक रुपया, दो रुपये, पाँच रुपये, दस, बीस, पचास, पाँच सौ! डालर, पौंड जैसे दूसरे देशों के भारतीयों द्वारा स्वामी तिरुमलेश को समर्पित रुपये!

अरे यहाँ देखिए! कपूर, सिगरेट, चाक्लेट, इत्र, लाटरी - टिकेट, आइनें, कंघी, स्नो, पाउडर, साबुन, दवाई, कपडे, साडी, मिस्री, चावल -

इस तरह की ये सारी चीजें भक्ति तथा विनय से तिरुमलेश को समर्पित हैं।

इस प्रदेश को देखते हुए आपको शायद लग रहा होगा मानो किसी अद्भुत लोक में विहार कर रहे हों! है न? यह कैसा वैभव है? कितना वैभव है?

जितने भी शख्स होते हैं, उतनी ही रुचियाँ होती है न! अलग अलग व्यक्तियों के अलग अलग विचार होते हैं। सभी विचारों तथा रुचियों के लिए अनुकूल देवता - हमारे सप्तगिरीश ही हैं। यहाँ पर आनेवाले भक्तों के प्रांत अलग हो, भाषा अलग हो, आचार व्यवहार अलग हो, भगवान बालाजी को कोई फरक नहीं पडता है। उनकी सारी मन्नतों को स्वीकारते हैं। उनकी इच्छाओं की पूर्ती करते हैं। मात्र मनुष्य ही नहीं। देवी देवताएँ भी स्वामी के दर्शन के लिए आते हैं। भगवान से प्रार्थना करते हैं अपनी इच्छाओं की पूर्ति करने की! भगवान को विविध भेंट भी चढ़ाते हैं। सभियों की भेंटों को स्वामी स्वीकारते हैं। सच कहा जाय तो इन मन्नतों के कारण ही स्वामी अपने भक्तों को पास बुला लेते हैं। इसी कारण 'मन्नतों के देवता' के नाम से वे प्रसिद्ध भी हैं। भक्तों की इन सारी भेंटों की राशी ही स्वामी की संपत्ति है।

इस सारी वस्तु - राशि का विभाग, दो या तीन वृन्दों में मंदिर के कर्मचारी करते हैं। एक वृन्द में, एक बार आया हुआ व्यक्ति उस दिन फिर से दुबारा नहीं आता है। गिनती करनेवाले कर्मचारी को अपनी घडियाँ, अंगूठी, गहने आदियों को छोडकर सिर्फ वस्त्रों को पहनकर आना होगा। गिनती के समय विविध ओहदों के अधिकारियों की कडी निगरानी रहती है। इसके अलावा ''वीडियो में चित्रीकरण'' भी चालू

रहता है। दर्शन के लिए आये हुए किन्हीं भी दो भक्तों को भी इस पूरे कार्यक्रम में गवाह के रूप में बिठाते हैं। पूरी गिनती के बाद उन दोनों यात्रियों को अलग से भगवान वेंकटेश के दर्शन करवाकर प्रसाद भी देते हैं। इस तरह हर दिन हर दफे में दो दो भक्तों को नोटों की गिनती को परखने का भाग्य प्राप्त होता है। अंत में वे दोनों यात्री गवाह के रूप में हस्ताक्षर भी करते हैं। इस तरह कडी निगरानी में हर दिन यहाँ पर गिनती संपन्न होकर, शाम तक पिछले दिन की आमदनी का हिसाब - किताब लगाया जाता है।

किसी भक्तिन के सौभाग्य को बचाया है स्वामी ने। उसने अपना मंगल सूत्र स्वामी को समर्पित किया है! स्वामी तिरुमलेश ने शायद उसकी सभी विपदाओं को दूर कर दिया है। इसीलिए किसी भक्तिन ने अपने सारे गहनों को स्वामी को समर्पित कर दिया है! इस चाँदी के झूले को देखिए। संतान प्राप्ति की मनोकामना की पूर्ति के बदले, किसी दंपति ने स्वामी को इसे समर्पित किया।

तिरुमलेश भक्तों की - सिगरेट, गुटका, लाटरी, शराब आदि बुरी आदतों को भी दूर करते हैं। इसके साक्षी हैं - हुँडी में डाले गये सिगेरट, गुटका आदि!

भक्तों के रोगों की चिकित्सा करनेवाले - अद्भुत वैद्य हैं - हमारे यह स्वामी! घर बनाकर दिये हैं स्वामी! इसी कारण घर का चाँदी का नमूना किसी ने इन्हें समर्पित किया है। ब्याज के साथ असल को भी किसी भक्त ने हुंडी में दाल दिया है!

परकामणि तो अनगिनत भक्तों की त्यागशीलता तथा भगवान वेंकटेश की भक्त - प्रियता का प्रतीक सा लग रहा है। इसीलिए कहा

जाता है कि स्वामी तिरुमलेश को एक बार आर्त मन से पुकारेगें तो झट सामने प्रत्यक्ष हो जाते हैं। कल्याण कराते हैं। संतति का भाग्य देते हैं। घर बनाकर देते हैं। चिकित्सक भी बनते हैं। विविध शुभ कार्यों को करवा देते हैं। नौकरी दिलाते हैं। सभी इच्छाओं की पूर्ति करनेवाले देवता हैं।

हाँ! श्रीनिवास जी का आश्रित पक्षपात, वात्सल्य तथा अनुग्रह का साक्षी, इस परकामणि के पास, भक्तों के द्वारा समर्पित श्री महालक्ष्मी का स्वरूप इस वस्तुओं की राशि को भक्ति से प्रणाम समर्पित करेंगे तथा उस तिरुमलेश के स्मरण में उनका कीर्तिगान करेंगे!

श्री लक्ष्मी वेंकट रमणा! गोविन्द! गोविन्द!

51. चन्दन-घर

विमान परिक्रमा के मार्ग में ही नोटों की गिनती के केन्द्र की उत्तर दिशा से लगकर वायव्य कोने में एक कमरा है। लोहे की छडियों के दखाजों से पूर्वाभिमुख होता हुआ यही कमरा - चन्दन का घर कहलाता है। यहीं पर चन्दन को बनाने के लिए उपयुक्त बडे बडे सान के पत्थर रखे हुए हैं। बडी बडी चक्कियों की तरह दिखाई देनेवाले इन सानों पर गंध की लकडियों को जल्दी जल्दी घिसते हुए चंदन लेप को जो तैयार करते हैं, उन्हें चन्दन पाणि कहते हैं। चंदन के साथ यहाँ पर हल्दी के कौर भी तैयार किये जोते हैं।

यहाँ तैयार होनेवाले चंदन और हल्दी के कौरों का उपयोग, हर दिन 'रंगनायक मंडप' में संपन्न' आर्जित वसंतोत्सव में, श्रीदेवी भूदेवी सहित श्री मलयप्पा स्वामी के 'स्नपन तिरुमंजन' में किया जाता है।

हर दिन रात एकांत सेवा के समय यहाँ पर तैयार हुए चंदन के दो कौरों में से एक को श्री वेंकटेश्वर की मूल मूर्ति के चरण कमलों के पास रखते हैं। दूसरे कौर के आधे भाग को शयन मंडप में स्वर्ण शय्या पर लेटे हुए भोग श्रीनिवास मूर्ति के वक्षःस्थल पर रखा जाता है। बचे हुए आधे भाग में से 1/4 भाग को मूल विराट मूर्ति पर स्थित ''वक्षःस्थल महालक्ष्मी'' को समर्पित करते हैं। बाकी 1/4 भाग को मूल विराट मूर्ति के सामने खी सुवर्ण थाली में देर रात दर्शन के लिए आनेवाले देवताओं की पूजा अर्चना के लिए रख देते हैं। इसी तरह एक सुवर्ण पात्र में, पवित्र जल को भी रखते हैं। अगली सुबह, सुप्रभात के बाद, भक्तों को यही चंदन तथा तीर्थ प्रसाद के रूप में दिये जाते हैं।

हर शुक्रवार प्रातःकाल वेला में संपन्न होनेवाले शुक्रवाराभिषेक में भी यहीं पर चंदन, भीमसेनी कपूर तथा केसर को मिलाकर तैयार किया गया 'परिमल' नामक मिश्रण का उपयोग होता है। मूल विराट मूर्ति को सिर से पाँव तक इस परिमल का उबटन लगाया जाता है जिसे 'उद्वर्तनम्' कहते हैं। इसे ही 'पुलिकापु' भी कहते हैं।

यहीं पर तैयार होनेवाला चंदन तथा हल्दी का उपयेग, हर सोमवार की सुबह श्रीदेवी भूदवी सहित मलयप्पा की विशेष पूजा में, हर बुधवार श्री भोग श्रीनिवास मूर्ति की पूजा में - तथा श्रीदेवी भूदेवी सहित मलयप्पा स्वामी एवं श्री विष्वकसेन के सहस्र कलशाभिषेक में भी किया जाता है।

हर चैत्र महीने में वसंतोत्सव मंडप में संपन्न होनेवाले वसंतोत्सव में श्री भूदेवियों सहित श्री मलयप्पा, श्री सीता राम लक्ष्मण तथा श्री

रुक्मिणी कृष्ण को भी यहीं पर तैयार होनेवाले चंदन हल्दी से पूजा जाता है।

हर ज्येष्ठ महीने की पूर्णिमा के संदर्भ में तीन दिनों तक जो श्री मलयप्पा स्वामी का 'अभिद्येक अभिषेक' (जिसे ज्योष्टाभिषेक भी कहते हैं) होता है, उसमें भी यहाँ के चंदन और हल्दी का उपयोग किया जाता है। इसके अलावा, हर श्रावण पौर्णिमा, के तीन दिनों के पवित्रोत्सवों में, ब्रह्मोत्सवों के स्नपन तिरुमंजनादियों में, ब्रह्मोत्सवों के बाद कार्तिक महीने के श्रवण नक्षत्र के दिन संपन्न होनेवाले पुष्प याग के स्नपन तिरुमंजन में, अभिषेकादियों में भी इस सुगंध पूरित श्री चंदन तथा हल्दी का उपयोग होता है।

इस तरह साल भर, तिरुमलेश के मंदिर में संपन्न होनेवाले स्नपन तिरुमंजनादियों में तथा अन्य उत्सवों में भी यहाँ पर तैयार होनेवाले सुगंध चंदन व हल्दी का ही उपयोग होता है।

इस तरह हर पल भगवान तिरुमलेश की सेवाओं उत्सवों में भाग लेनेवाला इस चंदन के घर को भक्ति से नमस्कार कर आगे बढ़ेंगे!

चंदन चर्चित गोविंद! नीलवर्ण गोविंद!
पीववसन गोविन्द! गोविन्द! गोविन्द!

52. आनंदनिलय विमान

वहाँ देखो! अखिलांड कोटि ब्रह्मांड नायक का स्वर्ण भवन! विमान परिक्रमा के मार्ग में जहाँ से भी देखों अति समीप में, सपष्टतया दिखाई देते हुए, आनंद को प्रदान करनेवाला यह सप्तगिरीश का स्वर्णमय शिखर! आनंद की जलधि में तैरने का सुख देगा यह विमान!

विमान परिक्रमा के मार्ग में पश्चिम की ओर से उत्तर की ओर मुडते ही ''विमान वेंकटेश्वर स्वामी का दर्शन' नामक फलक दिखाई दे रहा है न? उसके पास की वेदिका पर खडे होकर आनंद निलय का विमान तथा उस पर स्थित विमान वेंकटेश्वर स्वामी को आँखों भर देखिए!

सर ऊपर किजिये। दोनों हाथों को जोडिये! नमस्कार कीजिये। अलौकिक कांतियों से भक्तों को दिव्य अनुभूति प्रदान करनेवाला है यह शिखर! इस शिखर की विभा को देखिए!

कलियुग के देवता, आर्त भक्तों के स्वामी, भूलोक वैकुंठवासी के रूप में तिरुमल पर विद्यमान हैं हमारे वेंकटेश्वर जी! उनके वक्षःस्थल पर श्री महालक्ष्मी विराजित होने के कारण - वे श्रीनिवास हैं। स्वयंव्यक्त सालग्राम मूर्ति बन अवतरित होकर, युग युगों से पूजा अर्चनादियों को स्वीकारते, सब कों आनंदित कर रहे हैं - यहाँ बसकर! इसी कारण इनका निवास आनंद निलय है तथा - इनका नाम भी 'आनंद निलय वासी देवता' है। गर्भालय - आनंद निलय पर ही कोटि भानुओं की कांति समान का एक सुवर्ण गोपुर का निर्माण हुआ है जिसे 'आनंद निलय विमान' भी कहा जा रहा है।

'मान' माने मापना! विमान का अर्थ है मापने के लिए दुस्साध्य! आकाश में - उडते विमानों की तरह यह आनंद निलय विमान भी भूवैकुंठ इस तिरुमल से वैकुंठ को, पुनःवैकुंठ से भूमि तक उडते हुए जा आ सकता है। इसी कारण भी इसे 'विमान' कहते हैं।

वेंकटाचल की यात्रा का विचार ही आनंदप्रद है। यात्रा में सामने आनेवाले कष्टों को सहते हुए, सप्तगिरियों को चढ़कर श्री वेंकटरमण के

भव्य दर्शन को पाना दिव्यानंद है। उस तिरुमलेश का दर्शन तो सकल पापों को हर लेनेवाला है। कलियुग के दोषों का नाशक है। सकल मनोकामनाओं को प्रदान करनेवाला है। इस तरह भक्तों की सभी इच्छाओं की पूर्ति करने के साथ अंत में शाश्वत आनंद को भी प्रदान करने का संदेश देते हुए, इन ऊँची सप्तगिरियों पर से ब्रह्माण्ड भर में आध्यात्मिक स्वर्ण कांतियों को बिखेरनेवाला दिव्य तेजोकेन्द्र है - यह आनंद निलय विमान!

इसी कारण, श्री वेंकटेश्वर के नंदक खड्ग का अवतार - परम भक्त, 'पदकविता पितामह' उपाधि से कीर्तित अन्नमाचार्य के शब्दों में आनंद निलय की प्रस्तुति निम्नवत है।

''वेंकटेश के गिरि शिखर को
तनिक देखें तो ही
गौरवान्वित नित्यानंद पद तो भी
सामने प्रत्यक्ष हो जायेंगे ही'' -

सुवर्ण शिखर के दर्शन से सभी सुख सिद्ध हो जायेंगे। इतना ही नहीं

जो जो माँगें हैं भक्तों के
सौ सौ करके देते हुए
निकट आकर कृपा बरसाया
है विमान यह मुझ पर आज देखो''

जो भी हो वे नंदकांश में जन्में हैं न? इसी लिए अपने स्वामी की करुणा के बारे में अन्नमाचार्य के सिवा कोई और इतनी सुलभ शैली में बतायेगा कैसे? दूसरे स्थान पर वे यह भी कहते हैं कि आनंद निलय

विमान का यह स्थल, देवी देवताओं के लिए भी अमूल्य है। अखिल मुनियों से पूजित है। मन में स्मरण करने मात्र से सकल विभवों को प्रदान करनेवाला दिव्य धाम है। पावन से पावन है। उसे देखो! उसे नमस्कार करो! आनंदमय विमान ही भगवान वेंकटेश का स्वरूप है। बहु ब्रह्म मय है।'' कहते हुए भक्तों को उस विमान की ओर आकृष्ट करते हैं।

अनंत महिमा से संपन्न इस आनंद निलय विमान को पहले गरुड ने महाविष्णु के आदेश पर श्रीवैकुठं से लाया और इस वेंकटाचल क्षेत्र पर इसे प्रतिष्ठित किया।

विमानं कारयामास रत्नचित्रं महोन्नतम्
चतुर्मूर्तिसमोपेतम् वैनतेयविभूषितम्

गरुड द्वारा साक्षात् वैकुंठ से लाया गया यह आनंद निलय सब लोगों को दिखाई नहीं देता है मात्र परम भक्त, योगी, कामना रहति, उपासक, तथा देवताओं के! तरिगोंडा वेंगमांबा कहती हैं।

''वैकुंठ से विमान है यह आया
उत्तम भक्तों को ही है दिखता
अन्य समयों में है अंतर्हित रहता,
आनंद निलय में मूर्ति की तरह,
सामान्य भक्तों को है दिखता,
देवताओं को मात्र गोचर है रहता,
अपने भव्य रूप को यह देवता
मनुजों से मात्र बाह्य पूजा को लेता
देवताओं से गुप्त रीति में है पूजा लेता

अन्यों की इच्छाओं की पूर्ति करता
वरदान है सबको देता
(वेंकटाचलमाहात्म्य - तरिगोंडा वेंगमांबा)

उत्तम भक्त जब अपने दर्शन के लिए आते हैं तो मात्र उन्हीं को वैकुंठ से आये हुए इस विमान को स्वामी दिखाते हैं। बाकी समयों में उसे अंतर्निहित कर देते हैं। सामान्य मानवों को आनंद निलय वासी शिला मूर्ति के रूप में ही दिखाई देते हुए उन्हें भ्रम में डाल देते हैं। मानवों की पूजा अर्चना स्वीकारते हुए, गुप्त रीति में देवताओं से भी आराधित होते रहते हैं।

तिरुमल क्षेत्र में पुष्करिणी के तीरों पर विद्यमान आनंद निलय विमान को कई कई महर्षियों, योगियों और मुनियों सहित देवताओं ने भी देखा है। वामनपुराण में इस आनंद निलय का वर्णन कुछ इस प्रकार है।

ददृशुर्विमलं दिव्यं विमानं भास्करोपमम्
स्वामिपुष्करिणीतीरे दक्षिणे लोकविश्रुते
नारायणश्रितं दिव्यं नित्यं च महदद्भुतम्
पांडुराभ्रघनप्रख्यम् नानाश्रृंगैरलंकृतम्
अनेकरत्नसंछन्नं मुक्तादामविभूषितम्
भासयत्तेजसा सर्वा दिशो दश नराधिप!

*** * * * ***

मुनीन्द्रास्ते तु तद् दृष्ट्वा विमानं परमाद्भुतम्
अदृष्टपूर्वमन्यस्मिन् काले नरवरात्मज!

विमानमद्भुताकारं तं चापि पुरुषोत्तमम्
दृष्ट्वा तत् प्रोचुराश्चर्यं ते हर्षोत्फुल्ललोचनाः
विमानं पुण्यमाश्चर्यं ज्वलद्भास्करसन्निभम्
अस्या एव शुभे तीरे पुष्करिण्याः स्थितैरपि
अस्माभिः सहितैः सर्वैः सद्भिरत्रैव चादरात्
हरिणाध्रुवमेतत् स्यात् अनेनैव स्वमायया
अंतर्हितं कृतं दिव्यं विमानं सिद्धसेवितम्
एवंविधानि वाक्यानि मुनयस्ते परस्परम्
प्रोचुर्देवाधिदेवस्य सन्निधौ तस्य शार्ङ्गिणः

तिरु वेंकट क्षेत्र में पुष्करिणी के दक्षिण तटों पर सूर्यसम तेज से प्रकाशमान दिव्य विमान को मुनियों ने देखा! वह दिव्य विमान अत्यंत अद्भुत था। आश्चर्य जनक था। स्वच्छ कांति को बिखेरता जलद सा था! अनेकानेक शिखरों से अलंकृत वह विमान श्रीमन्नारायण का आवास बन सदा सर्वदा के लिए आलोकित हो गया।

वह दिव्य विमान अनेकानेक रत्नों से जडित था! मुक्ताहारों से शोभायमान था। दिव्य कांतियों से चमकता हुआ देखनेवालों को दिव्यानंद प्रदान कर रहा था।

लेकिन इतः पूर्व, इन गिरिशिखरों पर संचार कर रहे मुनियों या इन्द्रादि देवताओं को भी यह अद्भुत विमान दिखाई ही नहीं दिया था। अब अपने आँखों के सामने विद्यमान विमान में, पुरुषोत्तम भगवान का दर्शन कर, विभ्रम से विकसित नेत्रों वाले मुनिगण आपस में कुछ इस तरह बातचीत कर रहे थे - ''

''इस पुष्करिणी के तीरों पर, अग्नि की तरह, सूर्य की तरह प्रकाशमान इस अद्भुत विमान को हमने कभी देखा ही नहीं! लेकिन हाँ, हमारे साथ यहाँ पर संचार कर रहे सत्पुरुषों पर कृपा से आज भगवान अपनी माया से अंतर्हित रहे इस विमान के साथ आप भी हमें दर्शन दे रहे हैं। यह तो हमारा भाग्य विशेष ही है।'' वामन पुराणांतर्गत वेंकटाचल माहात्म्य में मुनियों की यह उत्तेजनापूरित बातचीत आनंद निलय के विमान के बारे में ही है।

वामन पुराण के अनुसार अब हम सबको दिखाई देनेवाले आनंद निलय विमान के स्थान ही में, श्रीवैकुंठ से लाया गया अद्भुत आनंद निलय विमान अंतर्हित होते हुए, मात्र सत्पुरुषों, भक्तों एवं महनीयात्माओं को दिखाई देता रहता है।

अब हम सबको दिखाई देनेवाले इस स्वर्ण विमान का निर्माण - श्री वेंकटेश्वर के आदेशानुसार तोंडमान चक्रवर्ती ने किया था!

श्रीनिवास भगवान और पद्मावती देवी के विवाह के बाद, कुछ समय के लिए अगस्त्य मुनि का आश्रम स्थान - श्रीनिवास मंगापुरम् में रहे। उसी समय पद्मावती देवी के पिताजी आकाशराज का स्वर्गवास हो गया। राज्य के लिए आकाश राज का भाई तोंडमान एवं आकाशराज का पुत्र वसुदान के बीच लडाई चिढ़ गई। पद्मावती की इच्छा के अनुसार श्री वेंकटेश्वर स्वामी वसुदान की तरफ से युद्ध करने लगे। लेकिन अपना परम भक्त तोंडमान राजा को अपने शंख चक्रों को स्वामी ने दे दिया। उस युद्ध में श्रीनिवास के मूर्छित हो जाने के कारण युद्ध स्थगित हो गया। आखिर राज्य को दो भागों में विभाजित कर दोनों में बाँट देने से युद्ध

की समप्ति भी हो गई। तब ब्रह्मादियों से श्रीनिवास ने कहा - ''कलियुग के मानव इसी तरह लोभी होकर अनेकानेक बुरे काम करने लगेंगे। आगे यहाँ पर रुकना अनुचित ही होगा।''

उस समय देवताओं ने कहा - 'हे स्वामी! श्रीनिवास जी! इस कलियुग में मानव बहुत ही कमजोर हैं। वे तो पत्यक्षतया श्रीवैकुंठ आकर आपको देख नहीं सकते हैं। वे बहुत ही अभागे हैं। कम से कम इनके लिए आप इस भूमंडल पर रुक जाहयें और ''कलौ वेंकटनायकः'' नामक उपाधि से प्रत्यक्ष देवता होते हुए यहीं रहते हुए इन सबकी रक्षा कीजिये।' ब्रह्मादि देवताओं के इस अनुरोध पर श्री वेंकटेश्वर भूलोक पर तो ठहर गये लेकिन एक शरत पर - 'मैं किसी से पत्यक्षतया बात नहीं करुँगा। दिखाई नहीं दूँगा। लेकिन सबों की इच्छाओं की पूर्ति तो करुँगा। तोंडमान! तुम तो मेरे निकट भक्त हो। इसी जन्म के नहीं। पिछले जन्मों में भी तू ने मेरी कितनी ही सेवा की है। अब भी तू मेरे लिए शास्त्रोक्त रीति में एक मंदिर बनाओ। उसके बीच सुवर्ण शिखरों से कांतिमय एक दिव्य विमान का निर्माण करो।''

तत आनंदनिलये तोंडमानृपनिर्मिते
विमानाग्र्ये श्रीनिवासो रराज भगवान् हरिः

श्रीनिवास के आदेशानुसार तोंडमान राजा ने एक महोन्नत, रत्न जडित, चतुर्मूति सहित, गरुडयुत, सुवर्ण कलशों से प्रकाशमान विमान का निर्माण किया। उस विमान के चारों तरफ तीन प्राचीरों के साथ, तीन परिक्रमा के मार्गों तथा उन मार्गों में मंडप, पाकशालाएँ, सुवर्ण कुआँ आदि तीर्थों का भी निर्माण किया। आनंद निलय विमान पर श्रीनिवास की मूर्ति की प्रतिष्ठा की और वही हैं ये - विमान वेंकटेश्वर स्वामी!

सुमुहूरत में वैखानस आगम के अनुसार, मंगल वाद्यों के बीच, वेद नादों की घोषणा में, सार्वभौमोचित छत्र, चामर आदि गौरवों के साथ, देवताओं की पुष्प - वर्षा में, परमशिव, ब्रह्मादि देवताओं की उपस्थिति में श्री पद्मावती के साथ श्रीनिवास जी ने तोंडमान राजा से निर्मित आनंद निलय में प्रवेश किया। सुवर्ण पद्म पीठिका पर कटि, वरद हस्तों के साथ आप खडे हो गये। अपनी इस विशेष हस्त मुद्राओं का अर्थ उन्होंने समझाया। कलियुग में अपने चरणों का प्रश्रय पाने के लिए आये हुए भक्तों की रक्षा को ही अपना लक्ष्य बनाने का विवरण भी उन्होंने दिया।

आनंद जनकत्वात्तम् आनंदनिलयं विदुः
वरपद्मासने सुस्थाम् विधाय कमलालयम्

साक्षात् भगवान ही स्वयं वेंकटेश्वर हैं। पद्मासनी श्री महालक्ष्मी ही वक्षःस्थल महालक्ष्मी है। इन दोनों का दिव्य स्थल है तिरुमल। इसी लिए इसके दर्शन से अद्भुत आनंद की प्राप्ति होती है। तथा यह क्षेत्र ''आनंद निलय'' के नाम से सुप्रसिद्ध हो गया।

आनंद निलय में इन दोनों के विद्यमान होने के शुभ संदर्भ में ब्रह्माजी ने कहा - ''हे स्वामिन्! श्रीनिवास! कृपया कलियुग के अंत तक आप सानंद इस धरा पर ही बस जाइये! अपना 'आनंद निलय वासी' नाम को सार्थक बनाइये। पूजा अर्चना स्वीकारिये।'' इतना ही नहीं, इसी शुभ मुहूर्त पर, ब्रह्मा जी ने आनंद निलय में दो अखंड ज्योतियों को प्रकाशित किया और कहा - ''कलियुगांत तक ये दोनों ज्योतियाँ जलती रहेंगी। जब ये दोनों बुझ जायेंगी तब यह आनंद निलय शिथिल हो जायेगा। उस समय भगवान (श्री वेंकटेश्वर जी) पुनः श्रीवैकुंठ पधारेंगे। तब तक मुझे आपका वरदान यह चाहिए कि कलियुग के मानवों को

आसरा देकर रक्षा करनेवाले एकमात्र भगवान वेंकटनाथ आप बन जाओ!'' श्रीनिवास भगवान ने ब्रह्मा की प्रार्थना मान ली। तदनन्तर ब्रह्मा ने आनंद निलय वासी के लिए दस दिन के ब्रह्मोत्सवों का आयोजन किया जो ब्रह्मोत्सव के नाम से सुविख्यात हो गये।

उस दिन से श्री वेंकटेश्वर आनंद निलय में रहते हुए, कलियुग के भगवान के रूप में भूलोक वैकुंठ इस तिरुमल के वेंकटाचल क्षेत्र पर अर्चामूर्ती हो गये।

ओम् मायागूढ़विमानाय नमः
ओम् वैकुंठागतसध्देमविमानांतर्गताय नमः
ओम् सहस्रार्कचूछटाभास्वाद्विमानांतःस्थिताय नमः

अनुदिन इन नामों से पुजादिकों को स्वीकारते रहे श्रीनिवास भगवान का गुणगान करेंगे और आगे बढ़ेंगे।

हे आनंदनिलयवासी! गोविन्द! गोविन्द! गोविन्द!
विमानं सर्वपापघ्नं सर्वलोकेषु विश्रुतम्
अप्राकृतमवनाद्यंतम् वैकुंठादागतं महत्

इस विमान के आदि तथा अंत नही हैं। यह असामन्य है। अप्राकृतिक है। अखिल लोकों में विख्यात इस आनंद निलय के दर्शन से सभी पाप मिट जाते हैं। स्वर्णमय यह विमान वेंकटाचल क्षेत्र में जब से दर्शन दे रहा है उस क्षण से ही जाने कितने महनीयों ने, राजाओं ने, चक्रवर्तियों ने इसके दर्शन किये! इसकी सेवा की। इसके विमान का पुनरुद्धार किये। इसे स्वर्ण - रंजित कर दिये। गोपुर पर स्वर्ण कलशों की व्यवस्था उन्होंने की। इतिहास के अनुसार उसका विवरण कुछ इस प्रकार है।

विमान के सुधारक

सन् 850 मे विजयदंति विक्रमवर्मा नामक पल्लवों के राजा ने इस आनंद निलय विमान को स्वर्ण कवचमय बनाया। सन् 1262 में जातवर्मा सुंदर पाण्ड्य देव ने स्वर्ण कवच को समर्पित किया।

सन् 1359, जुलाई 6 तारीख पर, साळुव मंगिदेव महाराजा ने आनंद निलय पर स्थित पुराने कलश के स्थान पर 'स्वर्ण कलश' की स्थापना की।

सन् 1417 साल में विजय नगर साम्राज्य का अमात्य चंद्रगिरि मल्लन्ना ने, श्रीनिवास के इस मंदिर में कई मंडपों का निर्माण किया। उसी साल आगस्त 25 तारीख तक, स्वर्ण द्वार के सामने 'महा मणि मंडप'' (घंटा मंडप) का निर्माणी किया। उसी समय, आनंद निलय के विमान का जीर्णोद्धार किया।

तदनंतर 'साहिती समरांगण सार्वभौम' उपाधि से समलंकृत, विजय नगर साम्राज्य के चक्रवर्ती, श्री कृष्ण देव रायलु ने जगत के चक्रवर्ती, सप्तगिरीश को अनेकानेक आभूषण दिये। अनेकानेक सेवायें की। उत्सवों का आयोजन किया। मूल विराट स्वामी के साथ, उत्सव मूर्ति, श्री भूदेवी साहित मलयप्पा स्वामी को भी विविध आभूषणों को समर्पित किया। सन् 1513 से 1521 तक सात बार, श्री कृष्ण देव रायलु ने इस तिरुमल क्षेत्र का दर्शन कर, श्री वेंकटेश की अर्चना एवं आराधना की। सन् 1517 जनवरी 2 तारीख पर, जब पाँचवी बार तिरुमल की यात्रा पर आया, तब मंदिर के प्रांगण में अपनी दोनों पत्नियाँ तिरुमल देवी और चिन्ना देवी के साथ, तीनों की प्रतिमाओं की, साधारण भक्तों की सी वेष

भूषा में स्थापना की। प्रमुखतया सन् 1518, सितंबर 9 तारीख - गुरुवार पर (भाद्रपद पूर्णिमा के दिन) तीस हजार स्वर्ण सिक्कों से आनंद निलय विमान का सुवर्ण लेप करवाया।

उसके बाद वीर नरसिंगदेव यादव रायलु ने अपने वजन के समान के सुवर्ण से आनंद निलय विमान के साथ सुवर्ण द्वारों को भी सुवर्ण का लेप चढ़ाया।

सन् 1630 में कोटि कन्यादानम् ताताचार्युलु नामक वैष्णवाचार्य ने आनंद निलय विमान को सुवर्ण लेप करवाया।

महंतों के अधिकार में सन् 1908, सितंबर 30 तारीख पर (कीलक नाम वत्सर - अश्वयुज पूर्णिमा के दिन) बावाजी मठ का महंत प्रयागदास के भाई का शिष्य, रामलक्ष्मण दास कर्मचारी ने आनंद निलय विमान पर सुवर्ण कलश की स्थापना की।

1958 में संपन्न आनंदनिलय विमान का जीर्णोद्धार

सन् 1958 में आखिरी बार तिरुमल तिरुपति देवस्थान के नेतृत्व में 18-8-1958 से 27-8-1958 तक दस दिन में आनंद निलय विमान का जीर्णोद्धार तथा सुवर्ण लेपन से स्पष्ट होनेवाला ऐतिहासिक सत्य यह है कि पिछले छः या सात सौ वर्षों में, आनंद निलय विमान का इतना संपूर्ण तथा वैभव पूर्ण स्वर्ण कवच का समर्पण कभी नहीं हुआ। इस जीर्णोद्धार में 12 टन का तांबा तथा 12 हजार तोले के खरे सोने का उपयोग हुआ है।

उन दिनों की गिनती के प्रकार - लगभग 18 लाख रुपयें खर्च हुए। जीर्णोद्धार के पहले विमान पर जो पुराना सोना था, उसका मूल्य 8

लाख था। उसके साथ, हुंडी में लाखों भक्तों द्वारा समर्पित सुवर्ण मात्र का ही उपयोग इस जीर्णोद्धार में हुआ।

इस अत्यंत असाधारण एवं विशिष्ठ कार्यक्रम में जो कारिगरी हमें दिखाई देती है - वह तो उन उन कलाकारों की श्रद्धा एवं सहन शीलता का ही प्रतीक है। विमान पर सोने के ताम्र पटलों को बिठाने में ही पाँच साल लग गये। तीन साल ताम्र पटलों को बनाने का तथा दो साल तक उन पर सुवर्ण का लेपन का काम चला।

1952 सं. में तिरुमल तिरुपति देवस्थान की न्यास मंडली ने निर्णय लिया कि आनंद निलय के विमान का संपूर्ण जीर्णोद्धार कर दी जाय! इस निर्णय के अनुसार 1953 में इस कार्यक्रम का शुभारंभ हुआ। इस के लिए 1953, जुलाई 16 से 21 तक छः दिन तक तिरुमलेश के मंदिर में बालालय की स्थापना हुई। इन्हीं दिनों में आनंद विमान के ऊपर जो तांबे की पुरानी परतें थी, उन सबको निकालकर, सभी कोनों से विमान के मापन के साथ छायाचित्रों को भी ले लिया गया। तदनन्तर इन विवरणों तथा छायाचित्रों के आधार पर तिरुपति के श्री गोविंद राज स्वामी मंदिर के प्रांगण में, आनंद निलय विमान का एक प्रतीक बनाया गया। इस नमूने में भी आनंद निलय के विमान के कोने कोने में स्थित चित्रों को भी अत्यंत जागरुकता के साथ सजाया गया। इसके बाद इस नमूने के आधार पर उनके ही तरह के तांबे परतों की तैयारी, एवं सुवर्ण के लेपन का कार्यक्रम, लगभग पाँच साल तक चला जिसके कण कण में कलात्मक निपुणता तथा तकनीकी सुविज्ञता झलकती थीं। इस तरह तैयार की गई ताम्र परतों को आनंद निलय विमान पर बिठाने के लिए

1957 साल के अक्तूबर महीने के 25 तारिख से नवंबर 1 तरीख तक, एक हफ्ते के लिए दूसरी बार तिरुमल मंदिर में बालालय की स्थापना हुई।

इस बालालय में स्थापित करने के लिए श्री वेंकटेश्वर की मूल विराट मूर्ति की सी ही 5 फुट की नकल मूर्ति, अंजूर की लकडी से बनाई गई और इसे विमान परिक्रमा के कल्याण मंडप में (जहाँ पर आजकल सिक्कों की गिनती जारी है) तैयार किया गया। तदनंतर आनंद निलय में विद्यमान मूल विराट मूर्ति के कलांशों को एक स्वर्ण कलश में आकर्षित कर उन्हें फिर वहाँ से अंजूर की मूर्ति में प्रवेशित किया गया। बालालाय की प्रतिष्ठा एवं कळाकर्षण - सब कुछ वैखानस शास्त्र के अनुसार ही संपन्न हुए।

1957 नवंबर से, 1958 आगस्त 27 तक इसी बालालय में, तिरुमल श्री वेंकटेश्वर के मंदिर की तरह ही, पूजा, अर्चना तथा भोग आदि सभी सेवाएँ संपन्न हुई!

1957 नवंबर से 1958 आगस्त 27 तक, लगभग 10 महीने तक, आनंद निलय विमान का संपूर्ण जीर्णोद्धार, सुवर्ण से लेपित ताम्र पट्टिकाओं को बिठाना, कलश की स्थापना आदि सभी कार्यक्रम बिना किसी रुकावट के, निर्विराम रूप से संपन्न हुए जिसमें सैकडों मजदूरों ने भाग लिये। ताम्र पट्टिकाओं को बनाने वाले, उस पर सुवर्ण का लेपन करनेवाले, विमान का जीर्णोद्धार, आगम पंडित आदि सभियों की अकुंठित भक्ति, उत्साह एवं उत्तेजना से, ये सभी कार्यक्रम 1958 आगस्त 10 वी तारीख तक भव्य रीति में संपन्न हुए और, आनंद निलय विमान का संपूर्ण छवियों के साथ साक्षात्कार हुआ।

इस बालालय की स्थापना के बाद ही, आनंद निलय विमान पर सुवर्ण लेपित ताम्र पट्टिकाओं को जडने के समय में, स्वर्ण द्वार, उस द्वार के सामने गरुडाळ्वार की सन्निधि पर स्वर्ण शिखर की व्यवस्था, सुवर्ण कुएँ पर भी सुवर्ण ताम्र पट्टिकाओं की व्यवस्था भी की गई। इतना ही नहीं। आनंद निलय में श्री वेंकटेश्वर स्वामी की मूल - विराट मूर्ति के सुवर्ण मकर तोरण को भी फिर से सुवर्ण - रंजित किया गया।

तदनंतर 1958 आगस्त 18 से 27 तक दस दिनों तक, अत्यंत वैभव से आनंद निलय विमान का वेदोक्त रीति में शुद्धि का कार्यक्रम (महा संप्रोक्षण) भी संपन्न हुआ जिसमें, भारत भर से हजारों भक्त शामिल हुए!

1957 - 1958 में अत्यंत असाधारण तथा अद्भुत तरीके में संपन्न इस महा संप्रोक्षण कार्यक्रम में, विविध प्रमुखों ने भाग लिया। इस पवित्र कार्यक्रम में, अपनी परम श्रद्धा भरी सेवाओं द्वारा कीर्तित महनीयों का पावन स्मरण - इस संदर्भ में अधिक उचित तथा हमारा उत्तरदाचित्व भी है।

तमिलनाडु राज्य के ‘मधुरा’ नगर वासी, शिल्पाचार्य श्री.पी. नागराजु पिल्लै को पहली बार आनंद निलय विमान के नमूने को तैयार करने तथा उसकी मरम्मत करने का श्रेय मिलता है।

आनंद निलय विमान पर के पुराने ताम्र परतों का सुवर्ण तथा हुँडी में भक्तों द्वारा समर्पित सुवर्ण को रासायनिक तरीके से शुद्ध बनाकर, खरे सोने को तैयार कर सौंपनेवाले कीर्तिमान थे - महाराष्ट्र, पूना नगर वासी श्री रामनाथ सिंधे!

तमिलनाडु मथुरा के शिल्पाचार्य श्री.एम. चोक्क लिंगाचारी ने आनंद निलय विमान के लिए तांबे के पत्तरों को बनाया तथा उन पर सोने की मुलम्मा को चढ़ाने का काम, तमिलनाडु के तिरुचिरापल्ली के 'राजा इंडस्ट्रियल्स' के अधिकारी श्री आर. राजगोपाल स्वामि राजू ने कराया।

इस तरह तिरुमलेश ने कईयों भक्तों द्वारा कईयों कामों को करवा लेते रहे। आप आनंदित होते हुए, भक्तों को भी आनंदित करते रहे हैं। उनका जय जयकार कर आगे बढ़ेंगे।

गोविन्द गोविन्द गोविन्द!

विमान निर्माण की विशिष्टता

तिरुमल क्षेत्र में आनंद निलय नामक सुविख्यात नाम से विराजित तिरुमलेश का सुवर्ण गोपुर त्रितल गोपुर (तिमंजिला गोपुर) नाम से भी कीर्तित है। पहली दो मंजिलें दीर्घ चतुर्भुजीय आकार में तथा तीसरी मंजिल वर्तुलाकार में हैं।

वेसर शैली मे (नगर और द्रविड शिल्प शास्त्र का संगम जो बादामी चाळुक्यों के जमाने में प्रचलित था और 'मध्य भारतीय शिल्पकला शैली' भी इसे कहते हैं) एक ही कलश के साथ निर्मित यह स्वर्ण गोपुर, कलश के साथ 37 फुट, 8 इंच ऊँचा है। इस गोपुर के नीचे निर्मित प्राचीर 27 फुट 4 इंच ऊँचा है। इसका मतलब है, भूतल से सुवर्ण कलश तक कुल मिलाकर आनंद निलय विमान, 65 फुट, 2 इंच ऊँचा है।

दीर्घ चतुरस्राकार आकार की पहली मंजिल की ऊँचाई 10 फुट, 6 इंच है जिसमें सिर्फ छोटी छोटी लतायें, मकर तोरण, छोटे छोटे शिखरों के सिवा किसी भी तरह ही मूर्तियाँ नहीं हैं।

गोपुर की चतुरस्राकार दूसरी मंजिल 10 फुट 9 इंच ऊँची है जिसके चारों तरफ, वराह स्वामी, नृसिंह स्वामी, अनंत वैकुंठनाथ आदि प्रधान मूर्तियाँ चतुरस्राकार तल पर चारों दिशाओं में विराजमान हैं। इनके साथ श्री विष्णु के विविध रूप जय-विजय, गरुड, हनुमान, विष्वकसेन, अनेक ऋषियों की भी मूर्तियाँ हैं। इसी दूसरी मंजिल पर उत्तर दिशा के वायव्य कोने में उत्तराभिमुख होते हुए वेंकटेश्वर जी अपने दिव्य दर्शन दे रहे हैं और ये ही ''विमान वेंकटेश्वर स्वामी'' हैं।

गोपुर की तीसरी मंजिल, गोलाकार में 16 फुट तीन इंच लंबी है। इसमें बहुत बडा पद्माकार है तथा 20 प्रतिमाँए हैं। इसी वर्तुलाकार में 8 सिंह की मूर्तियाँ भी है। एक एक कोने में छोटे से कमल पर दो परिवेष्ठित सिंह के हिसाब से, चारों कानों में आठ सिंह हैं। सुवर्ण कलश के नीचे का कमल, लताओं, हंस, तथा कीरों से अत्यंत विलक्षण सौंदर्य से विराजित है।

आनंद निलय विमान की परिक्रमा के मार्ग को 'विमान परिक्रमा' कहते हैं। गर्भालय की मूल विराट मूर्ति के भव्य दर्शन के बाद, यात्री और भक्त, इसी विमान परिक्रमा के मार्ग में आनंद निलय विमान की परिक्रमा करते हुए, सभी कोनों से उसकी सुंदरता को देख पायेंगे! मात्र भक्त ही नहीं। भगवान श्री मलयप्पा स्वामी जी भी जब कभी शोभा यात्राओं या उत्सवों के लिए गर्भालय से निकलते हैं, उन सभी समयों में आनंद निलय विमान की परिक्रमा करके ही बाहर जाते हैं। इसके अलावा बाहर से मंदिर में ले जायी जाने वाली पुष्प मालायें हो या अभिषेक का तीर्थ हो, या पूजा के द्रव्य हो, सभी इस तरह विमान परिक्रमा के बाद ही अंदर ले जाये जाते हैं।

मलयप्पा स्वामी किसी उत्सव के लिए आनंद निलय विमान के बाहर जा रहे हों तो आनंद निलय विमान के चारों कोनों में चार बार उनकी आरती उतारी जाती है।

वेंकटाचल के गिरिशिखरों पर अनंत तोजो विराजित होते हुए दृश्यमान होनेवाला यह आनंद निलय विमान उस अखिलांड कोटि ब्रह्माण्ड नायक तिरुमलेश का स्वर्ण महल है। भक्तों एवं यात्रियों को सकल शुभों के वरदानों को प्रदान करनेवाला वेंकटाद्रि क्षेत्र पूरे संसार भर मे अद्वितीय तथा अलौकिक है। यह भी धृवीकृत सत्य है कि यहाँ पर विद्यमान वेंकटेश स्वामी के समान विशिष्ठ देवता, कल भी नहीं थे और आनेवाले कल में भी नही रहेंगे।

अलौकिक यह आनंद निलय विमान, वेंकटाद्रि पर्वतों पर स्थित है तथा इस आनंत महिमामय पर्वत पर साधारण हवाई जहाज या हेलीकाप्टर आदियों का संचार निषिद्ध है। आकाश में संचार करनेवाले इन हवाई जहाजों को दूर हट जाने की सूचनाएँ देने के लिए तकनीकी चिन्हों की व्यवस्था की गई है। राष्ट्रपति, प्रधान मंत्री, मुख्य मंत्री या कोई भी अधिकारी हो, हेलीकॉप्टर या हवाई जवाज में नीचे तिरुपति नगर तक ही आकर उतर जाते हैं तथा तिरुमल के मार्ग में से कार में जाकर भगवान के दर्शन किया करते हैं। हेलीकॉप्टर में वेंकटाचल गिरियों पर विहार करना सख्त मना है।

सहस्रों कांतियों से, असमान, अप्रमेय तथा अलौकिक रीति में जाज्वलयमान, आनंद निलय विमान का कितने ही तरीको में भी शोध करें, तो भी वह निष्फल हो जाता है।

युगयुगों से लाखों सामान्य भक्तों से लेकर देवताओं तक, अनपढ़ों से लेकर योगियों तक, दर्शन के तुरंत बाद ही दिव्यानुभूतियों को प्रदान कर रहा है यह आनंद निलय विमान! इसके दर्शन भाग्य को प्राप्त करते हुए, हाथ जोडकर, नमस्कार कर लीजिये! विमान के अंतर्भाग में विराजित वेंकटेश्वर स्वामी का कीर्तिगान करते हुए, फिर से दर्शन भाग्य को दिलाने की प्रार्थना कर लीजिये!

आनंदनिलये श्रीमद्विमाने स्वर्णभूषिते
सर्वमंगळमांगल्ये दीव्यते नित्यमंगळम्

सुवर्ण गोपुरवाले स्वामी! गोविन्द!
आनंद निलय वासी - गोविन्द गोविन्द गोविन्द

53. विमान वेंकटेश्वर स्वामी

आनंद निलय विमान की अद्भुत, अनंत सुंदरता को हम देखते हुए आगे बढ़ रहे हैं! अब इस विमान पर विराजमान 'विमान वेकंटेश्वर स्वामी' के भव्य दर्शन से पवित्र हो जाइये!

हाँ यहाँ देखिए! इस मंडप में यहाँ पर! विमान वेंकटेश्वर स्वामी नामक फलक जो लगा हुआ है, उस वेदी पर खडे हो जाइये! विमान की वायव्य दिशा के कोने पर एक छोटे - से मंदिराकार स्थल पर श्री वेंकटेश्वर स्वामी की मूल विराट मूर्ति सी जो छोटी सी मूर्ति, मकर तोरण से सजी हुई है उसे गौर से देखिए! वही है विमान वेंकटेश्वर स्वामी की मूर्ती! इस मूर्ति की दोनों तरफ गरुड, नृत्य भांगिमा में श्री कृष्ण तथा हनुमान विनय से खडे हैं। आनंद निलय के विमान पर उपस्थित होने के कारण इस मूर्ति को 'विमान वेंकटेश्वर स्वामी' कहते हैं।

'वेंकटाचल माहात्य' में कहा गया है कि इस विमान वेंकटेश्वर स्वामी की स्थापना, परम भक्त शिखामणि तोंडमान राजा द्वारा की गई है।

तत आनंदनिलये तोंडमानूनृपनिर्मिते
विमानाग्र्ये श्रीनिवासो रराज भगवान् हरिः

इस स्वामी का दर्शन सकल पापों को लेता है। सकल शुभों को देता है। इस विमान वेंकटेश्वर स्वामी का दर्शन, आनंद निलय में स्वयंभू मूर्ति के रूप में विद्यमान श्री वेंकटेश्वर स्वामी के दर्शन के समान माना जाता है। अगर किसी भी कारण, मूल मूर्ति के दर्शन का भाग्य न मिले, तो उस समय विमान वेंकटेश्वर का दर्शन हो जाय तो, यात्रा का फल हमें मिल जायेगा।

इतः पूर्व भक्त, विमान परिक्रमा करते हुए 'विमान वेंकटेश्वर स्वामी के दर्शन कर लेने के बाद ही, आनंद निलय की मूल मूर्ति का दर्शन कर लेते थे। आज दिन ब दिन बढती जा रही भक्तों की संख्या के कारण, पहले श्री मूल मूर्ति के दर्शन के बाद ही विमान वेंकटेश्वर को दर्शाया जा रहा है।

विमानं सर्वपापघ्नम् विष्णुनाऽधिष्ठितं सह
पश्यतां सर्वभूतानाम् आह्लादजनकं शुभम्

विमान के साथ, विमान वेंकटेश्वर के दर्शन से सकल जीवों के पाप मिट जायेंगे। सकल शुभों की प्राप्ति हो जायेगी। इसी कारण, मूल मूर्ति के दर्शन के बाद बाहर आये हुए यात्री सब, विमान वेंकटेश्वर की तरफ, श्रद्धा तथा भक्ति से सरों और हाथों को उठाकर दर्शन कर ले रहे हैं।

कुछ लोग तो उसी मंडप में बैठकर स्तोत्रों और पुराणों का पारायण भी कर रहे हैं। देखिए! श्री व्यास तीर्थ जी के समय से ही आनंद निलय के विमान वेंकटेश्वर स्वामी की प्रधानता एवं विशिष्ठता बढ गयी है।

श्री कृष्ण देवरायलु के समय में, द्वैत संप्रदाय के पीठाधिपती श्री व्यासतीर्थ जी ने श्री कृष्ण देव रायलु को 'कुहू योग' नामक काल सर्प दोष से बचाने के लिए कुछ समय के लिए, विजय नगर के सिंघासन पर स्वयं आसीन हो गये थे। इस कारण, श्री कृष्ण देवरायलु की विपदा भी टल गयी। इसी कारण व्यास तीर्थ जी को 'रायलु' नामक उपाधि से गौरवान्वित किया जा रहा है। तदनन्तर काल में, व्यासरायलु ने, तिरुमल के वेंकटेश्वर के मंदिर मे बारह साल तक अर्चनादिकों का निर्वाह भी किया। उसी समय से विमान वेंकटेश्वर स्वामी की सन्निधि में पारायण तथा दर्शनादियों की प्रधानता बढ गयी।

इसी कारण, श्री वेंकटेश्वर स्वामी की मूल मूर्ति के दर्शनानंतर, बाहर विमान परिक्रमा के मार्ग में चलनेवाले भक्त तथा यात्री, विमान वेंकटेश्वर के दर्शन के लिए भी रुक जाते हैं। यही अब इस मंदिर का संप्रदाय भी बन गया है। सिर्फ भक्त ही नहीं, श्रीदेवी तथा भूदेवी सहित श्री मलयप्पा स्वामी जब कभी मंदिर के बाहर निकल पडते हैं, विमान परिक्रमा करते हुए, इस विमान वेंकटेश्वर स्वामी की सन्निधि में तनिक रुककर आरती स्वीकारकर आगे चलते हैं।

इसके अलावा, हर साल, तीन दिन के लिए जो पवित्रोत्सव संपन्न होते हैं तब भी विमान वेंकटेश्वर के पास, अर्चक गण वहाँ पर अस्थायी रूप से व्यवस्थित सीढ़ियों पर से जाकर, पुष्प मालाएँ समर्पित करते हैं।

तीनों पहरों में आनंद निलय में संपन्न भोग के समय, अर्चक स्वामी अंदर ही से विमान वेंकटेश्वर स्वामी को भी नैवेद्य समर्पित करते हैं।

अब हम सब, तिरुमलेश की पुनः दर्शन की प्राप्ति की प्रार्थना, विमान वेंकटेश्वर स्वामी से करेंगे। हाँ, एक बार फिर से उनका दर्शन कर लीजिये!

श्री वेंकटेश मत्स्वामिन् ज्ञानानंददयानिधे!
शरणागतसंत्राण! वरदाभीष्टवर्षण!

गोविन्द गोविन्द गोविन्द

54. अभिलेखागार

विमान वेंकटेश्वर के दर्शन के बाद चार कदम आगे बढ़ेंगे तो एक जगह पर 'रिकार्डस सेल' (अभिलेखागार) नामक फलकवाला कमरा दिखाई देता है।

श्री वेंकटेश्वर स्वामी के गर्भालय के रजत पात्र, ज्योति स्तंभ, सुवर्ण पात्र आदियों के विवरण रखनेवाले अभिलेख इस कमरे में हैं। इतना ही नहीं। श्रीतिरुमलेश स्वामी की मूल विराट मूर्ति एवं उत्सव मूर्तियों से संबंधित गहने, आभूषण, सर से पाँव तक अलंकृत होनेवाले सकल अलंकार आदियों के वजन आदि के विवरणों के अभिलेख यहाँ पर संरक्षित रखे जाते हैं।

55. वेद पारायण

विमान परिक्रमा के इसी मार्ग में अभिलेखागार से लेकर उत्तर प्राचीर मंडप भर, श्रेणियों में वेदपंडित बैठकर वेदमंत्रों को उदात्तानुदात्त स्वर युक्त पारायण कर रहे हैं।

ऋग्वेद, कृष्ण यजुर्वेद, शुक्ल यजुर्वेद, सामवेद, अधर्वण वेद - इन सब का स्वर युक्त पाठन करते हुए, वेदों के रक्षक, उन वेंकटेश्वर स्वामी का यशोगान कर रहे इन वेदमूर्तियों को नमस्कार कीजिये! वेदों की रक्षा के द्वारा धर्म की भी रक्षा कर रहे विराट्पुरुष, सप्तगिरीश का जय जय ध्वान करेंगे!

निगम निगमांत वर्णित मनोहर श्रीमन्नारायण!
निगमागम रक्षक हे! श्रीमन्नारायण!

56. सभा घर

विमान परिक्रमा के ही मार्ग में उत्तर दिशा की ओर के मंडपों में स्थित कमरा ही 'सभा घर'' है। सभा का अर्थ है ''दरबार'' माने श्री वेंकटेश्वर स्वामी की विविध उत्सव मूर्तियों के विविध समयों में संपन्न होने वाले उत्सव तथा दरबार! उन उन उत्सवों में उपयुक्त होनेवाले सुवर्ण छत्र, चामर, रजत चिराग दान, आरती की थालियाँ रेशमी वस्त्र आदियों को इसी कमरे से ले जाते हैं।

हर रात, भगवान की एकांत सेवा में उपयुक्त रेशमी शय्या, सोने का पलंग, इन सभीयों को यहीं पर संरक्षित करते हैं। इसी समय में, उपयुक्त चंदनादि परिमल द्रव्यों को भी इसी कमरे में संभालकर रखकर उपयोग करते हैं।

इस तरह भगवान वेंकटेश्वर के परिमल द्रव्यों का संरक्षण करनेवाले इस कमरे को अपनी वंदना समर्पित करेंगे!

गोविन्द गोविन्द गोविन्द

57. संकीर्तन भंडार

हाँ! विमान परिक्रमा के इसी मार्ग में, सभा घर से लगकर दक्षिणाभिमुख होते हुए थोडा सा उभरकर बाहर आया हुए, शिलानिर्मित कमरा ही संकीर्तन भंडार है जो ताळ्ळपाकम घर के नाम से भी विख्यात है। इसके आगे 'अन्नमाचार्य भंडार' नामक फलक भी लटक रहा है - देखिए!

इस भंडार में लकडी का एक छोटा सा द्वार है जिसके दोनों तरफ अपनी हथेलियों से टाँड को दिखाती हुई दो शिला मूर्तियाँ, एक तारा के साथ खडी हैं!

इन दोनों शिलामूर्तियों के वयोभेद को परखकर तथा मुख भंगिमाओं के अनुसार, सुप्रसिद्ध संकीर्तन संशोधक श्रीमान् वेटूरि प्रभाकर शास्त्री जी ने निर्धारित किया कि दायें हाथ से संकीर्तन भंडार की तरफ हशारा करनेवाली मूर्ति अन्नमाचार्य की है, तथा बायें हाथ से संकीर्तन भंडार को दिखाने वाली मूर्ति, पेद तिरुमलाचार्य की है। वेटूरि प्रभाकर शास्त्री की इस धारणा की, अनंतर काल के कई पंडितों ने पुष्टि की।

ताळ्ळपाका के वंशज अन्नमाचार्य, उनका पुत्र पेद तिरुमलाचार्य तथा उनका पुत्र चिन तिरुमलाचार्युलु, तिरुपति श्री वेंकटेश्वर के बारे में कितने ही संकीर्तनों की रचना कर गाया भी करते थे। दंडक एवं शतक जैसी पद्य रचनाएँ भी की। इसके अलावा, अपनी रचनाओं को ताम्र फलकों पर खुदवाकर तिरुमल श्रीनिवास की ही सन्निधि में, इस शिला भंडार में संरक्षित भी उन्होंने किया। इसी कारण इस भंडार को ताम्र फलकों का घर नाम दिया गया था। ताळ्ळपाका घर भी कहा जा रहा है।

आज जो देश भर कैसेट, आकाशवाणी, टी.वी. या संगीत सभाओं में हम सभी जिन ताळ्ळपाका के संकीर्तनों को सुन पा रहे हैं, उन सबका आधार तथा निलय यह 'ताळ्ळपाकम्' घर तथा यहाँ के ताम्र शिला फलक ही हैं।

यह संकीर्तन भंडार मात्र तिरुमल के मंदिर के कार्यक्रमों में विशिष्ट स्थान को बनाये रखने के अलावा तेलुगु साहित्य के इतिहास में भी एक प्रमुख स्थान को पा लिया है। इतना ही नहीं, इन संकीर्तनों के द्वारा श्री वेंकटेश की कीर्ति, सिर्फ आंध्रप्रांत में ही नहीं, विश्व व्याप्त हो गयी है।

मेरे बिना तेरी कृपा की व्याप्ति कैसे होगी
मेरे कारण ही तू ने पायी है यह कीर्ति

परम भक्त शिखामणि अन्नमाचार्य ढिंढोरा पीटकर कह रहे हैं कि अपने इन संकीर्तनों के कारण ही श्री वेंकटेश्वर को इतना प्रचार मिला है। इस कारण सिर्फ तेलुगु जनता ही नहीं, सारी भक्त कोटि, भगवान तिरुमलेश की कृपा के अधिकारी हो गये हैं।

वेंकटाचल तो परम वैष्णव क्षेत्र है। परम वैष्णवाचार्य इस स्वामी की पूजा अर्चनादि करते हैं। अन्नमाचार्य जन्म से वैष्णव न होते हुए भी, इस वैष्णव क्षेत्र के उत्सवादियों में प्रमुखतया भाग लेना, एक अद्भुत है। तिस पर, मंदिर के प्रांगण में भी एक कमरे की व्यवस्था कर लेना तथा उसमें अपने संकीर्तनों को परिरक्षित कर, अपनी मूर्तियों को भी खडा करना परमाद्भुत है!

एक सामान्य मानव के लिए यह सब क्या संभव है? नहीं है न? हाँ! श्री वेंकटेश्वर का नंदक खड्ग ही, अन्नमाचार्य के रूप में यहाँ पर

अवतरित हुआ और आनंद निलय वासी के दरबारी कवि के रूप में शाश्वत स्थान यहाँ पाकर अपनी अत्यंत प्रतिभाशाली लेखिनी के द्वारा श्री वेंकटेश्वर जी की महिमाओं और लीलाओं का यशोगान किया!

श्री वेंकटेश्वर के नंदक खड्ग के अंश से जन्में अन्नमाचार्य, श्री वेंकटेश्वर की स्तुति में हर दिन कम से कम एक संकीर्तन लिखा करते थे तथा इस नियम का आजीवन पर्यंत उन्होंने अनुसरण भी किया!

योग मार्ग के बारे में संकीर्तन कुछ
रसिक हृदयों के लिए श्रृंगार के कुछ
वैराग्य रीति में और कुछ
सारस नेत्रों वाले स्वामी पर संकीर्तन ये सव
ताल तथा लय के सुंदर मिलाप से
परम तंत्र हैं ये बत्तीस हजार गीत

इस तरह अपने बत्तीस हजार संकीर्तनों से, अन्नमय्या ने श्री वेंकटेश्वर की भक्ति का प्रचार किया। लगता है कि श्री वेंकटेश्वर की भक्त - प्रियता, आश्रित पक्षपात, लीलाएँ एवं महिमाओं को जितनी स्पष्टता तथा सीधे तरीके में अन्नमय्या ने अपने संकीर्तनों में आविष्कृत किया, वैसे किसी भी पुराण या ग्रंथों ने नहीं कर पाया! इसी कारण अन्नमय्या के गीत, अनंत महिमान्वित होते हुए, श्रीनिवास के मंत्रों की राशियाँ हो गयी हैं। श्रीनिवास की श्रृंगार क्रीडाओं के नर्तन हो गये हैं। सप्तगिरियों को चढानेवाले परम पद सोपान हो गये हैं। इसीलिए, अपने कविता सुमनों को श्री वेंकटेश्वर के चरणों पर अन्नमय्या ने समर्पित किया।

छिपालो तेरे चरणों में इन पूजाओं को मेरी
तेरी कीर्ति के सुमन ये ही हैं हे स्वामी!
एक ही संकीर्तन है काफी करने रक्षा हमारी,
बाकीयों को रहने दे तेरे भंडार में ही
तेरे नाम का मूलूय कम, प्रभाव आधिक,
रक्षक बन रक्षा की मेरी, तो वे हैं अमूलूय धन अब

'इनमें से किसी भी संकीर्तन का गान करनेवालों की रक्षा करनेवाले मंत्र है मेरे ये संकीर्तन!' कहते थे अन्नमय्या! अपने जीवन भर, इस संकीर्तन यज्ञ का निर्वाह कर अन्नमय्या ने अपने पुत्र पेद तिरुमलाचार्य को भी आदेश दिया कि तुम भी हर रोज कम से कम एक संकीर्तन को लिखो! सन 1503, के फाल्गुन कृष्ण द्वादशी के दिन श्रीनिवास में विलीन हो गये महा भक्त शिरोमणि अन्नमाचार्य जी!

अन्नमाचार्य ने स्वयं कहा कि एक ही मेरा संकीर्तन काफी है, हमारी रक्षा करने, बाकीयों को इस भंडार में संरक्षित रहने दे। माना जा सकता है कि उसी दिन, विमान परिक्रमा के मार्ग में इस संकीर्तन भंडार के निर्माण का श्री गणेश हुआ! अन्नमय्या के समय तक उनके सभी संकीर्तन, तालपत्रों पर ही लिखे गये थे। अपने पुत्र पेदतिरुमलय्या उन्होंने ही शायद आज्ञा दी होगी कि अपने सभी संकीर्तनों को ताम्र पत्रों पर लिखवा दें। लेकिन स्वयं उन ताम्र पत्रों पर लिखने की क्रिया को न देख पाये होंगे। ताम्रपत्रों पर लेखन तथा संकीर्तन भंडार का निर्माण इन दोनों का प्रारंभ तथा समापन - पेद तिरुमलय्या के जमाने में ही हुआ होगा! शायद सन 1525-30 प्रांतों तक इस संकीर्तन भंडार का निर्माण

तथा उसमें ताळ्ळपाका वंशजों के संकीर्तनों का ताम्रपत्रों पर लेखन तथा संरक्षण भी संपन्न हो गया होगा।

इस कार्यक्रम में विजयनगर का महाराजा अच्चुत रायलु ने, पेद तिरुमलाचार्युलु को अपना पूरा सहयोग दिया जिसकी प्रस्तावना सन् 1541 के शासन में पायी जाती है। उस शासन से यह भी स्पष्ट हो रहा है कि उस साल के बाद से तिरुमल के ब्रह्मोत्सवों में इस संकीर्तन भंडार के पास अखंड दीपों की व्यवस्था, पूजा एवं निवेदनों का आयोजन भी किया जाने लगा। इस संदर्भ में भक्तों को ''अतिरस'' (गुड और चावल कें आटे से बना एक मधुर पकवान) भी बाँटे जाते थे। इसके अलावा सन् 1541 के उस शासन में इसका भी उल्लेख है कि 'संगीत अरळप्पाडु' नाम से संकीर्तन का कार्यक्रम भी वैभवोपेत, रीति में मनाया जाता भी रहा था।

यह भी सुनने में आया कि सन् 1545 के प्रांतों में हर साल की गरमियों में तिरुमल पर 'कोडैतिरुनाळ्ळु' नामक ग्रीष्मोत्सव - बीस दिनों तक आयोजित होते थे तथा ताळ्ळपाकम् के इस संकीर्तनागार के पास श्रीनिवास को नैवेद्य भी समर्पित हुआ करते थे।

आजकल भी हर साल उगादी से लेकर 40 दिनों तक होनेवाले नित्योत्सवों में हर दिन इस संकीर्तन भंडार के पास श्री मलयप्पा स्वामी को ताळ्ळपाका की आरती उतारी जाती है।

इस संकीर्तनागार में प्राप्त सभी ताम्रपत्रों के विविध आकारों, उपयोगों व परिमाणों के अनुसार उनको चार विभागों में बाँटा गया है।

साधारण पत्रः सभी ताळ्ळपाका कवियों के लभ्य पत्रों की संख्या 2531 हैं लगभग सभी ताम्रपत्र, बहुत कम अंतर से 15-1/2 इंच लंबे तथा 7 इंच चौडे हैं। इन सभियों को ग्रंथालयों की तरह एक ही जगह पर रखा जाता था।

बडे पत्रः कुल मिलाकर लभ्य पत्र 36 हैं जो ''तांबे के चट्टान'' या 'चट्टानी पत्ते' कहे जाते हैं। 28 इंच लंबे तथा 16 इंच चौडे ये पत्ते पाँच या छे के हिसाब से एक कडी में बंधे रखे हैं।

इन कडियों में, बडी लकडियों को धँसकर, डोली के जैसे कंधों पर रखकर एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाकर संकीर्तनों का प्रचार किया जाता था।

वेटूरि प्रभाकर शास्त्री जी ने स्वयं अहोबल क्षेत्र जाकर इन पत्रों का संचयन किया था।

शासनों के पत्रः कुल मिलाकर 10 ऐसे पत्र मिले हैं जो 11 इंच लंबे तथा 8 इंच चौडे हैं। इनके अलावा पाँच असंपूर्ण टुकडे भी मिले हैं।

इस संकीर्तनागार में लभ्य सभी पत्रों को कुछ इस तरह विभाजित किया गया है। 1. साधारण पत्र 2. बडे पत्र 3. शासनों के पत्र 4. ताळ पत्राकृति के पत्र। इनमें भी अधिक संख्या में प्राप्त साधारण पत्रों को कवियों एवं रचनाओं के आधार पर विभाजित किया गया है। उनका विवरण यह है।

ताळ्ळपाका अन्नमाचार्य	:	2289 पत्र
पेद तिरुमलाचार्य	:	205 पत्र
चिन तिरुमलाचार्य	:	37 पत्र

अन्नमाचार्य के साधारण पत्र

श्रृंगार मंजरी नामक मंजरी द्विपद	: 5 पत्र
अध्यात्म संकीर्तन	: 363 पत्र
श्रृंगार संकीर्तन	: 1921 पत्र

पेद तिरुमलाचार्य के साधारण पत्र

सीस पद्य शतक	:	10 पत्र
चक्रवाळ मंजरी	:	2 पत्र
सुदर्शन रगडा	:	1 पत्र
श्रृंगार दंडकम्	:	3 पत्र
रेफा रकार	:	4 पत्र
वेंकटेश्वरोदाहरणम्	:	3 पत्र
वृत्त पद्य शतक	:	7 पत्र
वैराग्य वचन मालिका गीत	:	10 पत्र
अध्यात्म संकीर्तन	:	76 पत्र
श्रृंगार संकीर्तन	:	89 पत्र

चिन तिरुमलाचार्य के साधारण पत्र

अन्नमाचार्य के पौत्र, पेद तिरुमलाचार्य के पुत्र चिन तिरुमलाचार्य के लभ्य पत्र 37 ही हैं।

अष्टभाषा दंडक	:	3 पत्र
संकीर्तनलक्ष्ण	:	4 पत्र
अध्यात्मसंकीर्तन	:	10 पत्र
श्रृंगारसंकीर्तन	:	20 पत्र

ताळ्ळपाका कवियों के ताम्रपत्रों के परिष्कर्ताओं से, इस संकीर्तनागार से लभ्य ताम्रपत्रों पर उपलब्ध ताळ्ळपाका के साहित्य को सन 1922-23 से ही परिष्कृत करवाकर तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् प्रकाशित कर ही रहा है।

सन 1919 से 1946 दिसंबर तक तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् में, प्रमुखतया श्रीनिवास के मंदिर में विविध आधिकारिक ओहदों में (अमुल्तदार, पारुपत्यदार, तथा पुरातत्व शासनों के संशोधक आदि) काम किये हुए श्री साधु सुब्रह्मण्य शास्त्री जी की दृष्टि इस संकीर्तन भंडार पर पडने ही के कारण ताळ्ळपाका वंशजों के साहित्य का प्रचार हुआ! उन दिनों के तिरुमल मंदिर के तीस चालीस साल के इतिहास को ही साधु सुब्रह्मण्य शास्त्री जी का जीवन कहें तो भी उसमें कोई भी अतिशयोक्ति नहीं है। वे एक हाथ से तिरुमल श्रीवेंकटेश्वर के मंदिर के प्राचीरों पर स्थित शासनों पर संशोधन करते थे तथा दूसरे हाथ से मंदिर के पेशकार के ओहदे में तिरुमल मंदिर के पूजादिकों, उत्सवों तथा यात्रियों के दर्शन एवं ठहरने की सुविधाओं का पर्यवेक्षण भी बिना किसी ठाठ - बाट के ही करते थे। तिरुमल तिरुपति के शासनों को परिष्कृत कर 6 संकलनों में उन्होंने प्रकाशीत भी किया। 1923 में ही इस संकीर्तनागार में स्थित सभी ताम्र पत्रों को निकालकर देवस्थानम् के

तत्कालीन तेलुगु पंडित श्री कलबरिगि वेंकटरमण शास्त्री जी से अलग से साफ लिखवाये। उन्हें परिष्कृत भी कराकर प्रकाशित भी किये। सन् 1930 तक यह काम संपन्न हुआ। इस तरह ताळ्ळपाका कवियों के सर्व प्रथम परिष्कर्ता का यह श्रेय, श्री साधु सुब्रह्मण्य शास्त्री को ही मिलता है।

इतना ही नहीं, उन्होंने यह भी साबित किया कि सन् 1408 वैशाख पूर्णिमा ही अन्नमाचार्य का जन्म दिन है। इनके तदनन्तर पंडितों ने भी इसी बात की पुष्टि की। तिरुमल तिरुपति देवस्थानम भी, उसी दिन हर साल अन्नमाचार्य की जयंती बडे पैमाने पर मना रहा है।

इस बीच सन् 1931 में श्री वेंकटेश्वर स्वामी की उत्सव मूर्ति श्री मलयप्पा स्वामी को गद्वाल महारानी ने हीरों के मुकुट को भेंट के रूप में देना चाहा! इस कार्यक्रम के निरीक्षण के लिए साधु सुब्रह्मण्यम् जी का मद्रास को दो साल के लिए तबादला हुआ और इस कारण ताळ्ळपाका वंशजों के साहित्य का प्रकाशन रुक गया। इन दोनों सालों में जो कुछ परिष्करण का काम श्री शास्त्री जी ने किया वह सब लग भग नष्ट हो गया। उसमें जो थोडा कुछ बचा था, उन्हें तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् के पुरालेख शास्त्री पंडित विजय राघवाचायुलु ने तीन संकलनों के रूप में प्रकाशित किया। 1) पहला है - ताळ्ळपाका कवियों की लघुकृतियाँ (1935) 2) दूसरा - अध्यात्म संकीर्तन (1936) 3) तीसरा - श्रृंगार संकीर्तन (1937)। इनका प्रकाशन तेलुगु भाषा की प्राचीन लिपि पद्धतियों में तथा अलग अलग कवियों के विवरण के बिना ही हुआ!

इसके बाद 1945 में तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् के प्राच्य कळाशाला के तेलुगु शाखाध्यक्ष तथा 'पंडित प्रभाकर' श्री वेटूरि प्रभाकर शास्त्री के दिव्य हाथों का स्पर्श 1930 से 1945 तक इन ताम्र पत्रों को मिला। तब तक सूर्य रश्मि को देखे बिना सदियों तक रहे ये पत्र संगीत के सप्त स्वरों के नाद से भर गये तथा सप्तगिरि शिखरों को पारकर तेलुगु प्रांतों में प्रतिध्वनित हुए। उस तिरुमलेश की गाथाओं का वर्णन करनेवाली अन्नमय्या की पदकविता शारदा, आनंद निलय वासी के प्रांगण में संगीत साहित्य नृत्य सम्मिलित 'त्रिवेणी संगम' में, नर्तन करने लगी। इतना ही नहीं, तिरुमलेश की मुस्कुराहटों में उभरनेवाले करुणा प्रवाह, पूरे विश्व भर को सींचने लगे।

साधिकार परिष्कर्ता एवं संशोधक के रूप में विख्यात वेटूरि प्रभाकर शास्त्री जी ने न केवल ताळ्ळपाका कवियों की रचनाओं का परिष्करण किया, बलि्क गीतकारों के नाम भी निर्धारित कर, दो संकलनों को प्रकाशित भी किया। इनके साथ अन्नमाचार्य का इतिहास नामक ग्रंथ की भी रचना की। इसमें ताळ्ळपाका चिन्नन्ना विरचित तेलुगु द्विपदा छंद की रचना ''अन्नमय्या का इतिहास ही नहीं, इसके साथ, वेटूरि प्रभाकर शास्त्री जी की विस्तृत प्रस्तावना भी है जिसमें शास्त्री जी से अस्पृश्य कोई भी विषय या शोध विषय नहीं रह गया। यह तो निर्धारित सत्य है।

आज कल जो बडी तादाद में अन्नमय्या के साहित्य से संबंधित संशोधन हो रहे हैं इन सबों का संक्षिप्त विवरण उपयोक्त वेटूरि की

प्रस्तावना में हमें मिलती है। इससे स्पष्ट है कि वेटूरि प्रभाकर शास्त्री जी के शोध कितने सबल तथा सशक्त थे।

इसके अलावा, पेद तिरुमलय्या के वचनों को 'वैराग्य वचन मालिकलु'' (वैराग्य वचन मालिकाएँ) नाम से उन्हेंने प्रकाशित भी किया।

उनके बाद, सर्वश्री ए.वी. श्रीनिवासाचार्युलु राळ्ळपल्लि अनंत कृष्ण शर्मा, पी.टी. जगन्नाथ राव, गौरिपेद्दि रामसुब्ब शर्मा आदियों ने ताळ्ळपाका कवियों के साधारण ताम्र पत्रों के पदकविता साहित्य को परिष्कृत कर प्रकाशित किया!

इस क्रम में, प्रथम गण्य श्री वेटूरि प्रभाकर शास्त्री जी थे, तो आखिर ताळ्ळपाका साहित्य के प्रकाशन की इतिश्री गोरिपेद्दि रामसुब्ब शर्मा जी के द्वारा हुई। सबसे अधिक संकलनों के परिष्कर्ता होते हुए, रामसुब्ब शर्मा जी ने, इतःपूर्व प्रकाशित अन्नमाचार्य के अध्यात्म संकीर्तनों का पुनः परिष्करण किया। सौ ताम्रपत्रों के साहित्य के लिए एक संकलन के हिसाब से चार संकलनों को, अत्यंत अमूल्य पस्तावना के साथ प्रकाशित किया। इसी कार्य के लिए तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् ने अन्नमाचार्य वाङमय परियोजना की व्यवस्था की तथा गोरिपेद्दि रामसुब्ब शर्मा जी को उसका विशिष्ट अधिकारी बना दिया। इसी संदर्भ में श्री गौरिपेद्दि जी को यह लेखक (जूलकंटि बालसुब्रमण्यम्) ताळ्ळपाका साहित्य के परिष्करण में सहायक नियुक्त हुआ। अन्नमाचार्य के अध्यात्म संकीर्तनों के तीसरे संकलन की प्रस्तावना में, प्रारंभ से अंत तक अन्नमाचार्य के साहित्य के परिष्कर्ताओं व प्रकाशनों का विवरण पाया जाता हैं।

उपरोक्त सभी शोध कार्य, ताळ्ळपाका कवियों के साधारण ताम्रपत्रों तक ही सीमित थे। बडे ताम्र पत्र, शासनों के पत्र, तथा असंपूर्ण पत्र-इन तीनों में उल्लिखित अंशों एवं गीतों के विवरणों का शोध-कार्य, अभी भी बाकी है।

श्री पी.टी जगन्नाथ राव जी ने श्रीरंगम के देवस्थानम् के अधीन में स्थित ''बडे ताम्र पत्रों'' में से कुछ पत्रों को मँगवा लिया था और उनमें स्थित कुछ संकीर्तनों को प्रकाशित भी किया था। उनके द्वारा परिष्कृत पेदतिरुमलाचार्य के अद्यात्म संकीर्तनों के संकलन में यह विषय उद्घृत है। श्री राळ्ळपल्लि अनंत कृष्ण शर्मा के द्वारा परिष्कृत एवं प्रकाशित अन्नमाचार्य के अध्यात्म संकीर्तनों के 11 वे संकलन (1955) द्वारा यह भी स्पष्ट हुआ कि ताळपत्राकृति के बडे पत्रों में से कुछ संकीर्तनों को भी प्रकाशित किया गया था। इसके अलावा श्री राळ्ळपलली जी ने 54 अन्नमाचार्य के संकीर्तनों को राग ताल बद्ध कर दो संकलनों के रूप में 1956 में प्रकाशित किये थे।

इस तरह प्रकाशित अन्नमय्या के संकीर्तनों के संकलनों के आधार पर साहित्य तथा संगीत क्षेत्रों में कई पंडित शोध कार्य किये और करते आ रहे हैं।

तिरुमल मंदिर में स्थित यह ताळ्ळपाका संकीर्तन भंडार इसकी स्थापना से लेकर आज तक अपनी विशिष्ठता और गुणवन्ता को बिखेर रहा है और बिखेरता रहेगा।

आज भी अन्नमाचार्य के वंशज हर दिन सुप्रभात सेवा में स्वर्ण द्वार के सामने खडे होकर श्री वेंकटेश्वर स्वामी को जगा रहे हैं। एकांत सेवा

के समय, अन्नमय्या की लोरियाँ उनके द्वारा ही सुनकर, वेंकटेश जी मीठी नींद में खो जा रहे हैं। नित्य कल्याणोत्सवों में भी अन्नमाचार्य के वंशज ही कन्यादाताओं के रूप में तांबूल - सत्कारादि से गोरवान्वित हो रहे हैं। इनके अलावा, वसंतोत्सव तथा अभिषेकोत्सवों में भी ताळ्ळपाका वंशजों की सहभागिता स्पष्ट है।

अपने आप चुना हमें हे मेरे वंश के देवता!
मेरे पूर्वजों से, यह निधान है मिला।

अपने आप इस तेलुगु प्रांत को स्वामी वेंकटेश ने चुना! उन्हें अनुग्रहीत करने के लिए ही नंदक खड्ग को अन्नमय्या के रूप में यहाँ पर उन्होंने भेजा! उनके द्वारा अपने आश्रित पक्षपात को, दातृत्व को, जनता को सुस्पष्ट किया। निरंतर पूजित हो रहा है। तेलुगु लोगों के भाग्य का क्या कहने? इसका माप - तोल करना क्या किसी को मुमकिन है सिवा श्री वेंकटेश्वर के?

पावन हैं, हरि भक्ति वि
भावन हैं, सकल मंत्र सार हैं ये
वन हैं गीतों के सं
कीर्तन हैं ये ताळळ्पाक अन्नमया के

इस तरह सुविख्यात पदकविता पितामह अन्नमाचार्य के संकीर्तनों का पारायण करते पुनीत हो जायें। तिरुमलेश की अनंत करुणा जलधि में डुबकियाँ लगाकर तर जायेंगे।

58. सन्निधि भाष्यकार

विशदोर्ध्वपुण्ड्रविलसन्मुखांबुजम्
ललितोपवीतकलितोरुवक्षम्
करपद्मवज्रकलितत्रिदंडकम्
कलये यतीन्द्रमहनीयविग्रहम्

यहीं पर इस ताळ्ळपाका संकीर्तनागार से लगकर, पूर्व दिशा में, दक्षिणाभिमुख होते हुए, आगे उभरकर आया हुआ यह मंदिर ही भगवद्रमानुज की सन्निधि है। तिरुमल के विमान परिक्रमा के मार्ग में छोटे से मंदिर में विद्यमान भगवद्रामानुज को ही 'सन्निधि भाष्यकार' कहते हैं। यहाँ पर रामानुजाचार्य जी, द्रविड भाष्यों की व्याख्या करने की मुद्रा में दाक्षिणाभिमुख होते हुए दर्शन दे रहे हैं। इसी कारण इन्हें सन्निधि भाष्यकार कहते हैं। यह मंदिर मुखमंडप, गर्भमंडप नामक दो भागों में विभाजित है। 15 फुट लंबा तथा 12 फुट चौडा इस गर्भमंडप में, 2 फुट ऊँची भगवद्रामानुज की शिला मूर्ति, पद्मासन की भंगिमा एवं व्याख्यान मुद्रा में दक्षिण की तरफ देखती हुई आसीन है। इसके अलावा, 1-1/2 फुट लंबी पंचलोह प्रतिमा भी (उत्सव मूर्ति) यहाँ पर है। चार फुट की शिला वेदी पर स्थित इस गर्भ मंडप पर वेसरा शिल्प शैली में ''एक कलश गोपुर'' निर्मित है।

भगवद्रामानुज के इस छोटे मंदिर का मुख मंडप 19 फुट लंबा एवं 12 फुट चौडा है जिसमें दो श्रेणियों में रमणीय शिल्पों से शोभित प्रस्तर स्तंभ हैं।

असल में तिरुमलेश के इस मंदिर में ''श्री रामानुज की सन्निधि'' की स्थापना कैसे और कब हुई? इन प्रश्नों के समाधानों के लिए थोडा सा शोध करें तो हमारे सामने बहुत सारी रोचक बातें स्पष्ट हो जाती हैं।

भगवद्रामानुज ने दो महान कार्य किये। पहला है वैष्णव मत को सभीयों के अनुमोद योग्य बनाते हुए, समाज के सभी वर्गों की जनता को स्वीकार करने के योग्य बनाना!

उनका प्रगाढ़ विश्वास था कि मंदिर, सनातन धर्म तथा हैंदव संस्कृति की नींव हैं। इसी कारण, देश के कोने कोने में संचार कर, कई वैष्णव मंदिरों और श्री वैष्णव क्षेत्रों का उद्धार उन्होंने किया! उन उन क्षेत्रों में जो अव्यवस्थित पूजा अर्चना की विधियाँ थीं, उन सबों को आगमोक्त विधा में संजोकर, एक व्यवस्थित क्रम का प्रबंध भी उन्होंने किया। यह तो उनका दूसरा महान कार्य है।

इस क्रम में भगवद्रामानुज द्वारा व्यवस्थित अर्चना विधियों से विद्यमान वैष्णव क्षेत्रों में सर्व प्रथम है श्री वेंकटाचल क्षेत्र!

तिरुमल क्षेत्र तथा भगवद्रामानुज जी के बीच एक अविभाज्य दिव्य बंधन है। अपने 120 वर्षीय सुदीर्घ जीवन में तीन बार उन्होंने तिरुमल की यात्रा की।

भगवद्रामानुज का विश्वास था कि यह तिरुवेंकटाचल क्षेत्र, साक्षात श्रीनिवास प्रभु का ही रूप है। उसकी प्रशस्ति तथा महिमाओं को विविध रीतियों में समाज में फैलाने का उत्तर दायित्व लेनेवाले रामानुज जी ने दृढता से कहा कि इतने पवित्र तिरुमल क्षेत्र को पैरों से चढ़ना सख्त मना

है। लेकिन अपने गुरु तिरुमल नंबी (तिरुमल ताताचार्युलु) के शिष्य अनंताळ्वान के द्वारा उन्हें मालुम हुआ कि तिरुमल के मंदिर में पूजा अर्चनादि कार्यक्रम ढ़ंग से नहीं चल रहे हैं। अनंताळ्वान जी ने यह भी कहा कि तिरुमल मंदिर की पूजा - विधि को व्यवस्थित करने की अत्यंत आवश्यकता है तथा इस परम पवित्र कार्य के लिए पवित्र तिरुमल को चढने में कोई दोष नहीं है। उनके विचार को मानकर तिरुमल क्षेत्र के उद्धार के लिए घुटनों से ही रामानुज जी ने तिरुमल के सप्तगिरियों को चढ़ा और अत्यंत भक्ति एवं श्रद्धा से वेंकटाचल क्षेत्र का विकास किया।

पहली बार घुटनों से सप्तगिरियों को चढ़ते समय, जहाँ उन्होंने थोडे समय तक विश्राम किया, उसी जगह पर तदनंतर तिरुपति के पैदल चढने के मार्ग में विद्यमान भगवद्रामानुज जी को ''सडक भाष्यकार'' कहते हैं तथा तिरुमल के मंदिर से हर दिन नैवेद्य भी लाकर समर्पित किये जाते हैं। ''घुटनों से चढ़ने का टीला'' (मोकाळ्ळ मिट्टा) नाम से यह जगह विख्यात है।

तिरुमल पहुँचने के बाद रामानुज जी ने क्षेत्र के संप्रदायानुसार पहले श्रीदेवी भूदेवी सहित आदि वराह स्वामी का दर्शन कर लिया। क्षेत्र के संप्रदायनुसार वराह स्वामी को ही दिन की पहली पूजा, पहला नैवेद्य तथा पहला दर्शन - आदि नियमों का भी पुनरुद्धार किया। उसके बाद ही आनंद निलय के श्रीनिवास प्रभु के दर्शन के लिए गये। भगवान वेंकटेश के कौतुक, स्नपन, बलि, उत्सव तथा ध्रुव मूर्तियों को भी उन्होंने देखा।

कोटि मन्मथों से भी बढ़कर
सुंदरता से कांतिमय थे वे पाँचों विग्रह

सुवर्ण मंजीर, घुंघरु सुवर्णांबर
मोतियों के गुच्छों की छुरी सुंदर
को उन्होंने देखा और यह भी उन्होंने कहा!
मकर कुंडल, मणि मुकुट,
विकसित श्वेत कमल जैसी आँखें,
शीतल दृष्टि, सुंदर नासिका
श्वेत सुंदर ऊर्ध्व पुण्ड्र,
श्रृंगार भाव से कितने ही,
मनोज्ञ, अलमेलूमंगा के मनोनाथ की
सेवा कर! प्रणुति कर! कर संस्तुति!
पुलकित शरीर से विद्यमान स्वामी
श्रींरगम् में जो हैं शेष शायी
इस रूप में हैं यहाँ दिखाई दे रहे
परवत्व हैं ये! परमयोगि हैं ये!
परिपूर्ण हैं ये! श्रीपवि भी हैं ये!
परमकरुणामय भक्तवत्सल हैं ये!
पर वासुदेव हैं, पंकजाक्ष हैं ये!
सकल जगों में रक्षा हमारी करने
योग्य देवता हैं ये, यह तिरुमल ही
है वैकुंठ! इनके समान है कोई नही!

उन्होंने स्पष्ट कर दिया कि श्री रंगनाथ ही, तिरुमल के अलमेल्मंगा पति श्रीनिवास के रूप में दर्शन दे रहे हैं। लेकिन कई हजारों सालों से वेंकटाचलपति क्या कर रहे हैं?

पद्मावतीं विशालाक्षीं भगवानात्मवक्षसि
अरिशंखविहीनोऽसौ कटिन्यस्तकरोत्तमः
दर्शयन् पाणिनैकेन, दक्षिणेन वृषाकपिः
पदपद्मं सुराराध्यंम् गतिं च परमां नृणाम्
कटिन्यस्तकरेणापि निजपादाब्जकामिनाम्
नृणां भवपयोराशिं कटिदघ्नं प्रदर्शयन्
विराजते वेंकटेशः संप्रत्यपि रमापतिः

परम दया स्वरूपिणी, करुणांतरंगिणी, श्री महालक्ष्मी को अपने दिव्य वक्षः स्थल पर धरकर, भय कारक, शंख चक्रों को न धरते हुए, परम शांत मुद्रा में, वरद, कटि हस्तों से मानवों के सांसारिक भयों एवं दुःखों का समूल नाश करते हुए, श्रीनिवास, श्री वेंकटेश्वर हमें परमानंद प्रदान कर रहे हैं। इस रूप में हजारों सालों से दर्शन दे रहे साक्षात् श्रीमन्नरायण के दर्शन कर, भक्तों ने उन्हें शिव, शक्ति, वीरभद्रस्वामी, कुमार स्वामी इस तरह कई रूपों में देखते हुए, इनकी अर्चना करते रहे। सिर्फ पूजना ही नहीं, इनके रूप के बारे में खूब विचार - विमर्श भी हो रहे थे। वाद - विवाद भी चिढ़े! लडाई झगडे भी हुए।

इसी समय, भगवद्रामानुज तिरुमल आ पहुँचे। तिरुमलेश को साक्षात् परब्रह्म श्रीमन्नारायण का रूप निर्धारित करना ही नहीं अपनी तपोशक्ति के द्वारा, वेंकटेश्वर की मूल मूर्ति को उन्होंने शंख चक्रों से विभूषित भी किया! समाज के सामने विस्पष्ट घोषित किया कि वक्षःस्थल पर महालक्ष्मी से विराजित ये स्वामी, श्री महाविष्णु ही है। इस

तरह तिरुमल तिरुमलेश के ही गुरु बनकर तिरुमल के मंदिर में विशेष स्थान को उन्होंने पाया।

स्वयं पांचरात्रागम के अनुयायी होते हुए भी, तिरुमल तिरुपति मंदिरों में प्रचलित वैखानस आगमानूसार हो रही पूजा - अर्चना की विधि को निरपाय चालू रखने की कडी व्यवस्था उन्होंने की। 'विष्वकसेन एकांगी' (सेनापति जीयर) नामक ब्रह्माचारी को नियुक्त कर तिरुमलेश की सभी सेवाओं एवं आराधनों में भक्ति एवं विनय भरी सक्रियता से भाग लेने का प्रबंध उन्होंने किया। भगवद्रामानुज जी, तदनंतर 'वेंकट शठ गोपयति' नाम से सन्यासाश्रम को स्वीकार कर जीयर हो गये। तब से लेकर आज तक भी जीयर नामक वैष्णवाचार्यों की परंपरा के मूलपुरुष (पेरिय जीयर) के रूप में उसे स्थायित्व दिया।

आज भी, सुप्रभात के पाठ के समय, सन्निधि का ग्वाला, सुवर्णद्वार खालेकर गर्भालय में छोटी सी मशाल को लेकर पहले प्रवेश करता है। उसके पीछे ही अर्चक स्वामी भी ''कौसल्या सुप्रजा रामा'' आदि सुप्रभात के श्लोकों को पढ़ते हुए अंदर प्रवेश करते हैं। उनके तुरंत बाद भगवद्रामानुज का पतिनिधित्व करते हुए एकांगी जैसे ही प्रवेश करता है उसके झट बाद, सुवर्ण द्वारों को बंद कर देते हैं। बाहर सुप्रभात का पाठ पंडितों द्वारा जारी रहता है।

स्वर्ण द्वार के अंदर 'सन्निधि ग्वाला' मशाल के प्रकाश में कुलशेखर पडी (देहली) तक जाकर रुक जाता है। उसके हाथों से मशाल को एकांगी ले लेकर गर्भालय में तिरुमलेश की मूल मूर्ति की सन्निधि में ज्योतियों को प्रज्जवलित करता है। इस तरह आनंद निलय में हर दिन

पहले पहल ज्योतियों को जलाने के पवित्र कार्य से ही भगवद्रामानुज के कैंकर्य की शुरुआत होती है। इतना ही नहीं। रात में एकांत सेवा तक के सभी उत्सवों में, शोभा यात्रा में भगवद्रामानुज जी का कैंकर्य अवश्य होता ही है।

प्रधानतया ध्यान देने की बात यह है कि यहाँ, श्री वेंकटाचल पर वैखानस आगमोक्त रीति में संपन्न हर सेवा या पूजा में कपूर की आरती जैसी छोटी से छोटी सेवा को भी तिरुमलेश के अर्चक स्वामी स्वयं नहीं लेते। पूजा में उपयुक्त हर चीज को भगवद्रामानुज के प्रतिनिधि जिय्यंगार या उनका सहायक एकांगी पहले उन्हें अपने हाथों में लेकर, अर्चकों को देते हैं। भगवद्रामानुज के समय से यही परंपरा तिरुमल की हर सेवा में प्रतिबिंबित होती है। इसका तात्पर्य यह है कि तिरुमल मंदिर की सभी पूजा, अर्चनाओं के वैखानस संप्रदाय के अनुसार संपन्न एवं परिपुष्ट होने में, रामानुजाचार्य की निगरानी तथा सहायता अविस्मरणीय हैं।

अनंतः प्रथमं रूपम् लक्ष्मणस्तु ततः परम्
बलभद्रः तृतीयः स्यात् कलौ रामानुजः स्मृतः

माने कलि युग में अनंत, त्रेतायुग में लक्ष्मण, द्वापर में बलराम के रूप में अवतरित आदि शेष, इस कलियुग में भगवद्रामानुज के रूप में आये। इस रूप में भी उन्होंने श्रीनिवास की असाधारण सेवा की।

तिरुमलेश को भगवद्रामानुज जी ने सिर्फ शंख चक्रों को ही नहीं, तदनंतर काल में एक नागाभरण को भी समर्पित किया। वीर नरसिंह राजू नामक राजा ने तिरुमलेश को एक नागाभरण समर्पित किया तो भगवद्रामानुज जी ने सोचा कि तिरुमलेश के दोनों हाथों को नागभरणों

से अलंकृत करना ही उपयुक्त है। इसीलिए दूसरे नागाभरण को अपनी ओर से समर्पित कर अपने शेषत्व को निरुपित किया।

तिरुमल के मंदिर के इतिहास में, तथा श्री रामानुज के इतिहास में भी, मंदिर की मूल मूर्ति के वक्षःस्थल में अलमेल्मंगा की सुवर्ण प्रतिमा को अलंकृत करना, अत्यंत महत्वपूर्ण घटना है।

द्विभुजा व्यूहलक्ष्मीःस्यात्
बद्धपद्मासनप्रिया
श्रीनिवासंगमध्यस्था
सुतरां केशवप्रिया'' -

श्री वेंकटेश्वर स्वामी की दिव्य मंगल सालग्राम मूर्ति के वक्षःस्थल पर व्यूहलक्ष्मी नाम से ही अभिहित होनेवाली द्विभुज लक्ष्मी, दोनों हाथों में कमलों को धरी हुई, कमल पर आरुढ़ होकर बायीं तरफ थोडा आगे की तरफ उभरकर दिखाई देती हैं। श्री का अर्थ है - लक्ष्मी! तिरुमलेश का हृदय श्री का निवास होने के कारण वे श्रीनिवास हो गये।

श्रीनिवास के हृदय कमल पर, आगे की तरफ उभरकर आसीन अलमेल्मंगा, स्वामी से पहले ही भक्तों की प्रार्थनाओं को सुन लेती हैं। उनकी मनोकामनाओं की पूर्ति करने की सिफारिश भी स्वामी से वे करती हैं। उनकी सिफारिश को स्वामी नकार नहीं सकते हैं न? इसी लिए वे भक्तों की इच्छाओं को मान लेते हैं। अलमेल्मंगा इस तरह श्री वेंकटेश्वर की दया को बढ़ाती हैं। उनकी करुणा, प्रेम, एवं वात्सल्यों को सब भक्तों पर बरसाने की प्रेरणा उन्हें देती है। सच कहा जाय तो, उस

करुणामयी माँ के अस्तित्व से ही तिरुमलेश साक्षात् महाविष्णु के रूप में धृवीकृत हो, विभा भासित हो रहे हैं।

मातर्नमामि कमले कमलायताक्षि!
श्री विष्णुहृत्कमलवासिनि विश्वमातः
क्षीरोदजे कमलकोमलगर्भगौरि!
लक्ष्मि! प्रसीद सततं नमतां शरण्ये।

लेकिन श्रीनिवास भगवान के वक्षःस्थल पर स्थित श्री महालक्ष्मी के दर्शन हमेशा नहीं मिलते। सिर्फ शुक्रवाराभिषेक के समय में ही मिल सकता है। बाकी सभी समयों में वस्त्रों के आच्छादन से आभूषणों या पुष्पालंकारों से वे ढकी रहती हैं। इसी कारण, भगवद्रामानुज जी ने सभी समयों में भक्तों को उनके दर्शन होते रहने की आकांक्षा से ही, एक सुवर्ण अलमेल्मंगा की छोटी सी मूर्ति को तैयार कराकर, तिरुमलेश के हृदय पर दायी तरफ विभूषित किया। जिस दिन उन्होंने इस मूर्ति का समर्पण किया, वह - कृष्ण पक्ष द्वादशी, उत्तर फल्गुनी नक्षत्र युक्त शुक्रवार होने के कारण उस दिन से शुक्रवाराभिषेक को और भी विशिष्ठता मिली।

तदनंतर काल में, भूदेवी के प्रतीक के रूप में एक और प्रतिमा तिरुमलेश को समर्पित की गई, अब ये दोनों प्रतिमाएँ मूल सालग्राम प्रतिमा के वक्षःस्थल पर अलंकृत दिखाई देती है। इसी लिए अन्नमाचार्य ने एक जगह पर कहा - 'अलमेल्मंगा के गले का मंगलसूत्र है स्वामी यह!'

तिरुमलेश के बहुत सारे नाम हैं लेकिन रामानुजाचार्य जी को तो उन्हें श्रीनिवास के नाम से संबोधित करना ही अच्छा लगता था।

नम्माळवार विरचित पाशुर (कविता) से उन्हें पता चला कि वेंकटाचल क्षेत्र पुष्प मंडप है तथा यहाँ के स्वामी पुष्प प्रिय हैं। इस कारण, अनंताळ्वान नामक अपने शिष्य को उन्होंने प्रेरित किया कि तिरुमलेश को पुष्प - समर्पण करते रहें। फिर से तिरुमल पर आकर अनंताळ्वान के पुष्प कैंकर्य को देख बेहद खुश हो गये। अनंताळ्वान ने भी अपने उद्यान को 'श्री रामानुज नंदन वन' का नाम देकर अपनी गुरु भक्ति को प्रकट किया। श्रीनिवास ने अनंताळ्वान की, किस तरह परीक्षा की? इसके बारे में जानकर भगवद्रामानुज जी ने अनंताळ्वान के उपवन तक उत्तरावर्त दिशा में तिरुमलेश जी की शोभायात्रा, पहुँचने का नियम बनाया। उसे ही ''बाग सवारी'' कहते हैं। (इसी ग्रंथ में अनंताळ्वान का वृत्तांत)

इतना ही नहीं। उन्होंने यह भी नियम रखा कि पूजा के बाद उन फूलों को किसी को देना ही नहीं चाहिए। फूलों के कुएँ में विद्यमान भूदेवी को ही समर्पित करना चाहिए। सिर्फ तिरुचानूर पंचमी के दिन स्वामी की पुष्प मालाओं को, हल्दी कुंकम के साथ, श्री पद्मावती तायार को भेजने का नियम भी उन्होंने ही रखा। रामानुजाचार्य जी यह सुनकर भक्ति विभोर हो गये कि अपने गुरु एवं, मातुल तिरुमलनंबी तिरुमल क्षेत्र में जब अभिषेक - जल की सेवा करते थे, तब, एक किरात, के रूप में श्रीनिवास ने उन्हें दादा दादा पुकारते हुए उनके पीछे पडा और उनसे पानी माँगकर पी! इस घटना की याद दिलाने के लिए रामानुजाचार्य ने हर साल 'तण्णीर मदु उत्सव' (आकाश गंगा अमृत जलोत्सव) की व्यवस्था भी की जो अध्ययनोत्सवों के आखिरी दिन संपन्न होता है। (इसी ग्रंथ के तिरुमलनंबी वृत्तांत में विस्तार से)

तिरुमलेश की सेवा में निरंतर भाग लेनेवाले जिय्यंगार, ताळ्ळपाकम् के वंशज, रसोईये, मंगल वाद्य के कलाकार आदियों के लिए ही रामानुज जी ने हर साल उगादी से लेकर 40 दिन तक नित्योत्सवों की व्यवस्था की। हर दिन के उत्सव के बाद (40 दिन) रामानुज जी की सन्निधि में तिरुमलेश का आस्थान भी संपन्न होता है।

मंदिर में श्री योगा नरसिंह स्वामी की मूर्ति को प्रतिष्ठित कर, उनकी नित्य पूजा तथा निवेदन का प्रबंध भी उन्होंने ही किया।

संक्रांति पर्व दिन के बाद 'कनुमा' के दिन, तिरुपति के श्री गोविंद राज स्वामी के मंदिर में जो गोदादेवी की मूर्ति है, उसे पहनायी गयी पुष्पमाला को तिरुमल लाया जाता है तथा श्री वेंकटेश्वर स्वामी को पहनाया जाता है। तदनंतर गोदा कल्याण संपन्न होने का नियम भी भगवद्रामानुज जी द्वारा ही तिरुमल पर आचरण में लाया गया। धनुर्मास में सुप्रभात के बदले गोदा विरचित तिरुप्पावै का पाठन, तोमाल सेवा के समय दिव्य प्रबंधों का पारायण, सभी उत्सवों के बाद वेद पंडितों के गोष्ठी एवं शात्तुमोरै - ये सभी नियम - रामानुज जी के द्वारा ही कार्यान्वित हुए हैं।

व्याख्यान मुद्रा में स्थित अपनी मूर्ति से आलिंगन कर, उसे अनंताळ्वान को उन्होंने भेट के रूप में दिया। उसी मूर्ति की प्रतिष्ठा तिरुमलेश के मंदिर में हुई है। भगवद्रामानुज की यह मूर्ति सारी दुनिया में सबसे कम उम्रवाली मूर्ति के रूप में मशहूर हुई। इस मंदिर में भगवद्रामानुज जी के चरणों की मुद्रा होने वाली शठारी को अनंताळ्वान ने अपना ही नाम रखकर अपनी गुरु भक्ति को प्रमाणित किया।

तिरुमल के मंदिर में वैखानस आगम शास्त्र के अनुसार ही पूजा की विधियाँ होती हैं। लेकिन उनमें किसी तरह की अडचनें नही होने की कडी निगरानी हर पूजा या कैंकर्य में भगवद्रामानुज जी रखा करते थे तथा अब भी वे ही पद्धतियाँ जारी हैं। हर महीने में आर्द्रा नक्षत्र के दिन, तिरुमल स्वामी के साथ ही, भगवद्रामानुज जी भी उनके अभिमुख होते हुए शोभा यात्रा पर निकलते हैं। वैशाख महीने में, श्री रामानुज जयंती के उपलक्ष्य में संपन्न दस दिनों के उत्सवों में, हर दिन के उत्सव के बाद, श्री भाष्यकार सन्निधि में प्रत्येकतया आस्थान, एवं नैवेद्य समर्पण भी होते हैं। श्री स्वामी की शेष हारती एवं तीर्थ चंदन शठारि भी श्री रामानुज जी को समर्पित होते हैं।

भगवद्रामानुज जी के पहले तिरुमल में ब्रह्मोत्सवों का आयोजन नहीं होता था। पहले दिन ध्वजारोहण के बाद बाकी नौ दिनों के उत्सव तिरुचानूर में ही संपन्न होते थे। भगवद्रामानुज जी ने ही ब्रह्मोत्सवों को तिरुमल पर ही मनाने की प्रथा बनायी, और तिरुमल की वीथियों को तदनुकूल विशाल तथा सुंदर बनाये।

इस तरह तिरुमल के मंदिर की पूजा अर्चनादि कार्यक्रमों को सुधारकर एक प्रणाली के अनुसार नियम बद्ध कर भावी समाज को सौंपने का श्रेय, श्री रामानुजाचार्य को ही मिलता है। इसके बारे में कितना ही कहें, कम पड जाता है। साक्षात् श्री वेंकटेश्वर के ही गुरु बनकर, जगद्गुरु के रूप में गौरवान्वित होनेवाले रामानुजाचार्य के बारे में अन्नमाचार्य क्या कह रहे हैं?

''मार्ग एक भी नही है इस कलियुग में
मार्ग इन्होंने ही दिखाया, मेरे गुरुवर ने''

''वेदों के रहस्य को इन्होंने ही बताया
शरगागति का रहस्य इन्होंने ही समझाया
वैष्णव मुद्राओं के धारण को सिखाया
ये रामानुज ही हैं बोलने वाले देवता''

''नियमों को आर्तो को इन्होंने ही समझाया
दया से मोक्ष के मार्ग को है दिखाया
श्री वेंकटेश्वर के इस गिरि के द्वार को सुझाया
दया का अवतार है, यही माँ पिता और देवता''

59. तिरुमलेश के डालर (लटकन)

भाष्यकारों की सन्निधि के सामने ही एक छोटा सा जो कमरा है, उसमें भगवान वेंकटेश्वर के सुवर्ण तथा रजत डालर बेचे जाते हैं। उस प्रत्येक दिन के सुवर्ण तथा रजत के भाव के अनुसार उनके मूल्य का निर्णय होता है। श्री वेंकटेश्वर स्वामी, आनंद निलय, मूल विराट मूर्ति, श्री पद्मावती तायार की मुद्राओं के साथ 10 ग्राम. 5 ग्राम के डालर तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् के द्वारा यहीं पर बिके जाते हैं। बाहर कहीं उपलब्ध नहीं होते हैं। मूल विराट स्वामी के दर्शन के बाद भक्त जन, इन्हें खरीद सकते हैं।

60. श्री योगनरसिंह स्वामी की सन्निधि

हाँ! देखिए! इस विमान परिक्रमा के मार्ग में ही ईशान्य कोने में पश्चिम की तरफ मुँह करते हुए, श्री योग नरसिंह स्वामी का मंदिर है जिसके मुख मंडप, अंतराळ और गर्भालय नामक तीन विभाग हैं।

गर्भालय में, तीन फुट की शिला वेदी पर योगमुद्रा में स्थित नरसिंह स्वामी जी की मूर्ति प्रतिष्ठित है। गर्भालय के सामने छोटा सा कमरा है जो अंतराळ कहा जाता है। अंतराळ के आगे जो मुख मंडप है वही योग नरसिंह स्वामी की परिक्रमा का मार्ग भी है।

इतिहासकारों का कहना है कि इस मंदिर का निर्माण सन् 1330-1360 के बीच हुआ होगा। इतःपूर्व कहीं पूजा अर्चनादि के बिना - पडी हुई इस मूर्ति को लाकर यहाँ प्रतिष्ठित करने का श्रेय भी भगवद्रामानुज का ही कहा जाता है।

कंदाडै रामानुज अय्यंगार के सन् 1469 के शासन में इस योग नरसिंह स्वामी का उल्लेख है। ''अळगिय सिंगर (सुंदर सिंह) वेंकटात्तरि (वेंकट गिरियों पर सिंह) नाम से योग नारसिंह स्वामी की चर्चा शासनों में दिखाई देती है।

हर दिन खास तौर पर पूजा, अर्चना न होने पर भी नैवेद्य तो समर्पित होते ही हैं। हर शनिवार के दिन अभिषेक तथा निवेदन जारी हैं।

हर साल वैशाख महीने में श्री नृसिंह जयंती के दिन, श्री वेंकटेश्वर की मूल मूर्ति की सायं आराधना, तोमाल सेवा (पुष्प मालाओं का

समर्पण) तथा अर्चनानंतर 'तोमल दोश पडि' का नैवेद्य समर्पित होता है। इसके बाद स्वामी तिरुमलेश के अर्चक, शठारी के साथ विमान परिक्रमा कर छात्र चामरादि राजोचित उपचारों के साथ श्री योग नरसिंह स्वामी की सन्निधि में आकर पुरुषसूक्त सहित अभिषेक, वस्त्रांलकार एवं पुष्पालंकार भी करते हैं। इस समय, जिय्यंगार आदि वैष्णवाचार्यों के तिरुप्पललांडु आदि द्रविड दिव्य प्रबंध पाशुरों के मधुर आलाप के बाद पानक (शरबत), भिगोये हुए मूँगदाल से नमकीन तथा गुड का पोंगल - समर्पित होते हैं। इसके बाद आस्थान, आरती, एवं गोष्ठी के बाद प्रसादों का वितरण होता है।

तिरुमलेश के मंदिर के प्रांगण में स्थित श्री योग नरसिंहस्वामी की स्तुति में अन्नमाचार्य विरचित कई संकीर्तन हैं। और हाँ! इस मंदिर के मुख मंडप में से आनंद निलय विमान का दर्शन कितना मनोहरी है देखिए!

इस वेंकट नरसिंह स्वामी के दर्शन से आनंद विभोर होते हुए, उधर श्रीनिवास के आनंद निलय विमान के दर्शन से भक्ति परवशता में डूबते हुए, समवेत स्वरों में गायेंगे।

श्रीमत्पयोनिधिनिकेतन चक्रपाणे
भोगीन्द्रभोगमणिराजितपुण्यमुर्ते!
योगीश शाश्वत शरण्य! भवाब्धिपोत!
लक्ष्मीनृसिंह! मम देहि करावलंबम्!

गोविन्द गोविन्द गोविन्द

61. शंकुस्थापना स्तंभ

श्री योग नरसिंह स्वामी के मंदिर की परिक्रमा के मार्ग में ही ठीक ईशान्य कोने के मध्य भाग में एक स्तंभ है। कहा जाता है कि तिरुमलेश की आज्ञा के अनुसार, आनंद निलय के गोपुर, प्राचीरों के निर्माण के पहले तोंडमान राजा ने यहाँ पर भूमिपूजा की थी। लेकिन यह वक्तव्य शायद सच नहीं होगा बल्कि योगनरसिंह स्वामी के मंदिर की भूमि पूजा का स्तंभ हो सकता है। इस शिला स्तंभ के निचले भाग में, चारों तरफ हनुमान जी की मूर्तियाँ हैं। भक्तों का विश्वास है कि इस स्तंभ की परिक्रमा कर विनम्रता से नमस्कार करने पर, वांछित इच्छाएँ पूरी होती हैं। हम भी इसकी परिक्रमा करेंगे गोविन्द का नाम लेते हुए!

गोविन्द गोविन्द गोविन्द

62. परिमल घर

हाँ! इस तरफ आइये! श्री योग नरसिंह स्वामी की परिक्रमा के मार्ग में ही दक्षिण के मार्ग पर यह 'परिमल का टाँड' है।

हर गुरुवार के दिन मध्याह्न वेला में, यहाँ पर स्थित सान के पत्थर पर, मूल विराट की मूर्ति के ऊर्ध्व पुण्डों में उपयुक्त भीमसेनी कपूर को अच्छी तरह पीसकर रख लेते है। इस तरह पिसे हुए 16 तोले के कपूर को शुक्रवार के दिन मंदिर मे ले जाते हैं। अभिषेक के बाद सभी आभूषण, मूल मुर्ति से निकाल देते हैं। उस समय, मूल मूर्ति के माथे पर इस कपूर से अर्ध्वपुण्ड्र को सजाते हैं। ब्रह्मोत्सवों के पहले, बीच में तथा बाद में आनेवाले तीन या चार शुक्रवारों में मूल विराट मूर्ति के साधारण

से दुगुने प्रमाण में माने 32 तोले के भीमसेनी कपूर का ऊर्ध्वपुण्ड्र सजाया जाता है।

यहीं पर हर गुरुवार ही, शुक्रवार के अभिषेक के लिए, भीमसेनी कपूर, केसर, कस्तूरी, बिलाब कस्तूरी, आदि सुगंध द्रव्यों को मिलाकर चाँदी के बरतनों में तैयार रखते हैं। इसे शुक्रवार की सुबह अभिषेक में भाग लेनेवाले भक्तों को देते हैं।

इस अभिषेक के पहले जिय्यंगार भीमसेनी कपूर के बरतन को सर पर रखकर मंदिर के अधिकारी, भक्तों के साथ छत्र चामरादि राजोपचारों के बीच इस परिमल के टॉंड से निकलते हैं। रजत द्वार को पारकर ध्वज स्तंभ की परिक्रमा कर, विमान परिक्रमा के बाद अंदर जाते हैं तथा मूल विराट मूर्ति को समर्पित कर अभिषेक सेवा मे भाग लेते हैं।

तिरुमलेश को ऊर्ध्वपुण्ड्र धारण तथा अभिषेक सेवा में प्रमुखता रखनेवाले इस टॉंड के यहाँ से आनंद निलय को दर्शन करते हुए गोविन्द का नाम लेंगे।

गोविन्द गोविन्द गोविन्द

63. तिरुमलेश की हुंडी

परिमल के घर से सीढ़ियाँ उतरकर सीधे श्रीनिवास की हुंडी की तरफ चलिए। यह हुँडी स्वर्ण द्वार की उत्तर दिशा की ओर चार खंभों के बीच है।

तिरुमलेश के दर्शन के बाद विमान परिक्रमा करने के बाद भक्त जन अपनी मन्नतों, उपहार, आदियों को हुंडी में समर्पित करते हैं।

सोने के गहने, रजत पात्र, सिक्के, रुपये, वस्त्र, कपूर, चावल,मिश्री इस तरह, विविध वस्तुओं को भक्त जन, उपहार के रूप में इस हुंडी के द्वारा स्वामी को समर्पित करते हैं।

कैन्वास कपडे से बनी एक लंबी सी थैली में तांबे का बडा सा कडाहा रखते हैं। उसके ऊपरी भाग को ओखली की तरह रस्सी से बाँध देते हैं। इस कैन्वास के कपडे पर श्रीनिवास भगवान के शंख चक्र तथा ऊर्ध्व पुण्ड्र चित्रित हैं।

भक्त उस कैन्वास के कपडे में से जिन वस्तुओं को ऊपर से डाल देते हैं, वे सब नीचे रखे हुए कडाहे में जमा होते हैं। इस हुँडी के कपडे पर एवं रस्सियों पर देवस्थानम् की सात तथा जिय्यंगार की छः लाख की मोहरें लगाते हैं। इस हुंडी के प्रबंध के समय, मंदिर की आमदनी की गिनती के लिए खोलने के समय, अधिकारी इन मोहरों का निरीक्षण करते हैं। दो यात्री भी साक्षी के रूप मे बुलाये जाते हैं।

इस हुंडी को हर रोज, मध्याह्न दोपहर के भोग के समय और रात एकांत सेवा के समय खोलते हैं। अधिक यात्रीयों के होने पर, उपहार भी अधिक होने पर, हुँडी को रोज में तीन या चार बार भी खोलते हैं।

सदियों से यहाँ की प्रजा का विश्वास यह है कि हुँडी के स्थान पर जगद्गुरु शंकराचार्य जी ने श्री चक्र की स्थापना की थी। इसी लिए असीमित संपदा, असंख्याक धन राशि भी यहाँ पर जमा हो रही है।

तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् के वेदपंडित श्री रामनाथ घनापाटी जी ने इस ग्रंथकर्ता को बताया (1992) कि करीब नब्बे साल पहले जब वे

वेद पाठशाला में विद्यार्थी थे, उस समय मंदिर के अधिकारीयों ने जमीन की तह को बढाने के लिए इस स्थान पर खोदा तो वहाँ उन्हें श्री चक्र साफ दिखाई दिया था।

शायद इसी लिए इस मंदिर में कई बार उत्सवों का निर्वाह (कल्याणोत्सव आदि) करने वाले स्थल तो अकसर बदल दिये गये लेकिन हुंडी का स्थल तो कभी नहीं बदला गया।

इस क्षेत्र के बारे में एक प्रबल धारणा यह है कि श्री वेंकटेश्वर स्वामी के वक्षःस्थल पर श्री महालक्ष्मी के रहने के कारण ही इस क्षेत्र में अतुलनीय संपदा जमती जा रही है। तिरुमलेश के वक्षःस्थल पर बसी हुई लक्ष्मी ''स्थिर लक्ष्मी'' है एवं हुंडी के द्वारा जो असाधारण संपदा भगवान को समर्पित हो रही है वह 'चर लक्ष्मी' है।

साक्षात् लक्ष्मी स्वरूप इस तिरुमलेश की हुंडी की परिक्रमा कर, हमारी शक्ति अनुसार भेंट चढ़ाकर हाथ जोड नमन करेंगे।

गोविन्द गोविन्द गोविन्द

64. सुवर्णलक्ष्मी

श्री वेंकटेश्वर की हुँडी में भेट चढ़ाकर बाहर आते ही बायी तरफ के प्राचीर पर एक खडी हुई सुवर्ण लक्ष्मी की प्रतिमा है। धन की वर्षा करती हुई भक्तों को अनुग्रहीत कर रही लक्ष्मी माँ, तिरुमलेश की ईशान्य दिशा में रहना तो एक विशेषता ही है। लोगों का विश्वास है कि

हुँडी में भेंट तथा मन्नत चढ़ानेवाले भक्तों को माँ लक्ष्मी ढेर सारी संपदायें देंगी।

65. कटाहतीर्थ

तिरुमलेश के चरणों से निकलनेवाले इस अभिषेक तीर्थ को कटाह तीर्थ कहते हैं। (कढ़ाहा तीर्थ) स्वामी की पुष्करिणी में स्नान, श्रीनिवास का दर्शन तथा कटाह तीर्थ को पीना - ये तीनों त्रिलोकों में अति दुर्लभ हैं। यह तीर्थ श्रीनिवास स्वामी की हुंडी के बाहर बायी तरफ है। इसे लेते समय, अष्टाक्षरी या केशवादि, नामों का स्मरण करना श्रेष्ट है।

पुराने जमाने में, तुंगभद्रा के तीरों पर 'पद्मनाभ' नामक ब्राह्मण रहता था। उसका पुत्र केशव ने वेश्याओं के आकर्षण में, धन को पाने की दुराशा से एक ब्राह्मण की हत्या की। तुरंत ब्रह्म हत्या पाप, भयंकर रूप में उसके पीछे पडा। केशव भय से काँप उठा। पिता के चरणों पर गिरकर रक्षा करने की प्रार्थना की। उसी समय पर, वहाँ भरद्वाज महर्षि पहुँच गये। केशव की स्थिति को देखकर उन्होंने, तिरुमल क्षेत्र के कटाह तीर्थ की महिमा को बताकर, उस तीर्थ का सेवन करने को कहा। केशव अपने पिताजी के साथ, तिरुमल पहुँचा। पुष्करिणी स्नान, श्री वराह स्वामी के भव्य दर्शन के बाद मूल विराट मूर्ति का भी दर्शन कर लिया। तदनंतर श्रीनिवास स्वामी के चरण तल से बहनेवाले कटाह तीर्थ को लेकर, ब्रह्म हत्या के पाप से मुक्त हो गया।

स्कंद पुराण में कहा गया है कि इस तीर्थ को कोई भी कभी भी ले सकते हैं। यह तीर्थ ब्रह्म हत्यादि महा पापों को भी दूर करता है। भयंकर

व्याधियों का भी निदान इससे होता है। कहा जाता है कि साक्षात् महाशिव भी इस तीर्थ की पूरी महत्ता को नहीं जानते हैं।

कटाहतीर्थमाहात्म्यम् को वेत्ति भुवनत्रये
महादेवो विजानाति कस्य तीर्थस्य वैभवम्

66. श्री विष्वकसेन जी

तिरुमलेश की हुंडी की परिक्रमा कर, बाहर आ गये हैं न? हाँ अब बायीं तरफ मुडकर सामने देखिए। वही है वैकुंठ परिक्रमा का मार्ग! उसके पार्श्व में एक छोटा सा मंदिर है। हाँ .. अन्दर चलिए! इसमें दक्षिण की तरफ मुडकर दो फुट की विष्वकसेन की शिला मूर्ति प्रतिष्ठित है। दर्शन कर लीजिये! यह चतुर्भज मूर्ती श्री वेंकटेश्वर स्वामी के प्रधान सेनानी हैं। दो हाथों में शंख चक्र धर कर, बैठी हुई भंगिमा में अभय मुद्रा के साथ स्थित विष्वकसेन की यह पंचलोह मूर्ति अब, तीर्थ देने के स्थल पर अंकुरार्पण मंडप में हैं।

आणिवार आस्थान, उगादी, दीवाली, के आस्थानों ब्रह्मोत्सव आदि विशेष उत्सवों में श्रीनिवास स्वामी के सेनानी विष्वकसेन जी की प्रमुख विधियाँ होती हैं। श्रीनिवास स्वामी के प्रमुख सेनानी श्री विष्वक सेन जी की, भक्ति से प्रार्थना करेंगे।

यस्य द्विरदवक्त्राद्याः
पारिषद्याः परश्शतम्

विघ्नं निघ्नंति सततम्
विष्वकसेनं तमाश्रये।

गोविन्द गोविन्द गोविन्द

67. मुक्कोटि परिक्रमा

(वैकुंठपरिक्रमा)

विमान परिक्रमा के बाद अब हम मुक्कोटि परिक्रमा में प्रवेश करेंगे चलिए! हाँ - इसे वैकुंठ परिक्रमा का मार्ग भी कहते हैं।

विमान परिक्रमा मार्ग की दक्षिण दिशा में, गर्भालय के पार्श्व के प्राचीर में स्थित मार्ग के द्वारा इस वैकुंठ परिक्रमा में प्रवेश करना होगा। तथा हुंडी के पार्श्व में जो मार्ग है, उसमें से बाहर आना होगा।

तिरुमलेश का गर्भालय और, विमान परिक्रमा की दीवार इन दोनों के बीच का रास्ता ही वैकुंठ परिक्रमा का मार्ग है। हर साल धनुर्मास के वैकुंठ एकादशी के दिन मात्र ही, इस मार्ग को खोलते हैं। वैकुंठ एकादशी के दिन माने, दशमी की आधी रात तक खोलकर रखते हैं। बाकी समयों मे यह बंद रहता है।

श्री वेंकटेश्वर स्वामी की मूलमूर्ति के बिलकुल पास रहनेवाला यह मार्ग, चारों दिशाओं में एक समान नहीं है। दक्षिण की तरफ 69'.6'' फुट लंबा और 8'.3'' चौडा है। पूरब से पश्चिम तक ठीक छः खंभे हैं। पश्चिम की ओर 6.6'' लंबा तथा 8'.6'' चौडा और चार खंभोंवाला

मार्ग है। उत्तर दिशा की ओर 77' फुट चौडा एवं 16'.3'' से लेकर 18'.4'' तक चौडा मार्ग है। इसमें कुल 6+6 खंभें, दो श्रेणियों में हैं। सुनने में आया कि उत्तर दिशा के इसी विशाल मार्ग में इतःपूर्व उत्सव मूर्तियों का आस्थान हुआ करता था।

पूरब की ओर का यह वैकुंठ परिक्रमा का मार्ग बंद है। 'श्री राम जी की महल' नामक संकीर्ण निर्माण के कारण शायद यह मार्ग पूरब की ओर बंद किया गया होगा। -

वैकुंठ एकादशी और द्वादशी के दिनों में इस वैकुंठ परिक्रमा के मार्ग को फूलों तथा विद्युदीपों से खूब सजाया जाता है।

श्री वैकुंठ को छोडकर, अपने भक्तों के प्रति अतीव प्रेम से, भूलोक वैकुंठ इस तिरुमल के शेषाचल में, इस भव्य दिव्य आनंद निलय में विद्यमान श्री वेंकटपति के दर्शन से धन्य हो जाते हुए, चलिए, इस वैकुंठ परिक्रमा के मार्ग में प्रवेश करेंगे। और हाँ! इसमें प्रनेश कर सकने वालों का जन्म ही जन्म है बस!

''श्री वैकुंठविरक्ताय स्वामिपुष्करिणीतटे
रमया रममाणाय वेंकटेशाय मंगळम्''

68. साष्टांग प्रणाम

परमाद्भुत, अतीव आनंद दायक, तथा कल्याण दायक श्री वेंकटेश्वर स्वामी की दिव्य मंगल विराट मूर्ति के दिव्य दर्शन से हम धन्य हो गये

हैं। उनके मंदिर की कई रोमांचकारी विशेषताओं को भी जान गये हैं। हाँ... अब इस रजत द्वार के सामने अंदर श्री रंगनाथ स्वामी को भक्ति से हम सब साष्टांग प्रणाम करते हुए प्रार्थना करेंगे कि हे स्वामी! सप्तगिरीश! फिर से हमें आपके दर्शन का भाग्य जल्दी प्रदान करो! हे आनंद निलय वासी भगवान! आपकी अप्राक्रत दिव्य मनोहर मूर्ति के शीध्र दर्शन से हमें धन्य वनओं फिर से!

हे सप्त गिरीश स्वामी गोविन्द!

गोविंद गोविंद गोविंद!

69. श्रीनिवास जी के प्रसाद

सप्तगिरीश को सष्टांग प्रणम कर ही लिये। हाँ! अब इस रजत द्वार में से चलिए बाहर निकले हैं। इसकी उत्तर दिशा पर देखिए। अर्चक स्वामी, और स्वामी के परिचारक, उन दिव्यान्नों के प्रसाद बाँट रहे हैं जिन्हें भगवान बालाजी ने चखकर हमारे लिए रख दिया है। एक के पीछे एक होते हुए, भक्ति, विनय तथा विनम्रता से इन्हें स्वीकार कर हम खा लेंगे! प्रसाद के उन उन बडे बडे कडाहों को देखिए! गुड का पोंगल, पलिवोदरै, पोंगल, दद्योजन - ये सब तिरुमलेश से स्वीकृत प्रसाद हमारे लिए दिव्य औषध हैं। ये प्रसाद हमारे लिए लक्ष्मी प्रद हैं। अत्यंत रुचिकर ये दिव्य खीर, हमारे आद्यात्मिक जीवन के दिव्य भवन हैं। ये प्रसाद सकल सिद्धियों के वरदान हैं। अत्यंत प्रीति से इन प्रसादों को चखिए!

गोविंद गोविंद गोविंद

तिरुमल के वेंकटेश्वर स्वामी के मंदिर की सारी विशेषताओं को, हमारी समझ के अनुसार तो जान ही गये हैं न। इस स्वामी की लीलाएँ अनंत हैं! कहते हैं कि उस अनंत (शेष) को ही इनकी लीलाएँ समझ में नहीं आती हैं। तो हमारा क्या?

मंदिर के बाहर देखने योग्य, तथा अवश्य देखने वाले मंदिर तथा दर्शन करनेवाले तीर्थ भी हैं। पहले श्रीनिवास भगवान के मंदिर के सामने बेडी हनुमान जी के मंदिर का दर्शन करेंगे।

70. बेडी हनुमान

इधर, तिरुपति से आनेवाले भक्तों और उधर श्री वंकटेश्वर के बीच सेतु की तरह सबसे पहले दर्शन देनेवाले स्वामी हैं - राम भक्तों में अग्रेसर श्री बेडी हनुमान जी!

तिरुमलेश की सन्निधि वीथी में श्री वेंकटेश्वर के अभिमुख होते हुए, मुकुळित हस्तों तथा पावों में बेडियों से खडे हैं ये स्वामी! कहते हैं कि अंजनाद्रि की गिरियों पर अल्हड पन से विचरते पुत्र को, (आंजनेय) अंजनादेवी ने इस तरह बेडियाँ डालकर खडी कर दी! इसी लिए इन्हें 'बेडी आंजनेय' कहते हैं।

लेकिन यह भी सुनने में आया है कि सन् 1841 में तिरुमल देवस्थान के अधिकारी, महंतों के द्वारा पूरी जगन्नाथ से यह संप्रदाय यहाँ आया है।

इस मंदिर के, मुखमंडप और गर्भालय नामक दो भाग हैं। गर्भालय के बीच, करीब छः फुट के हनुमान जी की खडी हुई मूर्ति है। गर्भालय पर एक ही कलश का गोपुर भी है जिसके चार कोनों पर, आनंद निलय ही की तरह चार सिंह हैं इसी बीच मंदिर की परिक्रमा का मंडप भी बनाया गया है।

हर दिन तीनों पहर श्री वेंकटेश्वर जी के भोग के बाद, भक्त शिखामणि श्री बेडी हनुमान जी को भी भोग चढ़ाया जाता है जो तिरुमलेश के मंदिर से ही भेजा जाता है। हर रविवार हनुमान जी के पंचामृताभिषेक एवं पूजा - निवेदन भी होते हैं।

हर महीने के पुनर्वसु, नक्षत्र के दिन श्री सीता राम लक्ष्मण जी शोभायात्रा पर निकलकर यहाँ आते हैं। उन तीनों को दी गई शेष आरती बेडी हनुमान को भी उतारी जाती है। श्री राम जी के गले की फूल माला, हनुमान जी को समर्पित की जाती है।

हर साल ब्रह्मोत्सवों में, गरुडोत्सव के दिन आंध्रप्रदेश सरकार के अधिकारी, इसी मंदिर से शोभा यात्रा पर निकलकर श्री वेंकटेश्वर जी को रेशमी वस्त्रों को समर्पित करते हैं।

परम भक्त शिखामणि इस बेडी हनुमान जी की स्तुति करते हुए तथा उस तिरुमलेश स्वामी के मंदिर के महाद्वार शिखर का दर्शन करते हुए गोविन्द का नाम!

गोविन्द गोविन्द गोविन्द!

71. कल्याणकट्टा में केशपाश का समर्पण

श्री वेंकटेश्वर करुणा सिंधु हैं। उनके दर्शन के लिए देश विदेशों से चौबीस घंटे यात्री आते ही रहते हैं। अत्यंत भक्ति एवं श्रद्धा से अपने इच्छानुसार भगवान को भेंट चढ़ाते रहते हैं।

खास तौर पर तिरुमल आये हुए भक्त जन, श्री वेंकटेश्वर स्वामी के दर्शन के पहले ही भक्ति से उन्हें समर्पित करनेवाला मन्नत है - ''केश पाश का समर्पण''।

यह बता पाना बहुत ही मुश्किल है कि असल में किस जमाने से तिरुमल पर यह शिरोमुंडन का आचार प्रचलित है। कहा जाता है कि सन् 1830 के समय में ही श्री वेंकटेश्वर स्वामी को केश पाश समर्पित करना एक पवित्र कार्य माना जा रहा था और आज भी यही धारणा प्रचलित है। साधारणतया हिन्दू संप्रदाय में उपासना, पारायण, व्रत आदियों में शिरोमुंडन अमंगल माना जाता है। इसीलिए उन उन व्रतों या पारायणों के बाद ही शिरोमंमुंडन किया करते हैं। लेकिन स्त्रियों का खासकर कन्या, तथा सुहागिनों के लिए शिरोमुंडन निषिद्ध है।

तिरुमल क्षेत्र में श्री वेंकटेश्वर की सन्निधि में, बच्चों से बूढ़ों तक, स्त्रियों सहित, परिवार के सभी सदस्थ सानंद अपने केशपाशों को वेंकटेश्वर स्वामी को समर्पित करते हैं।

जिन भक्तों ने भगवान से मन्नतें माँगी हो, या जिन लोगों की मन्‌नतों की पूर्ति हुई हों, वे सब 'एकभुक्त' (दिन में एक ही बार खाना)

भूशयनम् (भूमि पर चारपाई के बिना ही सोना) तथा ब्रह्मचर्य जैसे नियमों के साथ केश पाशों को निकाले बिना दीक्षा से नियमित काल तक श्रीनिवास की आराधना करते हैं। दीक्षोपरान्त यात्रा करते हुए तिरुमल पर पहुँच जाते हैं। वहाँ अपने दीक्षात्याग में अत्यंत प्रधान अंश है - भगवान वेंकटेश को आर्पित करने का केश - समर्पण! उसके बाद स्नान दर्शनादि के बाद हुंडी में भेंट चढ़ाकर श्री वेंकटेश्वर को सष्टांग प्रणाम करते हैं।

इस तिरुमल क्षेत्र पर हर पल यह शिरो मुंडन कार्यक्रम एक पवित्र यज्ञ, की तरह शुभप्रद रीति में संपन्न होता ही रहता है। इसे ही 'तिरु क्षौर' (पवित्र हजामत) 'कल्याण प्रद क्षौर' भी कहते हैं। जहाँ पर यह पवित्र कार्य होता है, इस दिव्य स्थल को 'कल्याण घाट' कहा जाता था। वही आज ''कल्याण कट्टा'' के नाम से अभिहित हो रहा है।

इस कल्याण कट्टा पर कुछ यात्री अपने बच्चों का 'सर्वप्रथम शिरोमुंडन' भी करवाते हैं। कुछ यात्री सालों भर दीक्षा धारी रहकर, यहाँ पर अपने केशों को समर्पित करते हैं। कुछ स्त्रियाँ अपनी पूरी केशराशी को भगवान तिरुमलेश को समर्पित करती हैं तथा कुछ स्त्रियाँ केशराशी में तीन बार कैंची का उपयोग कर थोडी सी केश राशी को काटकर समर्पित करती हैं। असल में तिरुमल यात्रा ही प्रधान अंश है जिसके द्वारा भक्तों का अनेकानेक रीतियों में कल्याण होगा।

तीर्थोपवासः कर्तव्यः शिरसो मुंडनं यथा
शिरोगतानि पापानि यान्ति मुंडनतो यतः

- पद्मपुराण

उक्त श्लोक का तात्पर्य यह है कि तीर्थों और क्षेत्रों में शिरोमुंडन कर लेने से शिर के सभी पाप मिट जाते हैं। माने बुद्धि से किये गये सभी पापों का नाश हो जाता है। रोगों का निदान भी होता है।

इतः पूर्व कल्याण घाटी के पुराने भवन के पास जो बडा सा पीपल का पेड था वहीं पर शिरो मुंडन का कार्यक्रम हुआ करता था। दिन ब दिन यात्रियों की संख्या बढ़ती ही जाने के कारण, हाल ही में तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् ने पुराने भवन के सामने ही 30 लाख रुपये को खर्च करके, चार मंजिलों वाले भवन का निर्माण किया जिसमें एक ही समय में 500 यात्री अपना शिरोमुंडन करवा सकते हैं। इसी भवन में जूतों एवं सामान को सुरक्षित रखने के लिए कमरे, स्नान करने की सुविधा, कार्यालय आदि सुविधाएँ भी हैं। इसके अलावा यात्रीयों के निवासों के सामने ही केश समर्पण करने की सुविधा भी देवस्थानम् ने की है।

साधारणतया एक दिन में बच्चों, बडों को मिलाकर कुल पाँच हजार तक यात्री अपने केश स्वामी को समर्पित करते हैं। यात्री अधिक होंगे तो यह संख्या 20 हजार से बढ़ जाती है।

हर पल अपने भक्तों को प्रेम से सीने से लगाते हुए, उनकी मुसीबतों को दूर करनेवाले तिरुमलेश जी, फिर से भक्तों की भक्ति सूत्रों में बंध जाते हैं। इस करुणासिंधु की स्तुति करेंगे।

भवाब्धितारं कटिवर्तिहस्तम् स्वर्णांबरं रत्नकिरीटकुंडलम्
आलंबि सूत्रोत्तममाल्यभूषितम् नमाम्यहम् वेंकटशैलनायकम्

72. स्वामि की पुष्करिणी

स्वामिपुष्करिणीस्नानम् सद्गुरोः पादसेवनम्
एकादशीव्रतं चापि त्रयमत्यंतदुर्लभम्
दुर्लभं मानुषं जन्म दुर्लभं तत्र जीवनम्
स्वामिपुष्करिणीस्नानम् त्रयमत्यंतदुर्लभम्

वराहपुराण का यह श्लोक घोषणा कर रहा है कि स्वामि पुष्करिणी स्नान, सद्गुरु चरण सेवा, एकादशी व्रत, ये तीनों अत्यंत दुर्लभ हैं। इसी तरह मानव का जन्म, मानव बनकर जीना और मानव जीवन में पुष्करिणी में स्नान करना - ये सभी अत्यंत दुर्लभ ही हैं।

कलियुग वैकुंठ इस तिरुमल क्षेत्र पर स्थित इस पुष्करिणी को श्री 'स्वामि पुष्करिणी' कहते हैं। सारे ब्रह्मांड के सकल तीर्थों का स्वामी होने के कारण यह इस नाम से ही अधिक कीर्तित है।

पुराणों से स्पष्ट हो रहा है कि श्री महाविष्णु की आज्ञा के अनुसार वैकुंठ से क्रीडाद्रि के साथ, इस पुष्करिणी को भी लाकर गरुड जी ने यहाँ पर स्थापना की थी। यह सर्व तीर्थों का स्वामी है। सकल तीर्थों का निलय है। सकल पापों को हरनेवाला है। इसमें स्नान करने मात्र से इह - पर दोनों को प्रदान करने वाला तीर्थ यह है।

इसके दर्शन से, पूजा से, स्मरण से एवं इसमे स्नान करने से हमारे पाप सभी नष्ट हो जाते हैं। सकल सुखों की प्राप्ति होती है।

शास्त्राणाम् परमो वेदः देवानाम् परमो हरिः
तीर्थानां परमं तीर्थं स्वामिपुष्करिणी नृप!

शंखण नामक राजा अपने राज्य को खोया था। इसी पुष्करिणी में नहाकर तप करने के कारण फिर से उसने अपने राज्य को पा लिया!

संतान हीन दशरथ महाराजा ने इस पुष्करिणी के यहाँ तप किया और श्रीनिवास की प्रार्थना की। फलतः श्री महाविष्णु को ही अपने पुत्र के रूप में पाया!

आत्माराम नामक बहुत ही गरीब ब्राह्मण यहाँ पर आया और सनतकुमार नामक ऋषि के आदेशानुसार पुष्करिणी में पवित्र स्नान किया और वक्षस्थल महालक्ष्मीयुत श्री तिरुमलेश जी की सेवा कर अपनी मनोकामनाओं को सफल बनाया।

तारकासुर के संहार से लगे ब्रह्म हत्या पाप से, कुमारस्वामी ने इसी पुष्करिणी स्नान से मुक्त हुआ। धर्मगुप्त नामक राजा - पागलपन की बाधा से छुटकारा पाया।

इस तरह अनंत काल गमन में कई, कईयों ने इस पुष्करिणी की सेवा कर श्रीनिवास प्रभु की प्रार्थना कर, कई वरदानों को पाये थे। ताळ्ळपाका अन्नमाचार्य जी ने इस पुष्करिणी की स्तुति इस तरह की!

देव दंपति के नौकाविहार का केन्द्र है तू!
तुम्हे हमारे हजारों नमन हैं हे माँ!

‘‘धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष तेंरे सोपान हैं,
चारों वेद ही चारों तीर हैं।

तेरा निर्मल जल ही सातों महा सागर है,
तेरी सतह ही आदि कूर्म अवतार है''

''गंगादि तीर्थ ही तेरी जलनिधियाँ हैं,
देवी देवताएँ, तुझ में जीवित जीवजंतु हैं,
यहाँ के भवन ही स्वर्ग में स्थित पुण्य लोक हैं,
बडे बडे वृक्ष ही मुनि वृंद हैं''

''वैकुंठ नगर का द्वार तेरा आकार है
तेरा नित नूतन जीव चैतन्य ही जीव भाव है,
श्री वेंकटेश्वर जी ही तेरा अस्तित्व है
इसी लिए यहाँ हम स्नान करने आये हैं''

कहते हैं कि परमपावन इस पुष्करिणी तीर्थ में धनुर्मास में वैकुंठ द्वादशी के दिन अरुणोदय वेला में सकल तीर्थ प्रवेश कर जाते हैं। इसीलिए उस दिन यह पुष्करिणी, श्री स्वामि पुष्करिणी, मुक्कोटि तीर्थ के रूप में पूजी जाती है।

धनुर्मासे सिते पक्षे द्वादश्यामरुणोदये
आयान्ति सर्वतीर्थानि स्वामिपुष्करिणीजले
तत्र स्नानं प्रकुर्वन्ति ये नराः प्रीतमानसाः
ते सर्वपापैर्मुच्यंते सगोत्रज्ञातिबांधवाः

धनुर्मास के शुक्ल पक्ष द्वादशी के दिन अरुणोदय वेला में भक्ति से स्नान करने वालों के सगोत्री दायाद, रिस्तेदार सबों के पाप मिट जाते हैं।

ब्रह्मोत्सवों के आखिरी दिन और रथसप्तमी के दिन, इस पुष्करिणी में श्री सुदर्शन चक्रत्ताळ्वार का पवित्र स्नान संपन्न होता है। तब भक्त भी पवित्र स्नान इसमें करते हैं।

हर फलगुन महीने के शुक्ल पक्ष एकादशी से पूर्णिमा तक - पाँच दिन के लिए श्री सीता राम लक्ष्मण, श्री रुक्मिणी कृष्ण तथा श्रीदेवी सहित वेंकटेश्वर स्वामी जी के - प्लवोत्सव धूम धाम से मनाये जाते हैं।

1.50 एकड की इस पुष्करिणी के बीच सन् 1468 में साळुव नरसिंहा रायलु ने 'नीराळि मंडप' की स्थापना की थी। इतना ही नहीं, संक्राति के बाद (कनुमा के दिन) ब्रह्मोत्सवों एवं अन्य प्लवोत्सवों में इस मंडप में संपन्न होनेवाले आस्थानों में नैवेद्य को समर्पित करने की व्यवस्था भी साळुव नरसिंह रायलु ने की।

15 वी सदी में ताळ्ळपाका के परिवार वालों ने पुष्करिणी तटों पर सीढ़ियों को बनाकर नीराळि मंडप का जीर्णोद्धार भी करवाया था।

हजारों भक्तों के हर दिन नहाने के कारण पुष्करिणी के जलों का रंग बदलता जा रहा है एवं कलुषित होने की संभावना भी है। इस कारण 1972 में इस पुष्करिणी के जलों को शुद्ध करने के फिल्टरों की व्यवस्था देवस्थानम् ने की। इतना ही नहीं, साल में एक बार पूरे पानी को निकाल

देकर नये - पानी से पुष्करिणी को भरना एवं आंक्सीजन से शुद्ध करवाने के काम भी देवस्थानम् के द्वारा किये जा रहे हैं।

इतना महान इतिहास रखनेवाली यह पुष्करिणी कई भक्तों और यात्रियों को पुनीत बनाती रहती है। इसे हाथ जोडकर हम सब नमन करेंगे।

गोविन्द गोविन्द गोविन्द!

समर्पण

इस पवित्र तिरुमल यात्रा में, आनंद निलय के आवरण में, या तिरुमल क्षेत्र के परिसरों में घूमने के समय, जाने अनजाने में मन, वचन या कर्मों से हमसे जो भी भूल - चूक हुई होंगी, उन्हें श्रीनिवास प्रभु से अनदेखा ही करवाती हुई, हमारी रक्षा करने के लिए ही प्रेरित करती है - माँ अलमेल्मंगा! तिरुमल के आनंद निलय में, श्री वेंकटेश के वक्षःस्थल पर यह माँ व्यूहलक्ष्मी है। तिरुचानूर (अलमेलमंगापुर) में 'शांतिनिलय' नामक सुवर्ण गोपुर में अर्चामूर्ति श्री पद्मावती हैं। इन दोनों रूपों में हमें अपने पावन दर्शन से संपूर्णतया अनुग्रहीत करनेवाली जगन्माता, श्री वेंकटेश्वर भगवान की पटरानी, अलमेल्मंगा को यह ग्रंथ समर्पित है ताळ्ळपाका अन्नमाचार्य के इस संकीर्तन के द्वारा विनीत प्रार्थना के साथ!

परमात्मा उस हरि की पटरानी है तू
इस धरा पर हमारी खबर रखनी है तुझे माँ।

''ब्रह्मा की मायी तू मन्मथ की जननी तू
अमरों की माता तू आदि लक्ष्मि है तू
विमल तेरे पति से प्रार्थना कर तू ने
ढूँढ चुन कर हमें रक्षा की है हे माँ!

''कामधेनु और कल्पवृक्ष की बहन है तू
शीतल चंद्रमा की बहन है तू
तेरे पति की स्वीकृति से भाग्यों को दिया तू ने,
तेरी वितरण शीलता तुझ से ही बढ़िया माँ''

''क्षीर सागर कन्या है तू पद्मासनि है तू
क्षीर सागर शायी श्री वेंकटपति की देवी है तू
स्वामी के भक्तों को इह - परों को देती है तू
हम को अपनाया तू ने, यह बंधन है बढ़िया माँ!

आखिर एक बात! यह 'हरि की सन्निधि' ग्रंथ उस परंधाम परमात्मा का पारायण ग्रंथ है। घन वेंकटेश की अद्भुत लीलाओं को बतानेवाला आनंदमय ग्रंथ है। कितने ही भक्तों के त्यागों का विस्तार है यह ग्रंथ! तिरुमलेश की आश्रित वत्सलता को, दयालुता को सकल लोकों में व्याप्त करने की विजय गीतिका है यह ग्रंथ! सब लोग इसका नित्य पारायण कीजिये! दूसरों से करवाइये! आप की मनोकामनाओं को पाइये।

बिना भूले इन्हें पूजो, तो
जो भी माँगे, देते हैं प्रभु

एक बार आवाज देंगे तो झट जवाब देनेवाले सप्तगिरीश स्वामी, उस श्रियःपति का एक बार फिर मन से स्मरण करते हुए नीरांजन देंगे।

श्रियः कांताय कल्याणनिधये निधयेऽर्थिनाम्
श्री वेंकटनिवासाय श्रीनिवासाय मंगळम्

गोविन्द गोविन्द गोविन्द

***